वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

Pedagogy of Hindi
हिन्दी का शिक्षण शास्त्र

पाठ्यक्रम अभिकल्प समिति

संरक्षक	**अध्यक्ष**
प्रो. अशोक शर्मा	**प्रो. एल.आर. गुर्जर**
कुलपति	**निदेशक** (**अकादमिक**)
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा	वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

संयोजक एवं सदस्य

**** संयोजक**	*** संयोजक**
डॉ. अनिल कुमार जैन	**डॉ. रजनी रंजन सिंह**
सह आचार्य एवं निदेशक, शिक्षा विद्यापीठ	सह आचार्य एवं निदेशक, शिक्षा विद्यापीठ
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा	वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

सदस्य

प्रो. (डॉ) एल.आर. गुर्जर	**प्रो. जे. के. जोशी**
निदेशक (अकादमिक)	**निदेशक, शिक्षा विद्या शाखा**
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा	**उत्तराखंड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी**
प्रो. दिव्य प्रभा नागर	**प्रो. दामीना चौधरी** (सेवानिवृत्त)
पूर्व कुलपति	शिक्षा विद्यापीठ
ज.रा. नागर राजस्थान विद्यापीठ विश्वविद्यालय, उदयपुर	वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा
प्रो. अनिल शुक्ला	**डॉ. रजनी रंजन सिंह**
आचार्य शिक्षा ,	सह आचार्य एवं निदेशक, शिक्षा विद्यापीठ
लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ	वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा
डॉ. अनिल कुमार जैन	**डॉ. कीर्ति सिंह**
सह आचार्य, शिक्षा विद्यापीठ	सहायक आचार्य, शिक्षा विद्यापीठ
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा	वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा
डॉ. पतंजलि मिश्र	**डॉ. अखिलेश कुमार**
सहायक आचार्य, शिक्षा विद्यापीठ	सहायक आचार्य, शिक्षा विद्यापीठ
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा	वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

*डॉ. रजनी रंजन सिंह,सह आचार्य एवं निदेशक, शिक्षा विद्यापीठ 13.06.2015 तक

****डॉ. अनिल कुमार जैन ,**सह आचार्य एवं निदेशक, शिक्षा विद्यापीठ14 .06.2015 से निरन्तर

आभार

प्रो विनय कुमार पाठक .

पूर्व कुलपति

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

अकादमिक एवं प्रशासनिक व्यवस्था

प्रो. अशोक शर्मा	**प्रो .एलगुर्जर .आर.**
कुलपति	निदेशक (अकादमिक)
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा	वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा
प्रो. करण सिंह	**डॉ. सुबोध कुमार**
निदेशक	अतिरिक्त निदेशक
पाठ्य सामग्री उत्पादन एवं वितरण प्रभाग	पाठ्य सामग्री उत्पादन एवं वितरण प्रभाग
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा	वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

पुनः उत्पादन 2015 ISBN : 978-81-8496-562-9

इस सामग्री के किसी भी अंश को व.वि.वि.खु.म., कोटा, की लिखित अनुमति के बिना किसी भी रूप में अन्यत्र पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है। व.वि.वि.खु.म., कोटा के लिए कुलसचिव, व.वि.वि.खु.म., कोटा द्वारा मुद्रित एवं प्रकाशित ।(राजस्थान)

BED-110

हिन्दी शिक्षण

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा (राज.)

अनुक्रमणिका

खण्ड 1

हिन्दी पाठ्यक्रम एवं पद्धतियाँ

इकाई		पृष्ठ संख्या
1.	हिन्दी की संरचनात्मक विवेचना, इतिहास सम्प्रत्यय एवं भविष्यगत परिप्रेक्ष्य	08
2.	हिन्दी शिक्षण के भविश्योन्मुख उद्देश्य	30
3.	विद्यालयी पाठ्यचर्या में हिन्दी का स्थान, विभिन्न विषयों के साथ सह-सम्बन्ध	48
4.	हिन्दी शिक्षण के शैक्षिक तत्वों एवं सम्प्रत्ययों का संज्ञानात्मक स्वरूप (मानचित्र)	60
5.	शिक्षण पद्धतियाँ एवं उपागम, विषय आधारित विशिष्ट उदाहरण तथा भाषायी कौशल	78
6.	संचार-माध्यम एवं हिन्दी शिक्षण में इनका अनुप्रयोग	107
	खण्ड 2	
	हिन्दी शिक्षण-नियोजन, क्रियान्वयन व मूल्यांकन	
7.	नियोजन, सत्रीय इकाई एवं दैनिक पाठ	128
8.	हिन्दी शिक्षण में मापन व मूल्यांकन	148
9.	हिन्दी में अनुदेशनात्मक सामग्री का विकास एवं पाठ्यपुस्तक निर्माण व मूल्यांकन	166
10.	पाठ्यवस्तु सन्दर्भित शिक्षण सामग्री पूर्वायोजन व मूल्यांकन	184
11.	हिन्दी शिक्षक के गुण, समस्याएँ व समाधान	197
12.	हिन्दी शिक्षण में संसाधन	211
13.	हिन्दी शिक्षण में नवाचार व उनका भविष्य	226

पाठ्यक्रम अभिकल्प समिति

अध्यक्ष

प्रो. (डॉ.) नरेश दाधीच
कुलपति
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय,
कोटा (राजस्थान)

संयोजक

डॉ. दामीना चौधरी
सह आचार्य, शिक्षा
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय. कोटा (राज.)

सदस्य

1. प्रो. पी. के. साहू
   शिक्षा विभाग
   इलाहाबाद विश्वविद्यालय (उप्र.)
2. प्रो. आर. पी. श्रीवास्तव (से.नि.)
   जामिया मिलिया इस्लामिया विश्वविद्यालय, नई दिल्ली
3. प्रो. आर. जे. सिंह
   लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ (उ प्र.)
4. प्रो. डी. एन. सनसनवाल
   देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
5. प्रो. एस. बी. मेनन
   दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली
6. प्रो. स्नेह. एम. जोशी
   एम. एस. विश्वविद्यालय, बड़ौदा
7. प्रो. सोहनवीर सिंह चौधरी
   इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय, नई दिल्ली
8. डॉ. एम. एल. गुप्ता
   सह आचार्य शिक्षा (से. नि.)
   वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा
9. डॉ. अनिल शुक्ला
   लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ (उप्र.)

संपादन तथा पाठ लेखन

संपादक

डॉ. सत्या के. शर्मा
से. नि. प्रोफेसर
विदयाभवन IASE मो. ला. सुखाडिया विश्वविद्यालय
उदयपुर (राज.)

पाठ लेखक

1. डॉ. दया दवे, उदयपुर, राज.
2. श्री ओम प्रकाश जोशी, उदयपुर, राज.
3. श्री वेद प्रकाश, कनोड, राज.
4. श्री सुरेन्द्र दिवेदी, उदयपुर, राज.
5. श्री लक्ष्मीनारायण जोशी
6. डॉ. जगदीश चन्द्र व्यास, उदयपुर, राज.
7. श्री यशवन्त आमेटा, उदयपुर, राज.
8. डॉ. सत्या के. शर्मा उदयपुर, राज.

पाठ्यक्रम निदेशन एवं उत्पादन

निदेशक (शैक्षणिक)
प्रो. अनाम जैटली
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय,
कोटा (राजस्थान)

निदेशक (सामग्री उत्पादन एवं वितरण)
प्रो. पी. के. शर्मा
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय,
कोटा (राजस्थान)

उत्पादन जुलाई 2007

सर्वाधिकार सुरक्षित :

इस सामग्री के किसी भी अंश की व .खु .म .वि., कोटा की लिखित अनुमति के बिना किसी भी रूप में 'मिमियाग्राफी' (चक्रमुद्रण) के द्वारा या अन्यथा पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है।

ववि .खु .म .., कोटा की और से निदेशक (शैक्षणिक) द्वारा मुद्रित एवं प्रकाशित।

इकाई 1

हिन्दी का संरचनात्मक विवेचन व भविष्यगत परिप्रेक्ष्य (Structure of Content-area, History, Basic Conceptual Scheme and future perspectives)

इकाई की रूपरेखा

1.0 भूमिका तथा उद्देश्य
1.1 भाषा क्या है? स्वरूप विवेचन
1.2 भाषा की प्रकृति
1.3 भाषा का उत्पत्ति-इतिहास
1.4 अभ्यासार्थ प्रश्न
1.5 हिन्दी भाषा एवं लिपि
1.6 अभ्यासार्थ प्रश्न
1.7 शब्द-विचार
1.8 अभ्यासार्थ प्रश्न
1.9 शब्द संरचना
1.10 अभ्यासार्थ प्रश्न
1.11 वाक्य विचार
1.12 अभ्यासार्थ प्रश्न
1.13 हिन्दी का वर्तमान व भविष्यगत परिप्रेक्ष्य
1.14 सारांश
1.15 अभ्यासार्थ प्रश्न
1.16 संदर्भ एवं अध्ययन हेतु पुस्तकें

1.0 भूमिका तथा उद्देश्य

भाषा, मनुष्य के भाव, विचार व अनुभवों को अभिव्यक्त करने का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण तथा व्यापक साधन है। यद्यपि भाव प्रकाशन अनेक प्रकार से किया जा सकता है। यथा अंग प्रत्यंगों के संचालन, वस्तु प्रदर्शन अथवा विविध क्रियात्मक ध्वनि के संकेतों द्वारा तथापित व्यक्ति की भावभिव्यक्ति के लिए किसी एक समाज द्वारा स्वीकृत निश्चित ध्वनि संकेतों को ही भाषा की संज्ञा दी जा सकती है। मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है अत: समाज के अन्य सदस्यों के साथ पारस्परिक सम्बन्ध व विचार विनिमय का सर्वश्रेष्ठ माध्यम भाषा है। भाषा वस्तुत: मनुष्य के सामाजिक सम्पर्क का एक वैयक्तिक कर्म है। भाषा अध्ययन अध्यापन एक कला है और विज्ञान भी। अत: इसका विवेचन करना अत्यधिक कठिन कार्य है तथापि भाषा वैज्ञानिक अध्ययन से इस कार्य को कुशलता पूर्वक सम्पादित किया जा सकता है।

प्रस्तुत इकाई पाठ के अध्ययन के द्वारा आप निम्नांकित उपलब्धियाँ अर्जित करेंगे :-

1 भाषा की प्रकृति, हिन्दी का विशिष्ट स्वरूप, भाषा की संरचना के आधारों का विशिष्ट ज्ञान प्राप्त करेंगे।

2 भाषा के इतिहास का परिचय करते हुए इसके आधारभूत सम्प्रत्ययों का आधिकारिक ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।

3 भाषा के प्रमुख अवयवों(वर्ण, शब्द, वाक्य) के संबंध में सारगर्भित अधिगम कर सकेंगे।

4 हिन्दी के शब्द-विचार, शब्द रचना, वाक्य विचार के संदर्भ में विशद् रूप से परिज्ञान प्राप्त करेंगे।

5 हिन्दी भाषा के स्वरूप के संबंध में प्राप्त ज्ञान के आधार पर भाषा अध्यापन में इसकी प्रासंगिकता को अधिगम कर, भाषागत प्रयोजनों के परिप्रेक्ष्य में कुशलता पूर्वक अध्यापन कार्य सम्पादित कर सकेंगे।

6 हिन्दी के वर्तमान व भविष्यगत परिप्रेक्ष्य के सन्दर्भ में अध्यापन कार्य की आयोजना कर सकेंगे।

1.1 भाषा क्या है? (भाषा का स्वरूप विवेचन)

यह पूर्व में ही स्पष्ट किया जा चुका है कि मनुष्य की सामाजिकता निर्वाह हेतु भाव-प्रकाशन का सर्वश्रेष्ठ साधन भाषा हैं, जिसमें श्रव्य संकेतों की इतनी अधिक प्रधानता रहती हैं कि भाषा से अभिप्राय प्राय: श्रव्य संकेतों से समझ लेते हैं लेकिन यह असत्य है। मनुष्य अपने भाव प्रकाशन हेतु वस्तुत: तीन साधनों को प्रयुक्त करता है।

(1) स्पर्श संकेत

(2) दृष्टि संकेत

(3) श्रव्य संकेत

ध्वनि आधारित भाषा के उच्चरित तथा लिखित रूप अनादि माने गए हैं। अध्ययन की दृष्टि से सार्थक ध्वनियों से निर्मित शब्द भाषा के अन्तर्गत सम्मिलित किए जाते हैं। इन ध्वनियों का विश्लेषण एवं अध्ययन हो सकता है। निरर्थक ध्वनियाँ भाषा के अन्तर्गत नहीं आती हैं, यहाँ तक कि शोक, विस्मय, एवं हर्ष व्यंजक सांवेगिक ध्वनियों पर भी भाषा की दृष्टि से विचार नहीं किया जा सकता है। मनुष्य सार्थक ध्वनि संकेतों का ही प्रयोग करता है। भाषा को परिभाषित करते हुए एनसाइक्लोपीडिया ब्रिटेनिका में स्पष्टत: उल्लेख है कि "भाषा यादृच्छिक मौखिक प्रतीकों की व्यवस्था है, जिसके द्वारा मनुष्य समाज एवं संस्कृति के सदस्य होने के नाते परस्पर विचारों एवं कार्यों का आदान-प्रदान करते हैं। "

डॉ. भोलानाथ तिवारी द्वारा प्रस्तुत भाषा की एक अन्य परिभाषा इससे कहीं अधिक व्यापक है। उनके अनुसार-

"भाषा निश्चित प्रयत्न के फलस्वरूप मनुष्य के मुख से निःसृत वह सार्थक ध्वनि-समष्टि है, जिसका विश्लेषण और अध्ययन हो सके।"

कुछ अन्य परिभाषाएँ भी विशेष उल्लेखनीय हैं यथा-

स्वीट- "ध्वन्यात्मक शब्दों द्वारा विचारों का प्रकटीकरण ही भाषा हैं।"

डॉ. कुमार सेन- "अर्थवान् कंठोद्गीर्ण ध्वनि समष्टि ही भाषा है।"

उपर्युक्त परिभाषाओं में भाषा के मौखिक पक्ष का ही संदर्भ प्रस्तुत किया गया है, परन्तु कुछ भाषाविदों ने भाषाओं के अपने विकास क्रम में, ध्वनि संकेतों को लिखित रूप में प्रस्तुत करने की कला भी विकसित करली, जबकि कुछ भाषाएं अपने मौखिक रूप में ही विद्यमान रही। इस प्रकार भाषा सार्थक ध्वनि प्रतीकों की वह व्यवस्था है, जिसके द्वारा प्रयोक्ता या श्रोता अपने विचारों का आदान-प्रदान करते हैं। यह आदान-प्रदान मौखिक और लिपिबद्ध दोनों ही रूपों में हो सकता है।

1.2 भाषा की प्रकृति

भाषा संरचना की दो प्रमुख इकाइयाँ, शब्द और ध्वनि हैं। इसलिए भाषा वैज्ञानिक भाषा की द्वैत प्रकृति की बात करते हैं। ध्वनियों का कार्य केवल शब्द संरचना तक ही सीमित है। ध्वनि या वाक्-स्वर का कोई व्यावहारिक अर्थ नहीं होता, शब्दों का अर्थ होता है। भाषा संरचना में सरल से जटिल और जटिल से जटिलतर के निर्माण में व्यक्ति की स्वन-प्रक्रियात्मक आदतें निश्चित होती हैं। ध्वनि का पर्याय 'स्वन' तत्सम शब्द है। वाक् स्वनों का मूलाधार 'अक्षर' है, जिसका क्षरण नहीं होता।

अक्षर को ब्रह्म के समकक्ष माना है। यद्यपि अक्षर को परिभाषित करना कठिन है तथापि कहा जा सकता है अक्षर एकाधिक स्वनों की वह इकाई है जिसका उच्चारण एक आघात में हो सकें। आधुनिक समय में अक्षर का प्रयोग वर्ण के लिए किया जाने लगा है।

1.2.1 भाषा एक व्यवस्था

मनुष्य द्वारा ध्वनि-संकेतों की सहायता से भाव-विचार या अनुभवों की अभिव्यंञ्जना में प्रयुक्त भाषा के सम्बन्ध में विचार करने पर ज्ञात होता है कि भाषा के स्वरूप-निर्धारण में एक व्यवस्था अन्तर्निहित रहती है। वह एक संघठन है। भाषा का मूल तत्व ध्वनि हैं। प्रत्येक भाषा में कुछ मूल ध्वनियाँ मान्य हैं और उन ध्वनियों की भी एक व्यवस्था है, जैसे स्वर, व्यंजन, संयुक्त स्वर, और संयुक्त व्यंजन-इन ध्वनियों की भी एक व्यवस्था है। इन ध्वनियों का उच्चरित एवं लिखित रूप होता है, किन्तु ये ध्वनियाँ भाषा नहीं है। ये ध्वनियाँ मिलकर शब्दों का निर्माण करती है, तब ये सार्थक सिद्ध होती है। प्रत्येक भाषा में वाक्य संरचना या गठन की अपनी व्यवस्था है। उदाहरण- हिन्दी वाक्य रचना में शब्दों का जो क्रम हैं वह अंग्रेजी वाक्य रचना में नही है।

भाषा शास्त्रियों ने व्यवस्था के अन्तर्गत व्यवस्था के आधार पर भाषा को "परस्पर संबद्ध अवयवों से युक्त संश्लिष्ट व्यवस्था भी कहा है।" परस्पर संबद्ध अवयव ध्वनि, शब्द, पदबंध, वाक्यांश, वाक्य आदि हैं। भाषा के शब्दों से अर्थ बोध होता है। शब्दात्मक संरचना में अर्थ संरचना निहित रहती है। इसलिए हिन्दी भाषा को व्यवस्थाओं का संयुक्त रूप भी कहा जाता है।

1.2.2 भाषा-प्रतीकों का निर्माण

शब्दों से भाषा का निर्माण होता है, और ये शब्द किसी पदार्थ, भाव, विचार, अनुभूति आदि के ध्वन्यात्मक संकेत या प्रतीक होते हैं। इन प्रतीकों के अवयव में सृष्टि के किसी भी पदार्थ-गोचर या अगोचर, जड़ या चेतन का प्रत्यक्षीकरण संभव नहीं। ये प्रतीक दो प्रकार के होते हैं-

1 मौखिक प्रतीक

2 लिखित प्रतीक

भाषा के लिखित रूप, मौखिक प्रतीकों का ही प्रतिनिधित्व करते हैं। ये लिखित रूप पुन: पठन एवं श्रवण प्रक्रिया द्वारा मौखिक एवं श्रव्यग्राह्य बन जाते हैं। अत: भाषा का उच्चरित रूप ही उसका मूल रूप है। संसार में अनेक भाषाऐं ऐसी हैं जिनका केवल मौखिक रूप ही प्रचलन में है, लिखित रूप नहीं। वस्तुत: 'भाषा' शब्द स्वत: मनुष्य की वाचिक भाषा का ही द्योतक है। भाषा विज्ञान मे मुख्यत: वाचिक भाषा का ही अध्ययन और विश्लेषण होता है। अंत: हम कह सकते हैं कि 'भाषा' निश्चित रूप से उच्चारण सापेक्ष है।

1.2.3 भाषा का यादृच्छिक स्वरूप

भाषा में प्रयुक्त प्रतीक 'शब्द' सार्थक तो होते हैं पर उनसे बोधित वस्तु भाव या विचार (अर्थ) से उनका कोई स्वाभाविक या ईश्वरीय संबंध नहीं होता। यह संबंध यादृच्छिक होता है। शब्द और अर्थ में कोई तर्क संगत संबंध नहीं है। पर यह सही है कि शब्द और अर्थ का संबंध तर्क और विवेक पर आधारित न होने पर भी प्रयोग, व्यवहार एवं दीर्घकालीन प्रचलन के कारण इतना प्रगाढ़ हो जाता है कि वह स्वाभाविक प्रतीक होने लगता है। वस्तुत: भाषा के प्रतीक या ध्वनि संकेत रूप अर्थ विशेष में प्रसिद्ध होते हैं। शब्द और अर्थ का संबंध यादृच्छिक ही है।

1.2.4 आधारभूत सम्प्रत्यय

भाषा इतना व्यापक विषय है कि इसका अध्ययन अनेक दृष्टियों से किया जा सकता है। ये दृष्टिकोण या प्रत्यय भाषा की व्यापकता के साथ-साथ उसकी प्रकृति संबंधी विविधता पर विशेष विवेचन कर सकता है, क्योंकि भाषा सहज परिवर्तनशील और नैसर्गिक क्रिया है। इसलिए प्रत्येक भाषा पर भौगोलिक प्रभाव सीमागत होता है।

अर्थात् एक स्थान से दूसरे स्थान की भाषा में अन्तर अनिवार्य है।

1 भाषा का भौतिक सम्प्रत्यय

इस सम्प्रत्यय से भाषा मनुष्य के मुख से निःसृत ध्वनि संकेतो का समूह है। जीव वैज्ञानिकों ने भाषा के उद्भव और विकास का श्रेय मनुष्य की विशिष्ट शारीरिक एवं मानसिक रचना और क्षमता को ही दिया है। अत: भाषा के अध्ययन के लिए शरीर रचना वागेन्द्रियां एवं मानसिक स्नायुमण्डल प्रक्रिया का अध्ययन किया जाता है। शारीरिक एवं मानसिक विभिन्नता के कारण ही दो व्यक्तियों की भाषा एक समान नहीं होती है।

2 भाषा का समाजशास्त्रीय सम्प्रत्यय

समाजशास्त्रीय विद्वान भाषा को एक सामाजिक क्रिया मानते हैं। मनुष्य एकाकी जीवन नहीं व्यतीत कर सकता। वह प्रकृत्या सामाजिक प्राणी है। वह अपने समस्त सामाजिक कार्यों के लिऐ भाषा पर निर्भर है। भाषा के अभाव में मानव समाज का विचार ही कल्पनातीत है।

व्यक्ति - व्यक्ति का संबंध या व्यक्ति का समाज से संबंध भाषा के बिना अकल्पनीय है। संस्कृत के महान भाषा वैज्ञानिक भर्तृहरि ने कहा हैं-

"इति कर्त्तव्यता लोके सर्वा शब्द व्यपाश्रया।
न सोऽस्ति प्रत्ययो लोके यः शब्दनुगमादृते।

अनु बिद्धमिव ज्ञानं सर्व शब्दे भासतें।"
वाक्य प्रदीप ब्रह्म काण्ड 123-24

लौकिक कर्त्तव्य बोध का अर्थात् क्या, कैसे करना चाहिए इसका ज्ञान भाषा पर ही आश्रित हैं। संसार में कोई ऐसा प्रत्यय नहीं, जो भाषा के बिना सम्भव हो। समस्त ज्ञान भाषा से अनुस्यूत दृष्टिगोचर होता है।

3 भाषा का सांस्कृतिक प्रत्यय

सांस्कृतिक प्रत्यय के अनुसार भाषा एक सांस्कृतिक वस्तु है जो हमें परम्परा से प्राप्त होती है। इसलिए हमें अपनी संस्कृति से जितना अनुराग होता है उतना ही अनुराग अपनी भाषा से भी होता है। सांस्कृतिक विकास और ह्वास के साथ अपनी भाषा और साहित्य में भी विकास और ह्वास के चिह्न देखे जा सकते है। भाषा संस्कृति का तत्त्व मात्र नहीं अपितु समस्त सांस्कृतिक क्रिया-कलापों का आधार है।

4 भाषा का मनावैज्ञानिक आधारभूत सम्प्रत्यय

इस प्रत्यय के अनुसार भाषा का संबंध हमारी मानसिक प्रक्रिया से है। भाषा एक मानसिक व्यापार है। किसी उत्तेजना के फलस्वरूप हमारे मन में उत्पन्न प्रतिक्रिया जब ध्वनि रूप में प्रस्फुटित होती है तभी भाषा का जन्म होता है। भाषा एक प्रकार से उत्तेजना प्रतिक्रिया-ध्वनन प्रक्रिया की ही श्रृंखला है।

वक्ता के मन का प्रत्यय, शब्द प्रतीकों के माध्यम से श्रोता के मन क प्रत्यय बनता है तब ध्वनि के रूप में प्रक्रिया होती है वहीं ध्वनि भाषा के रूप में प्रकट होती है। यह प्रत्यय भाषा की प्रकृति एवं प्रक्रिया की व्यापकता और विविधता का ही परिचायक है जिसके कारण वक्ता और श्रोता मानसिक स्तर पर परस्पर भाव-प्रकाशन या विचार विनिमय हेतु एक धरातल पर संवाद में प्रवृत रहते हैं।

5 भाषा की विशेषताएँ व प्रवृत्तियाँ

भाषा की कतिपय विशेषताएँ न केवल हिन्दी भाषा में अपितु सभी भाषाओं में समान रूप से परिव्याप्त है। अध्यापक के रूप में उनका ज्ञान, आपके अध्यापन को अपेक्षाकृत अधिक सारगर्भित बना सकेगा। अत: यहाँ उनका संक्षिप्त विवेचन प्रस्तुत है-

(1) भाषा की उत्पत्ति एवं विकास किसी एक समाज में ही होता है। अत: यह अत्यन्त सामाजिक प्रक्रिया है। इसके मानसिक, भौतिक या साहित्यिक आधार भी सामाजिक रूप के ही विभिन्न पक्ष हैं। भौतिक आधार भाषा का एक व्यक्ति से दूसरे तक सम्प्रेषित करता है तो मानसिक व साहित्यिक आधार व्यक्ति के भाव या विचारों की संचित राशि को प्रकाशित करते हैं। सामाजिकता का निर्वाह भाषा उत्पत्ति का मूल कारण है।

(2) प्रारम्भिक अवस्था में भाषा सम्प्रेषण का केवल मौखिक साधन नहीं है, लेकिन लिपि के बिना कोई भाषा नहीं हो सकती- कारण-? भाषा का लिखित रूप अनिवार्यत: उच्चरित भाषा का सांकेतिक अंकन होता है। भाषा वस्तुत: ध्वनि प्रतीकों की एक यादृच्छिक व्यवस्था है।

(3) प्रत्येक भाषा की संरचना प्रकृति में अन्तर होता है। हिन्दी संस्कृत से निःसृत है लेकिन हिन्दी में दो लिंग, वचन होते हैं, संस्कृत में तीन- कुछ भाषाओं की ध्वनियों का साम्य

हो सकता है कुछ भाषा में नहीं। हिन्दी में व्यंजनों का संयोग सुलभ है लेकिन अंग्रेजी में नहीं।

(4) भौगोलिक रूप से भी भाषा स्थानीकृत होती है- एक स्थान से दूसरे स्थान की भाषा में उच्चारण अंतर रहना स्वाभाविक है-"चार कोस पर पानी बदले, आठ कोस पर भाषा" कहावत का यही मूलाधार है, फिर भी भाषा के मानस स्वरूप की ही शिक्षा प्रदान की जाती है। यद्‌यपि परिवर्तन होते रहना भाषा का अनिवर्ण्य क्रम है, तथापि भाषा को बोधगम्य बनाने के लिए यह आवश्यक है परिवर्तन के गति क्रम में नियंत्रण रखा जाए तथा उसके स्थरीकरण तथा मानकीकरण पर विशेष ध्यान दिया जाए। अन्य भाषा के शब्द ग्रहण अथवा वाक्य गठन से सामाजिक दृष्टि से भी स्थिरता अत्यावश्यक है। हिन्दी में इन दिनों तीव्र गति से परिवर्तन हो रहे हैं जिस पर अध्यापक वर्ग को विशेष ध्यान देना चाहिए।

(5) भाषा वस्तुतः जन्मजात वस्तु नहीं है, अपितु अर्जित की जाती है। यह समाज में रहते हुए पारस्परिक व्यवहार तथा अनुकरण से सीखी जाती है। भाषा ग्रहण करने की नैसर्गिक शक्ति केवल मनुष्य में ही है। अपने परिवार की भाषा वह अनुकरण के द्‌वारा ही सीखता है, लेकिन वह अपने बौद्धिक प्रयत्नों से भी एकाधिक भाषा सीख सकता है। भारत जैसे विविध भाषा-भाषी देश में एक विद्‌यार्थी के लिए मातृभाषा के अतिरिक्त अन्य भाषा का अर्जन स्वाभाविक न होकर एक श्रम साध्य प्रक्रिया है।

(6) मनुष्य जाति के समान ही भाषा का प्रवाह भी अविच्छिन्न रूप से गतिशील रहता है। मनुष्य इसे अर्जित कर यकिंचत् परिवर्तन भी कर सकता है परन्तु उसकी उत्पत्ति व समाप्ति पर मनुष्य का अधिकार नहीं रहता। भाषा सर्वव्यापक हैं। मनुष्य के समस्त क्रियाकलाप भाषा से ही परिव्याप्त एवं परिचालित रहते है।

(7) सामाजिक स्तर भेद के कारण भाषा में अन्तर आ जाता है। यह भाषा की एक प्रमुख विशेषता है। सामान्यतः भारत में सभी हिन्दी का प्रयोग करते हैं, लेकिन सबकी हिन्दी एक समान नहीं होती। अपने-अपने सामाजिक स्तर के अनुरूप भाषा परिवर्तित हो जाती है। यह स्तर-भेद सर्वाधिक शब्द भण्डार के स्तर पर देखा जाता है। एक वकील की भाषा-शब्दावली, एक अध्यापक की शब्दावली से कहीं भिन्न होगी । व्याकरणिक नियमों का पालन करते हुए एक अध्यापक जितनी शुद्ध शब्दावली का प्रयोग कर सकता है उतना एक ठेकेदार या दुकानदार नहीं- भाषा सामाजिक दृष्टि से स्तरित होती है।

1.3 भाषा का उत्पत्ति इतिहास

किसी भी भाषा के या शास्त्र के अतीत के चिंतन को इतिहास की संज्ञा दी गई है। दार्शनिकों, मानव वैज्ञानिकों, भाषा वैज्ञानिकों ने अनेक सिद्धान्त प्रस्तुत किये है। सभी सिद्धान्त अनुमान प्रसूत हैं। इस दिशा में निम्नांकित सिद्धान्त विशेष उल्लेखनीय हैं-

(1) दिव्योत्पत्ति सिद्धान्त- ईश्वरवादी प्रत्येक कार्य कलाप का संबंध किसी दिव्य शक्ति से जोड़ता है। ईश्वर ने मनुष्य को उत्पन्न किया है तो वह उसकी भाषा भी उत्पन्न कर सकता हैं। सभी धर्मावलम्बी अपने धर्मग्रन्थों में मानव को ईश्वर की श्रेष्ठ कृति मानते है और उसी से भाषा के अविर्भाव की कल्पना भी करते हैं। संस्कृत वाड्मय में संस्कृत भाषा

को "देववाणी" कहकर समस्त भाषाओं की जननी घोषित की गई है। वाग्देवी (वाणी) को देवों ने उत्पन्न किया। जिसे सभी प्राणी बोलते हैं। 'दिव्योत्पत्ति सिद्धान्त' में केवल इतना सार तत्त्व है कि मनुष्य को ही सार्थक भाषा प्रयोग के लिए योग्य ध्वनियन्त्र मिला और उसे संचालित करने वाली बुद्धि भी। यह मत वैज्ञानिक दृष्टि से अग्राहृय है।

(2) संकेत सिद्धान्त- मनुष्य ने पारस्परिक विचार-विनिमय द्‌वारा ध्वन्यात्मक भाषा का जन्म दिया। आंगिक संकेत एवं अन्य संकेतों की असुविधा और अपूर्णता मिटाने के लिए उसने राय- बातचीत, भाषा जैसा समर्थपूर्ण और सुविधाजनक संकेत प्रस्तुत किए। सृष्टि के आरम्भ में ही यह संकेत निश्चित कर लिया गया कि इतने वर्णक्रम इस क्रम से उच्चरित होने पर अमुक अर्थ बोध कराएंगे। जैसे 'क' के बाद 'म' और 'म' के बाद 'ल' रहे- कमल से पुष्प विशेष का बोध होगा। इसी तरह अनंत संकेत बना लिए गए। जिनसे आज तक काम चल रहा है।

(3) रणन (डिड-डॉड.) सिद्धान्त- इस सिद्धान्त की ओर सर्वप्रथम संकेत यूनानी दार्शनिक प्लेटो ने किया था। किन्तु इसको पल्लवित जर्मन विद्‌वान मैक्समूलर ने किया। रणन सिद्धान्त के अनुसार शब्द और अर्थ में एक प्रकार का रहस्यात्मक नैसर्गिक संबंध होता है। प्रत्येक वस्तु की अपनी विशिष्ट ध्वनि होती हैं। जो आघात पड़ने पर सुनायी देती है। इसी ध्वनि को 'रणन' कहते हैं। जैसे विस्तृत जल प्रवाह को देखकर उसके मुँह से एकाएक 'नदी' शब्द निकल पड़ा। इसी प्रकार समग्र वस्तुओं के लिए शब्द बन गए हैं। फिर इनके वाचक शब्द भी बनते रहे।

(4) आवेग (पुह-पुह) सिद्धान्त- इस सिद्धान्त को मनोरागव्यंजक शब्द मूलकतावाद या मनोभाषि व्यंजकतावाद जैसे लम्बे शब्दों से हिन्दी की अनेक भाषा विज्ञान की पुस्तकों में प्रस्तुत किया गया है। इस सिद्धान्त के अनुसार हर्ष, शोक, विस्मय, क्षोभ, क्रोध, घृणा आदि मनोभावों की सहज अभिव्यक्ति से जो ध्वनियाँ उत्पन्न होती हैं उन्हीं से भाषा की उत्पत्ति हुई है।

(5) श्रम ध्वनि (यो-हे-हो) सिद्धान्त- शारीरिक श्रम करते समय स्वभावत: श्वास-प्रश्वास की गति तीव्र हो जाती है, जिसके परिणामस्वरूप मांस-पेशियों का ही नहीं स्वर तंत्रियों का भी आकुंचन-प्रसारण (सिकुडन-फैलाव) होने लगता है और उनका कम्पन्न बढ़ जाता है । अत: कुछ ध्वनियाँ निकलती हैं (जैसे हाय सा, हूँ सा, हूँ श्रम कार्य से उत्पन्न होने वाली ध्वनियों से ही कतिपय भाषा वैज्ञानिक भाषा की उत्पत्ति मानने के आग्रही हैं।

(6) अनुकरण (बोउ-बोउ) सिद्धान्त- बोउ-बोउ - भों-भों का अंग्रेजी रूपांतर है। इस सिद्धान्त का यह नाम जर्मन विद्‌वान मैक्समूलर ने विनोद में रख दिया। इस सिद्धान्त के अनुसार वस्तुओं का नामकरण उनसे उत्पन्न होने वाली प्राकृतिक ध्वनियों के आधार पर हुआ है, अर्थात् जिस वस्तु से जैसी ध्वनि उत्पन्न होती सुनी गई उसका उसी के अनुकरण पर नाम रख दिया गया हैं जैसे- झर-झर करने वाले जलप्रवाहों को निर्झर/झरना कहा जाने लगा।

(7) इंगित (जेस्चर) सिद्धान्त- इंगित सिद्धान्त के अनुसार मनुष्य ने अपने अंगों या आंगिक चेष्टाओं का ही वाणी द्‌वारा जैसा अनुकरण किया और उसी से भाषा की उत्पत्ति हुई।

जैसे पानी पीते समय होठों के बार-बार सटने या श्वास खींचने से पा-पा जैसी ध्वनि हुई तो 'पा' का अर्थ पानी मान लिया गया। इसी तरह अनेक शब्दों का आरम्भ हुआ।

(8) समन्वय सिद्धान्त- भाषा वैज्ञानिकों ने उपर्युक्त सभी सिद्धान्तों की अव्याप्ति और परिसीमा देखकर सबके समन्वय को भाषा की उत्पत्ति का आधार माना है। तात्पर्य यह है कि किसी एक सिद्धान्त को भाषा का आरम्भ मानने के बदले सभी सिद्धान्तों को मानना अधिक उचित है जैसे कुछ शब्द अनुकरण से उत्पन्न हुए तो कुछ आवेश की तीव्रता से और कुछ श्रम के साहचर्य से। इस प्रकार एक-एक सिद्धान्त को अलग-अलग मानने की अपेक्षा उनके समन्वय को भाषा की उत्पत्ति का कारण मानना निश्चित ही अधिक सार्थक सिद्ध होता है।

हिन्दी का उद्भव व विकास "देववाणी" संस्कृत से निःसृत होने के कारण हिन्दी को संस्कृत की वंशजा कहा जाता है ।अत: इसमे प्राय: वे सभी ध्वनियाँ हैं जो कि संस्कृत में है। इसकी लिपि देवनागरी है जो उत्तरी ब्राहमी से विकसित हुई है।

1.4 अभ्यासार्थ प्रश्न

(1) ''भाषा सार्थक ध्वनि प्रतीकों की यादृच्छिक व्यवस्था है।" इस कथन की पुष्टि कीजिए।

(2) "भाषा एक सामाजिक प्रक्रिया है" इस कथन की सोदाहरण व्याख्या कीजिए।

(3) भाषा की प्रमुख विशेषताओं की विवेचना करते हुए सिद्ध कीजिए कि भाषा अर्जित की जाती है।

(4) भाषा की उत्पत्ति के संदर्भ में विविध सिद्धान्तों की विवेचना कीजिए।

1.5 हिन्दी एवं लिपि

भारत की भाषा 'हिन्दी' अपने उत्पत्ति काल से ही देवनागरी लिपि में अत्यन्त सरल, सुबोध, स्पष्ट एवं वैज्ञानिक ढंग से लिखी जा रही है। दूसरे शब्दों में नागरी लिपि हिन्दी की पहचान है। हिन्दी ध्वनियों का प्राचीनतम रूप वैदिक ध्वनि समूह है। प्रत्येक भाषा में मूल ध्वनियों के लिए चिह्न विशेषों का प्रयोग किया जाता है। इन्हीं चिह्नों को अक्षर कहते हैं। हिन्दी में प्रत्येक मूल ध्वनि के लिए एक अलग अक्षर का प्रयोग होता है।

1.5.1 हिन्दी के अवयव

श्रवणीयता गुण के आधार पर इन अक्षरों को दो भागों में विभाजित किया गया है -

1 स्वर

2 व्यंजन- (वर्ण)

1.5.2 हिन्दी के अवयव (स्वर)

वे अक्षर या वर्ण जिनके उच्चारण में ध्वनि, फेफड़ों से अनुस्फुटित होकर कण्ठ से होती हुई मुख विवर के उच्चारण स्थानों कों स्पर्श किए बिना मुख द्वार से बाहर निकल जाती है वें 'स्वर' कहलाते हैं। स्वरों का उच्चारण स्वतंत्र रूप से बिना किसी दूसरे अक्षरों की सहायता के होता है। हिन्दी में स्वरों की संख्या-11 (ग्यारह) है।

मुख्य स्वर चार 'अ', 'इ', 'उ', और ऋ हैं । 'अ', 'इ', तथा 'उ' स्वरों का दीर्घ रूप क्रमश: 'आ', 'ई', तथा 'ऊ' होते है। संस्कृत में ऋ का दीर्घ रूप ॠ होता है। स्वरों के मेल से चार संधि स्वर और बनते हैं। ए = अ+इ, ऐ = अ+ए, ओ = अ+उ तथा औ = अ+ऊ। बालकों को उच्चारण तथा वाचन सिखाने की दृष्टि से यह ज्ञान आवश्यक है। शुद्ध वर्तनी सिखाने के लिए भी यह अंतर समझना आवश्यक है-

ह्रस्व	**दीर्घ**	**संयुक्त**	**अनुनासिक**
आ	आ	अई	अँ
कल	काल	कई	अँधेरा
इ	ई	इए	ऑ मॅ
गिरना	गीला	जिए	आँकड़े
उ	ऊ	उआ	इँ
गुरु	कूप-रूप	हु आ	इँसाफ
	ए ऐ		
	वेद मैना	आई	
	ओ औ	भाई	
	खोलना- खौलना	आओ	
	बोओ		

संस्कृत में 'ऋ' 'लृ' तथा 'लॄ' ये तीन भी स्वर हैं लेकिन हिन्दी में केवल 'ऋ' को स्वर माना है। इसका प्रयोग तत्सम शब्दों में ही होता हैं- ऋण, ऋषि, आदि।

कतिपय अंग्रेजी शब्दों को देव नागरी लिपि में लिखने के लिए नई स्वर ध्वनि 'ऑ (कॉल- हॉल) भी हिन्दी में स्वरों के अन्तर्गत समाविष्ट है।

ह्रस्व, दीर्घ और प्लुत स्वर- मात्रा की दृष्टि से स्वरों के तीन भेद होते है। ह्रस्व, दीर्घ और प्लुत। जिन स्वरों के उच्चारण में एक मात्रा का समय लगता है उन्हें ह्रस्व स्वर कहते हैं - जैसे अ, इ, तथा उ।

जिन स्वरों के उच्चारण में दो मात्रा का समय लगता है उन्हें दीर्घ स्वर कहते है - यथा आ, ई, ऊ, ए, ऐ, ओ, औ और ऑ।

जिन स्वरों के उच्चारण में तीन मात्राओं का समय लगता है। उन्हें प्लुत स्वर कहते है। यथा ओम् इनका हिन्दी में प्रयोग नहीं होता है।

उच्चारण स्थान के आधार पर स्वरों का वर्गीकरण

कंठ्य	तालव्य	ओष्ठ्य	मूर्धन्य	कंठतालव्य	कंठओष्ठ्य
अ+आ	इ,ई	उ, ऊ	ऋ	ए, ऐ	ओ,औ।

इसी प्रकार जिह्वा के संचालन के आधार पर भी वर्गीकरण किया जाता है -

अग्र स्वर- जीभ का अगला भाग थोड़ा उठा है- इ, ई, ए, ऐ।

पश्च स्वर- जीभ का पिछला भाग थोड़ा उठा है- उ, ऊ, ओ, औ।

मध्य स्वर- जीभ का मध्य भाग थोड़ा उठा है- अ, आ।

इस प्रकार जिन स्वरों में मुँह खुला रहता है, उन्हें विवृत स्वर कहते हैं - जैसे 'आ'। जिनके उच्चारण में मुँह भिंचा रहता है, उन्हें संवृत स्वर कहते हैं। जैसे इ ई, उ ऊ। इन दोनों के बीच की स्थिति वाले अर्द्ध विवृत अ, ऐ औ तथा अर्द्ध संवृत ए, ओ कहलाते हैं।

1.5.3 व्यंजन-

वे अक्षर जिनके उच्चारण में ध्वनि फेफड़ो से अनुस्फुरित होकर मुख विवर के उच्चारण स्थानों को स्पर्श करती हुई निकलाती है, वह व्यंजन कहलाते हैं - यथा क वर्ग, च वर्ग, ट वर्ग, त वर्ग, प वर्ग आदि। प्रत्येक व्यंजन का उच्चारण स्वर की सहायता से किया जाता है। हिन्दी में इन व्यंजनों की संख्या 33 है। अनुस्वार और विसर्ग व्यंजनों के अतिरिक्त दो अक्षर और है, अं, अः इन्हें अयोगवाहक स्वर कहते हैं इसी तरह आज हिन्दी में (11+2) 13 स्वर तथा 33+1+1+3+5+3=47 व्यंजन ध्वनियाँ प्रचलित है और स्वर और व्यंजन दोनों मिलाकर 59 हैं। क ख ग घ ड / च छ ज झ ञ/ ट ठ ड ढ ण / त थ द ध न / प फ ब भ म (य र ल व) अंतस्थ, (श ष स ह) ऊष्म व्यंजन।

(1) स्वर तंत्री के प्रयत्नानुसार अक्षरों का वर्गीकरण-
इसके अनुसार अक्षरों के दो भेद किए जाते हैं- (क) घोष (ख) अघोष

क) घोष- कुछ अक्षरों का उच्चारण में स्वर तंत्रियों में कम्पन होता है वे घोष या सघोष कहलाती है- ग घ ड, ज झ ञ, ड ढ ण, द ध न, ब भ म, य र ल व ह,।

ख) अघोष- जिन ध्वनियों के उच्चारण में स्वर तंत्रियों में कम्पन नहीं होता है वे अघोष कहलाती हैं। क ख, च छ, ट ठ, त थ, प फ, श ष स है।

(2) बाहय प्रत्यन की दृष्टि से स्पर्श व्यंजनों के दो भेद हैं-
(क) अल्प प्राण (ख) महाप्राण

क) अल्प प्राण- जिन व्यंजनों के उच्चारण में साधारण प्राण की आवश्यकता होती है उन्हें अल्प प्राण अक्षर कहते हैं। कगड, चजञ, टडण, तदन, पबम, र ल।

ख) महाप्राण- जिन व्यंजनों के उच्चारण में विशेष प्राण की आवश्यकता होती है उन्हें महाप्राण अक्षर कहते हैं - खघ, छझ, ठढ. थध, फम।
नोट- जिन व्यंजनों में ह कार की ध्वनि मिश्रित होती है, वे महाप्राण और (शेष अल्पप्राण है।)

1.5.4 उच्चारण स्थान की दृष्टि से स्वर और व्यंजनों का वर्गीकरण-

1 स्वर- वे ध्वनियाँ, जिनके उच्चारण में निर्गत श्वास में कहीं अवरूद्धता न हो, वे स्वर कहलाती हैं।

2 व्यंजन- वे ध्वनियाँ जिनके उच्चारण में निर्गत श्वास में कहीं न कहीं अवरूद्धता हो, वे व्यंजन कहलाती हैं।

स्वर	व्यंजन	उच्चारण स्थान	वर्ग
अ, आ, आँ	क, ख, ग, घ, ङ	कण्ठ	कंठ्य
	क, ख, ग	जिह्वामूल	जिह्वामूलीय
इ, ई,	च, छ, ज, झ, ञ, श	तालु	तालव्य
ऋ	ट, ठ, ड, ढ, ण, ष, ड़, ढ़	मूर्धा	मूर्धन्य
	त, थ, द, ध, स	दंत	दंत्य
उ, ऊ	प, फ, ब, भ, म	ओष्ठ	ओष्ठ्य
	न, र, ल, स, ज,	वत्र्स (ऊपर के दांतों के भीतरी मसूढ़े)	वत्सर्य
ए, ऐ		कण्ठतालु	कंठतालव्य
ओ, औ,		कण्ठ-ओष्ठ	कंठोष्ठ्य
	व	दांत-ओष्ठ	दंतोष्ठय

व्यंजन के पाँच वर्ग (कवर्ग, चवर्ग, टवर्ग, तवर्ग, पवर्ग) के प्रत्येक दो अक्षर (क ख, च छ, ट ठ, त थ, प, फ) कठोर- तीसरे और चौथे अक्षर (गघ जझ, डढ, दध, बभ) कोमल कहे जाते हैं। प्रत्येक वर्ग का अंतिम (ङ, ञ, ण, न, म) अनुनासिक कहे जाते है। इनके उच्चारण में नासिका का प्रयोग होता है। य र ल व अंतस्थ व्यंजन कहलाते हैं - अर्थात् वे आधे स्वर, आधे व्यंजन हैं।

संयुक्त व्यंजन

हिन्दी वर्णमाला के प्रत्येक व्यंजन के साथ अ स्वर जुड़ा हुआ माना जाता है। अन्य स्वरों के योग से भी व्यंजन की विभिन्न ध्वनियाँ उत्पन्न होती हैं। इन्हें सामान्य रूप से हम मात्रा युक्त व्यंजन ध्वनि कहते हैं। जब दो व्यंजनों के बीच कोई स्वर न हो तब व संयुक्त व्यंजन कहलाते हैं-

उदाहरणार्थ- क्या, न्याय, व्यतीत, द्रव्य आदि। अन्य व्यंजनों के मध्य भी संयोजन होता है।

क्ष, त्र, ज्ञ दो व्यंजनों से बने सयुंक्त व्यंजन यथा (क्ष=क्+ ष), (त्र= त्+ र), (ज्ञ त्र ञ या ग् ञ)।

1.6 अभ्यासार्थ-प्रश्न

1 अक्षर किसे कहते हैं? स्वर और व्यंजन का अंतर स्पष्ट कीजिए।

2 हिन्दी की प्रचलित ध्वनियाँ कौन-कौनसी हैं? उच्चारण स्थान की दृष्टि से इन ध्वनियों का वर्गीकरण किस प्रकार किया गया है? तालिका द्वारा स्पष्ट कीजिए।

3 निम्नांकित प्रश्नों के उत्तर दीजिए-

- क) हिन्दी के घोष एवं अघोष अक्षरों में क्या अन्तर है?
- ख) अल्पप्राण और महाप्राण ध्वनियों में क्या अंतर होता है?
- ग) अनुस्वार और अनुनासिक ध्वनियों में क्या अंतर होता है?
- घ) संयुक्त व्यंजन किसे कहते है? उदाहरण सहित स्पष्ट कीजिए।

1.7 शब्द विचार

अक्षरों के समूह को शब्द कहते हैं - यथा (भ + ओ + ज् + अ + न् + अ = भोजन)

हिन्दी भाषा के शब्दों का वर्गीकरण निम्नांकित चार आधारों पर किया जाता है -

1 अर्थ की दृष्टि से

2 व्युत्पत्ति की दृष्टि से

3 स्रोत की दृष्टि से

4 वाक्य प्रयोग की दृष्टि से

1.7.1 अर्थ की दृष्टि से:- अर्थ की दृष्टि से शब्द दो प्रकार के होते हैं -

(क) सार्थक शब्द (ख) निरर्थक शब्द

(क) सार्थक शब्द

जिन शब्दों से किसी का अर्थ बोध हो, वे सार्थक शब्द कहलाते हैं। यथा गाय, मेज, भागना तप आदि।

(ख) निरर्थक शब्द

जिन शब्दों से किसी का कोई अर्थ न हो, वे निरर्थक शब्द कहलाते है। ऐसे शब्द या तो किसी विशेष आवाज के सूचक होते हैं यथा चर्र-चूँ सटर-पटर, गडबड आदि या किसी शब्द की नकल होते हैं, यथा पानी-वानी, चाय-वाय, रोटी-वोटी आदि व्याकरण में केवल सार्थक शब्दों का ही अध्ययन किया जाता है।

1.7.2 व्युत्पत्ति की दृष्टि से- व्युत्पत्ति की दृष्टि से तीन भेद है-

(1) रूढ़शब्द (2.) यौगिक शब्द (3.) योगरूढ़ शब्द

(1) रूढ़शब्द- जिन शब्दों के खण्ड न किए जा सकें और खण्ड कर भी दिए जाएँ तो उनका कोई अर्थ न निकले, वे रूढ़शब्द कहलाते हैं। जैसे घोड़ा, मोर, काला आदि।

(2) यौगिक शब्द- जो दो या दो से अधिक शब्दों अथवा शब्दांशों के मेल से बनते हैं। वे यौगिक शब्द कहलाते हैं। इनके शब्दांश सार्थक होते हैं। जैसे देवालय त्र देव + आलय, पाठ + शाला = पाठशाला

(3) योगरूढ़ शब्द- जो शब्द यौगिक होने पर भी किसी सामान्य अर्थ को प्रकट न करके रूढ़ शब्दों के समान किसी विशेष अर्थ को प्रकट करते हैं वे योगरूढ़ शब्द कहलाते हैं।

जैसे पंकज = पंक + ज = कमल-पंक-कीचड़ ज-जन्म, सम् + सद = संसद

1.7.3 शब्दों के स्रोत

स्रोत के आधार पर हिन्दी भाषा में चार प्रकार के शब्द प्राप्त होते है-

1. तत्सम शब्द 2. तद्भव शब्द

3. देशी, देशज् शब्द 4. विदेशी शब्द

1. **तत्सम शब्द**- तत्सम का शाब्दिक अर्थ है तत् = उसके, सम = सम्मान अर्थात उस (संस्कृत भाषा) के समान। अत: तत्सम शब्द संस्कृत के हैं और मौलिक रूप में बिना परिवर्तन के हिन्दी में प्रयुक्त होते हैं। संस्कृत से हिन्दी में प्रयुक्त कतिपय शब्द-अग्नि,

अंधकार, अध्यक्ष, उत्सव, ज्वाला, दीप्त, तीव्र, नारी, प्रकाश, तिमिर, नम्र परिष्कृत, पीड़ा, द्वितीय निष्कर्ष, ग्रंथ उच्च, अभीष्ट आदि।

2. **तद्भव शब्द**- ये शब्द संस्कृत शब्दों के विकृत रूप है और इसी रूप को ही हिन्दी भाषा में प्रयुक्त हो रहे हैं। इन्हें हिन्दी ने अपनी प्रकृति के अनुरूप बना लिया है। ऐसे शब्द तद्भव कहलाते हैं। शब्दों की तालिका-

तद्भव-तत्सम	**तद्भव-तत्सम**	**तद्भव-तत्सम**
आग-अग्नि	आँसू-अंश्रु	ऊँचा-उच्च
कुम्हार-कम्मकार	चाँद-चन्द्र	बहू-वधू
पत्थर-प्रस्तर	सूरज-सूर्य	सूत-सूत्र
जेठ-ज्येष्ठ	ऊँट-उष्ट्र	दूध-दुग्ध
कान-कर्ण	आँख-अक्ष	दाँत-दांत

3. देशी, देशज शब्द- इस वर्ग के शब्दों का संस्कृत शब्दों से कोई संबंध नहीं है। ये शब्द भारत की भिन्न-भिन्न प्रांतीय भाषाओं से हिन्दी में आए हैं। लकड़ी, पगड़ी, खिचड़ी, लोटा, गगरी, गागरा छोकरा, छोकरी आदि।

4. विदेशी शब्द- ये वे शब्द हैं जो विदेशी भाषाओं से हिन्दी में आ गए हैं। इनमें प्रमुख रूप से अरबी-फारसी व अंग्रेजी के शब्द हैं। कतिपय शब्द फ्रेंच, रूसी, तुर्की और पुर्तगाली आदि भाषाओं के भी हिन्दी में प्रयुक्त हो रहे है। लेकिन इनकी संख्या अधिक नहीं है। यथा-

1 अरबी- औलाद, कानून, मौलवी, औरत, फकीर, इज्जत, आदत आदि।

2 फारसी से- दुकान, आनार आदमी, खजर, किताब, अमीर, कलम, चश्मा, जल्दी, बाग आदि।

3 अंग्रेजी से- स्कूल, टाइम, डेस्क, टिकिट, स्टेशन मास्टर, इंजन, बैंक, रेडियो आदि।

4 पुर्तगाली से- पादरी, गिरजा, कमीज, चाबी, कमरा, प्याला, आदि।

1.7.4 प्रयोग के आधार पर शब्दों का वर्गीकरण

वैयाकरणिकों ने भाषाई प्रयोग के आधार पर शब्दों का वर्गीकरण किया है। आधुनिक हिन्दी व्याकरण में प्रयोग की दृष्टि से शब्दों को दो भागों में विभिक्त किया गया है :-

(1) विकारी (2) अविकारी

(1) विकारी- विकारी वे शब्द है जिनके रूप लिंग, वचन, कारक, पुरूष, काल आदि के आधार पर बदल जाते है । जैसे- लड़का, लड़के आदि अनेक रूप बनते हैं। इसी प्रकार से मैं, मुझे, हमें, हमारे, अच्छा, अच्छी, अच्छे, जाता, जाती, जाते, काला, काली, काले आदि।

(2) अविकारी- अविकारी वे शब्द हैं - जिनके रूप में लिंग, वचन और कारक के कारण कोई परिवर्तन नहीं आता है - अर्थात् इनका रूप सदा एक सा रहता है। इसलिए इनको अव्यय भी कहते हैं। यहाँ, वहाँ, प्रतिदिन, बिना, और, परंतु लेकिन आदि।

वाक्य रचना में प्रयोग के आधार पर शब्दों के आठ भेद हैं-

1. विकारी

संज्ञा	सर्वनाम	विशेषण	क्रिया

2. अविकारी

क्रिया-विशेषण	संबंध-बोधक	समुच्चय-बोधक	विस्मयादि-बोधक

विकारी

संज्ञा- किसी व्यक्ति, स्थान, वस्तु या भाव के नाम को संज्ञा कहते हैं यथा राम दिल्ली, किताब, फल, मिठास, सौन्दर्य आदि। सर्वनाम- वे शब्द जो संज्ञा के स्थान पर प्रयुक्त होते हैं यथा वह, तू कौन आदि।

विशेषण- वे शब्दो जो संज्ञा या सर्वनाम की विशेषता प्रकट करते हैं यथा- काला, लम्बा, मधुर, पीला आदि।

क्रिया- वे शब्द जिनसे किसी काम का कारण या होना प्रकट हो, यथा-पढ़ना, जाना, खाना, दौड़ना, बैठना आदि।

अविकारी

क्रिया-विशेषण- वे शब्द जो क्रिया की विशेषता प्रकट करते हैं-यथा शीघ्र-धीरे-धीरे, जल्दी आदि।

संबंध-बोधक- वे शब्द जो किसी संज्ञा या सर्वनाम का वाक्य के दूसरे शब्दों के साथ संबंध बताते है - यथा- तक, साथ, नीचे आदि।

समुच्चय-बोधक- वे शब्द जो विभिन्न शब्दों, वाक्यों अथवा वाक्य-खण्डों को मिलाते हैं- जैसे और, एवं, पर आदि। विस्मयादि-बोधक अथवा द्योतक- वे शब्द जो बोलने वाले के मन के भाव, आश्यर्च, प्रसन्नता, दुःख, घृणा आदि को प्रकट करते हैं, यथा- आह, धिक-धिक अरे, हाय, छिः छिः आदि।

7.5 शब्द शक्ति अर्थ के आधार पर शब्द रचना- अर्थ की दृष्टि से शब्द के तीन भेद किए गए हैं-

(1) वाचक या अभिधेयार्थ (2) लाक्षणिक या लक्ष्यार्थ (3) व्यंग्यार्थ

अभिधा या अभिधेयार्थ- शब्द वे हैं, जिनसे अपने प्रधान या साधारण अर्थ का बोध होता है- यथा- घोड़ा, हिरण, नदी, पुस्तक आदि।

लक्षण या लक्ष्यार्थ- जिन शब्दों से रूढ़ि के कारण या बोलने वाले के प्रयोजन के आधार पर मुख्यार्थ से सम्बद्ध अन्य अर्थ का बोध हो, वह शब्द लक्षण या लक्ष्यार्थ शब्द कहलाते हैं। यथा रवि गधा है। अर्थात रवि (मूर्ख) इस वाक्य में रवि नाम के लड़के को गधा कहा गया है। जो एक पशु है और मूर्खता का द्योतक है।

व्यंजना या व्यंग्यार्थ- जिन शब्दों से न मुख्यार्थ लिया जाता है न लक्ष्यार्थ, अपितु जिनसे कोई गूढ़ या सांकेतिक अर्थ प्राप्त होता है, उन्हें व्यंग्यार्थक शब्द कहतें हैं। यथा सब कुर्सियों की लड़ाई है- इस वाक्य में कुर्सी का अर्थ सत्ता से है न कि आसन अथवा पद से।

1.7.6 भाषाई अर्थ के आधार पर शब्दों का वर्गीकरण

(1) एकार्थक- जिन शब्दों का एक से अधिक अर्थ नहीं होता- यथा गाँधी, हिमालय प्लेग, इस्पात, नीला आदि।

(2) अनेकार्थक- जिन शब्दों के संदर्भ के आधार पर भिन्न-भिन्न अर्थ निकलते हों यथा 'आम' यह एक फल भी है तथा सामान्य के अर्थ में भी प्रयुक्त होता है। सोना एक क्रिया भी है और एक धातु का नाम भी है।

(3) समानार्थक- इन्हें पर्यायवाची भी कहते हैं। जब एक ही अर्थ प्रदर्शित करने वाले एक से अधिक शब्द हो तो वे पर्यायवाची कहलाते हैं। अथा अश्व, घोड़ा, हय, बाजी, घोटक आदि ये शब्द घोड़ा के पर्याय है।

(4) विलोमार्थक- जब दो शब्द एक दूसरे से विपरीत अर्थ प्रदर्शित करने वाले हों तो उन्हें विलोम शब्द कहते हैं। विलोम शब्द मूल शब्द में उपसर्ग अथवा प्रत्यय लगाकर भी बनते हैं। गुण-दोष, सुन्दर-कुरूप, व्यास-समास, अर्थ-अनर्थ आदि।

(5) ध्वनिबोधक- किसी वस्तु प्राणी या क्रिया से उत्पन्न ध्वनि के आधार पर कुछ शब्द जनसामान्य से पहले प्रचलित हो जाते हैं और बाद में वे मानक शब्दावली में अपना खट-खटाना, झर-झर, छुक-छुक आदि।

(6) युग्म शब्द या पुनरूक्त शब्द- जब एक ही शब्द दो बार बोलाजाता है तो वह भिन्न अर्थ की प्रतीत करवाता है। जैसे घर-घर का अर्थ है प्रतिघर, चार-चार का अर्थ है चार व्यक्ति, हाथो-हाथ- एक हाथ से दूसरे हाथ में या व्यक्ति या वस्तुओं के अनेक समूह, चलते-चलते का अर्थ हो जाता है लगातार चलते हु ए। कभी-कभी बल देने के लिए अथवा अर्थ वैशिष्ठ्य के लिए भी युग्म शब्दों का प्रयोग होता है यथा-मार-पीट, धन-दौलत, आस-पास, झूठ-मूठ, पूछ-ताछ, इने-गिने आदि।

(7) वाक्यांश-बोधक- अभिव्यक्ति में गम्भीरता अथवा स्पष्टता लाने के लिए वाक्यांश के स्थान पर 'एक शब्द' का प्रयोग किया जाता है। हिन्दी अथवा संस्कृत में ऐसे शब्दों का बाहु ल्य है:-

उदाहरणार्थ

1.	आज्ञा पालन करने वाला	-	आज्ञाकारी
2.	रोगी की चिकित्सा करने वाला	-	चिकित्सक
3.	मोक्ष की इच्छा रखने वाला	-	मुमुक्ष

1.8 अभ्यासार्थ-प्रश्न

1 सार्थक और निरर्थक शब्दों के अंतर पर प्रकाश डालिए।

2 विकारी और अविकारी शब्दों के अंतर को सोदाहरण स्पष्ट कीजिए।

3 व्युत्पत्ति के आधार पर शब्दों के कितने भेद है? निम्नांकित शब्दों को इन भेदों के आधार पर अलग-अलग कीजिए। जलज, हिमालय, नीरज, घोड़ा, वनवासी, दशरथ।

4 तत्सम और तद्भव शब्दों के पाँच-पाँच उदाहरण दीजिए।

5 शब्द शक्तियों से आप क्या समझते हैं? यह कितने प्रकार की होती है । सोदाहरण विवेचन कीजिए।

1.9 शब्द-संरचना

जैसे-जैसे संस्कृति का विकास होता है वैसे-वैसे वैचारिक आदान-प्रदान तथा विकास मान ज्ञान के संप्रेषण हेतु शब्दों में वृद्धि अवश्य हो जाती है। कुछ नए शब्द बनते हैं और कुछ शब्दों

को संरचनात्मक दृष्टि से संवर्धित, परिवर्धित अथवा संशोधित करके उन्हें संप्रेषित की शक्ति दे दी जाती है। संस्कृत भाषा की शक्ति अद्‌वितीय है। हिन्दी शब्दों की संरचना में भी संस्कृत परम्परा का प्रयोग प्रचुरता के साथ होता है। इसके अतिरिक्त हिन्दी शब्दों की अपनी रचना शैली भी स्वतंत्र रूप से विकसित हुई है।

1.9.1 संधि एवं समाज

एकाधिक शब्दों को संधि द्‌वारा संयुक्त करने से नया शब्द बनता है। हिन्दी में संस्कृत के ही समान (1) स्वर संधि (2) व्यंजन संधि (3) विसर्ग संधि ये तीनों ही प्रकार की संधियाँ होती हैं।

(1) **स्वर संधि**:- दो स्वरों के पास-पास होने से उनमें विकार होता है उसे स्वर संधि कहते हैं:- यथा- देव. आलय त्र देवालय, गिरि. ईश त्र गिरीश, सूर्य. उदय त्र सूर्योदय, महा. आत्मा त्र महात्मा, गण. ईश त्र गणेश इस प्रकार इसके पाँच भेद होते हैं- दीर्घ, गुण, वृद्धि, यण, अयादि।

(2) व्यंजन संधि- जब दो अक्षरों के मेल में पहला वर्ण व्यंजन हो और दूसरा वर्ण स्वर या व्यंजन हो तो, वहाँ पर व्यंजन संधि होती है:- यथा- उत + चारण = उच्चारण, सद + आचार = सदाचार, जगत् + नाथ = जगन्नाथ, वाक् + ईश = वाकीश।

(3) विसर्ग संधि- विसर्ग के साथ स्वर या व्यंजन की संधि को विसर्ग संधि कहते हैं- निः + आहर = निराहार निः + फल = निष्फल, निः + जन = निर्जन, रजः + गुण = रजोगुण।

समास- परस्पर संबंध रखने वाले दो या दो से अधिक शब्दों के संयोग को समास कहते हैं-

सामासिक शब्दों के प्रयोग से संक्षिप्तता और शैली में उत्कृष्णता आती है। दो शब्दों के एक साथ मिलने पर उनकी चार ही स्थितियाँ हो सकती हैं-

(1) दोनों पद प्रधान हों।

(2) दोनों पद अप्रधान हों उनके स्थान पर एक नए अर्थ का बोध होना।

(3) प्रथम पद प्रधान हो, दूसरा गौण।

(4) द्‌वितीय पद प्रधान हो, प्रथम पद गौण।

उपर्युक्त चार स्थितियों के अनुसार ही समास के चार मुख्य भेद हैं-

1 द्‌वंद्‌व समास- जहाँ शब्द के दोनों खण्ड प्रधान हों यथा रात-दिन / भाई-बहिन

2 बहुब्रीही समास- बहुब्रीही समास में शब्द के दोनों खण्डों में किसी की प्रधानता नहीं होती दोनों गौण होते हैं और एक नए अर्थ का बोध कराते हैं यथा- चन्द्र शेखर = चन्द्र है शिखर पर जिसके = शंकर, त्रिनेत्र = तीन नेत्र हैं जिनके = शिव।

3 अव्ययीभाव- शब्द में प्रथम पद प्रधान तथा दूसरा गौण यथा- यथा शक्ति त्र यथाशक्ति प्रति + दिन = प्रतिदिन इस प्रकार के सामासिक शब्द क्रिया विशेषण के रूप में प्रयुक्त होते है।

4 तत्पुरूष- जहाँ शब्द के दो खण्डों में दूसरा पद प्रधान हो और प्रथम पद गौण, वहाँ तत्पुरूष समास होता हैं ऐसे पदों के मध्य से (कर्म से अधिकरण कारक तक के) पर सर्ग का लोप हो जाता है यथा- हस्तलिखित - हाथ से लिखा हुआ। राजपुत्र-राजा का पुत्र

इन चार के अतिरिक्त कर्मधारय तथा द्विगु समास होते हैं। कर्मधारय में भी दूसरा पद प्रधान होता है लेकिन प्रथम पद विशेषण या उपमा वाचक होता है यथा नीलकमल = विशेषण वाचक, चन्द्र मुख = उपमा वाचक द्विगु समास का प्रथम पद संख्यावाचक विशेषण होता है यथा त्रिभुवन, नवरात्र

1.9.2 उपसर्ग- हिन्दी अथवा संस्कृत में कुछ ऐसे शब्दांश भी है, जिनका स्वत: कोई अर्थ नहीं है परन्तु अन्य शब्दों के पूर्व अथवा पश्चात उन्हें जोड़ देने पर मूल शब्द का अर्थ बदल जाता है। जो शब्दांश किसी शब्द के पहले जुड़ते हैं, उन्हें उपसर्ग कहते हैं, तथा शब्द के अन्त में जुड़ने वाले शब्दांश प्रत्यय कहलाते हैं। हिन्दी के अधिकांश उपसर्ग तथा प्रत्यय संस्कृत भाषा से आये है परंतु कुछ हिन्दी के अपने हैं और कुछ विदेशी भी। कुछ सार्थक शब्द भी उपसर्ग तथा प्रत्यय के रूप में प्रयुक्त होते हैं।

उपसर्ग	**अर्थ**	**मूल शब्द**	**संरचित शब्द**
संस्कृत- अनु	पीछे	रूप, ताप	अनूरुप, अनुताप
अव	नीचे-बुरा	गति, रोह	अवगति, अवरोह
प्रति	हर, एक	दिन, कूल	प्रतिदिन प्रतिकूल
उप	समीप, गौण	विभाग, वन	उपविभाग, उपवन
हिन्दी- कु	बुरा	पुत्र, प्रथा	कुपुत्र, कुप्रथा
स	सहित	हर्ष, परिवार	सहर्ष, सपरिवार
अरबी- कम	कम	जोर, उम्र	कमजोर, कम उम्र
फारसी- खुश	अच्छा	बू, दिल	खुशबू, खुशदिल

प्रत्यय

संस्कृत	-	अनीय	-	स्मरण	-	स्मरणीय
		आलु	-	दया	-	दयालु
हिन्दी	-	आई	-	चिकना	-	चिकनाई
		ई	-	चोर	-	चोरी
उर्दू	-	खाना	-	डाक	-	डाकखाना
		बंद	-	हथियार	-	हथियारबंद

1.10 अभ्यासार्थ-प्रश्न

(1) संधि की परिभाषा लिखकर-पाँच उदाहरण दीजिए।

(2) "समास" भाषा के कौशल को व्यक्त करते हैं। उक्ति के संदर्भ में समास का तात्पर्य स्पष्ट कीजिए तथा निम्नांकित सामासिक शब्दों का विग्रह कीजिए- तुलसीकृत, यथाशक्ति, श्रमसाध्य, प्रकाश युक्त, लोकोत्तर, देशभक्त, लम्बोदर।

(3) निम्नलिखित प्रत्ययों को मिलाकर शब्द बनाइये।

अंक, अंत, आवना, औता, आलु, आका

(4) निम्नलिखित शब्दों के उपसर्ग अलग कीजिए।

अत्याचार, अभिभाषण, अभ्यूदय, प्रत्युपकार, प्रतिक्षण, सुमार्ग, निराधार।

नोट

संधि, समास, उपसर्ग तथा प्रत्यय के बारे में "हिन्दी व्याकरण" की पुस्तक देखिए तथा इस प्रकार के शब्दों की जानकारी प्राप्त कीजिए।

1.11 वाक्य विचार

वाक्य ही भाषा की सार्थक इकाई कहलाती है। यद्यपि शब्द भी अर्थ युक्त होते हैं, तथापि उनका एक क्रम में आना ही भाव या विचार को प्रकट करता है जैसा कि कहा भी गया है- "शब्दों के उस क्रमबद्ध समूह को, जिसमें अर्थ पूरी तरह स्पष्ट हो, वाक्य कहते हैं।" वस्तुत: विचारों अथवा भावों का सार्थक संप्रेषण वाक्य के माध्यम से ही होता है- यथा अशोक स्कूल गया। गाय दूध देती है-

वाक्य में कर्त्ता और क्रिया अवश्य होती है- इस वाक्य में 'अशोक' कर्त्ता है, 'गया' क्रिया है। वाक्य के अंत में आवश्यकतानुसार पूर्ण विराम, प्रश्न वाचक या विस्मयादि बोधक चिहन लगाए जाते हैं।

जहाँ शब्दों का समूह तो हो परंतु ठीक या पूरा-पूरा अर्थ प्रकट न हो, उसे वाक्य नहीं कहा जा सकता यथा राम और लक्ष्मण सहित। कुछ लोग बड़े होते है। ऊपर लिखे वाक्यों से ठीक-ठीक अर्थ नहीं प्रकट होता, अत: इन्हें वाक्य नहीं कहा जा सकता। इन्हें वाक्य बनाने के लिए इनमें इस प्रकार सुधार करना पड़ेगा यथा राम और सीता, लक्ष्मण सहित वन को गए। कुछ लोग वाक्य के दो भाग या खण्ड होते है- पहला उद्देश्य और दूसरा विधेय।

"जिसके विषय में कुछ कहा जाए उसे उद्देश्य कहते हैं और जो कुछ कहा जाए उसे विधेय कहते हैं। यथा राम काम करता है। इसमें राम उद्देश्य है। शेष विधेय में गिने जाएँगे। उद्देश्य की विशेषता बताने वाले शब्द या वाक्य; खण्ड, उद्देश्य का विस्तार का विस्तार कहलाते हैं। "यथा" मेरा छोटा भाई राम काम करता है। " इसमें मेरा छोटा भाई खण्ड राम शब्द का विस्तार है।

उद्देश्य	विधेय
मेरा छोटा भाई राम	अपना काम खूब परिश्रम से करता है।
अच्छे खिलाड़ी	बहुत तेज दौडते हैं।
अच्छा बालक	प्रतिदिन अपना पाठ पढ़ता है।

हिन्दी भाषा में वाक्यों का वर्गीकरण दो प्रकार से किया जाता है।

1.11.1 रचना के आधार पर वाक्य के भेद

(1) रचना के आधार पर वाक्य के भेद

इसके अनुसार वाक्य के तीन भेद है-

1. सरल वाक्य 2. संयुक्त वाक्य 3. मिश्रित वाक्य

1 **सरल वाक्य**

जिस वाक्य में एक ही उद्देश्य और एक ही विधेय हो, उसे सरल वाक्य कहते हैं, जैसे हर्षित पुस्तक पढ़ता है।

2 **संयुक्त वाक्य**

जिस वाक्य में दो या दो से अधिक वाक्य खण्ड स्वतंत्र होते हुए भी किसी समुच्चय बोधक द्वारा जुड़े हुए हों, उसे संयुक्त वाक्य कहते हैं। यथा-

- दीपक पुस्तक पढ़ता है और खुशबू खेल रही है।
- गगन ने बहुत परिश्रम किया किन्तु पास न हो सका।

3 **मिश्रित वाक्य**

जिस वाक्य में एक वाक्य प्रधान हो और अन्य वाक्य उसके अधीन हो, उसे मिश्रित वाक्य कहते हैं- यथा-

- जब वह यहाँ आया तब मैं पुस्तक पढ़ रहा था।
- मैंने तुम्हारी पुस्तक चुराई, यह असत्य है।

1.11.2 अर्थ के आधार पर वाक्य के भेद

अर्थ के अनुसार वाक्यों के आठ मुख्य भेद होते हैं :-

(1) सामान्य कथानात्मक वाक्य- इसमें साधारण रूप से कोई बात कही जाती है या किसी प्रश्न का उत्तर दिया जाता है, यथा- अध्यापिका पढ़ा रही है।

(2) इच्छार्थक वाक्य- इसमें इच्छा, आशीर्वाद या प्रशंसा सूचित करने वाले वाक्य होते हैं, यथा-

- बेटा तुम पास हो जाओ!
- आप सौ वर्ष जिएँ।
- आप सौ वर्ष जिएँ!

(3) प्रश्नवाचक वाक्य- प्रश्नवाचक वाक्यों में कुछ प्रश्न पूछे जाते हैं यथा-

- आप बम्बई कब जाएँगे?
- क्या आप दिल्ली में रहते हैं?

(4) निषेधात्मक वाक्य- ये नकारात्मक वाक्य होते हैं और 'न', नहीं अथवा मत लगाकर बनाएं जाते हैं- यथा-

- न मैं घर ही जा सका और न कोई सूचना दे पाया।
- आप यहाँ कल नहीं आए थे।
- बेटे दूसरों की पुस्तक मत छूना।

(5) विस्मयादि बोधक वाक्य- जहाँ, आश्चर्य, प्रसन्नता, दुःख, शोक, आदि प्रकट किए जाएँ- यथा-

- हाय! शर्म के मारे मैं मरी।
- अफसोस! अशोक परीक्षा में असफल रहा।

(6) संदेहार्थक वाक्य- जहाँ संदेह (शक) प्रकट हो- यथा-

- शायद कल वह यहाँ आ जाए!
- वह आता होगा।

(7) आज्ञार्थक वाक्य- जहाँ आज्ञा दी जाए। जैसे-

- आप यहीं से चले जाए।
- कल सभी प्रश्नों को हल करके लाना है।

(8) संकेतार्थक वाक्य- जिस वाक्य में संकेत का बोध हो, यथा-

- यदि आप कश्मीर चलो तो मैं चलूँगा ।

1.12 अभ्यासार्थ-प्रश्न

1 "वाक्य भाषा की सार्थक इकाई है।" क्यों? विचार व्यक्त कीजिए।

2 रचना के अनुसार वाक्यों के कितने भेद होते हैं? प्रत्येक की सोदहारण व्याख्या कीजिए।

3 अर्थ के अनुसार वाक्य कितने प्रकार के होते हैं। उदाहरण सहित विवेचना कीजिए।

1.13 हिन्दी का वर्तमान व भविष्यगत परिप्रेक्ष्य

हिन्दी-शिक्षण विद्यार्थी के केवल ज्ञान पक्ष को ही सबल नहीं करती है, अपितु उसके भाव पक्ष को भी सशक्त कर उसे अपेक्षाकृत अधिक सक्रिय जागरूक नागरिक व संवेदन शील सामाजिक सदस्य बनने के लिए प्रेरित करना है। कारण कुछ भी हों - व्यावसायिक, साहित्यिक अथवा सांस्कृतिक - हिन्दी का प्रचार-प्रसार होना एक स्वाभाविक प्रक्रिया है। आधुनिक संचार माध्यमों की प्रचुरता के कारण हिन्दी का सामान्य विकास, एक विश्वभाषा के रूप में स्वत: हो रहा हैं। हिन्दी शिक्षक को यह भली-भाँति ज्ञात होना चाहिए कि "हिन्दी' ' विश्व की एक प्रमुख, उत्कृष्ट, समृद्ध तथा व्यापक भौगोलिक सीमाओं में आबद्ध भाषाओं में से एक है। यह भारत की गरिमामय संस्कृति की परिचायक, राष्ट्रीय गौरव की प्रतीक और सामाजिक अस्मिता की संरक्षिका हैं। प्रिंट मीडिया ने भारत के स्वतंत्रता आन्दोलन को हिन्दी के माध्यम से गति प्रदान की थी। वैसे भी अति प्राचीन काल से यह भाषा सम्पूर्ण भारत की सम्पर्क माषा रही है और इस विशाल बहुभाषी राष्ट्र को एक सूत्र में बाँधने में इसकी महत्त्वपूर्ण भूमिका रही है।

आज अमेरिका जैसे भोगवादी देश में निवास करने वाले भारतीयों के साथ-साथ वहाँ के निवासियों को भी धर्म, धार्मिक अनुष्ठानों तथा भारतीय संस्कृति को भली प्रकार निरपेक्ष भाव से स्थापित करने के लिए हिन्दी में नाटकों का आयोजन करते रहना तथा हिन्दी फिल्मों के गीतों का उपयोग व्याकरणिक ज्ञान प्रदान करने में उपयोग करना सामान्य है। मोरिशस तो हिन्दी साहित्यकारों का उर्वर जन्म केन्द है। एक लघुभारत के रूप में वहाँ हिन्दी भाषा की प्रत्येक विधा में (कविता, कहानी, उपन्यास: आलोचना, नाटक, संस्मरण आदि) साहित्य का प्रकाशन किया जा रहा है। इस शताब्दी में ही वहीं भारतीय संस्कृति के प्रसार-प्रचार के केन्द्र भी स्थापित किए गए हैं। हिन्दी के प्रसार में वहीं अभूतपूर्व वृद्धि हुई है।

यद्यपि यह ध्रुवसत्य है कि हिन्दी को राज्याश्रय कभी प्राप्त नहीं हुआ तथापि वास्तविकता यह है कि हिन्दी भारत में ही नहीं वरन् विश्व के अनेक प्रदेशें में सर्वाधिक जन

समूह के द्वारा व्यवहृत भाषा है। भारत में श्रमिक वर्ग, साधु संत, परिव्राजकों ने इसे वृहत रूप प्रदान किया है। वस्तुत: इस भाषा की संप्रेषण शक्ति अतुलनीय है।

देवनागरी एक आकर्षक व विशिष्ट लिपि है क्योंकि इसमें प्राय: सभी मूल ध्वनियों के लिए पृथक् ध्वनि चिह्न हैं। हिन्दी भाषा के पास वस्तुत: एक अति विस्तृत शब्द भंडार है वैसे भी इसकी अनेक उपभाषाओं में भी यह बोली व लिखी जाती है।

भविष्यगत अपेक्षाओं की परिपूर्ति हिन्दी-शिक्षक की व्यावसायिक प्रतिबद्धता पर आश्रित है। इस दिशा में कतिपय बिन्दु उल्लेखनीय हें- यथा -

1 हिन्दी-शिक्षकों का साहित्य के साथ-साथ तकनीक-प्रयोग में अभिरुचि।
2 शिक्षण हेतु अधिकाधिक रूप में क्रिया-आधारित विधियों का प्रयोग।
3 शिक्षण में सम्प्रेषणीयता के विकास हेतु विशेष प्रयत्न।
4 कक्षा-शिक्षण केर साथ-साथ सामुदायिक वातावरण को भी महत्त्व प्रदान करना।
5 हिन्दी शिक्षक का एक से अधिक भाषा का ज्ञान जैसे संस्कृत या अंग्रेजी।

(उपर्युक्त विषय पर इकाई सं. 2 के अन्तर्गत भी विवेचनात्मक अध्ययन-सामग्री उपलब्ध है।)

1.14 सारांश

इस इकाई के द्वारा आपने "भाषा की संरचना, इतिहास, आधार भूत सम्प्रत्यय एवं भविष्यगत परिप्रेक्ष्य" में भाषा से संबंधित अलग-अलग प्रकरणों का अध्ययन किया। इसमें भाषा की भूमिका, उद्देश्य, भाषा की व्यवस्था भाषा के इतिहास के अन्तर्गत दिव्योत्पत्ति, संकेत रणन, आवेग, श्रम-ध्वनि अनुकरण, इंगित एवं समन्वय सिद्धान्तों का भी संक्षिप्त अध्ययन किया।

भाषा के आधारभूत प्रत्यय में भौतिक, समाजशास्त्रीय, सांस्कृतिक एवं मनोवैज्ञानिक सम्प्रत्ययों, उच्चारण के अवयव, वर्गों के उच्चारण स्थान आदि का भी उसके प्रचार-प्रसार की दिशा व दशा के सम्बन्ध में आवश्यक व्यावहारिक तथ्यों का विश्लेषणात्मक अध्ययन किया।

1.15 अभ्यासार्थ प्रश्न

1 भाषा की प्रकृति पर प्रकाश डालिए और अपने विचारों की सप्रमाण पुष्टि कीजिए।
2 "संतुलित व्यक्तित्व के लिए भाषा का होना आवश्यक हैं।" इस कथन की पुष्टि कीजिए।
3 भाषा की सामान्य विशेषताएँ एवं प्रवृत्तियाँ क्या हैं? प्रकाश डालिए।
4 हिन्दी-शिक्षण को प्रभावी बनाने में व्याकरण-नियमों का ज्ञान आवश्यक क्यों है? विचार व्यक्त कीजिए।

1.16 संदर्भ एवं अध्ययन हेतु पुस्तकें

1 बाहरी, हरदेवी (डॉ.) - व्यावहारिक व्याकरण
लोक भारती प्रकाशन, इलाहबाद, 1974

2 भाटिया, कैलाश चन्द्र सहाय, रामनाथ शर्मा, रामजन्य - 'मानक हिन्दी व्याकरण'
राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद नई दिल्ली, 1991

3 राघव प्राश (डॉ.) - 'व्यावहारिक हिन्दी व्याकरण'

	मिश्रा, सत्यप्रकाश शर्मा, श्रीमती दिव्य विभूति इन्दौरिया- बनवारीलाल		भाषा- ज्ञान और रचना" पिंक सिटी पब्लिशर्स, जयपुर- 2001
4	भारतद्वाज- बालकृष्ण	-	'भाषा विज्ञान ' मानक हिन्दी के संदर्भ में पांडुलिपि प्रकाशन, नई दिल्ली- 1976
5	तिवारी, उदयनारायण	-	'भाषा - शिक्षण' विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा- 1999
6	शर्मा- देवेन्द्रनाथ	-	'भाषा विज्ञान की भूमिका' राधा कृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली- 1978
7	'वर्तमान साहित्य'	-	पत्रिका- सम्पादक रामघाट रोड, अलीगढ़- उत्तर प्रदेश।

इकाई-2

"हिन्दी शिक्षण के भविष्योन्मुख उद्देश्य"

Objectives of Teaching Hindi with Futuristic vision

इकाई की रूपरेखा:-

2.0 भूमिका तथा उद्देश्य

2.1 हिन्दी की भाषागत विशेषता

2.2 मातृभाषा हिन्दी-शिक्षण की आवश्यकता

2.3 हिन्दी शिक्षण के उद्देश्य (मातृभाषा के रूप में)

2.3.1 उद्देश्य प्राप्ति के कक्षान्तर्गत माध्यम

2.3.2 भाषा-शिक्षण के सामान्य सिद्धान्त

2.4 द्वीतीय भाषा के रूप में हिन्दी शिक्षण उद्देश्य

2.4.1 द्वितीय भाषा शिक्षण विधियाँ

2.5 सृजनात्मकता-विकास के विद्यालयी कार्यक्रम

2.6 हिन्दी शिक्षण उद्देश्यों में भविष्योन्मुख दृष्टि

2.7 सारांश

2.8 अभ्यासार्थ प्रश्न

2.9 अध्ययन हेतु सन्दर्भ-पुस्तक सूची

2.0 भूमिका तथा उद्देश्य

मातृभाषा व्यक्ति के जीवन के समस्त भाव-विचारों अथवा कार्य-व्यवहार की संरचना व्यवस्था है। व्यक्ति इसे अपने जन्मगत पारिवारिक तथा सामाजिक परिवेश से अपनी शैशवावस्था से ही अनौपचारिक रूप से सीखता रहता है।

व्यक्ति के सन्तुलित व्यक्तित्व- विकास की यह एक नियामिका शक्ति है- उसके समस्त वैयक्तिक तथा सामाजिक कार्यों की निष्पन्नता भाषिक अभिव्यक्ति पर ही निर्भर है, अत: भाषा के शिक्षण- उद्देश्य बहुआयामी तथा व्यापक होंगे। उद्देश्य वस्तुत: दिशासूचक संकेत होते हैं और ये पाठ्य विषय- विशेष की प्र.ति, स्वरूप तथा मानव-जीवन में उसके उपयोग की दृष्टि से निर्धारित किए जाते हैं। हमारे देश भारत में हिन्दी एक बहुसंख्यक जन-समुदाय के लिए मातृभाषा है। दक्षिण भारत के अहिन्दी भाषी नागरिक इसे राष्ट्रभाषा के रूप में अध्ययन करते हैं अत: उनके लिए यह एक द्वितीय भाषा है। विदेशी भू-भाग पर भी हिन्दी का शिक्षण द्वितीय भाषा के रूप में हो रहा है। प्रस्तुत इकाई पाठ के अध्ययनोपरान्त आप निम्नलिखित उपलब्धियाँ अर्जित कर सकेंगे-

(1) मातृभाषा शिक्षण की आवश्यकता तथा उद्देश्यों के सम्बन्ध में आवश्यक अवबोध स्पष्ट हो सकेंगे।

(2) द्वितीय भाषा के रूप में हिन्दी शिक्षण के उद्देश्य व शिक्षण विधियों का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।

(3) भाषा शिक्षण के उद्देश्यों की सम्पूर्ति के लिए आयोजित होने वाली विद्‌यालयी क्रियाओं का अवबोध हो सकेगा।

(4) हिन्दी शिक्षण के भविष्योन्मुखी उद्देश्य-दृष्टि के सन्दर्भ में अपनी अध्यायकीय भूमिका का आकलन कर सकेंगे।

(5) विद्‌यार्थियों की भाषिक सम्प्रेषणीयता तथा सृजनात्मक प्रवृत्ति- प्रकाशन के लिए आवश्यक शैक्षिक पर्यावरण का विकास कर सकेंगे।

2.1 हिन्दी की भाषागत विशेषता

भाषा के रूप में हिन्दी को विश्व की एक प्रमुख, समृद्ध तथा व्यापक भौगौलिक सीमाओं में आबद्ध निवासियों की भाषा कहा जाता है। एक अध्यापक के रूप में आपको इसकी निम्नलिखित प्रमुख भाषागत विशेषताओं का अभिज्ञान होना चाहिए:-

(1) मूलत: संस्कृत भाषा से निःसृत हिन्दी भारत की गरिमामय संस्कृति की परिचायक, सामाजिक समरसता और राष्ट्रीय गौरव की संरक्षिका है। भारत के स्वतन्त्रता-आन्दोलन को इसी के माध्यम से गति प्रदान की गई क्योंकि यह भारत के प्रत्येक स्थान पर बोली या समझी जाती है।

(2) इस भाषा के पास लगभग तीन लाख शब्दों का भण्डार है- वैसे भी इसकी अनेक उपभाषाओं में भी यह बोली या समझी जाती है। हजार से अधिक इसकी मूल धातुएँ हैं जो लिंग, वचन, विभक्तियाँ, काल, अर्थत्व आदि से मिलकर हजारों अर्थों की रचना करने में सक्षम हैं। इसमें भारतीय आर्य भाषाओं से आए तत्सम व तदभव अपूर्व मिश्रण है।

(3) इसके अपने सर्वनाम हैं- मैं, तुम, तू यह, वह, कोई, कौन आदि- इनकी परम्परा अन्य भारतीय भाषाओं में प्राय: समान है। ध्वनिगत व रूपगत साधारण अन्तर हो सकता है लेकिन संरचना का धरातल समान है। इसकी सामासिक व संधि प्रक्रिया विलक्षण व अनूठी है।

(4) इस भाषा की देवनागरी लिपि का ध्वनितत्व पूर्णत: वैज्ञानिक है। स्वरों के स्थान पर उनकी मात्राओं का प्रयोग किया जाता है, जिससे शब्दों का आकार अपेक्षाकृत छोटा हो जाता है। इसके अतिरिक्त यह लिपि भारत में प्रयुक्त होने वाली अन्य लिपियों- गुजराती, मराठी अथवा बंगाली आदि से भी समानरूपा है इस लिपि में विदेशी ध्वनियों को भी व्यक्त करने की पर्याप्त शक्ति है। सम्प्रेषणीयता के स्तर पर यह अतुलनीय है।

(5) भाषातात्विक आधारों पर यह अधिकांश भारतीय भाषाओं से मिलती है। इसकी अपनी मूल सम्पत्ति इसके क्रियामूल हैं जो संख्या में लगभग 1300 हैं- ये क्रियामूल अकर्मक भी हैं और सकर्मक भी- सकर्मक क्रियामूल पुन: प्रेरणावाची भी है। इस प्रकार एक-एक धातु दो या तीन मूलरूपों में रहती है, जिससे कि अर्थरचना में विविधता लाने की सुविधा रहती है। वाक्य में हर क्रियापद अपने नियन्त्रक पदों के लिंग, वचन, पुरूष और अर्थ के तत्वों को धारण किए रहता है तथा वाक्य में जिस अर्थ पर विशेष जोर देना होता है उसे वह क्रिया के निकट लाकर रखती है।

(6) इसकी विभक्तियाँ- स्वर, प्रत्यय अनेक प्रकार के कार्य करने में सक्षम हैं। ये व्युत्पादन भी करते हैं और व्याकरणिक सम्बन्धक के रूप में भी कार्य करते हैं।

वर्तमान में हिन्दी देश व्यापी साहित्य और लोक-संचार का माध्यम है।

ज्ञान, विज्ञान, साहित्य, व्यापार, वाणिज्य शिक्षा जैसे जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में इसका वर्चस्व विद्यमान है। राज्यभाषा बनने से पूर्व ही इसका प्रचार-प्रसार विदेशों तक में शिक्षा के एक विषय के रूप मे हो चुका था। आज विश्व के लगभग 137 विश्वविद्यालयों में हिन्दी विषय का शिक्षण प्रचलित है। इस भाषा में भारत की गत 2000 वर्षा की सामाजिक-सांस्कृतिक विरासत का इतिहास प्रच्छन्न है और इसके साथ हजारों वर्षो की वैदिक संस्कृत परम्परा का प्रभाव भी इस पर अक्षुण्ण है। हिन्दी के अध्यापक को इसकी प्रकृति, आन्तरिक संरचना, शब्द रचना की रीतियों, व्याकरणिक सांचों, वाक्य-रचना, अर्थ-प्रकाशन की क्षमताओं का जितना व जैसा ज्ञान होगा, उसी सीमा तक हिन्दी शिक्षण के उद्देश्यों की पूर्ति हो सकती है। एक अध्यापक के रूप में आपको इसकी वर्णमाला का सम्यक् अध्ययन करना चाहिए। (इकाई सं. एक में इस सन्दर्भ में विस्तृत विवरण प्रस्तुत किया गया है)

2.2 मातृ भाषा

हिन्दी शिक्षण की आवश्यकता:- भाषा प्रतीकों का निर्माण प्रथमत: मौखिक होता है तत्पश्चात् लिखित, जो कि मौखिक प्रतीकों का प्रतिनिधित्व करते हैं। भाषा उच्चारण-सापेक्ष, समाज-सापेक्ष होती है और एक बालक इसे अपने परिवार-सदस्यों तथा अपने परिवेश से अनौपचारिक रूप से स्वत: ही सीख लेता है। यह मातृभाषा उसके जीवन की समस्त सामान्य आवश्यकताओं की पूर्ति में पर्याप्त सहायता करनी है, लेकिन उसके व्यक्तित्व के समन्वित विकास के कतिपय पक्ष ऐसे भी है जिनको समृद्ध करने के लिए विद्यालयों में मातृभाषा की औपचारिक शिक्षा का प्रावधान किया जाता है। मातृभाषा की शिक्षा के प्रयोजन निम्नलिखित हैं :

(1) वाचन तथा उच्चारण की शुद्धता के लिए विद्यालयों में औपचारिक भाषा शिक्षण की व्यवस्था की जाती है- अशुद्ध उच्चारण कभी भी प्रभावी नहीं। पारिवारिक रूप से कोई भी भाषा लिपिबद्ध नहीं होती। विद्यालय में ही बालकों को लिपि का ज्ञान कराकर उनके मौखिक वाचन में आवश्यक स्वराघात, बलाघात तथा यति, गति का ध्यान रखने के लिए पर्याप्त अभ्यास कराया जाता है।

(2) शब्द-भण्डार वृद्धि हेतु- पारिवारिक सदस्य होने के कारण एक बालक दैनिक कार्य-व्यापार की आवश्यकताओं की पूर्ति कर सकता है लेकिन विभिन्न विषयों का ज्ञान प्राप्त करने तथा अपनी अभिव्यक्ति में व्यापकता व उच्चता लाने के लिए अन्यान्य शब्दों की अपेक्षा रहती है जो कि विद्यालयी शिक्षा से सम्भव हो सकती है। व्यक्ति के बौद्धिक, भावात्मक, सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक, राजनीतिक आदि समस्त क्षेत्रों से सम्बन्धित कार्य-कलापों के सम्यक् सम्पादन हेतु उपयुक्त शब्दावली आवश्यक है- भाषा शिक्षण के द्वारा ही उसकी पूर्ति सम्भव होती है।

(3) ज्ञान-विज्ञान के विविध क्षेत्रों में अध्ययन करने अथवा स्वाध्याय के द्वारा आत्मविकास करने के लिए भी औपचारिक रूप से विद्यालयों में भाषा शिक्षण की व्यवस्था की जाती है। बालकों की लिखित व मौखिक सम्प्रेषणीयता तथा सृजनात्मक अभिव्यक्ति-विकास के लिए विद्यालयों में अनेकानेक अवसर उपलब्ध होते हैं। सामाजिक रूप से पारस्परिक अन्तर्सम्बन्धों के विकास का आधार भाषा ही है। औपचारिक भाषा शिक्षण से ही यह

सम्भव हो सकता है कि बालकों को अपने देश की सभ्यता-संस्कृति, ज्ञान-विज्ञान की श्रेष्ठता तथा सामाजिक-वैज्ञानिक उपलब्धियों का आवश्यक ज्ञान प्राप्त हो तथा वे एकात्मभाव से उसके संरक्षण, परिवर्धन अथवा परिशोधन में प्रवृत्त हो सकें।

राष्ट्रीय, भावात्मक एकता का विकास भी सफल भाषा शिक्षण से ही सम्भव है। एक राष्ट्रीय भाषा के द्वारा समस्त राष्ट्र की जनता के साथ एकात्मभाव की वृद्धि होती हैं। अन्तर्राष्ट्रीय सद्भावना-वृद्धि में भी भाषा शिक्षण की ही प्रमुख भूमिका है। आधुनिक साइबर-युग में व्यक्तित्व-उन्नयन, वैश्विक ज्ञान प्राप्ति तथा सम्प्रेषणीयता के विकास के लिए भाषा का समुचित ज्ञान आवश्यक है। पारस्परिक विचार विनिमय के द्वारा ही आधुनिक युग के अनेक मतभेद दूर किए जा सकते हैं। भाषा के माध्यम से ही विद्यार्थी सामाजिक-राजनीतिक व आर्थिक क्रियाकलापों को समझने में सर्वाधिक प्रत्यक्ष अन्तर्दृष्टि विकसित कर सकते है । भाषा की क्रिया वस्तुत: किसी भी समाज के निर्माण की आधारशिला है। वर्तमान वैश्वीकरण के समय विद्यालयों में न केवल मातृभाषा-शिक्षण की अपितु अन्यान्य भाषाओं के शिक्षण की व्यवस्था की आवश्यकता है। भाषा वस्तुतः मानवीय व्यवहार है अत: व्यापार-वाणिज्य सुविधा के साथ-साथ सांस्कृतिक, साहित्यिक व बौद्धिक धरातल पर विचारों के सम्यक् आदान-प्रदान से राष्ट्रीय एकता व अन्तर्राष्ट्रीय सद्भावना के विकास के लिए भी इसका शिक्षण परमावश्यक है।

2.3 हिन्दी शिक्षण के उद्देश्य

शैक्षिक उद्देश्य तथा अधिगम प्रतिफलन में घनिष्ट सम्बन्ध होता है। उद्देश्यों के पूर्व नियोजन से शिक्षण और अधिगम प्रक्रिया के विकास हेतु आवश्यक विधि के चयन में महत्त्वपूर्ण निर्णय लेने में सुविधा रहती है। वर्तमान समय में अध्यापक की प्रभावोत्पादकता पर विशेष बल दिया जाने लगा है। उद्देश्यों के समुचित ज्ञान से अध्यापक की प्रभावोत्पादकता में वृद्धि होती है क्योंकि शिक्षण उद्देश्यों के परिबोध से वह अपने कक्षा कक्ष अथवा बाह्य कक्षा शिक्षण को एक निश्चित दिशा प्रदान कर सकता है। भाषा के उद्देश्य प्राय: कौशलात्मक होते हैं और कौशल में प्रवीणता अर्जित करने के लिए दैनिक अभ्यास की आवश्यकता होती है। भाषा का भी अपना एक कलात्मक विज्ञान होता है जो विद्यार्थी के सार्थक व प्रभावी सम्प्रेषण- व्यवहार को निर्देशित करता है।

भाषा शिक्षण के उद्देश्यों को समन्वित रूप से निम्नांकित चार्ट के द्वारा स्पष्ट किया जा सकता है-

भाषा–शिक्षण के उद्देश्यों का वर्गीकरण

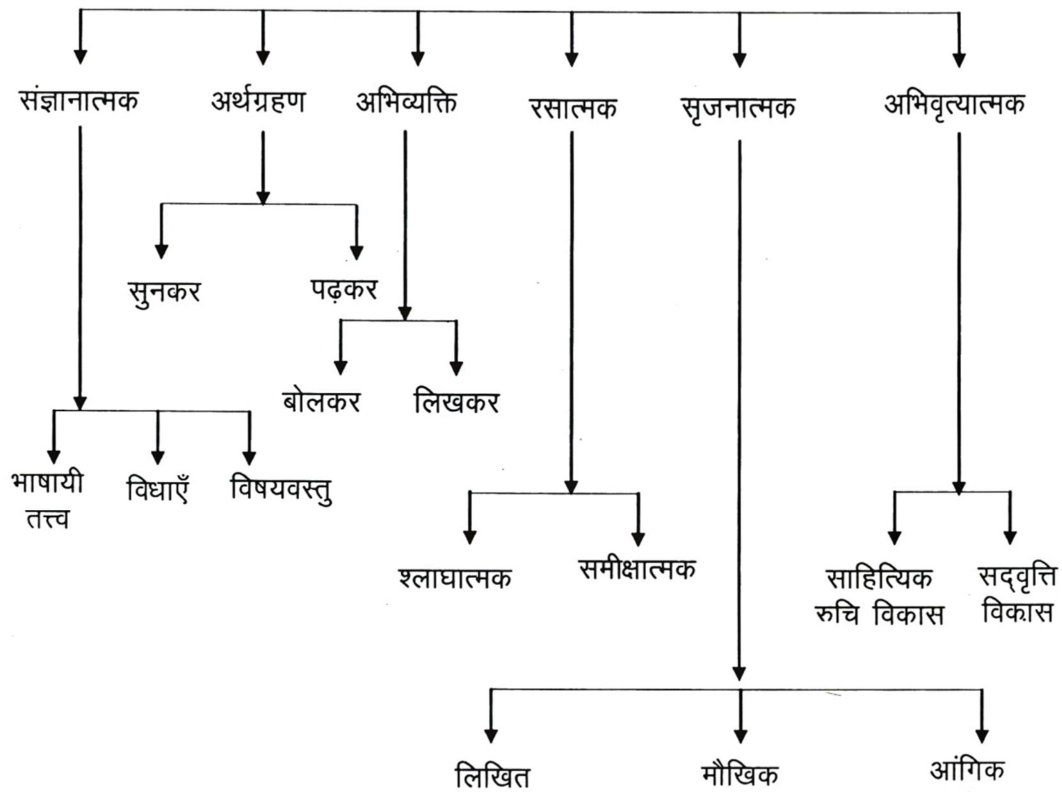

भाषा शिक्षण उद्देश्यों का निर्धारण वस्तुत: विद्यार्थी के बहुआयामी व्यक्तित्व विकास के सन्दर्भ में किया जाता है जो कि भाषिक तत्वों के ज्ञान प्रदान करने से प्रारम्भ होकर परिष्कृत होते हुए साहित्य-सृजन और सद्वृत्ति विकास की निष्पत्ति को समाहित करते है । अत: उपर्युक्त भाषिक तथा साहित्यिक पक्षों को परस्पर सम्बद्ध रूप में स्वीकार करते हुए आपको, अपने अध्यापन में प्रवृत्त होना चाहिए । भाषा शिक्षण की दृष्टि से उद्देश्यों का वर्गीकरण तथा उन्हें प्राप्तव्य (व्यवहार-परिवर्तन) की भाषा में प्रस्तुत करने के सार्थक प्रयास राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद् नई दिल्ली, केन्द्रीय हिन्दी संस्थान, आगरा, माध्यमिक शिक्षा बोर्ड, अजमेर, राजस्थान तथा राज्य शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण संस्थान, उदयपुर ने किया है ।

यहाँ आपको यह स्मरण रखने की विशेष आवश्यकता है कि भाषा शिक्षण के अधिकांश उद्देश्य कौशलात्मक होते हैं । प्रारम्भिक कक्षाओं में भाषा शिक्षण का प्रमुख कार्य भाषायी कौशलों का विकास करना होता है । शनै: शनै: जब अभ्यास से ये कौशल विकसित हो जाते हैं तब भाषा, ज्ञान प्राप्ति, रसास्वादन, श्लाघा परक, अभिवृत्ति- अभिरुचि विकास का एक प्रबल माध्यम बन जाती है ।

अग्रलिखित पृष्ठों में उपर्युक्त वर्गीकरण के आधार पर भाषा शिक्षण के उद्देश्य तथा उनकी पूर्ति के परिणामस्वरूप विद्यार्थियों में होने वाले व्यवहारगत परिवर्तनों की विवेचना की जा रही है । (अर्थग्रहण (सुनना-पढ़ना) तथा अभिव्यक्ति (बोलना-लिखना) उद्देश्यों के सम्बन्ध में विस्तृत विवरण इकाई सं. 5 के अन्तर्गत किया गया है।)

शेष उद्देश्यों का विवेचन अधोलिखित है-

1. संज्ञानात्मक भाषिक तत्वों का ज्ञान	अपेक्षित व्यवहार परिवर्तन
ध्वनि, उच्चारण, आरोह-अवरोह तथा वर्तनी	विद्यार्थी इन्हें पहचान सके वह इनका प्रत्यभिज्ञान कर सकेगा
शब्द- रचना उपसर्ग प्रत्यय, संधि, समास शब्द- भण्डार- अर्थ पर्याय, प्रयोग लोकोक्तियाँ अनेकार्थी आदी	वह इनके अशुद्ध रूपों की त्रुटियाँ पकड़ सकेगा वह इनके उदाहरण दे सकेगा
वाक्य रचना- पद रचना, वाक्यों के प्रकार वाक्यांश, विराम चिह्न	वह इनकी तुलना कर सकेगा परस्पर अन्तर कर सकेगा
	वह इनका विश्लेषण व संश्लेषण कर सकेगा
	वह इनका वर्गीकरण कर सकेगा
	परस्पर सम्बन्ध बता सकेगा
2. विषय-वस्तु का ज्ञान प्राप्त करना	
विषय-वस्तु-स्पष्टीकरण व्यावहारिक जीवन से सम्बन्धित ज्ञान, सांस्कृतिक जीवन का ज्ञान, जिसके अन्तर्गत उदात्त जीवन-मूल्य, अनुभूतियाँ, पौराणिक गाथाएँ, लोक जीवन का समावेश होता है, लेखक व कवियों का परिचय, साहित्यिक विधाओं में सन्निहित विषय वस्तु-चरित्र-चित्रण, रचनागत विशेषताएँ आलोचना, छन्द, अलंकार, रस	अपेक्षित व्यवहार परिवर्तन प्रथम उद्देश्य में प्रथम उद्देश्य उल्लिखित सभी अपेक्षित परिवर्तन बौद्धिक, साहित्यिक तथा भावात्मक विकास हेतु आवश्यक वातावरण प्राप्त कर सकेगा । साहित्यकारों के भाव-विचारों को आत्मसात करेगा । अध्ययनशीलता में वृद्धि करेगा
3. साहित्यिक विधाओं का ज्ञान प्राप्त करना	
साहित्यिक विधाएँ-निबन्ध, कहानी, नाटक, उपन्यास, कविता, गीत, रिपोर्ताज, आत्मकथा, रेखाचित्र, संस्मरण इत्यादि	अपेक्षित व्यवहार परिवर्तन प्रथम उद्देश्य में वर्णित सभी अपेक्षित व्यवहार परिवर्तन
4 साहित्य- श्लाघा, समालोचना तथा सद्वृत्तियों का विकास	अपेक्षित व्यवहार परिवर्तन
पठन सामग्री-काव्यात्मक साहित्य, ललित निबन्ध, समालोचना, संस्मरण, आत्मकथा यात्रा वर्णन, नाटक, कहानी, उपन्यास, रेखा चित्र आस्था, साहित्य प्रेम, देश-प्रेम	विद्यार्थी मर्मस्पर्शी स्थलों को पहचान सकेगा । साहित्यिक सौन्दर्य तत्त्वों, भावसौन्दर्य विचार- सौन्दर्य को पहचान सकेगा तथा भावानुभूति कर सकेगा ।वह

मानव-प्रेम, सहृदयता, सहभागिता, सम्वेदनशीलता अन्तर्राष्ट्रीय सद्भावना	सुन्दर पद्यांशों को कण्ठस्थ कर सकेगा । गद्य अथवा पद्य काव्य में वर्णित चरित्र की उदात्त वृत्तियों को ज्ञात कर सकेगा । प्राचीन तथा नवीन साहित्यि में प्रयुक्त सांस्कृतिक वृत्तों का प्रत्यक्ष ज्ञान तथा प्रत्यास्मरण कर सकेगा । काव्य में प्रयुक्त प्रतीको के गुण- दोषों की तटस्थ भाव से व्याख्या व समीक्षा कर सकेगा । वह भाषा शैली का मूल्यांकन कर सकेगा । वह भाषा व शैली की दृष्टि से साहित्यिक अंशों की तुलना कर सकेगा वह आदर्शों के प्रति आस्था रखेगा । वह वातावरण तथा मानव जीवन के प्रति सम्वेदनशील और सहृदय रहेगा । वह जीवन की समस्त क्रियाएँ सद्प्रवृत्तियों से करेगा ।
5 सृजनात्मकता का विकास	**अपेक्षित व्यवहार परिवर्तन**
सृजनात्मकता का विकास सृजन के रूप ललित निबन्ध, कविता कहानी, नाट्यीकरण, यात्रा वृत्तांत, डायरी लेखन, आत्मवृत, संस्मरण, रेखाचित्र, रिपोर्ताज, स्किप्ट लेखन, संवाद, पत्र-लेखन, जीवनवृत्त आदि ।	सृजनात्मक लेखन हेतु उपयुक्त ललित शब्दावली, वाक्य रचना, कथन शैली का प्रयोग कर सकेगा । अपनी वाक् वैचित्र्य, उक्ति में वैचित्र्य, मौलिकता आदि गुणों का समावेश कर सकेगा । वह गहीत और स्वानुभूत भावों और विचारों को कल्पना की सहायता से नवीन रूप देकर अभिव्यक्त कर सकेगा । वह विषय तथा प्रसंग के अनुकूल भाषा एवं शैली का उपयोग कर सकेगा ।
6 सद्यप्रवृत्तियों का विकास तथा भाषा साहित्य में रुचि लेना	अपेक्षित व्यवहार परिवर्तन
स्पष्टीकरण-भाषा व साहित्य सम्वेदनशीलता विचारों के आदान-प्रदान की अभिवृत्ति निज भाषा, साहित्य, देश, धर्म, आस्था एवं संस्कृति के प्रति आदर का स्थायी भाव और उसके मूल तत्वों का ग्रहण करने की अभिवृत्ति, चित्र वृत्तियों का परिमार्जन उच्च आदर्शों का निर्माण एवं सामाजिक आदर्शानुकूल आचरण करने की अभिवृत्ति अन्तर्राष्ट्रीय साहित्य का अध्ययन तथा सद्भावना- विकास	विद्यार्थी पाठ्यक्रम के अतिरिक्त अन्य पुस्तकें पढ़ेगा । साहित्यकारों के चित्र एकत्र करेगा । कविता, उद्धरण, सुक्तियों का संकलन करेगा । विद्यालयी कार्यक्रमों मे भाग लेगा । अपना एक पुस्तकालय बनाएगा । साहित्यिक महत्व की राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय पत्रिकाएँ पड़ेगा व एकत्र करेगा । साहित्यिक संस्थाओं से संबंध स्थापित करेगा - उनकी क्रियाओं में भाग लेगा । अपनी संस्कृति में

	आस्था रखेगा । विचारों का आदान- प्रदान कर अपने ज्ञान और व्यवहार को उचित दिशा देगा। राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय सद्भावना-विकास में प्रवृत्त रहेगा ।

भाषा शिक्षण के उपर्युक्त उद्देश्यों के परिप्रेक्ष्य में ही राजस्थान मा. शिक्षा बोर्ड ने माध्यमिक स्तर के विद्यालयों में मातृभाषा के रूप में हिन्दी भाषा के अध्यापन के निम्नलिखित उद्देश्य निर्धारित किए हैं -

1 भाषायी तत्त्वों का ज्ञान प्राप्त करना
2 सुनकर अर्थग्रहण की योग्यता का विकास करना
3 पढ़कर विषय वस्तु का ज्ञान प्राप्त करना
4 शुद्ध, स्पष्ट तथा अर्थपूर्ण वाचन की क्षमता का विकास करना
5 साहित्य की विविध विधाओं का ज्ञान प्राप्त करना
6 अपने भाव-विचारों को शुद्ध रूप से अभिव्यक्त करना
7 साहित्य श्लाघा तथा सदवृत्तियों का विकास करना तथा
8 सृजनात्मक अभिरुचि का प्रकाशन करना

2.3.1 भाषा-शिक्षण के सामान्य सिद्धांत

भाषा सीखने में आवृत्ति और अभ्यास का अधिक महत्त्व है । यह एक आदत बनने की प्रक्रिया है, जो बाल्यावस्था में विशेष सक्रिय व जागरूक रहती है । विद्वानों ने इस दिशा में कतिपय निम्नांकित सामान्य सिद्धांतों का निर्धारण किया है जिनका शिक्षण में अनुकरण करना चाहिएः-

1 स्वाभाविक क्रम का अनुसरण करना- एक बालक अपनी मातृभाषा को श्रवण, अनुकरण, ग्रहण और अभ्यास की प्रक्रिया से सीखता है शिक्षण में इसी स्वाभाविक क्रम को अपनाना चाहिए । सर्वप्रथम शुद्ध भाषा उसे सुनाई जाए, जिसे वह अनुकरण द्वारा बोल सके, सुनकर समझने की प्रक्रिया के पश्चात् ही पढ़ने और लिखने का क्रम अपनाना सफल शिक्षण को द्योतित करता है ।

2 क्रियाशीलता- भाषा सतत् व्यावहारिक प्रयोग तथा अभ्यास से सीखी जाती है । मनोवैज्ञानिक रूप से भी यह उचित है कि बालकों को निरन्तर सक्रिय रखा जाए । भाषा सिखाने के इस सिद्धांत "क्रियाशीलता और अभ्यास को प्रयोग और अभ्यास" भी कहा जा सकता है । प्रश्नोत्तर तथा क्रियात्मक कार्य के माध्यम से शिक्षण को अपेक्षाकृत अधिक प्रभावी बनाया जा सकता है । इस दिशा में श्रवण व चक्षु प्रशिक्षण अभ्यास, उच्चारण-अभ्यास, बोलने का अभ्यास तथा अर्थ बोध का अभ्यास नियमित रूप से कराना चाहिए ।

3 मौखिक कार्य को प्राथमिकता देना- कक्षा में बालकों को अधिकाधिक बोलने के अभ्यास के अवसर प्रदान करने चाहिए । शुद्ध उच्चारण सहित वार्तालाप करना, मौखिक रूप से कहानी सुनाना, सुनकर अथवा पढ़कर गृहित भावों एवं विचारों को अपने शब्दों में व्यक्त

करना, पठित अंश पर पूछे गए प्रश्नों के उत्तर देना निरीक्षण अथवा स्मरण से किसी भी घटना को मौखिक रूप से अभिव्यक्त करना आदि क्रियाएँ बालक के शीघ्र भाषा अधिगम के लिए आवश्यक हैं । अधिकाधिक मौखिक कार्य करवाने के पश्चात् ही लिखित भाषा का समुचित ज्ञान व अभ्यास कराया जाना चाहिए

4 रुचि व रुझान का ध्यान रखते हुए ही शिक्षण कार्य करना चाहिए- भाषा शिक्षण को अधिकाधिक रुचिकर बनाने के लिए अध्यापक को मनोवैज्ञानिक शिक्षण विधियों का अनुसरण करना चाहिए । यथासंभव श्रव्य दृश्य उपकरणों का प्रयोग, भाषा संबंधी खेलों का आयोजन, सह-शैक्षिक कार्यक्रमों का आयोजन व्यावहारिक जीवन से संबंध स्थापन आदि भाषा शिक्षण को रुचिकर व सफल बनाते हैं ।

5 वैयक्तिक भिन्नता का ध्यान- बालकों की भाषा संबंधी भिन्नताओं को ध्यान में रखकर शिक्षण करना चाहिए । बालकों की भाषायी योग्यता पर उनके परिवार अथवा निवास स्थल का प्रभाव पड़ता है- किसी में उच्चारण दोष है तो किसी के पास विपुल शब्द भण्डार-, मंद व तीव्र बुद्धि वाले बालकों में भी भाषिक कौशल संबंधी अनेक प्रकार की विभिन्नताएँ होती हैं । शिक्षण कार्य में इन सबका ध्यान रखना आवश्यक है ।

6 शिक्षण-सूत्रों का प्रयोग- भाषा शिक्षण में भी शिक्षण के सामान्य सूत्रों- ज्ञात से अज्ञात की ओर, मूर्त से अमूर्त की ओर, सरल से कठिन की ओर, आगमन से निगमन की ओर, पूर्ण से खण्ड की ओर, विशेष से सामान्य की ओर आदि को यथाप्रसंग उपयोग करना लाभप्रद रहता है ।

इन सिद्धांतों के अतिरिक्त आपको भाषा के अध्यापक के रूप में अपने अध्यापन में अनुपात और समन्वय का पूरा ध्यान रखना चाहिए- लिखित और मौखिक कार्य में संतुलन रखना चाहिए । कभी-कभी भाषिक नियमों, कविता के अंशों अथवा सार्थक अवतरणों को कण्ठस्थ करवाना उपयोगी रहता है । भाषा के नियमों, प्रयोगों अथवा व्यवहार में एक सामासिक-साहजिक सम्बन्ध स्थापन करना भी अत्यन्त लाभकारी है- इसके अनुसार यदि अध्यापक एक शब्द का अर्थ स्पष्ट करता है तो वह उस शब्द का प्रयोग, उस शब्द की संरचना, शब्द का शुद्ध उच्चारण, वर्तनी आदि सभी पक्षों पर प्रकाश डाल सकता है । मातृभाषा शिक्षण की सार्थकता ही इसमें है कि भाषा का समानुपाती शिक्षण किया जाए अर्थात् भाषा के किसी एक अंग की शिक्षा प्रदान करते समय प्रासंगिक रूप से अन्य अंगों का भी शिक्षण साथ-साथ सम्पन्न होता रहे ।

2.3.2 उद्देश्य-प्राप्ति के कक्षान्तर्गत माध्यम

हिन्दी शिक्षण के उद्देश्यों को प्राप्त करने की कतिपय क्रियाएँ कक्षा के अन्तर्गत ही सम्पन्न की जानी चाहिए यथा-

(अ) पठित अंश का अनुकरण वाचन करवाना इससे विद्यार्थियों में शुद्ध उच्चारण के साथ पढ़ने की गति तथा व्याकरणिक नियमों के पालन की आदत का विकास होता है । कविता पाठ के माध्यम से आरोह-अवरोह के साथ पढ़ने का अभ्यास हो सकता है ।

(ब) मौन-पाठ की प्रक्रिया विद्यार्थियों में आत्मविश्वास तथा बोध-शक्ति का विकास करने में सक्षम है क्योंकि उन्हें कक्षा में ही अध्यापक के निरीक्षण में अपना ध्यान केन्द्रित करना पड़ता है।

(स) प्रश्नोत्तर प्रणाली का प्रासंगिक प्रयोग विद्यार्थियों के मौखिक व लिखित अभिव्यक्ति के विकास हेतु सर्वाधिक प्रभावी होता है इस प्रक्रिया में विद्यार्थियों के बोध-ज्ञान का भी परीक्षण होता रहता है और वे सक्रिय रहते हुए अपने उच्चारण तथा सुलेख की ओर विशेष ध्यान दे सकते हैं । व्याकरण का व्यावहारिक ज्ञान भी प्रकारान्तर से दिया जा सकता है ।

(द) अभिनय के द्वारा एकांकी का अध्यापन इससे विद्यार्थियों में कथोपकथन स्मरण करने की आदत का विकास होता है साथ ही उन्हें उचित यति, गति, बलाघात, स्वराघात से शुद्ध बोलने का भी अभ्यास हो जाता है । एकांकी के भावों का रसास्वादन करने के भी अवसर प्राप्त होते हैं ।

(य) कक्षा में अन्ताक्षरी, गद्याक्षरी के लिए भी अवसर प्रदान किए जा सकते है । भाषिक अभिव्यक्ति-विकास के अन्यान्य खेलों का भी कक्षा में ही आयोजन किया जा सकता है । प्रयास यह करना चाहिए कि भाषा अध्यापन में विद्यार्थियों की सक्रिय मनस्थिति और सहभागिता निरन्तर बनी रहे ।

2.4 द्वितीय भाषा के रूप में हिन्दी शिक्षण के उद्देश्य (राष्ट्रभाषा हिन्दी-शिक्षण के उद्देश्य)

हिन्दी उत्तर भारत के विशाल क्षेत्र (उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, बिहार, राजस्थान, दिल्ली, हिमाचल प्रदेश, हरियाणा, उत्तरांचल आदि) की मातृभाषा है तथा दक्षिण भारत में व्यापार-वाणिज्य अथवा सांस्तिक- धार्मिक आदि अन्यान्य कारणों से सम्पर्क- भाषा के रूप में बराबर प्रचलित रही है ।

वर्तमान में हिन्दी भारत की 55 प्रतिशत जनसंख्या की भाषा है । (विश्व में इसे बोलने व समझने वाले 50 करोड़ हैं) अत: स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् 14 सितम्बर 1949 ई. को भारतीय संविधान में हिन्दी को राष्ट्रभाषा स्वीकार कर लिया गया लेकिन यह व्यवस्था भी की गई कि 15 वर्ष के उपरान्त ही हिन्दी राष्ट्रभाषा का स्थान प्राप्त कर सकेगी । परन्तु कतिपय अपरिहार्य कारणों से सन् 1963 में लोकसभा में राजभाषा विधेयक पारित किया गया, परिणामत: हिन्दी संविधानत: ही राष्ट्रभाषा के स्थान पर स्थापित है ।

भारत वस्तुत: एक बहुभाषायी देश है । उत्तर भारत के अधिकांश राज्यों के लिए हिन्दी मातृभाषा है तो बंगाल व दक्षिण भारत के राज्यों के लिए यह सम्पर्क भाषा अथवा द्वितीय भाषा है । स्पष्टत: मातृभाषा तथा द्वितीय भाषा के शिक्षण-उद्देश्य एक समान नहीं हो सकते ।

द्वितीय भाषा के रूप में हिन्दी शिक्षण के उद्देश्य- (राष्ट्रभाषा-संदर्भ)

द्वितीय भाषा और मातृभाषा के शिक्षण उद्देश्यों में भिन्नता होनी स्वाभाविक है । मातृभाषा के द्वारा एक बालक अपनी समस्त मौलिक आवश्यकताओं की पूर्ति कर भावात्मक व मानसिक परिपक्वता को प्राप्त होता है, लेकिन द्वितीय भाषा से मूलत: पारस्परिक सम्पर्क स्थापन की प्रक्रिया सम्पन्न होती है । अत: इसके अन्तर्गत शिक्षण-उद्देश्य पर्याप्त सीमित होते हैं, जो निम्नलिखित हैं:-

1 हिन्दी में मौखिक रूप से व्यक्त विचारों को समझना ।

2 हिन्दी में लिखित रूप से व्यक्त विचारों को समझना ।

3 हिन्दी माध्यम से अपने भाव, विचारों व अनुभवों को मौखिक तथा लिखित रूप से व्यक्त करना ।

4 व्यावसायिक क्षेत्र में हिन्दी भाषा का प्रयोग करना जिससे अन्तर्राज्यीय व्यापार में वृद्धि हो ।

5 समस्त भारतवासियों के द्वारा अपनी-अपनी मातृभाषा तथा राष्ट्रभाषा हिन्दी के साहित्य में आदान-प्रदान करना ।

6 समस्त भारतवासियों को देश की आध्यात्मिक विरासत से परिचित कराना ।

7 देश की विभिन्न जातियों, धर्मों, समुदायों को एक सूत्र में आबद्ध कर राष्ट्रीय व भावात्मक एकता के विकास हेतु वातावरण प्रशस्त करना ।

इन सभी उद्देश्यों का अपेक्षाकृत अधिक विश्लेषणात्मक रूप निम्नलिखित है:-

1 ज्ञान संबंधी उद्देश्य- अहिन्दी भाषियों को हिन्दी की ध्वनियों, शब्दों, वाक्य-संरचना तथा व्याकरण के सामान्य नियमों का ज्ञान कराना ।

2 कौशलों संबंधी उद्देश्य- हिन्दी में मौखिक व लिखित रूप से अभिव्यक्त विचारों को समझना तथा अपने भाव विचार व अनुभवों को मौखिक व लिखित रूप से अभिव्यक्त करना ।

3 अभिरुचि संबंधी उद्देश्य- समस्त राजकार्य, व्यापार तथा अन्तर्राज्यीय कार्य को हिन्दी के माध्यम से सम्पन्न करने में अभिरुचि का विकास करना । अपनी मातृभाषा व राष्ट्रभाषा हिन्दी के साहित्य का आदान-प्रदान करना ।

4 अभिवृत्ति विकास का उद्देश्य- समस्त अहिन्दीभाषियों की राष्ट्र की संस्कृति में आस्था तथा राष्ट्रीय व भावात्मक एकता का विकास करना ।

2.4.1 द्वितीय भाषा-शिक्षण विधियाँ

उपर्युक्त उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु द्वितीय भाषा की शिक्षण-विधि में भी परिवर्तन आएगा क्योंकि विद्यार्थियों के लिए मातृभाषा के अतिरिक्त सभी भाषाएँ नवीन होती हैं । नवीन भाषा सिखाने की प्रमुखत: निम्नलिखित चार विधियाँ हैं-

1 परोक्ष विधि- इस विधि में मातृभाषा के माध्यम से किसी नवीन (द्वितीय) भाषा का शिक्षण होता है । अध्यापन में नवीन भाषा के प्रत्येक शब्द का अनुवाद मातृभाषा में किया जाता है । इस विधि से अनुवाद के द्वारा मातृभाषा व अन्य द्वितीय भाषा की समानता-असमानता का स्पष्ट ज्ञान हो जाता है- नई सीखी जाने वाली भाषा के शब्द व मुहावरों का भी सरलता से ज्ञान हो जाता है । लेकिन यह प्रणाली प्रभावी नहीं है, क्योंकि अनुवाद द्वारा शिक्षा देने में विद्यार्थियों के समक्ष मातृभाषा ही रहती है तथा विद्यार्थी स्वाभाविक रूप से नई भाषा बोलने व लिखने में स्वयं को असमर्थ समझते है । केवल पठन पर ही अधिक ध्यान दिया जाता है ।

2 प्रत्यक्ष विधि- इस विधि के माध्यम से विद्यार्थी मातृभाषा सीखने के समान ही द्वितीय भाषा सीखता है । वह द्वितीय भाषा को शब्दों से नहीं, वाक्यों से ग्रहण करता है । व्याकरणिक नियम कोई प्रभाव नहीं डालते । इस विधि में वार्तालाप की प्रधानता रहती है वैसे भी भाषा की इकाई वाक्य होता है, शब्द नहीं । जब विद्यार्थी नई भाषा में बोलने लगता है तत्पश्चात् उसे लिपि का ज्ञान कराया जाता है और वह उसको पढ़ना, लिखना

सीखना आरम्भ कर देता है । इस विधि में मातृभाषा का उपयोग नहीं किया जाता अपितु प्रत्यक्ष वस्तुओं के प्रयोग से शब्दों का ज्ञान प्रदान किया जाता है । व्याकरण का ज्ञान भी व्यावहारिक दृष्टि से ही कराया जाता है ।

यह विधि यद्यपि पूर्णत: मनोवैज्ञानिक है लेकिन इसे प्रयुक्त करने में कठिनाइयाँ भी हैं यथा वार्तालाप के माध्यम से वही भाषा सीखी जा सकती है जिसे आवृत्ति के लिए अधिकाधिक अवसर प्राप्त हों । नवीन भाषा ज्ञान के लिए यह अवसर कुछ कक्षा-कक्ष घंटों में ही मिलते हैं अत: कोई विद्यार्थी नवीन भाषा में शब्द ज्ञान से पूर्व, बोलना सीख सकेगा, प्रायोगिक दृष्टि से सरल कार्य नहीं है । इसके अतिरिक्त इस विधि के माध्यम से भाववाचक संज्ञाएँ अथवा विशेषणों आदि का ज्ञान देना प्राय: सम्भव नहीं ।

3 वेस्ट-विधि (Dr.M.West) - प्रत्यक्ष विधि के दोषों के निवारणार्थ डॉ. माइकेल वेस्ट ने इस विधि का प्रतिपादन किया है । इसमें पठन की प्रधानता रहती है तथा मातृभाषा-प्रयोग भी वर्जित नहीं- आवश्यकतानुसार मातृभाषा का उपयोग किया जा सकता है । डॉ. वेस्ट के अनुसार- कोई भी विद्यार्थी किसी भाषा को तभी बोल सकता है जब उसके पास उस भाषा के शब्द हों और यह ज्ञान पठन द्वारा ही शीघ्रता से प्राप्त किया जा सकता है । इन्होंने पठन, लेखन तथा भाषण को अलग-अलग सिखाने का प्रतिपादन किया ।

4 गठन संरचना विधि- इस विधि में भाषा के कतिपय प्रचलित शब्द तथा उससे निर्मित वाक्यों के माध्यम से भाषा का शिक्षण प्रारम्भ किया जाता है । विद्यार्थियों को कतिपय चुने गए शब्दों एवं ढांचों का अभ्यास करते-करते भाषा का ज्ञान तो हो जाता है, बोलने के अवसर प्राप्त न होने के कारण उनका मौखिक सम्भाषण का अभ्यास नहीं हो पाता । अधुना यह विधि अंग्रेजी को द्वितीयभाषा के शिक्षण हेतु प्रयुक्त हो रही है । हिन्दी की वाक्य रचना वैसे भी अंग्रेजी से भिन्न है अत: हिन्दी में इस दिशा में प्रयोग किए जा रहे हैं । अहिन्दी क्षेत्रों में हिन्दी की शिक्षा का सर्वोपरि उद्देश्य उन्हें हिन्दी के माध्यम से विचार विनिमय करने योग्य बनाना होता है अत: वार्तालाप की शिक्षा पर विशेष ध्यान देना होगा । गठन संरचना विधि में वार्तालाप की शिक्षा पर ध्यान नहीं दिया जाता शुद्ध वाक्य रचना पर अधिक बल प्रदान किया जाता है ।

उपर्युक्त चारों विधियों में किसी एक विधि को राष्ट्रभाषा हिन्दी (द्वितीय भाषा) के शिक्षण हेतु प्रयोग में नहीं लाया जा सकता है । द्वितीय भाषा के रूप में हिन्दी शिक्षण में स्थान, परिस्थिति तथा आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए विधि-विशेष का उपयोग कर लेना चाहिए । इस दिशा में हिन्दी-शिक्षक का योग्य, प्रशिक्षित तथा बहुभाषायी होना आवश्यक है । अहिन्दी भाषी क्षेत्रों में हिन्दी-शिक्षण के समय पढ़ना, लिखना और बोलना साथ-साथ सिखाने की प्रक्रिया अपनाना श्रेष्ठकर रहेगा- विद्यार्थियों को भी हिन्दी का प्रयोग करने के अधिकाधिक अवसर प्रदान किए जाए । आवश्यकता होने पर अपवाद रूप में उनकी मातृभाषा का भी उपयोग किया जा सकता है । (विशेष - इकाई सं. 13 के अन्तर्गत भी द्वितीय भाषा शिक्षण का विवेचन उपलब्ध है)

2.5 सृजनात्मकता विकास के विद्‌यालयी कार्यक्रम

हिन्दी शिक्षण का एक महत्त्वपूर्ण उद्देश्य विद्‌यार्थियों में सृजनात्मकता का विकास करना है । सृजनशीलता की योग्यता मानवीय मस्तिष्क की सर्वोच्च उपलब्धि है और इसका विकास सुनियोजित प्रशिक्षण से किया जा सकता है । सृजनात्मकता के विकास का कार्य प्राथमिक शालाओं से ही "अपूर्ण वाक्य- पूर्ति" जैसी सामान्य क्रियाओं के द्‌वारा प्रारम्भ किया जा सकता है। अध्यापक को यह स्वीकार करना चाहिए कि प्रत्येक बालक थोडा बहु त सृजनशील होता है । कुछ न कुछ अन्वेषण या निरीक्षण करना, विपरीत विचारों को व्यक्त करके परस्पर आमोद-प्रमोद करना विद्‌यार्थियों में सृजनशील लक्षणों को प्रतिबिम्बित करता है । विद्‌यार्थियों में सुप्त अभिव्यञ्ज्नात्मक सर्जनात्मकता यथा अभिव्यक्ति की मौलिकता, स्वत: स्फूर्त स्वतन्त्र अभिव्यक्ति, रूपान्तर विधान के माध्यम से प्रत्यक्ष उपस्थित प्रतिमानों में समुन्नति- सुधार के प्रत्यक्षीकरण हेतु अभिव्यक्ति आदि को अनुकूल पर्यावरण। व मार्गदर्शन देकर उसे सक्रिय व विकसित करना भाषा के अध्यापक का प्रमुख उत्तरदायित्व है । इस दिशा में भाषा के अध्यापक का अपना भाषा- प्रेम, संवेदनशील व्यवहार तथा साहित्यिक- सांस्कृतिक प्रवृतियों के आयोजन में निष्णात होना आवश्यक है । विद्‌यार्थियों की सम्प्रेषणीयता व सृजनात्मक शक्ति के विकास और परिष्कार के लिए माध्यमिक विद्‌यालयों में कतिपय निम्नलिखित कार्यक्रम नियमित रूप से सम्पन्न किए जा सकते हैं-"

(1) शैक्षिक भ्रमरों के पश्चात् तत्संबंधित वर्णनात्मक विवरण का लेखन- यह कविता, कहानी, निबन्ध या वार्तालाप आदि किसी भी विधा में लिखा जा सकता है ।

(2) पुस्तकालय की पुस्तकों के चयन, पठन तथा तत्संबंधित विचार- विनिमय में अध्यापक का सक्रिय मार्गदर्शन तथा प्रासंगिक लेखन हेतु दिशा निर्देश विद्‌यार्थियों की सृजनशीलता वृद्धि का निर्णयात्मक प्रमाण है ।

(3) भाषण अथवा आशु भाषण प्रतियोगिता-अभिव्यक्ति के सार्थक व प्रसंगानुसार प्रदर्शन का यह एक महत्त्वपूर्ण माध्यम है । इसके लिए अध्यापक को विषय चयन में विशेष सावधानी रखनी चाहिए । भाषण के विषय विद्‌यार्थियों के स्तरानुकूल तथा सामाजिक साहित्यिक ज्ञान वृद्धि में सहायक होने चाहिए । विषय सम्बन्धी आवश्यक अध्ययन- सामग्री भी विद्‌यार्थियों को आयोजन से पूर्व ही प्रदान कर देनी चाहिए ।

(4) निबन्ध- लेखन तथा प्रतियोगिता- विद्‌यार्थियों को स्वतंत्र रूप से निबन्ध लिखने के लिए पर्याप्त अवसर विद्‌यालय में उपलब्ध होने चाहिए । अध्यापक के द्‌वारा संशोधित व परिष्त होकर कुछ निबन्ध विद्‌यालय- पत्रिका में प्रकाशित भी किए जा सकते हैं ।

(5) कहानी- प्रतियोगिता- प्रारम्भ में कथा- वस्तु का आंशिक रूप भी दिया जा सकता है जो कि प्राय: घटना प्रधान हो । कल्पना प्रधान अथवा समस्या मूलक कहानी लिखने के लिए भी विद्‌यार्थियों को सामयिक प्रोत्साहन देते रहना चाहिए ।

(6) कवि दरबार, कवि गोष्ठी अथवा कवि सम्मेलन- इनके आयोजन के माध्यम से विद्‌यार्थियों को गणमान्य कवियों से उनकी कविताओं का लयबद्ध पाठ सुनने के अवसर प्राप्त होते हैं- वे स्वयं भी उनसे प्रेरित होकर स्वरचित कविता-पाठ में प्रवृत्त हो सकते हैं । कवि दरबार, कवि गोष्ठी व कवि सम्मेलन से भिन्न होता है इसमें कवि स्वयं

उपस्थित नहीं होता । जीवित अथवा मृत कवियों की वेशभूषा में विद्यार्थी व अध्यापक उनकी प्रसिद्ध कविताओं का पाठ यथासाध्य उन्हीं की भावभंगिमा से करते है ।

(7) कविता- प्रतियोगिता- विद्यार्थियों को सम्यक् आरोह अवरोह तथा लयबद्ध रूप से काव्य अभिव्यक्ति- प्रकाशन हेतु ऐसी प्रतियोगिता का आयोजन करना लाभप्रद है । माध्यमिक विद्यालयों के छात्र प्रकृति, देश, लोक कथा आदि पर तुकबंदी करते रहते हैं । अध्यापक उनकी अभिव्यक्ति व गेयता को परिष्त करके कविता- प्रतियोगिता का आयोजन कर सकते है ।

(8) नाटक- प्रतियोगिता- इसका आयोजन विद्यार्थियों में समवाद- लेखन, तत्पश्चात् अभिनय- कौशल के विकास हेतु किया जाता है । प्रारम्भ में विद्यार्थी दैनिक जीवन से सम्बन्धित किसी भी प्रसंग या घटना को कथोपकथन के रूप में लिखने के लिए प्रवृत्त होते हैं- नियमित अभ्यास के पश्चात् वे किसी कहानी अथवा काल्पनिक घटना- वृत्तों को कथोपकथन के रूप में लिख सकते हैं। अध्यापक द्वारा उनकी लिखित सामग्री का परिष्कार भी किया जाना चाहिए ।

(9) जयन्तियों का आयोजन- प्राय: सभी विद्यालयों में प्रसिद्ध साहित्यकारों, राष्ट्रीय- नेताओं, महान सन्तों, शिक्षकों अथवा समाज- सुधारकों की जयन्तियाँ आयोजित की जाती हैं । इनसे विद्यार्थियों में उनका साहित्य जीवन वृत्त तथा कार्यों का अध्ययन करने का अवसर प्राप्त होता है। विद्यार्थियों को एक अनुशासित, परोपकारी, विनम्र, सहयोगी व त्यागी बहु जनहिताय व्यक्तित्व विकास के लिए पर्याप्त प्रेरणा भी प्राप्त होती है ।

इन कार्यक्रमों के अतिरिक्त प्रत्येक माध्यमिक विद्यालय में कतिपय सामाजिक, धार्मिक व राष्ट्रीय पर्वों का भी आयोजन किया जाता है । इन आयोजनों के अनुरूप विद्यालय में साहित्यिक, सार-तिक कार्यक्रमों के आयोजन कर आप विद्यार्थियों की स्वत: स्फूर्त सृजनात्मक- प्रवृत्तियों के विकास हेतु अवसर प्रदान कर सकते हैं । वर्तमान में निबन्ध, कहानी, घटना वृत्त, कविता- लेखन की सुबोध व वैज्ञानिक कला का विकास हो गया है तथा उससे सम्बन्धित पुस्तकें भी प्रकाशित हो चुकी है । एक अध्यापक के रूप में इनका उपयोग कर विद्यार्थियों से अनेक विशिष्ट, निबन्ध अथवा कविता का लेखन-कार्य करने के लिए प्रोत्साहित कर सकते है । रेडियों व दूरदर्शन जैसे श्रव्य- दृश्य उपकरणों के द्वारा अनेक शैक्षिक- साहित्यिक, समाचार आदि कार्यक्रमों से विद्यार्थियों को परिचित कराया जाता है । समस्या पूर्ति को कभी बौद्धिक ही कम विद्यालयों में है । इसके माध्यम से सृजनशीलता व कल्पना शक्ति का अच्छा विकास होता है । इसमें विद्यार्थियों को कोई एक पद्य या छंद का एक चरण देकर उसको पूर्ण करने को कहा जाता है । तात्कालिक बुद्धि वैभव अथवा वाक् चातुर्य प्रदर्शन का यह एक उपयोगी माध्यम है ।

2.6 “हिन्दी शिक्षण उद्देश्यों में भविष्योन्मुख दृष्टि

हिन्दी एक सरल, सहज तथा भारत के अधिकांश प्रदेशों में 70 प्रतिशत से भी अधिक जनसंख्या से बोली व समझी जाती है । भारत की राष्ट्र भाषा घोषित हो जाने पर भी आज तक इसका प्रयोग राजनयिक स्तर पर नहीं किया जा रहा- अभी तक यह सयुंक्त राष्ट्र संध की भाषा ही नहीं बन सकी है । कारण कुछ भी हों- व्यावसायिक, सांस्-तिक, साहित्यिक अथवा भारत जैसे विशाल भू- भाग के श्रद्धा स्थलों की सम्पर्क भाषा के रूप में अपार लोकप्रियता- हिन्दी के

प्रयोजनमूलक स्वरूप का विकास स्वत: हो रहा है । इस दिशा में प्रवासी भारतीयों के योग को विस्मरण नहीं किया जा सकता । अधोलिखित अनुच्छेदों में हिन्दी शिक्षण की भविष्योन्मुख दृष्टि के सन्दर्भ में अध्यापक- वर्ग की विशिष्ट भूमिका पर प्रकाश डाला जा रहा है ।

(1) यह निर्विवाद सत्य है कि आधुनिक जन- संचार माध्यमों ने हिन्दी भाषा की अभिव्यक्ति-क्षमता में अपार वृद्धि की है । दृश्य तथा श्रव्य संचार माध्यमों से हिन्दी का प्रसार प्राय: व्यावसायिक कारणों से प्रभावित है अत: उच्चारण अथवा व्याकरण की दृष्टि से शुद्धता की समस्या रहना स्वाभाविक है । विद्यालयों में भाषा शिक्षण की दृष्टि से अनेक परिवर्तन करने आवश्यक है । भाषा शिक्षण की दृष्टि से अनेक परिवर्तन करने आवश्यक है । भाषा शिक्षण प्रमुखत: कौशल प्रधान अधिगम है और कौशल दैनन्दिन अभ्यास कार्य की अपेक्षा रखता है । आज का विद्यार्थी- वर्ग पुस्तकीय ज्ञान से कहीं अधिक ज्ञान दृश्य साधनों से प्राप्त कर रहा है । अध्यापक- वर्ग से अपेक्षा है कि वह अपनी शिक्षण विधि में सामयिक रूप से परिवर्तन करते हुए आवश्यकतानुसार निर्देशित स्वाध्याय, प्रयोजना अथवा अन्य क्रियात्मक विधियों का प्रयोग करें- जिससे कि विद्यार्थियों को भाषायी कौशलों के विकास हेतु व्यक्तिश: अभ्यास के लिए पर्याप्त समय प्राप्त हो रनके । इन विधियों को प्रयोग करने से विद्यार्थियों को केवल श्रवण कौशल का अपितु अभिव्यक्ति, पठन तथा लेखन कौशलों का भी स्वाभाविक विकास होना सम्भव हो सकेगा। इन विधियों का प्रयोग करने के लिए विद्यालयी समय-विभाग चक्र में आवश्यक परिवर्तन किए जा सकते हैं, कक्षा- कक्ष की आसन- व्यवस्था, पुस्तकालय अथवा प्रयोगशाला के उपयोग की समयावधि में भी व्यवधान हो सकता है लेकिन विद्यार्थियों को स्वत: कार्य करते हुए चारों भाषायी कौशलों के विकास हेतु पर्याप्त अवसर प्राप्त होंगे, साथ ही अपने-अपने विद्यालयों में क्रियात्मक अनुसंधान के माध्यम से भाषा संबंधी अनेक समस्याओं के तात्कालीन निवारण हेतु प्रयास किए जा सकते है । भाषा-शिक्षण के प्रति अध्यापक की सक्रिय प्रतिबद्धता, इस दिशा में अपरिहार्य है ।

(2) आधुनिक परिस्थितियों में भाषा के अध्यापकों को भी यांत्रिकी, विज्ञान, तकनीकी, ध्वनि, इन्टरनेट, ई-मेल, पेजर, सांख्यिकी, कम्प्यूटर, टेलेक्स और केलकुलेटर आदि से भलिभाँति परिचित होना चाहिए जिससे कि समयानुकूल नई शब्दावली, नई लेखन-कलाएँ विकसित हो सके । हिन्दी की पाठ्य-पुस्तकों में अनेक पाठ नितान्त ज्ञानात्मक श्रेणी के होते हैं प्रायोगिक व्याकरण का अध्यापन करते समय अनेक संग्रन्थन का आधार लेकर व्याकरणिक उद्देश्य पूर्ण किए जाते है- ऐसे अनेकानेक अवसरों पर स्लाइड बनाकर ओवर हेड प्रोजेक्टर के माध्यम से अध्यापन को अपेक्षाकृत अधिक प्रभावी बनाया जा सकता है । तकनीकी विकास के परिणामस्वरूप शिक्षा के क्षेत्र में भी "शैक्षिक तकनीकी" नामक एक नई तकनीक का विकास हुआ है जिसका उद्देश्य शिक्षण को अधिक सारगर्भित बनाना हैं शैक्षिक तकनीक के अन्तर्गत अनेक उनकरणों का उपयोग करते हुए विविध भाषिक कौशलों के सन्दर्भ में विद्यार्थियों की समस्याओं का सफलतापूर्वक निवारण किया जा सकता है । हिन्दी को प्रथम या द्वितीय भाषा के रूप में पढ़ाने के लिए शैक्षिक तकनीक का उपयोग करना आज की परिस्थिति में अत्यावश्यक है, भारत जैसे विशाल भू-भाग वाले देश में अहिन्दी क्षेत्रों के लिए प्रशिक्षित हिन्दी भाषी अध्यापकों की पूर्ति अत्यावश्यक

है प्रयास यह करना चाहिए कि उन क्षेत्र विशेषों की भाषा जानने वाले हिन्दी भाषी अध्यापकों को नियुक्ति में प्राथमिकता दी जाए । केन्द्रीय सरकार ने अहिन्दी क्षेत्रों में हिन्दी भाषा अध्यापन हेतु अध्यापकों के कई प्रशिक्षण केन्द्र स्थापित किए हैं ।

(3) भाषा-विकास के गतिशील परिवेश में हिन्दी के अध्यापकों को भी अपने व्यक्तित्व अथवा भाषिक ज्ञान के विकास हेतु हिन्दी से अतिरिक्त अन्य कोई भी भाषा सीखने के लिए प्रवृत्त् रहना चाहिए। हिन्दी का उद्भव संस्कृत से हुआ है अत: यह स्वाभाविक है कि हिन्दी के अध्यापक को संस्कृत का आधिकाधिक ज्ञान हो- संस्कृत के व्याकरणिक ज्ञात के आधार पर वह अन्य भाषाओं में ध्वनिगत अंतर ज्ञात कर विद्यार्थियों के शुद्ध उच्चारण की दिशा में प्रयास कर सकता है। त्रिभाषा-सूत्र के अन्तर्गत व्यवस्था को शुद्ध रूप में क्रियान्वित करना, हिन्दी विकास के साथ-साथ राष्ट्रीय एकता के लिए भी उपयोगी रहेगा । भाषा के अध्यापकों को यह स्वीकार कर लेना चाहिए कि भाषाएँ परस्पर आदान-प्रदान से ही समृद्ध होती हैं- हिन्दी को संपूर्णत: पूर्ण मानने के दुराग्रह को त्यागकर इसके विस्तार के लिए अन्य भारतीय भाषाओं के अपेक्षित शब्दों को स्वीकार कर लें अथवा उनके समकक्ष अपनी भाषा में शब्दों का आविर्भाव करलें । हिन्दी को भी इन्टरनेट द्वारा परिवर्तित परिवेश तथा ज्ञान के अनुरूप आन्तरिक रूप से अधिक विकसित करने का प्रयत्न करना चाहिए, जिससे कि सूचना प्रौद्योगिकी के विकास से प्रभावित नवीन भाषिक परिवर्तनों- संदर्भों को समझने तथा अभिव्यक्त करने के लिए अन्य भाषाओं के प्रसंगानुसार शब्दों, संदर्भों को हिन्दी में समान रूप से प्रतिष्ठापित किया जा सके । हिन्दी में उर्दू के नुक्तायुक्त उच्चारण तथा अंग्रेजी के डॉक्टर ध्वनि चिह्न को मान्यता प्रदान करना इस दिशा में सार्थक समायोजन है ।

(4) शिक्षा के सभी स्तरों पर हिन्दी के पाठ्यक्रमों का आधुनिक परिस्थितिजन्य आवश्यकताओं के अनुरूप पुनर्विकास अथवा पुनरावलोकन अत्यावश्यक है । इस दिशा में गंभीरता से कार्य संपादित होना चाहिए, जिससे कि हिन्दी के प्रयोजनमूलक रूप का समुचित विकास किया जा सके । आकाशवाणी के अनेक केन्द्रों से व्यावहारिक प्रयोग-ज्ञान-वृद्धि हेतु हिन्दी के पाठ निरन्तर प्रसारित किए जा रहे है- विद्यालय की समय-सारिणी में पाठों के प्रसारण समय का उचित समायोजन करने से इन प्रसारणों से अपेक्षित भाषिक-योग्यताओं का विकास किया जा सकता हैं । उच्च शिक्षा के स्तर पर भाषा-विज्ञान के अध्यापन को प्रमुखता से स्थान देकर इसके अन्तर्गत शोध-कार्य को विशेष महत्त्व प्रदान करना हिन्दी के विज्ञान-सम्मत व्यावहारिक प्रयोजनमूलक रूप को अपेक्षाकृत अधिक विकसित करना आज की परिस्थिति में अपरिहार्य है । अत: मातृभाषा अथवा द्वितीय भाषा के रूप में हिन्दी शिक्षण उद्देश्यों की सम्पूर्ति के लिए अपेक्षाकृत अधिक सारग्राही, सक्रिय तथा सम्वेदनशील अध्यापकीय व्यवहार आवपश्यक है ।

गत 50 वर्षों में प्रवासी हिन्दी साहित्य अधिक प्रकाश में आया है । वैश्वीकरण के इस युग में जो भारतीय विदेश गए हैं वे ही हिन्दी में नहीं लिख रहे हैं अपितु उन देशों के अपने लोग भी हिन्दी में लिख रहे हैं । हिन्दी साहित्य वृद्धि में इन लेखकों का योग अकल्पनीय है । हिन्दी के पाठ्यक्रमों में इस साहित्य का उपयोग वान्छनीय है । चेकोस्लोवाकिया, रूस, अमेरिका, मारीशस, फिजी, त्रिनिडाड, सूरीनाम ब्रिटेन आदि में पर्याप्त संख्या में हिन्दी साहित्य की रचना की

जा रही है। हिन्दी समिति, हिन्दी ज्ञान प्रतियोगिताओं का आयोजन किया जा रहा है । समाचार पत्र, पत्रिकाएँ प्रकाशित हो रही हैं ।

2.7 सारांश

इस पाठ के अन्तर्गत आपने मातृभाषा शिक्षण की आवश्यकता, हिन्दी की भाषागत विशेषता, मातृभाषा व द्वितीय भाषा के रूप में हिन्दी-शिक्षण के उद्देश्य, शिक्षण-सिद्धांत, उद्देश्यों को प्राप्त करने के कक्षागत, माध्यम, विद्यार्थियों की सृजनात्मक अभिव्यक्ति विकास हेतु विद्यालयी कार्यक्रमों के प्रासंगिक विवेचन का अध्ययन किया है- यह आपके अध्यापन को सार्थक बनाने में पर्याप्त सहायक रहेगा । इसके अतिरिक्त इस पाठ में वैश्वीकरण के वर्तमान समय में हिन्दी को विश्वभाषा के रूप में शीघ्र मान्यता प्राप्त हो, इस हेतु अध्यापक के रूप में आपकी महत्त्वपूर्ण भूमिका को भी उद्घाटित करने का प्रयास किया गया है । जिससे कि भाषा-शिक्षण का गरिमापूर्ण कार्य भविष्योन्मुख दृष्टि- समन्वित सम्पादित किया जा सके ।

2.8 अभ्यासार्थ-प्रश्न

1 मातृभाषा-शिक्षण की क्या उपादेयता है? अपने विचार व्यक्त कीजिए ।

2 राष्ट्रभाषा के रूप में हिन्दी-शिक्षण के उद्देश्य हिन्दी मातृभाषा के रूप से भिन्न क्यों हैं? प्रकाश डालिए ।

3 भारत के अहिन्दीभाषी क्षेत्रों और विदेशों में हिन्दी शिक्षण हेतु हिन्दी भाषा के अध्यापकों की भूमिका को स्पष्ट कीजिए ।

4 विद्यार्थियों की सृजनात्मक अभिव्यक्ति विकास हेतु आप अपने विद्यालय में किन-किन प्रवृत्तियों की आयोजना करेंगे? सूचीबद्ध करते हुए उनकी क्रियान्वयन-विधि का उल्लेख कीजिए ।

5

2.9 संदर्भ पुस्तक-सूची

1. प्रो. रमन बिहारी लाल	हिन्दी शिक्षण रस्तोगी पब्लिकेशन्स, मेरठ 1981
2. डॉ. हरिवंश तरुण	मानक हिन्दी शिक्षण प्रकाशन संस्थान, नयी दिल्ली 2002
3. निरज्जन कुमार सिंह	माध्यमिक विद्यालयों में हिन्दी-शिक्षण राज. हिन्दी ग्रंन्थ अकादमी, जयपुर
4. भाटिया, कैलाश चन्द्र डॉ. मानकी	हिन्दी व्याकरण राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद, नयी दिल्ली 1991
5. तिवारी, उदयनारायण	भाषा-शिक्षण विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा 1999
6. सिंह, कुँवर पाल सिंह सिंह, नमिता	वर्तमान साहित्य पत्रिका

(संपादक) — प्रवासी साहित्य महाविशेषांक 1 व 2 अवन्तिका-1 रामघाट रोड अलीगढ़ 2006

7. श्रीवास्तव, रवीन्द्र डॉ. — भाषा-शिक्षण, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली 1992

8. शर्मा, बी. एन. डॉ. — हिन्दी-शिक्षण, साहित्य प्रकाशन, आगरा

9. योगेश कुमार डॉ. — आधुनिक हिन्दी-शिक्षण, ए. पी. एच. पब्लिशिंग कारपोरेशन, नई दिल्ली 2004

इकाई -3

"विद्यालयी पाठ्यचर्या में हिन्दी का स्थान, विविध स्तरों पर एवं अन्य विषयों के साथ सम्बन्ध"

(Place of subject in school curriculum, linkage with other areas and different stages, unifield/specialised apporoach to curriculum)

इकाई की रूपरेखा

3.0 भूमिका तथा उद्देश्य

3.1 पाठ्यचर्या- सम्प्रत्यय-स्पष्टीकरण

3.2 पाठ्यचर्या- निर्माण के सिद्धान्त

- 3.2.1 विद्यालयी पाठ्यचर्या में हिन्दी भाषा का स्थान
- 3.2.2 भारतीय विद्यालयों में पाठ्यचर्या में सुधारात्मक प्रयास

3.3 पाठ्य विषयवस्तु विश्लेषण

3.4 पाठ्य विषयवस्तु विश्लेषण का प्रयोजन

3.5 अभ्यासार्थ प्रश्न

3.6 राजस्थान माध्यमिक शिक्षा बोर्ड द्वारा माध्यमिक कक्षाओं के लिए निर्धारित हिन्दी पाठ्यचर्या का विश्लेषण व समीक्षा

- 3.6.1 गद्य-शिक्षण के अध्ययन से पूर्त्य उद्देश्य
- 3.6.2 पद्य-शिक्षण के सामान्य उद्देश्य
- 3.6.3 द्रुत पाठों की उपयोगिता
- 3.6.4 हिन्दी की विषयवस्तु की समीक्षा

3.7 हिन्दी की पाठ्यचर्या का अन्य विद्यालयी विषयों के साथ सम्बन्ध

- 3.7.1 सह-सम्बन्ध की अवधारणा
- 3.7.2 सह-सम्बन्ध के प्रकार
- 3.7.3 हिन्दी का विविध विद्यालयी विषयों के साथ सह सम्बन्ध

3.8 सारांश

3.9 स्व मूल्यांकन व अभ्यासार्थ प्रश्न

3.10 अध्ययन हेतु सन्दर्भ-ग्रंथ सूची

3.0 भूमिका तथा उद्देश्य

व्यापक अर्थ में पाठ्यचर्या में वे सभी अनुभव सम्मिलित होते हैं जिन्हें विद्यार्थी विद्यालय की शिक्षण-प्रक्रिया और सामान्य वातावरण से प्राप्त करता है । शिक्षण प्रक्रिया वस्तुत: एक प्रकार से द्विध्रुवीय अन्तर्क्रिया है जिसमें एक ध्रुव पर अध्यापक है और दूसरे ध्रुव पर

विद्यार्थी - पाठ्यचर्या इनके मध्य वह साधन है जिसकी सहायता से अध्यापक विद्यार्थी के व्यक्तित्व में वांछित परिवर्तन करता है । पाठ्यचर्या शैक्षिक उद्देश्यों की पूर्ति करने का साधन है । अध्यापक के लिए पाठ्यचर्या के विषय में भली प्रकार जानना अत्यावश्यक है । प्रस्तुत पाठ के अध्ययनोपरान्त आप निम्नलिखित उपलब्धियाँ अर्जित करेंगे-

1 पाठ्यचर्या सन्दर्भ में सम्प्रत्ययात्मक स्पष्टता होगी ।
2 पाठ्यचर्या- निर्माण के सिद्धान्तों का ज्ञान प्राप्त होगा ।
3 शिक्षण उद्देश्य, अध्यापन, विधि, पठन-सामग्री तथा मूल्यांकन के मध्य अन्त: सम्बन्ध को ज्ञात कर सकेंगे ।
4 हिन्दी पाठ्यचर्या व पाठ्य पुस्तकों की समीक्षा कर सकेंगे ।
5 हिन्दी की पाठ्यचर्या के महत्त्व को ज्ञात कर अन्य विद्यालयी विषयों के साथ इसका अन्त: सम्बन्ध स्थापित कर सकेंगे ।

3.1 पाठ्यचर्या-सम्प्रत्यय

"विद्यालय में शिक्षक एवं शिक्षार्थी द्वारा किसी सुनिश्चित उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु किये गये समन्वित क्रिया-कलापों को ही पाठ्यचर्या (ब्ननततपबनसनउ) की संज्ञा दी जाती है । इस प्रकार पाठ्यचर्या के अन्तर्गत न केवल शैक्षणिक क्रियाएँ ही आती हैं; अपितु वे समस्त क्रिया-कलाप एवं अनुभव आ जाते हैं; जो विद्यालय के अन्तर्गत क्रियान्वित होते है । पाठ्यचर्या एक साधन है जिसकी सहायता से अध्यापक विद्यार्थियों के व्यक्तित्व में वाञ्छित परिवर्तन लाता है ।"

पाठ्यचर्या को विभिन्न शिक्षाविदों ने अलग-अलग दृष्टिकोण से परिभाषित किया है- सम्प्रत्यय स्पष्टिकरण हेतु कतिपय का उल्लेख आवश्यक है- जो निम्नांकित है:-

(1) कनिंघम के अनुसार -

यह (पाठ्यचर्या) कलाकार (शिक्षक) के हाथ में एक साधन है; जिसके द्वारा वह अपनी सामग्री (छात्र) को अपने स्टूडियो (विद्यालय) में अपने आदर्श (उद्देश्य) के अनुसार वान्छित रूप देता है ।"

(2) माध्यमिक शिक्षा आयोग के अनुसार -

"विद्यालय का सम्पूर्ण जीवन पाठ्यचर्या है, जो छात्रों के जीवन के सभी पक्षों को प्रभावित कर सकता है और उनके सन्तुलित व्यक्तित्व के विकास में सहायता दे सकता है । "

(3) क्रो एवं क्रो के अनुसार -

पाठ्यचर्या में सीखने वाले या बालकों के वे सभी अनुभव निहित हैं; जिन्हें; वह विद्यालय या उसके बाहर प्राप्त करता है । ये समस्त अनुभव एक कार्यक्रम में निहित किये जाते है जो उनको मानसिक, शारीरिक, संवेगात्मक, सामाजिक आध्यात्मिक एवं नैतिक रूप से विकसित होने में सहायता देता है ।

3.2 पाठ्यचर्या निर्माण के सिद्धान्त

किसी भी विषय की पाठ्यचर्या का निर्माण करते समय कतिपय सिद्धान्तों को ध्यान में रखना चाहिए, जो निम्नलिखित हैं-

1 पाठ्यचर्या, वास्तविक रूप में उद्देश्यों की प्राप्ति का साधन होती है । अत: किसी भी विषय की पाठ्यचर्या निश्चित करते समय शिक्षा के मूल उद्देश्य और निर्धारित विषय

विशेष की वस्तु शिक्षण उद्देश्य, शिक्षण-प्रक्रिया तथा मूल्यांकन-प्रक्रिया में सामञ्जस्य परिलक्षित होना चाहिए

2 भाषा की पाठ्यचर्या विद्यार्थियों के शारीरिक, मानसिक, संवेगात्मक और सामाजिक विकास एवं उनकी रुचि, रुझान और आवश्यकताओं के परिप्रेक्ष्य में निर्मित होनी चाहिए

3 भाषा की पाठ्यचर्या विस्तृत एवं स्पष्ट होनी चाहिए । प्रारम्भिक स्तर से ही भाषा के मौखिक एवं लिखित प्रयोग को व्यापक बनाने के लिए सामाजिक-कार्य, साहित्यिक-क्रियाएं एवं सांस्कृतिक क्रियाओं का प्रयोग किया जाये । कक्षा आठ तक सीखे हुए भाषायी कौशलों तथा माध्यमिक कक्षाओं के लिए निर्धारित भाषायी कौशलों के मध्य उचित समन्वय होना चाहिए ।

4 पाठ्यचर्या के विभिन्न विषय, उपविषय एवं क्रियाओं में सह-सम्बन्ध होना चाहिए क्योंकी ज्ञान अपने में एक पूर्ण इकाई है और उसका सम्बन्ध व्यावहारिक जीवन से होता है । हिन्दी का सम्बन्ध संस्कृत, अंग्रेजी, विज्ञान, इतिहास आदि विषयों से होता है । हिन्दी ही इन सभी विषयों को सम्प्रेषण का माध्यम प्रदान करती है तथा अन्य ज्ञानात्मक विषय सम्प्रेषण हेतु विषयवस्तु देते हैं अत: हिन्दी पाठ्यचर्या में यह अन्योन्य समन्वय का सिद्धान्त स्पष्टत: दृष्टिगोचर होना चाहिए ।

5 पाठ्यचर्या में पठनीय प्रकरणों का क्रम सरल से कठिन की ओर तथा अन्योन्याश्रित प्रकरणों को विषय की तार्किक सरंचना के रूप में प्रस्तुत किया जाना चाहिए । सन्धि सिखाने से पूर्व वर्णो का परिचय देना आवश्यक होता है ।

6 हिन्दी-साहित्य के अध्ययन के फलस्वरूप छात्रों में उदात्त गुणों का विकास होना चाहिए। पाठ्य-पुस्तक में ऐसे पाठों का संकलन किया जाए जिनसे विद्यार्थियों के चारित्रिक तथा नैतिक विकास का मार्ग प्रशस्त हो ।

7 माधायमिक-कक्षा के अन्त में अनेक छात्र शिक्षा समाप्त कर देते हैं अत: हिन्दी साहित्य के प्रतिनिधि लेखकों एवं कवियों की प्रसिद्ध कृतियों से उसका परिचय करवाया जाना चाहिये । इससे छात्रों की साहित्यिक अभिरुचि जाग्रत होगी तथा विद्यालय छोड़ने के बाद भी वे अवकाश के समय अच्छा साहित्य पढ़ते रहेंगे ।

8 प्रत्येक प्रदेश की निजी साहित्यिक परम्पराएं होती हैं । हिन्दी पाठ्यचर्या में क्षेत्रीय रचनाकारों की रचनाओं को भी उचित प्रतिनिधित्व मिलना चाहिए । कुछ अन्तर्राष्टीय साहित्यकारों की रचनाओं के अनुवाद भी पाठ्यपुस्तक में सम्मिलित करने चाहिए ।

9 पाठ्यचर्या में निरन्तर परिवर्तन करते रहना चाहिए जिससे कि नए शब्द, नए प्रतीक, नए वाक्य-विन्यास अथवा नई कथन शैली से भी विद्यार्थी-वर्ग लाभान्वित हो सके तथा वे अपनी स्वतन्त्र शैली विकसित करने की ओर पूर्ण क्षमता से प्रवृत्त हों ।

3.2.1 विद्यालयी पाठ्यचर्या में हिन्दी का स्थान

हिन्दी को विभिन्न नामों से अलंत किया जाता है- जैसे राज-भाषा, राष्ट्रभाषा, सम्पर्कभाषा, एवं मातृभाषा ये सभी विशेषण हिन्दी के लब्ध-प्रतिष्ठ गुण की व्याख्या कर रहे हैं ।

वास्तव में हिन्दी सम्पूर्ण भारत को एकता के सूत्र में आबद्ध करती है विद्यालयी-पाठ्यचर्या में हिन्दी भारत के अधिकांश राज्यों में मातृभाषा के रूप में पढ़ाई जाती है ।

विद्यालय-पाठ्यचर्या के अन्तर्गत हिन्दी मुख्य केन्द्र बिन्दु है । अन्य विषयों का तादात्म्य हिन्दी से होता है ।

3.2.2 भारतीय विद्यालयों में पाठ्यचर्या में सुधारात्मक-प्रयास

सम्प्रति, भारतीय शिक्षान्तर्गत विद्यालयी पाठ्यचर्या में निम्नलिखित परिवर्तन होने चाहिए

1 तीन वर्ष के उपरांत ही शिशुओं को शिशु कक्षा में प्रवेश मिले । इस समय शिशु को उठने-बैठने, चलने-फिरने, अपना कार्य करने और अपनी इन्द्रियों को प्रशिक्षित करने के अवसर दिये जाएँ । राज्य सरकारों को उसका पूर्णत: दायित्व वहन करना चाहिए । भाषा-शिक्षण की दृष्टि से उनके उच्चारण-अंगों को प्रशिक्षित किया जाय और उन्हें धैर्यपूर्वक सुनने और आत्मविश्वास के साथ बोलने के अवसर प्रदान किए जाएँ ।

2 कक्षा 3 तक छात्रों को सस्वर-पठन की ओर विशेष अवसर दें ।रोचक कहानियाँ एवं गेय कविताएँ इस दृष्टि से अधिक उत्तम होती हैं । शब्द-भण्डार वृद्धि हेतु अन्यान्य खेलों का उपयोग करना चाहिए ।

3 5 वर्ष की आयु पश्चात् ही बच्चों को कक्षा 1 में प्रवेश दिया जाना चाहिए । इस स्तर पर उन्हें सुनने, समझने और बोलने के साथ-साथ ही पढ़ने और लिखने की ओर भी अग्रसर किया जाए । सामूहिक खेलों पर विशेष बल प्रदान किया जाए । चित्रकला, बागवानी, ब्लाक-संयोजन, क्राट जैसे कार्यात्मक क्रियाओं का बाहुल्य हो ।

4 सामाजिक-कार्यों और साहित्यिक एवं सांस्कृतिक क्रियाओं को पाठ्यचर्या में बराबर का स्थान प्रदान करना चाहिए । इसके लिए भाषा की परीक्षा में लिखित परीक्षाओं के साथ-साथ मौखिक परीक्षाओं और साहित्यिक एवं सांस्कृतिक क्रियाओं में दक्षता की परीक्षाओं को भी स्थान दिया जाना आवश्यक है ।

5 भाषा की पाठ्यचर्या में विद्यार्थियों की सृजनात्मक अभिवृत्ति विकसित करने के लिए प्रभावी पाठों को स्थान प्रदान करना चाहिए ।

3.3 पाठ्य विषय-वस्तु विश्लेषण

पाठ्य-पुस्तक में संकलित सामग्री निर्धारित उद्देश्यों की पूर्ति के लिए तथा अध्ययन-अध्यापन क्रिया को संचालित करने के लिए एक प्रमुख साधन के रूप में प्रस्तुत होती है उसकी सामाजिक समीक्षा करते रहना चाहिए । भाषायी पाठ्य-पुस्तक की विषयवस्तु का विश्लेषण निम्नांकित आधार पर किया जा सकता है-

(1) ज्ञान, अवबोध, ज्ञानोपयोग अभिव्यक्ति, अभिरुचि, अभिवृत्ति इत्यादि हिन्दी भाषा के प्रमुख उद्देश्य हैं । पाठ्यपुस्तक में संग्रहीत सामग्री का वर्गीकरण तथा परिमाणात्मक अधिभार का विवेचन विषयवस्तु विश्लेषण का प्रथम तथा सबसे महत्त्वपूर्ण आधार है, एक ही विषय-सामग्री एक से अधिक उद्देश्य की पूर्ति कर सकती है । ऐसी स्थिति में परिमाणात्मक अधिभार में द्वित्व आ जाता है, जिसे बाद में समायोजित किया जाता है।

(2) ज्ञानात्मक उद्देश्य के अन्तर्गत विद्यार्थी तत्त्वों का ज्ञान एवं विषय-वस्तु का ज्ञान प्राप्त करते हैं । भाषा तत्त्वों के अन्तर्गत नवीन शब्द, कठिन-शब्द, उच्चारणाभ्यासार्थ शब्द, संधि, प्रत्यय, समास, उपसर्ग इत्यादि सम्मिलित होते हैं; जिन्हें विद्यार्थी प्रत्यास्मरण

एवं प्रत्यभिज्ञान करते हैं । नवीन शब्द किरन पाठ में सबसे पहले प्रयुक्त हुआ है? इसी पाठ में उस शब्द की आवृत्ति कितनी बार हुई है? बाद के पाठों में उस शब्द की कहाँ कहाँ और कुल कितनी बार आवृत्ति हुई है? इसकी गणना की जाती है ।

(3) व्याकरण के पदबंध तथा वाक्य-प्रकार की दृष्टि से भी विश्लेषण किया जाता है । संज्ञा, सर्वनाम, क्रिया, विशेषण आदि पदबंधों की आवृत्ति पाठ्य-पुस्तक में कितनी बार हुई है?

(4) पाठ्य-पुस्तक की अशुद्धियाँ तथा उनके प्रकारों के आधार पर भी आवृत्ति गणना की जाती है।

(5) आदर्शों और मूल्यों के आधार पर भी विषयवस्तु का विश्लेषण होता है ।

(6) साहित्य के विविध रूपों का पाठ्य- पुस्तक में किरन अनुपात में संकलन किया गया है? इस दृष्टि से भी विश्लेषण किया जाता है ।

(7) औसत योग्यता वाले छात्रों के लिए विषयवस्तु की कठिनाई स्तर की दृष्टि से भी- विश्लेषण किया जाता है ।

3.4 पाठ्य विषयवस्तु विश्लेषण प्रयोजन

पाठ्य विषयवस्तु का विश्लेषण प्रयोजन सापेक्ष होता है । विषयवस्तु विश्लेषण के माध्यम से पाठ्य-पुस्तक का संशोधन संभव हो पाता है वहीं दूसरी ओर यह कक्षा अध्यापन में भी सहायक हो सकता है ।

विश्लेषण के द्वारा अध्यापकों को शब्दों की तथा संरचनाओं की आवृत्ति तथा आवृत्ति स्थलों का अभिज्ञान होता है ।

3.5 अभ्यासार्थ प्रश्न

1 "पाठ्यचर्या एक साधन है जिसे अध्यापक विद्यार्थियों के व्यक्तित्व में वाञ्छित परिवर्तन करने के लिए प्रयुक्त करता है-" कथन पर प्रकाश डालिए

2 पाठ्य विषय वस्तु का विश्लेषण किन आधारों पर करना चाहिए? विचार व्यक्त कीजिए ।

3 पाठ्यचर्या- निर्माण के प्रमुख सिद्धान्तों की विवेचना कीजिए ।

3.6 राजस्थान माध्यमिक शिक्षा बोर्ड द्वारा माध्यमिक कक्षाओं के लिए निर्धारित हिन्दी पाठ्यचर्या का विश्लेषण व समीक्षा ।

प्रस्तुत विश्लेषण और समीक्षा का आधार राजस्थान माध्यमिक शिक्षा बोर्ड, अजमेर द्वारा सन् 2007 की माध्यमिक विद्यालय परीक्षा की निर्धारित पुस्तके हैं । राजस्थान एक हिन्दी भाषी राज्य है तथा सभी विद्यार्थियों को हिन्दी भाषा का अनिवार्य रूप से अध्ययन करना पड़ता है । तृतीय भाषा के रूप में हिन्दी अध्ययन की कोई छूट छात्रों को प्रदान नहीं की गई है ।

कक्षा दशम हेतु निर्धारित इस पाठ्यचर्या को पढ़ने के बाद यह प्रतीत होता है कि यह विषयवस्तु गद्य (निबन्ध, कहानी, एकांकी, रेखाचित्र, हास्यादि) पद्य, व्याकरण, नाटक इत्यादि से पूर्णरूपेण परिपूर्ण है । इन पाठों में विद्यार्थियों का ज्ञानात्मक, अवबोधात्मक कौशलात्मक श्लाघात्मक विकास निहित है । उद्देश्यों का विवेचन अति संक्षेप में गद्य, पद्य, द्रुतपाठ व्याकरण आदि पर आधारित है ।

3.6.1 गद्य-शिक्षण के अध्ययन से पूर्त्य उद्देश्य

गद्य, वस्तुत: कवियों की कसौटी मानी गई है । गद्य लेखनान्तर्गत लेखक के पास कृति के भाषा- सौष्ठव के प्रति कोई विकल्प नहीं होता है । अत: गद्य- शिक्षण विशेषत: महत्त्वपूर्ण है । गद्य-पाठों के सामान्य उद्देश्य निम्नांकित बिन्दुओं में व्यक्त किए जा रहे हैं-

(1) शब्द भण्डार में वृद्धि करना ।

(2) मुहावरों, लोकोक्तियों तथा सामासिक पदों आदि का ज्ञान प्रदान करना ।

(3) अर्थ ग्रहण करने तथा विचारों को अभिव्यक्त करने की क्षमता का विकास करना ।

(4) सामाजिक, नैतिक तथा राष्ट्रीय मूल्यों के आधार पर विषय सम्बन्धी तात्पर्य को स्पष्ट करने की योग्यता-वृद्धि ।

(5) वाच्यार्थ के साथ-साथ लक्ष्यार्थ व व्यंग्यार्थ को समझना ।

(6) पठित विषयवस्तु की पृष्ठभूमि में विद्यार्थियों की सृजनात्मकता का विकास ।

3.6.2 पद्य- शिक्षण के सामान्य उद्देश्य

पद्य- शिक्षण द्वारा विद्यार्थी के रागात्मक भावों को तुष्टि मिलती है, सौन्दर्य की परख एवं सौन्दर्यानुभव की शक्ति बढ़ती है और चित्तवृत्तियों का परिष्कार होता है । पद्य शिक्षण के उद्देश्य निम्नांकित हैं-

(1) शुद्ध एवं स्पष्ट उच्चारण, उचित यति, गति, लय और भाव के अनुसार सस्वर-वाचन का अभ्यास करना ।

(2) वीरता, प्रति सौन्दर्य, नीति, प्रेम, देशभक्ति आदि से परिपूर्ण पाठ्यचर्या में निर्धारित कविताओं का रसास्वादन तथा अर्थ- बोध ।

(3) कोमलतम भावों का संचार करते हुए पद्य के प्रति अनुराग उत्पन्न करना ।

(4) कवि द्वारा व्यंजित भावों, अनुभूतियों और कल्पनाओं को समझना ।

(5) पद्यान्तर्गत मर्मस्पर्शी स्थलों की पहिचान तथा तत्सम्बन्धी भावानुभूति करना ।

(6) रागात्मक शक्तियों का उदात्तीकरण, सात्त्विक भावों का उद्बोधन एवं उदात्त भावों का संवर्द्धन करना ।

(7) पद्य में निहित अलंकार, छन्द, शब्द गुण इत्यादि की पहिचान करना ।

(8) नैतिक मूल्यों, आदर्शों तथा सदवृत्तियों का विकास करना ।

(9) प्रमुख कवियों की रचनाओं तथा काव्यधारा से परिचित करना, श्लाघापरक वृत्ति तथा सृजनात्मकता का विकास ।

3.6.3 द्रुत-पाठों के अध्ययन के उद्देश्य

द्रुत -पाठ को हिन्दी शिक्षण में व्यापक अध्ययन पाठ के नाम से भी सम्बोधित किया जाता है । गद्य-शिक्षण के अन्तर्गत वे पाठ जो तीव्र गति से पढ़े जा सकते हैं- वे द्रुत -पाठ कहलाते हैं ।

द्रुत -पाठ की पुस्तकों में ऐसा कोई शब्द नहीं होना चाहिए जिनसे विद्यार्थी अनभिज्ञ हों।

द्रुत -पाठ का गद्य-शिक्षण में विशेष महत्त्व है प्रमुखत: इसके उद्देश्य निम्नलिखित हैं-

(1) इसके अध्ययन से भाषायी कौशल विकास के साथ- साथ आत्मविश्वास की वृद्धि करना ।

(2) पारिवारिक / सामाजिक पत्र, निमन्त्रण पत्र अथवा बधाई- पत्र के साथ- साथ विवरणात्मक तथा मौलिक निबन्ध लेखन करना ।

(3) शीघ्रता से पुस्तक पढ़ने की योग्यता विकसित करना तथा अवकाश के क्षणों का सदुपयोग करना ।

(4) छात्रों का चारित्रिक एवं मानसिक विकास करना ।

(5) छात्रों को देश की संस्कृति तथा इतिहास से परिचित करना ।

3.6.4 हिन्दी भाषा की विषयवस्तु की समीक्षा

राजस्थान माध्यमिक शिक्षा बोर्ड, अजमेर कर माध्यमिक कक्षा हेतु निम्नांकित पुस्तकें निर्धारित की गई है-

1 भारती भाग- 1 एवं 2 (गद्य-पद्य संग्रह)

2 मधुरिमा (जीवनी, संस्मरण एवं यात्रा वृतांत)

3 गद्य-तरंगिणी (कहानी एवं एकांकी संग्रह)

4 हिन्दी-व्याकरण एवं रचना (व्याकरण-ज्ञान)

उपर्युक्त पुस्तकों का विश्लेषण एवं समीक्षा इस प्रकार से है-

(क) पुस्तक का नाम	:	भारती भाग 1 व 2
(ख) संयोजक	:	प्रो. प्रहलाद नारायण अग्रवाल
(ग) प्रकाशक	:	माध्यमिक शिक्षा बोर्ड राजस्थान, अजमेर
(घ) प्रकाशन	:	2006

पुस्तक के आरम्भ में "दो शब्द" शीर्षक से संक्षेप में पुस्तक की विषय वस्तु का सामान्य संक्षिप्त परिचय दिया गया है । परिचयात्मक विवरण में पुस्तक के उद्देश्यों की भी परोक्ष रूपेण चर्चा की गई है । प्रत्येक पाठ के आरम्भ में लेखक परिचय, उसकी तियो का उल्लेख तथा पाठ-परिचय यथाविधि संक्षेप में दिया गया है ।

विषयवस्तु

सम्पूर्ण पुस्तक गद्य एवं पद्य रूप से दो भागों में विभक्त की गई है । गद्य एवं पद्य दोनों में 18- 18 पाठों को स्थान प्रदान किया गया है । गद्य रचनाओं में निबन्ध, आत्मकथ्यांश, संस्मरण आदि विभिन्न विधाओं का समावेश किया गया है ।

सभी रचनाएँ लख-प्रतिष्ठ लेखकों द्वारा रचित हैं जो पूर्णरूपेण माध्यमिक स्तर के छात्रों के अधिगम स्तरानुरूप है ।

उदाहरण के लिए "नींव की ईट" पाठ में रामवृक्ष बेनीपुरी ने स्वतन्त्रता से पूर्व के शहादत की सराहना की तथा स्वातन्त्रयोत्तर भारत के सत्ता-पद-मद की भर्त्सना की । यह निबंध पूर्णत: ललित-निबंध शैली में लिखा गया है । इसके अतिरिक्त मुंशी प्रेमचन्द रचित 'सुजान भगत' महोदवी वर्मा प्रणीत "नीलू" इत्यादि भी अपने उद्देश्यों की पूर्ति में सफल हुए हैं ।

पद्य-भाग में भक्तिकाल और आधुनिक-काल के लव्य-प्रतिष्ठ कवियों को समान स्थान प्रदान किया है । आदिकाल के कवियों को पुस्तक में स्थान प्रदान नहीं किया गया है । कबीर, सूरदास, रसखान, भूषण रामनरेश, रहीम, बिहारी, जयशंकर प्रसाद, अयोध्या सिंह उपाध्याय, हरिवंशराय बच्चन इत्यादि के श्रेष्ठ पद / कवितांश पुस्तक में संकलित हैं ।

उद्देश्यों की दृष्टि से देखा जाय तो नैतिक-मूल्यों के विकास तथा भावग्रहण के उद्देश्य प्रस्तुत संकलन द्वारा पूरे होते हैं। उपादेय रहता आदि अभिवृत्यात्मक एवं मौलिक उदभावन के उद्देश्यों की पूर्ति हेतु भी कोई सार्थक व श्लाघनीय प्रयास किया जाता ।

सारांश रूपेण "भारती-भाग 1 एवं 2" पुस्तक हिन्दी-शिक्षण के गद्य-पद्य विधा के समेकित उद्देश्यों की पूर्ति हेतु सफल संकलन कहा जा सकता है ।

उपर्युक्त विश्लेषण एवं समीक्षा के आधार पर पाठ्यचर्या में निर्धारित दो अन्य पुस्तकों की समीक्षा स्वयं कीजिए-

(1) मधुरिमा तथा (2) गद्य-तरंगिणी

इन पुस्तकों की समीक्षा करते समय यह ध्यान रखना अपेक्षित है कि ये पुस्तकें द्रुत-वाचन के निर्मित पाठ्यचर्या में सम्मिलित की गई हैं । गहन अध्ययन के लिए नहीं- अत: अध्ययन हेतु इन पुस्तकों में "भाषा तत्त्वों के ज्ञान सम्बन्धी" उद्देश्य यहाँ गौण रहते है । मूल्यों के विकास तथा सारांश को द्रुतगति से ग्रहण करने की दृष्टि से आपको इन पुस्तकों की समीक्षा करनी है।

3.7 हिन्दी का अन्य विद्यालयी विषयों के साथ सह सम्बन्ध

समग्रत दृष्टि से प्राप्त होता है कि ज्ञान, वस्तुत: एक ही होता है । विभिन्न विषय उसके अंग होते हैं। किसी कक्षा हेतु पाठ्यचर्या में विभिन्न विषयों का विभाजन किया जाता है, वास्तव में यह विभाजन पूर्ण रूप से स्वतंत्र नहीं होता, प्रत्युत् ये विषय परस्पर सम्बन्धित होते हैं ।

3.7.1 सह-सम्बन्ध की अवधारणा

सह-सम्बन्ध (Correlation) को हिन्दी के आचार्यो ने समन्वय, एकीकरण, संश्लेषण, अन्त: सम्बन्ध इत्यादि शब्दों से भी अभिहित किया है ।

सह-सम्बन्ध के विषय में प्रो. घाटे का कथन विशेष रूप से प्रासंगिक है-

''विभिन्न विषयों को पृथक् संकुचित कटघरों (विषयों) में बन्द कर नहीं पढ़ाया जायेगा, बल्कि उन्हें सम्बन्धित किया जायेगा । यही विभिन्न विषयों का सह- सम्बन्ध (संमवाय) कहलाता है ।"

प्रो. घाटे के कथन से स्पष्ट है कि ज्ञान की सम्पूर्णता या उसके क्षेत्र का विस्तार करने के लिए विभिन्न विषयों के मध्य अन्तःसम्बन्ध आवश्यक है । वर्तमान समय में विद्यालयों में जो भिन्न-भिन्न विषयों का अध्ययन कराया जाता है, उनमें किसी भी प्रकार का सह- सम्बन्ध स्थापित नहीं किया जाता । ऐसा समझा जाता है कि प्रत्येक विषय का अपना स्वतन्त्र महत्त्व है, अर्थात् हिन्दी की पाठ्यचर्या का इतिहास, भूगोल आदि विषयों से कोई सम्बन्ध नहीं है तथा सभी विषय एक दूसरे से सर्वथा भिन्न हैं ।

वास्तव में ये सभी तथ्य निर्मूल हैं । ज्ञान, खण्ड-खण्ड नहीं अखण्ड होता है तथा यह अखण्डता अन्य विषयों के परस्पर अन्तःसम्बन्ध को घोषित करती है ।

3.7.2 शिक्षा सह-संबंध के प्रकार

साधारणतया शिक्षा सहसम्बन्ध के दो भेद किये जा सकते हैं-

(अ) क्षितिजीय सम्बन्ध (Horizontal Correlation)

(ब) ऊर्ध्वाधर सम्बन्ध (Vertical correlation)

(अ) क्षितिजीय सम्बन्ध

क्षितिजीय सम्बन्ध में पाठ्यचर्या के अन्तर्गत विभिन्न विषयों में सह-सम्बन्ध प्रदर्शित करके शिक्षा प्रदान की जाती है ।

उदाहरणार्थ, हिन्दी की शिक्षा देते समय इतिहास, नागरिक शास्त्र, विज्ञान, गणित इत्यादि विषयों से उसका सम्बन्ध स्थापित करते हुए अभीष्ट ज्ञान प्रदान किया जाता है ।

(ब) ऊर्ध्वाधर सह-सम्बन्ध

ऊर्ध्वाधर सह-सम्बन्ध उस समय होता है, जब एक ही विषयों के विभिन्न अंगों में परस्पर सम्बन्ध स्थापित किया जाये । जैसे मातृभाषा के शिक्षण में गद्य का पद्य के साथ, रचना का गद्य के साथ तथा व्याकरण का गद्य या पद्य के साथ सम्बन्ध स्थापित किया जाता है । इससे पाठ में जहाँ रोचकता आ जाती है, वहीं बालकों तथा बालिकाओं का ज्ञान भी सुदृढ़ हो जाता है ।

विद्यालय पाठ्यचर्या में दोनों प्रकार के सह-सम्बन्ध का प्रयोग किया जा सकता है । किन्तु यहाँ हमारा अभिष्ट क्षितिजीय सह-सम्बन्ध को रूपायित करना है ।

मातृभाषा हिन्दी की पाठ्यचर्या का विभिन्न विद्यालयी विषयों के साथ सह-सम्बन्ध निम्नांकित रूप से स्पष्ट किया जा रहा है-

(1) हिन्दी की पाठ्यचर्या का विज्ञान से सह-सम्बन्ध

हिन्दी की पाठ्य-पुस्तक में बहुत से ऐसे पाठ भी होते हैं, जो विज्ञान से सम्बन्धित होते हैं, जिससे कि छात्रों को विज्ञान के सम्बन्ध में ज्ञान प्रदान किया जा सके । उदाहरण के रूप में चलचित्र, बेतार का तार, अणुशक्ति, मुद्रण-कला आदि पाठ लिये जा सकते हैं । ऐसे पाठों को पढ़ाते समय यह आवश्यक है कि अध्यापक को इन पाठों से सम्बन्धित वैज्ञानिक सिद्धान्तों का भी ज्ञान हो, जिससे कि वह विषयवस्तु का सम्यक् प्रस्तुतीकरण कर विद्यार्थियों को भाषा के साथ-साथ अपेक्षित विज्ञान से सम्बन्धित आवश्यक ज्ञान भी प्रदान करने में सक्षम हो सके ।

इसी सन्दर्भ में यह भी अपेक्षित है कि विज्ञान के अध्यापक को अपनी विषय वस्तु के सम्यक् प्रस्तुतीकरण हेतु सारगर्भित भाषा का प्रयोग करना चाहिए । इसके लिए उसे हिन्दी भाषा की व्याकरणिक शुद्धता के लिए भी आवश्यक प्रयास करना होगा । विज्ञान के अध्यापक का अपनी विषय वस्तु का सम्यक् विश्लेषण करने के लिए भी भाषागत ज्ञान से परिपूर्ण होना आवश्यक है। विद्यालय में प्राथमिक उच्च प्राथमिक एवं माध्यमिक स्तर पर विज्ञान एवं भाषा के मध्य समन्वय प्रभावी रूप से किया जा सकता है ।

(2) हिन्दी एवं इतिहास में सह-सम्बन्ध

हिन्दी की विभिन्न पाठ्यपुस्तकों में (विभिन्न स्तरों पर) ऐतिहासिक घटनाओं का विवरण स्पष्टत: होता है । जैसे- चन्द्रगुप्त, 1857 का स्वतन्त्रता समर, श्री अरविन्द, झाँसी की रानी इत्यादि । इन पाठों का पढ़ाते समय भाषा के अध्यापक को ऐतिहासिक तथ्यों की भी विस्तृत एवं विशद चर्चा करनी चाहिए ।

उदाहरणस्वरूप "श्री अरविन्द" नामक पाठ पढ़ाते समय हिन्दी भाषा के अध्यापक के द्वारा भारतवर्ष में 20 वीं शताब्दी के प्रारम्भिक दशकों की धार्मिक, सामाजिक, सांस्कृतिक तथा राजनीतिक स्थिति की भी विवेचना की जाएगी । सुभद्रा कुमारी चौहान की "झांसी की रानी"

नामक कविता पढ़ाते समय "1857 के स्वातन्त्र्य समर" की चर्चा की जाएगी तथा उन नगरों के सम्बन्ध में भी आवश्यक जानकारी दी जायेगी जिनका उल्लेख इस कविता में हुआ है ।

इतिहास-शिक्षण के समय कहानी तथा व्याख्यान पद्धति का सहारा लिया जाता है, इसलिए इतिहास के अध्यापक को भी हिन्दी-भाषा का पर्याप्त ज्ञान होना चाहिए, जिससे कि वह ऐतिहासिक घटनाओं/तथ्यों का विवेचना सम्यक् रूप से करने में समर्थ हो सके ।

(3) हिन्दी एवं भूगोल में सह-सम्बन्ध

व्यक्ति के जीवन पर भौगोलिक परिस्थितियों का बड़ा गहरा प्रभाव होता है । भूगोल के इस महत्त्व को ध्यान में रखते हुए हिन्दी की पाठ्य-पुस्तकों में भूगोल से सम्बन्धित कई पाठ होते हैं । जैसे- बद्रीनाथ की यात्रा, मानसरोवर भ्रमण, चावल की खेती इत्यादि । इस प्रकार के पाठ पढ़ाने के लिए भाषा के अध्यापक को भूगोल का ज्ञान होना अपेक्षित है । "बद्रीनाथ की यात्रा" नामक पाठ पढ़ाते समय मार्ग में आने वाली नदियों, प्रातिक दृश्यावली तथा पर्वतीय खण्डों की चर्चा की जायेगी । इस प्रकार के पाठों में मानचित्र-प्रयोग भी करना होता है । भूगोल के अध्यापक को भी अपनी विषयवस्तु के स्पष्टीकरण हेतु भाषा का अच्छा ज्ञान होना चाहिए ।

(4) हिन्दी एवं मनोविज्ञान

मनोविज्ञान वस्तुत: मानव के व्यवहार का अध्ययन है तो साहित्य मानव सम्बन्धों की व्याख्या । मनोविज्ञान में जिस प्रकार से व्यक्ति के भावों, संवेगों, मूल प्रतियों आदि पर विचार किया जाता है, साहित्य में "रसनिष्पत्ति" के सिद्धान्त में इसकी चर्चा की जाती है ।

हिन्दी साहित्य में अनेक तियाँ ऐसी हैं जो मानव के जटिल मनोवैज्ञानिक सम्बन्धों का विश्लेषण करती है, जैसे- जैनेन्द्र कुमार की "पाजेब" और नासिरा शर्मा की "दूसरा ताजमहल" कहानियाँ । सूर रचित 'भ्रमर गीत' में भी बाल-मनोविज्ञान का बड़ा ही स्वाभाविक और सजीव चित्रण हुआ है । मानव के मन में उपजने वाले भाव, तथा विचार ही कल्पना का सहारा पाकर साहित्य बनता है । अत: मनोविज्ञान एवं भाषा के मध्य सह-सम्बन्ध स्वाभाविक है ।

(5) हिन्दी और समाजशास्त्र में सह-सम्बन्ध

साहित्य समाज का दपर्ण होता है । उसमें समाज की समस्याएं ही दिग्दर्शित होती है । उदाहरणार्थ- प्रेमचन्द्र के कर्मभूमि, गोदान आदि उपन्यासों में सामाजिक समस्याओं का ही चित्रण है। अत: यह कहा जा सकता है कि भाषा और समाजशास्त्र के मध्य परस्पर घनिष्ठ सह-सम्बन्ध है।

(6) हिन्दी-भाषा और कला में सह-सम्बन्ध

हिन्दी की पुस्तकों में नृत्यकला, संगीत-कला, हस्त-कला तथा चित्रांकन सम्बन्धी पाठ भी संकलित किए जाते हैं । भाषा के अध्यापकों से अपेक्षा की जाती है कि वे इन पाठों को पढ़ाते समय बालकों को सम्बन्धित कलाओं के सम्बन्ध में भी विस्तृत परिचय प्रदान करें । इसी प्रकार कलाओं के अध्यापन में भाषिक अभिव्यक्ति के सारगर्भित लालित्य पक्ष पर अध्यापकों को विशेष ध्यान देना चाहिए । भाषा का अन्य विषयों से सम्बन्ध स्थापित करते समय सह-सम्बन्ध की स्वाभाविक निष्पत्ति पर विशेष ध्यान प्रदान करना चाहिए ।

हिन्दी का सहसम्बन्ध निम्नांकित रूप से स्पष्ट किया जा सकता है :-

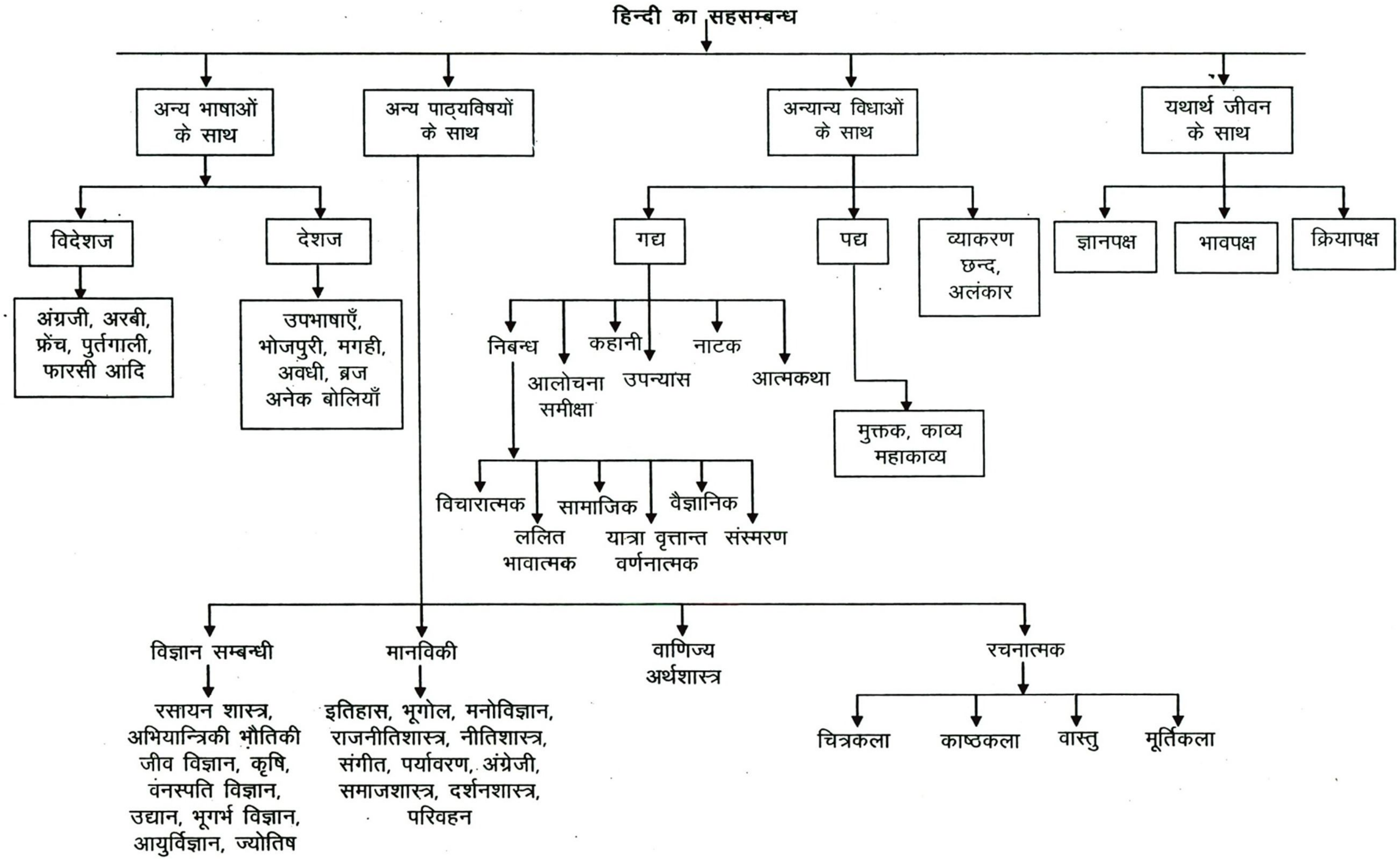
हिन्दी का सहसम्बन्ध
अन्य भाषाओं के साथ
अन्य पाठ्यविषयों के साथ
अन्यान्य विधाओं के साथ
यथार्थ जीवन के साथ
विदेशज
देशज
अंग्रजी, अरबी, फ्रेंच, पुर्तगाली, फारसी आदि
उपभाषाएँ, भोजपुरी, मगही, अवधी, ब्रज अनेक बोलियाँ
गद्य
पद्य
व्याकरण छन्द, अलंकार
ज्ञानपक्ष
भावपक्ष
क्रियापक्ष
निबन्ध
आलोचना समीक्षा
कहानी
उपन्यास
नाटक
आत्मकथा
मुक्तक, काव्य महाकाव्य
विचारात्मक
ललित भावात्मक
सामाजिक
यात्रा वृत्तान्त वर्णनात्मक
वैज्ञानिक
संस्मरण
विज्ञान सम्बन्धी
मानविकी
वाणिज्य अर्थशास्त्र
रचनात्मक
रसायन शास्त्र, अभियान्त्रिकी भौतिकी जीव विज्ञान, कृषि, वनस्पति विज्ञान, उद्यान, भूगर्भ विज्ञान, आयुर्विज्ञान, ज्योतिष
इतिहास, भूगोल, मनोविज्ञान, राजनीतिशास्त्र, नीतिशास्त्र, संगीत, पर्यावरण, अंग्रेजी, समाजशास्त्र, दर्शनशास्त्र, परिवहन
चित्रकला
काष्ठकला
वास्तु
मूर्तिकला

3.9 सारांश

प्रस्तुत पाठ के अन्तर्गत आपने पाठ्यचर्या के सम्प्रत्यय, निर्माण-सिद्धान्त, पाठ्य विषयवस्तु के विश्लेषण तथा प्रयोजन के सम्बन्ध में आवश्यक अध्ययन किया । इसके अनन्तर राजस्थान माध्यमिक शिक्षा बोर्ड द्वारा निर्धारित हिन्दी की पाठ्यचर्या की समीक्षात्मक विवेचना करते हुए विविध विद्यालयी विषयों के साथ हिन्दी के सह-सम्बन्ध को भी ज्ञात किया । ज्ञान वस्तुतः समग्ररूप में ही विद्यमान रहता है । अध्यापकों से अपेक्षा की जाती है कि अपने विषय का सम्यक् स्पष्टीकरण करते समय विविध विषयों के मध्य स्थित सह-सम्बन्ध को विशेष महत्त्व प्रदान करें, जिससे कि विद्यार्थियों को निर्दिष्ट ज्ञान आत्मसात करने में सुविधा रहे ।

3.10 अभ्यास-प्रश्न

1 "हिन्दी-भाषा एक विषय नहीं है, परन्तु वह सभी विषयों का एक आधार स्तम्म है।" इस कथन को स्पष्ट कीजिए ।

2 हिन्दी का विज्ञान तथा इतिहास से सह-सम्बन्ध स्पष्ट कीजिए ।

3 पाठ्यचर्या निर्माण के सिद्धान्तों के परिप्रेक्ष्य में कक्षा 9 की हिन्दी पाठ्यपुस्तक की समीक्षा कीजिए।

4 "गद्य-शिक्षण के उद्देश्य पद्य शिक्षण-उद्देश्यों से भिन्न क्यों होते हैं? " - सोदाहरण विचार व्यक्त कीजिए ।

3.11 अध्ययन हेतु संदर्भ ग्रंथ-सूची

1 निरंजन कुमार सिंह, माध्यमिक विद्यालयों में हिन्दी शिक्षण जयपुर राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी 1973

2 भाई योगेन्द्रजीत, हिन्दी-भाषा शिक्षण, आगरा, विनोद पुस्तक मन्दिर

3 रमन बिहारी लाल, हिन्दी-शिक्षण मेरठ, रस्तोगी पब्लिकेशिन ।

4 बी.एन. शर्मा, हिन्दी-शिक्षण, आगरा लक्ष्मीनारायण अग्रवाल ।

इकाई-4
हिन्दी शिक्षण के शैक्षिक तत्त्वों एवं सम्प्रत्ययों का संज्ञानात्मक स्वरूप (मानचित्र)
(Congnitive map of concepts and curricular element)

इकाई की रूपरेखा

4.1 भूमिका तथा उद्देश्य

4.2 संज्ञानात्मक स्वरूप का तात्पर्यार्थ

4.3 भाषा का संज्ञानात्मक स्वरूप (मानचित्र)

4.4 अभ्यासार्थ प्रश्न

4.5 भाषार्जन की संज्ञानात्मक विकास प्रक्रिया

- 4.5.1 संवेदनात्मक गामक अवस्था
- 4.5.2 पूर्व संक्रियात्मक अवस्था
- 4.5.3 मूर्त संक्रियात्मक अवस्था
- 4.5.4 औपचारिक संक्रियात्मक अवस्था

4.6 भाषा अधिगम विकास क्रम

4.7 अभ्यासार्थ प्रश्न

4.8 भाषा का स्वरूप निर्धारण

4.9 भाषा संरचना के आवश्यक अंग

- 4.9.1 भाषा शिक्षण के अभिधेयार्थ
- 4.9.2 हिन्दी शिक्षण का संज्ञानात्मक मानचित्र

4.10 सारांश

4.11 अभ्यासार्थ प्रश्न

4.12 सन्दर्भ पुस्तक-सूची

4.1 भूमिका तथा उद्धेश्य

भाषार्जन की क्षमता मानव जाति को ईश्वर की एक अनूठी देन है । ब्रहमाण्डीय ज्ञान के आदान-प्रदान में भाषा की ही प्रमुख भूमिका रही है । इस भाषा रूपी अद्‌वितीय उपहार के सीखने में बाह्य व आन्तरिक जो भी घटना-क्रम होता है, उसकी जिज्ञासा भौतिक विज्ञान अथवा जीव विज्ञान की भाँति नहीं की जा सकती ।

भाषा का बाह्य (भौतिक) रूप (वाम्रतीक) स्पष्टत: दिखाई देता है, किन्तु इस बाह्य स्वरूप में आने से पूर्व भाषा का आन्तरिक रूप कैसा होता है? क्या होता है? आदि प्रश्नों पर

भाषा वैज्ञानिकों ने अनेकानेक शोधकार्य किए लेकिन इन प्रश्नों का पूर्ण विश्लेषण प्रस्तुत करना अत्यधिक जटिल रहा है ।

भाषा के आन्तरिक (मानसिक) स्वरूप को भाषा का संज्ञानात्मक स्वरूप कहा गया है । भाषा का संज्ञानात्मक स्वरूप किस प्रकार आकार लेता हुआ विकसित होता है? अध्यापकों को भी इसका ज्ञान होना अत्यावश्यक है ।

भाषा मनोवैज्ञानिकों का मानना है कि-

ज्ञानेन्द्रिय अनुभव द्वारा किसी वस्तु या क्रिया का मानसिक चित्र बनता है और इस मानसिक चित्र के आधार पर ही तत्सम्बन्धी प्रत्यय बनते हैं ।

ज्ञान के प्रत्यक्षीकरण एंव उसे मूर्तरूप प्रदान करने के लिए ऐसे शैक्षणिक उपकरणों की आवश्यकता एवं महत्ता स्वयं सिद्ध होती है जिनके माध्यम से वस्तु, क्रिया, भाव एंव विचार का बिम्बग्रहण सम्भव हो सके । भाषा के इस संज्ञानात्मक स्वरूप की अवधारणा का स्पष्टीकरण शिक्षण की दृष्टि से उपादेय है ।

इस इकाई पाठ के अध्ययनोपरान्त आपका निम्नलिखित पक्षों में ज्ञान वर्धन होगा ।

उद्धेश्य

1 भाषा के संज्ञानात्मक स्वरूप एवं प्रक्रिया को समझ सकेंगे ।
2 भाषा-अधिगम के संज्ञानात्मक स्वरूप के विकास क्रम की प्रक्रिया को समझ सकेंगे ।
3 भाषा के संज्ञानात्मक मानचित्र का प्रत्यास्मरण कर सकेंगे ।
4 भाषा के विविध रूपों का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे ।
5 भाषायी कौशल विकास में भाषा शिक्षण की आवश्यकता को समझ सकेंगे ।
6 हिन्दी शिक्षण के शैक्षिक तत्त्वों के संज्ञानात्मक मानचित्र की संरचना से परिचित हो सकेंगे।

4.2 संज्ञानात्मक स्वरूप का तात्पर्यार्थ

संज्ञान (Congnition) शब्द बोध या ज्ञान के लिए प्रयुक्त किया जाता है, जिसका सीधा सम्बन्ध नितान्त मस्तिष्कीय है । ऑक्सफोर्ड एडवान्स्ड लर्नर्स डिक्शनरी के अनुसार संज्ञान "मस्तिष्क में ज्ञान और समझ द्वारा चलने वाली एक प्रक्रिया है । "व्यक्ति के मस्तिष्क में बाह्य वातावरण की वस्तुओं अथवा क्रियाओं के घात-प्रतिघात से अनेकानेक भाव-विचारों का संग्रहण होता रहता है । इस संग्रहण में अनुभवजन्य ज्ञान व समझ द्वारा भी निरन्तर जो प्रक्रिया चलती रहती है, वही संज्ञान है । संज्ञान से पूर्ण केन्द्र दिखाई नहीं देता, यह पूर्णत: मानसिक क्रिया होती है । वास्तविक परिस्थितियों के संघर्षण से मानवमन मे प्रथमत: अनुभूति का प्रकाश होता है भावों का यह उद्रेक एक मानसिक क्रिया का घोतक है । मानसिक क्रिया के बिना मुखर भाषा का कोई अस्तित्व नहीं है ।

निम्नाकिंत रेखाचित्र इस प्रक्रिया को अपेक्षात अधिक स्पष्टत: प्रदर्शित करेगा:-

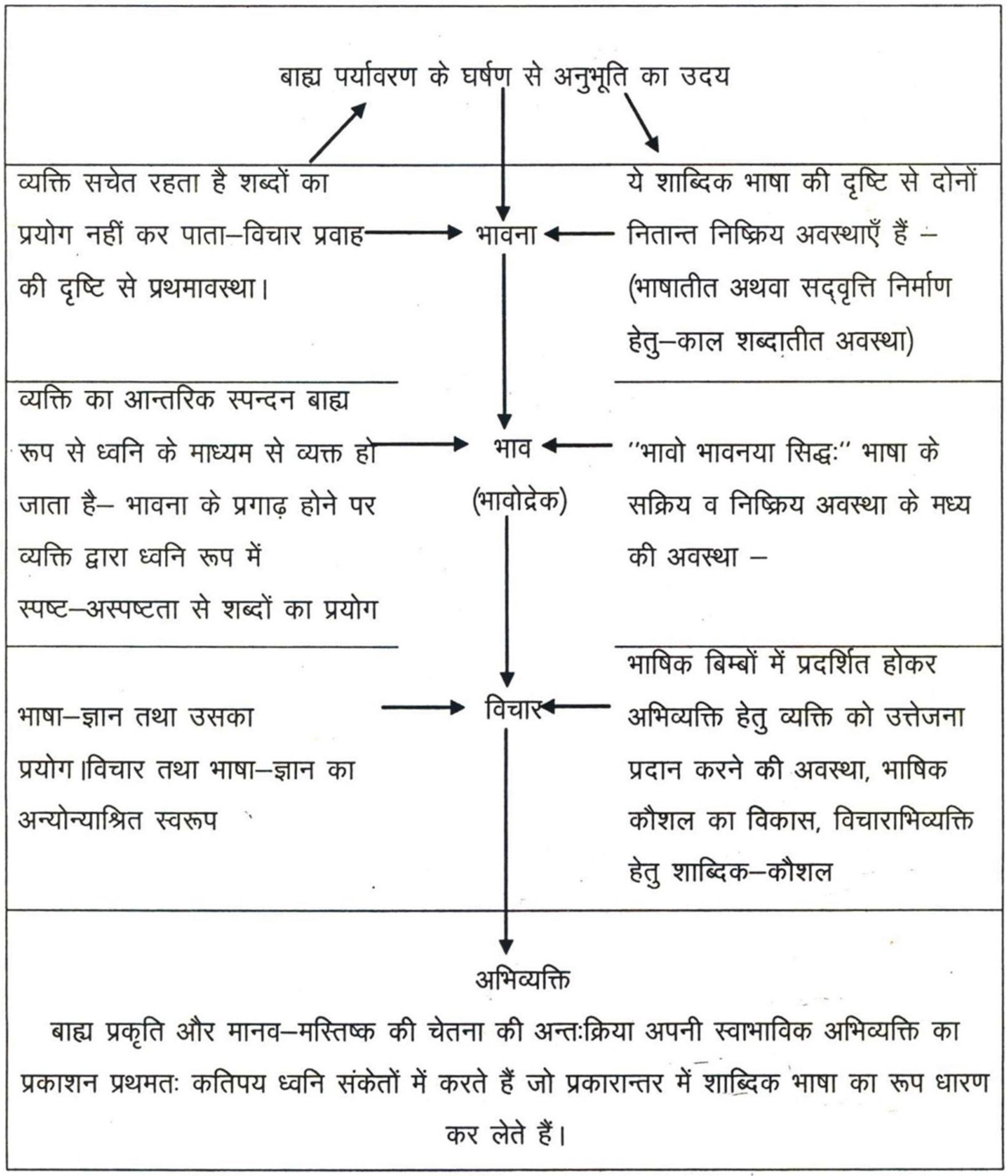

4.3 भाषा का संज्ञानात्मक स्वरूप (मानचित्र) (Cognitive maping)

विकिपीडिया (Wikipedia) एनसाइक्लोपीडिया के अनुसार संज्ञानात्मक मानचित्र (cognitive map) मस्तिष्क का नक्शा है । यह मानसिक प्रक्रिया का एक प्रारूप है, जिसके अन्तर्गत मस्तिष्क में विशिष्ट चिन्तन चलता है ।

यह-मूलरूप से मस्तिष्क की आन्तरिक प्रक्रिया है । जब व्यक्ति कोई कार्य करने से पूर्व क्रमानुसार, उस कार्य के विविध चरणों (step) को सम्पादित करने हेतु चिन्तन करता है तो उसके मस्तिष्क में कार्य की एक रूपरेखा तैयार होती है इसे ही संज्ञानात्मक मानचित्र (cognitive map) कहा गया है ।

संज्ञानात्मक मानचित्र अमूर्त होता है किन्तु क्रियान्वयन हेतु उसे मूर्तरूप में रेखाचित्र या मानचित्र के रूप में प्रदर्शित किया जा सकता है ।

कक्षा में जाने से पूर्व, एक अध्यापक कक्षा में जो कुछ पढ़ाना है, उसकी मस्तिष्क में जो एक क्रमानुसार रूपरेखा बनाता है वह बिन्दुवार व्यूह रचना ही संज्ञानात्मक मानचित्र ब्वहदपजपअम उंचद्ध कहलाता है, जिसे व्यक्त करने हेतु लिखित आति प्रदान की जाती है ।

संज्ञानात्मक मानचित्र निर्माण की आवश्यकता :-

सूचनाओं की समझ, स्मृति की समृद्धि और संज्ञानात्मक भार को कम करने के लिए मस्तिष्क के नेत्रों द्वारा मन में स्पष्ट रूप से देखने वाली ज्ञान की एक संरचना बनती है इससे समस्या का समाधान विधिवत किया जा सकता है । भाषा का सामान्य अनुभवजन्य संज्ञानात्मक मानचित्र निम्नाकित है -

भाषा का संज्ञानात्मक मानचित्र

(Cognitive Mapping in Language)

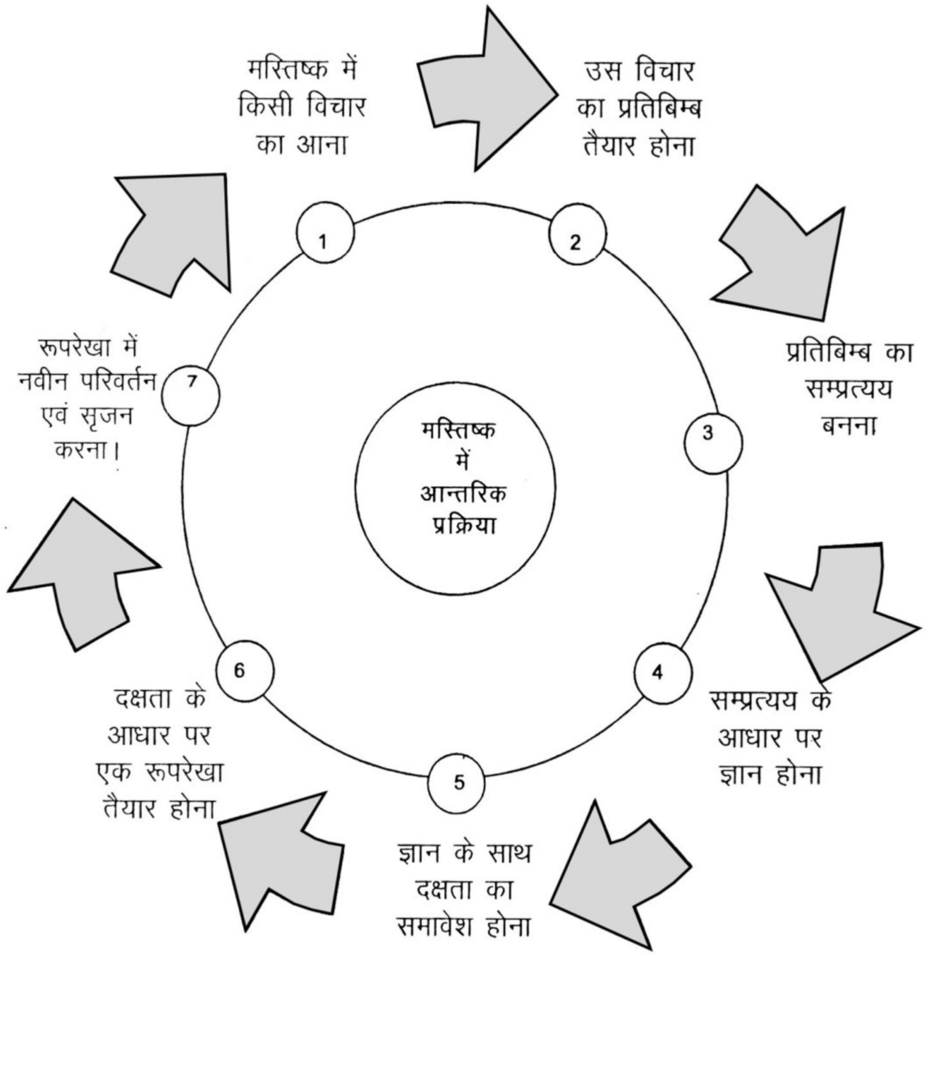

शब्दों का चयन

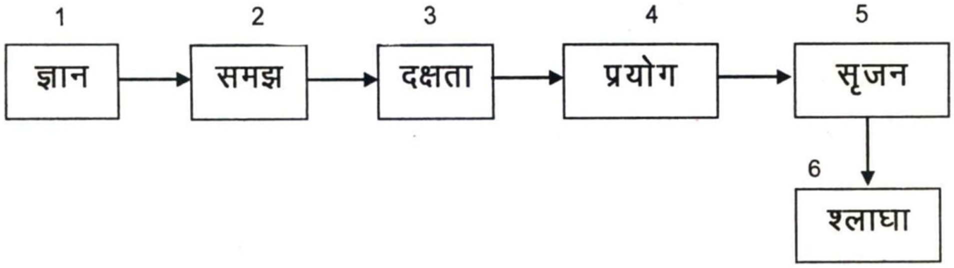

बालक इन चारों को निम्नलिखित प्रकार से काम में लेता है-

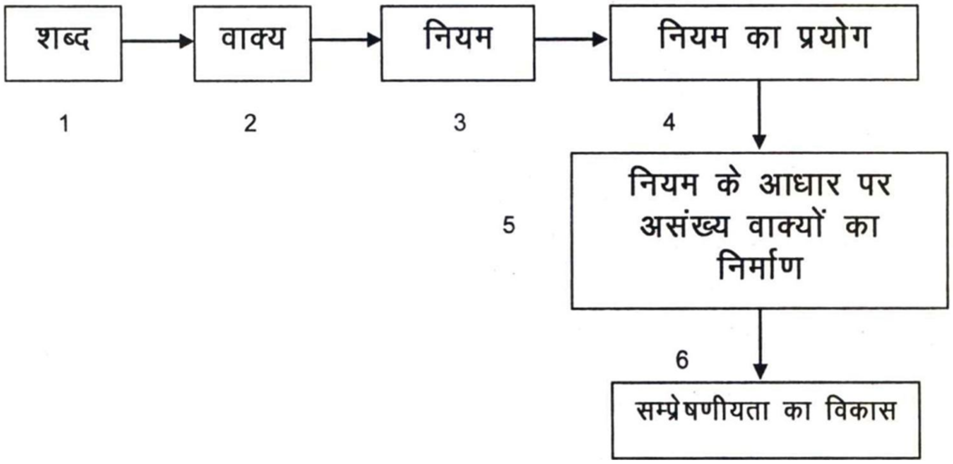

4.4 अभ्यासार्थ प्रश्न

1 "मानसिक क्रिया के अभाव में मौखिक भाषा का कोई अस्तित्व नहीं" कथन की पुष्टि कीजिए ।

2 भाषा के संज्ञानात्मक मानचित्र की प्रक्रिया कैसे सम्पन्न होती है? सोदाहरण स्पष्ट कीजिए।

4.5 भाषार्जन की संज्ञानात्मक विकास प्रक्रिया

संज्ञानात्मक विकास या मानसिक विकास से तात्पर्य मानसिक शक्तियों में वृद्धि से है । मानसिक विकास अर्थात समझने की शक्ति, स्मरणशक्ति, कल्पना करने की शक्ति, तर्क करने की शक्ति तथा बुद्धि आदि का विकास इन सब शैक्षिक विकास की दृष्टि से अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्वीकार किया गया है ।

भाषायी दृष्टि से एक वर्ष की आयु में शिशु छोटे-छोटे शब्दों को बोल लेते हैं । दो से चार वर्ष की अवधि में अधिकाधिक भाषार्जन हो जाता है । भाषा की से मानसिक विकास प्रारम्भ हो जाता है । किशोरावरथा तक आते-आते बालकों की मानसिक योग्यताएँ पर्याप्त मात्रा विकसित हो जाती हैं किन्तु वे प्रौढ़ों की भांति उनका प्रभावशाली ढंग से उपयोग नहीं कर पाते । किशोरावस्था में शब्द भंडार की वृद्धि तीव्रगति से होती है । चिन्तन, तर्क तथा कल्पना शक्ति के विकास का प्रभाव बालकों के भाषा विकास पर भी पड़ता है । सामाजिक संपर्क तथा विद्यालय के प्रभाव के फलस्वरूप उसका भाषा ज्ञान तीव्रगति से बढ़ता है ।

संज्ञानात्मक विकास की प्रक्रिया

भाषिक योग्यता तथा संज्ञानात्मक विकास के क्षेत्र में कार्य करने वालों में प्रसिद्ध मनोवैज्ञानिक जीन-पियाजे का महत्त्वपूर्ण योगदान है । 40 से अधिक पुस्तकें लिखने वाले इस महान् मनोवैज्ञानिक ने संज्ञानात्मक कार्य विधि की दो मुख्य विशेषताओं का उल्लेख किया है-

1. संगठन (Organization) 2. अनुकूलन (Adaptation)

संगठन से तात्पर्य है प्रत्यक्षीकृत तथा बौद्धिक सूचनाओं को सार्थक रीति से व्यवस्थित करने से प्रत्येक व्यक्ति अपनी स्वयं की बौद्धिक संरचनाओं का निर्माण करता है जो वातावरण के साथ समायोजन करने में उसके ज्ञान तथा कार्यों को संगठित करती हैं । व्यक्ति उपलब्ध सूचनाओं को इन पूर्व निर्मित बौद्धिक संरचनाओं में संगठित करने का प्रयास करता है, परन्तु कभी-कभी वह इस कार्य में सफल नहीं हो पाता है तब वह अनुकूलन करता है । प्याजे के अनुसार व्यक्ति जन्मत: क्रियाशील होता है अत: एकत्र की गई बौद्धिक सूचनाओं का वर्गीकरण करता है जिससे कि वह अपने बाहृय जगत की परिस्थितियों के अनुरूप सहज व स्वाभाविक ढंग से उचित व्यवहार कर सके । अनुकूलन वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा व्यक्ति अपने पूर्व ज्ञान तथा नवीन अनुभवों के मध्य संतुलन स्थापित करता है । अनुकूलन के अन्तर्गत दो प्रक्रियाएँ होती हैं-

1. आत्मसातीकरण (Assimilation) 2. समाविष्टीकरण (Accommodation)

आत्मसातीकरण से तात्पर्य नवीन अनुभवों को पूर्ववर्त्ती विद्यमान बौद्धिक संरचनाओं में व्यवस्थित करने से है जबकि समाविष्टीकरण से तात्पर्य नीवन अनुभवों की दृष्टि से पूर्ववर्त्ती बौद्धिक संरचनाओं में सुधार करने, विस्तार करने का परिवर्तन करने से है । यह विद्यमान बौद्धिक संरचनाओं को परिवर्तित करने की प्रक्रिया है जिससे अनुभव तथा ज्ञान को उचित ढंग से व्यवस्थित किया जा सके ।

भाषा अधिगम में पहले बालक विभिन्न कार्यों के लिए एक ही क्रिया पद का उच्चारण करते हैं । जैसे एप्पल खाना, मिठाई खाना, ज्यूस खाना, सूप खाना .... "खाना" इस पद को खाने की वस्तु तथा पीने की वस्तु दोनों के लिए प्रयुक्त करते हैं । धीरे-धीरे खाने व पीने की वस्तुओं के अलग-अलग क्रियापदों के बोध हो जाने पर मिठाई व फल हेतु 'खाना' तथा ज्यूस व दूध हेतु 'पीना' क्रिया पदों का प्रयोग करने लगते हैं । विभिन्न आयु स्तरों पर अवलोकन के आधार पर पियाजे ने संज्ञानात्मक विकास की अवस्थाओं को चार भागों में विभक्त किया है । इनकी कुछ विशेषताएँ हैं-

- प्रत्येक अवस्था बौद्धिक संरचनाओं में तालमेल बैठाने के, बालक के प्रयासों के एक भिन्न रूप को अभिव्यक्त करती है ।
- प्रत्येक अवस्था एक विशेष समय-अवधि में उपयुक्त होती है ।
- प्रत्येक अवस्था अपनी पूर्व अवस्थाओं से अधिक उपयुक्त होती है ।

पियाजे के अनुसार संज्ञानात्मक विकास की निम्नांकित चार अवस्थाएँ होती हैं-

1 संवेदनात्मक-गामक अवस्था (Sensori-motor Stage)

2 पूर्व-संक्रियात्मक अवस्था (Pre-operation Stage)

3 मूर्त-संक्रियात्मक अवस्था (Concrete-operation Stage)

4 औपचारिक-संक्रियात्मक अवस्था (Formal-operation Stage)

4.5.1 संवेदनात्मक-गामक अवस्था (Sensorimotor period)

यह अवस्था जन्म के उपरान्त प्रथम दो वर्षों तक चलती है । इस अवस्था में शिशु असहाय जीवधारी से गतिशील जीव बन जाता है । वह देखने, पहुँचने, सुनने आदि की सहज क्रियाओं से व्यवस्थित प्रयासरत क्रियाओं की ओर स्वत: ही अग्रसर होता है । इसमें शिशु अर्द्धभाषी तथा सामाजिक दृष्टि से चतुर बन जाता है । प्रयास व त्रुटि के आधार पर अपनी परिस्थितियों को समझने का प्रयास करता है । लगभग डेढ़ वर्ष की आयु में बालक कुछ करने से पहले सोचना आरम्भ करता है । प्रारम्भ में वे वह अनुकरण करने के लिए भाषा का प्रयोग करता है किन्तु बाद में वह अभिव्यक्ति के लिए भाषा का प्रयोग करता है । इस अवस्था में बौद्धिक संरचनाओं के पूर्ण विकास के बाद वह संज्ञानात्मक विकास की दूसरी अवस्था में प्रवेश करता है ।

4.5.2 पूर्वसंक्रियात्मक अवस्था (Pre-operation Stage)

व्यक्ति के संज्ञानात्मक विकास की यह द्वितीय अवस्था (1 से 7 वर्ष) भाषा-अधिगम की दृष्टि से बहुत ही महत्वपूर्ण होती है । इसमें भाषा का प्रयोग प्रारंभ हो जाता है । इस अवस्था को दो भागों में विभक्त किया जा सकता है:-

1 पूर्व प्रत्ययात्मक काल (Pre-Conceptual Stage(

2 आंतप्रज्ञ काल (Intuitive Stage)

(1) पूर्व प्रत्ययात्मक काल दो से चार वर्ष तक होता है । यह अवस्था मुख्यत: परिवर्तन की अवस्था है । जिसे खोज (exploration) की अवस्था भी कहा जा सकता है । इसमें शिशु विभिन्न घटनाओं या कार्यों के बारे में प्रश्नवाचक वाक्य बोलने लग जाता है । प्रश्नों का उत्तर जानने में रुचि रखता है । क्यों, कैसे, कहीं, कब आदि शब्दों का प्रयोग करता है । बड़ों के कार्यों का अनुसरण करता है । बहुत ही तीव्रगति से इस अवस्था में ही भाषा का मौखिक विकास होता है, जिसे निम्नांकित तथ्यों से जाना जा सकता है -

- दो वर्ष का बालक लगभग 200 शब्दों को समझ लेता है ।
- छ: वर्ष का बालक लगभग 16000 शब्दों को समझ लेता है ।
- दो वर्ष का बालक दो व तीन शब्दों के वाक्य बोल लेता है जो, व्याकरण की दृष्टि से प्राय: अशुद्ध व अपूर्ण होते है ।
- तीन वर्ष का बालक लगभग आठ दस शब्दों के वाक्य बोलने लगता है, जो व्याकरण की दृष्टि से प्राय: शुद्ध होते हैं । पूर्व संक्रियात्मक अवस्था में ही भाषा का अधिकतम विकास होता है । अच्छे तथा समृद्ध भाषायी वातावरण में बालक को भाषायी विकास करने के अधिक अवसर मिलते हैं ।

(2) आंतप्रज्ञ काल- लगभग पाँच वर्ष से सात वर्ष तक बालक आन्तप्रज्ञ चिन्तन की अवस्था में होता है । पियाजे के अनुसार इस अवस्था में बालक बिना किसी तार्किक विचार प्रक्रिया के किसी वस्तु या बात को मस्तिष्क द्वारा तुरन्त स्वीकार कर लेते हैं । बालकों

के लिए विभिन्न पक्षों के मध्य सम्बन्ध या तालमेल बैठना कठिन होता है ।पूर्व-संक्रियात्मक अवस्था के इस आन्तप्रज्ञ चिन्तन काल में बालक के खेल अधिकाधिक सामाजिक होते जाते हैं । वे प्राय: पोस्टमैन, अध्यापक, पुलिसमैन, डॉक्टर, वकील, नेता जैसी सामाजिक भूमिकाओं का अनुकरण करते हैं । इन पात्रों के अभिनय करते हुए इनसे सम्बन्धित शब्दावलियों को सीख जाते हैं । वे अपने परिवार से बाहर के व्यक्तियों को महत्त्व देने लगते हैं

4.5.3 मूर्त संक्रियात्मक अवस्था (Concrete Operation Period)

सात से बारह वर्ष तक की इस अवस्था में बालक का पूर्व संक्रियात्मक अवस्था का अतार्किक चिन्तन मूर्त संक्रियात्मक विचारों का स्थान लेने लगता है । बालक छोटे-छोटे विलोमीय पदों की श्रृंखला द्वारा विचार करने लगता है । मूर्त वस्तुओं के सम्बन्ध में अनेक विभिन्न प्रकार की तार्किक संक्रियाएँ करने लगता है । इस अवस्था में बालक तीन प्रकार की निम्नलिखित गुणात्मक मानसिक योग्यताओं में पर्याप्त निपुणता प्राप्त कर लेता है-

1. विचारों की विलोमीयता (Reversibility of thoughts) 2. संरक्षण(Conservation)
3. क्रमबद्धता व पूर्ण अंश प्रत्ययों का उपयोग (Use of Serial Ordering and part-whole Concepts)
    - बालक विचारों की विलोमीयता में निपुण हो जाता है ।
    - भौतिक वस्तुओं में संरक्षण बालकों की विचार प्रक्रिया का एक स्वाभाविक अंग बन जाता है ।
    - इस अवस्था (तीसरी महत्त्वपूर्ण ज्ञानात्मक क्षमता) में बालक क्रमबद्ध एवं अंशपूर्ण प्रत्ययों का प्रयोग करने लगता है । क्रमबद्धता से तात्पर्य है विभिन्न वस्तुओं को उनकी किसी विशेषता- जैसे आकार, भार आदि की दृष्टि-से क्रमबद्ध करने से है । बालक की आत्मकेन्द्रित प्रवृत्ति कम होने लगती है तथा बाहय जगत को महत्त्व देते हुए उपयुक्त शब्दावली का प्रयोग करने लगता है ।

4.5.4 औपचारिक संक्रियात्मक अवस्था (Formal Operation Period)--

संज्ञानात्मक विकास की अन्तिम अवस्था औपचारिक संक्रियात्मक अवस्था है जो लगभग 11 से 15 वर्ष आयु तक विकसित होती है । इस अवस्था में बालक अमूर्त बातों के संबंध में तार्किक चिन्तन करने की योग्यता विकसित करता है । इसके अंतर्गत मूर्त वस्तुओं व सामग्री के स्थान पर शाब्दिक तथा सांकेतिक अभिव्यक्ति का प्रयोग किया जाता है । इसमें समस्या समाधान व्यवहार अधिक व्यवस्थित होने लगता है, यथा

- बालक निष्कर्ष निकालने लगता है ।
- व्याख्या करने लगता है ।
- परिकल्पनाएँ बनाता है ।
- भावी संभावनाओं पर तर्क करने लगता है ।
- वास्तविकता से बाहर सोचने लगता है ।
- एक साथ अधिक से अधिक तथ्यों को समझने में स्थान देने लगता है ।

- अधिकाधिक दृष्टिकोणों का अपनी विचार प्रक्रिया में स्थान देने लगता है ।
- स्वयं को आलोचना करने में सक्षम होने लगता है ।

संज्ञानात्मक विकास में उपर्युक्त चारों अवस्थाएँ क्रमश: जटिल होती जाती हैं ।

कुछ बालकों का बौद्धिक विकास तीव्र गति से, कुछ का औसत गति से व कुछ का मन्द गति से होता है । विकास की कोई भी अवस्था एकदम समाप्त नहीं हो जाती, अपितु धीरे-धीरे एक अवस्था से दूसरी में प्रविष्ट होती रहती है ।

जीन पियाजे के अतिरिक्त अमेरिका के जेरोम ब्रूनर, ब्लूमफील्ड तथा नोम चाम्स्की ने भी इस दिशा में महत्त्वपूर्ण शोध किए है ।

(1) अमेरिका के मनोवैज्ञानिक जेरोम ब्रूनर श्रमतवउम ठतनदमतद्ध ने संज्ञानात्मक विकास के एक नए सिद्धान्त का प्रतिपादन किया, जो पियाजे के सिद्धान्त का विकल्प माना गया है। ब्रूनर ने संज्ञानात्मक विकास की तीन अवस्थाएँ बताई -

1. क्रियात्मक अवस्था (Enactive Stage)
2. प्रतिबिम्बात्मक अवस्था (Iconic Stage)
3. संकेतात्मक अवस्था (Symobolic Stage)

1 क्रियात्मक अवस्था में बालक अपने वातावरण को क्रिया प्रणाली से समझने का प्रयास करता है । जैसे हाथ पैर चलाना, चलना आदि । इसमें भाषा का महत्त्व नहीं होता । मनोचालक ज्ञान महत्वपूर्ण होता है ।

2 प्रतिबिम्बात्मक अवस्था में मानसिक प्रतिबिम्बों के द्वारा सूचनाएँ बालक तक पहुँचती है। बालक चमक, शोर, गति तथा विविधता से प्रभावित होता है । बालकों में दृश्य स्मृति विकसित होती है । ब्रनूर की यह अवस्था पियाजे की पूर्व संक्रियात्मक अवस्था के समकक्ष है ।

3 संकेतात्मक अवस्था में बालक की क्रियात्मक तथा प्रत्यक्षीकृत समझ का प्रतिस्थापन संकेत प्रणाली से हो जाता है । बालक भाषा, तर्क आदि सीख लेता है । संकेतों के प्रयोग से बालकों की संज्ञानात्मक कार्यक्षमता बढ़ जाती है । जटिल अनुभवों तथा विचारों को संक्षिप्त कथनों व सूत्रों में प्रस्तुत करने की योग्यता विकसित होती है ।

(2) ब्लूम फील्ड के अनुसार भाषा के संज्ञानात्मक विकास में सामान्य बुद्धि की आवश्यकता होती है जो प्राय: सभी बालकों में प्रकृति प्रदत्त रूप में सुलभ होती है । उपयुक्त वातावरण में मूल प्रयोक्ताओं (Native speakers) के बीच बालक जटिल से जटिल भाषा सहज ही सीख लेता है ।

(3) नोम चॉम्स्की के सिद्धान्तों के अनुसार मानव मस्तिष्क में भाषार्जन हेतु पूर्व निहित क्षमताएँ होती हैं। मस्तिष्क की मूलभूत प्राप्त संरचनाओं की अन्त:क्रियाओं से ही भाषा ज्ञान परिगणित होता जाता है।

चॉम्स्की के अनुसार एक शिशु प्रथम शब्द के उच्चारण से पूर्व ही भाषा के सिद्धान्तों को समझता है । भाषा सीखनी पड़ती है पर उसके व्याकरण को सीखने के लिए बालक मस्तिष्क में निहित क्षमताओं और संरचनाओं का उपयोग करता है ।

4.6 भाषा अधिगम विकास क्रम मानचित्र

उपर्युक्त मनोवैज्ञानिकों के द्वारा प्रतिस्थापित बालक के संज्ञानात्मक विकास के आधार पर भाषा अधिगम के विकास क्रम का एक मानचित्र विकसित किया गया है । प्रस्तुत मानचित्र में शिशु द्वारा सीखी जाने वाले भाषागत योग्यता-क्रम को आयु के अनुसार प्रदर्शित किया गया है ।

भाषा अधिगम – विकास क्रम मानचित्र

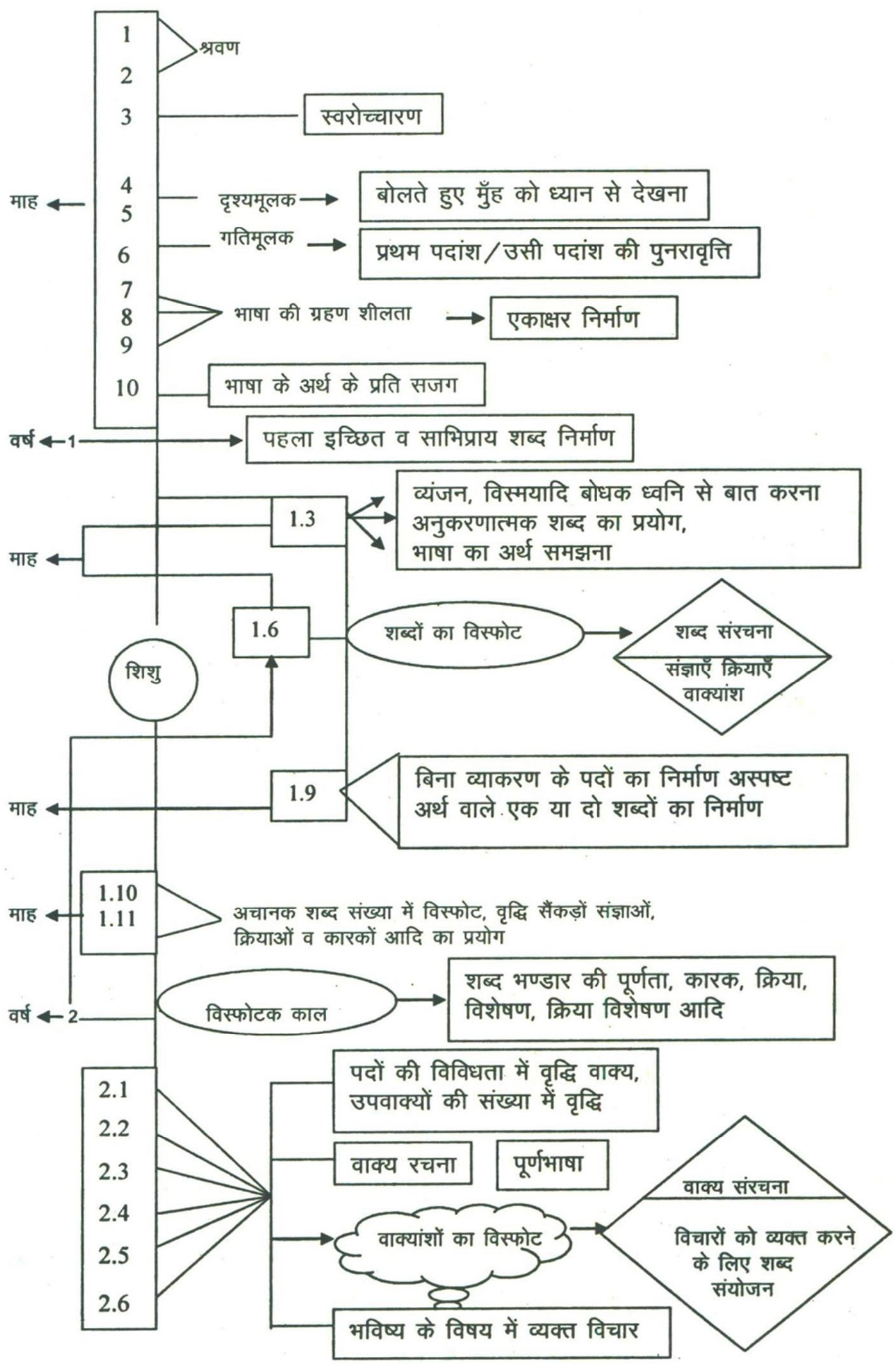

4.7 अभ्यासार्थ प्रश्न

1 बालक के संज्ञानात्मक विकास प्रक्रिया पर शोध करने वाले मनोवैज्ञानिकों में से किसी एक के प्रमुख सिद्धान्तों का वर्णन कीजिए ।

2 पूर्व संक्रियात्मक तथा मूर्त संक्रियात्मक अवस्था के अन्तर को स्पष्ट करते हुए बालक की शब्दावली का विवेचन कीजिए ।

3 औपचारिक संक्रियात्मक अवस्था में विकसित होने वाली भाषायी प्रक्रिया को स्पष्ट कीजिए ।

4.8 भाषा का स्वरूप निर्धारण

मूल रूप से भाषा ध्वनि है और द्‌वितीय रूप में प्रतीक । भाषा शब्द संस्त की भाष धातु से निष्पन्न हुआ है । जिसका अर्थ है-कहना या बोलना । सुमित्रा नन्दन पंत के अनुसार-"भाषा संसार का नादमय चित्र है । ध्वनिमय स्वरूप है।" डॉ. रामेश्वर दयालु अग्रवाल के अनुसार- "भाषा मनुष्य के मुख से निकली हुई स्वाभाविक ध्वनियों का समुच्चय है।" मानव विभिन्न अर्थों को प्रकट करने के लिए कुछ निश्चित उच्चरित ध्वनियों का प्रयोग करता है और ध्वनियों से बने शब्द समूह ही भाषा कहलाती है । जिसके द्‌वारा वह अपने मनोभाव दूसरों के प्रति सरलता से प्रकट करता है ।

ऑक्सफोर्ड एडवान्स लर्नर्स डिक्शनेरी (1989: 699) के अनुसार "Language is a system of rounds, words, patterns ect .used by human sto communicate thoughtsand feelings" अर्थात् "मनुष्य द्‌वारा विचारों और भावों को सम्प्रेषित करने में प्रयुक्त ध्वनि शब्द और तरीकों की एक प्रणाली ही भाषा है । "निरर्थक ध्वनि-संकेत भाषा का स्वरूप नहीं। भाषा का प्रयोग सापेक्ष अर्थों में किया जाता है । भाषा समस्त--सापेक्ष व मानव सापेक्ष होती है-मनुष्य के वैचारिक अभिव्यक्ति के लिए समाज-स्वीत ध्वनि-संकेत ही भाषा का रूप धारण करते हैं ।

एक बालक के उसके अपने सामाजिक परिवेश में सुने गए जिन ध्वनि संकेतों को उच्चारित करने को अवसर प्राप्त होता है, वह उन्हीं संकेतों को सीख लेता है । प्रसिद्ध भाषा वैज्ञानिक लेनार्ड ब्लूमफील्ड ने भाषा की इस प्रक्रिया पर विस्तार से प्रकाश डाला है । उनके अनुसार भाषा सीखने के लिए किसी विशिष्ट प्रतिभा की आवश्यकता नहीं होती-सामान्य बुद्धि का बालक भी इसे स्वाभाविक रूप से सीख सकता है, क्योंकि भाषा सीखने के प्रमुख साधन-मानसिक और भौतिक आधार-बालक के पास प्रति प्रदत्त रूप से सुलभ होते है । उसके मस्तिष्क की रचना में देखने, सुनने बोलने अथवा शारीरिक अंगों को क्रियाशील रखने के विशेष स्नायुतन्त्र, व घोष यंत्र वाले केन्द्रस्थल होते हैं जिसके कारण ही वह शब्दों के उच्चारण के लिए अपने वातावरण से प्राप्त ध्वनि संकेतों को अपने ध्वनि-यंत्रों के द्‌वारा प्रस्तुत करने में समर्थ होता है । भाषा वस्तुत: मानव-शिशु के मुख से निःसृत सार्थक ध्वनि समष्टि है जो वह अपने सामाजिक परिवेश में अन्य सदस्यों के द्‌वारा व्यवहृत होते हुए सुनता रहता है ।

4.9 "भाषा-संरचना के आवश्यक अंग"

भाषा एक मानवीय गतिविधि है जो विचार-विनिमय के सर्वोत्तम साधन के रूप में उसकी सामाजिकता के निर्वाह हेतु अपरिहार्य है । चाहे कोई भी भाषा हो उसके आन्तरिक व बाहय संरचनाओं में कुछ आवश्यक अंग होते हैं, जिनके माध्यम से व्यक्ति सम्प्रेषण प्रक्रिया सम्पन्न करता है । पशु-पक्षी की भी अपनी भाषा होती है जिससे वे अपना सम्प्रेषण करते हैं किन्तु वे अमूर्त अवधारणाओं को अभिव्यक्त नहीं कर पाते । जबकि मानव की भाषा विशिष्ट भाषा होती है जो निम्नस्थ अंगों के द्वारा अस्तित्व में रहती है साथ ही मूर्त-अमूर्त सभी अवधारणाओं को अभिव्यक्त करने का सामर्थ्य रखती है ।

भाषा के प्रमुख अंग निम्नलिखित हैं :-

1 ध्वनि Phonological 2 पद Morphological

3 वाक्य Syntactic level 4 अर्थ Semantic

5 लिपि Orthographic

ध्वनि से तात्पर्य प्राणवायु के साथ मुख से विभिन्न स्थलों से घर्षण के परिणाम स्वरूप निकलने वाली आवाज (ध्वनि) से है ।

इन ध्वनियों की व्यवस्थित संरचना ही पद (शब्द) कहलाती है तथा विभिन्न पदों को मिलाकर क्रमबद्ध संरचना से वाक्य बनाए जाते हैं । वाक्य ही भाषा की इकाई है ।

ध्वनि, पद और वाक्य भाषा के शरीर हैं और अर्थ भाषा की आत्मा । पदों के अर्थ विभिन्न सन्दर्भो से जुड़े होते हैं । तथापि शब्दों के अपने अर्थ भी होते हैं । भाषा के मौखिक रूप को जब कोई आ.ति प्रदान की जाती है तो वह लिपि कहलाती है । यह भाषा का लिखित रूप होता है जो भाषा के मौखिक रूप से कम सामर्थ्य रखता है । प्रसिद्ध भाषाविद् रोबर्ट लेडो (1971 य 50) के अनुसार भाषा सर्वप्रथम मौखिक रूप लिए ही होती है-

(Language is most completely in speech, writing does not represent intonation, rhythm, speech junctures")

"भाषा मुख्य रूप से पूर्णत: मौखिक अभिव्यक्ति है । इसका लिखित रूप भाषा के आरोहावरोह, लय, कथन और हाव-भाव को प्रस्तुत नहीं करता । " भाषा प्रारम्भिक काल में जटिल, समग्र व स्थूल होती है धीरे-धीरे वह सरल, व्यस्त, सूक्ष्म और सुकुमार होती जाती है । जैसे संस्कृत भाषा प्राकृत, पाली, अपभ्रंश होती हुई हिन्दी में परिवर्तित हो गई । निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि- भाषा

1 ध्वनि और प्रतीकों की एक प्रणाली है ।
2 मनुष्य अपने विचारों व भावों सम्प्रेषित करने के लिए भाषा का प्रयोग करता है ।
3 सम्प्रेषण हेतु शब्दों को क्रमबद्ध रूप से प्रयुक्त करने की योग्यता भाषा है ।
4 यह एक अर्जित सम्पत्ति है ।
5 यह एक मानवीय गतिविधि है ।
6 यह एक कौशल है, व्यावहारिक दक्षता है ।

7 यह विचार विनिमय का साधन है ।

8 यह स्वानुभव, संस्कृति व राष्ट्र से सम्बद्ध होती है ।

9 प्रत्येक भाषा का अपना विधान है । यह एक प्रतीकात्मक प्रणाली है ।

10 ध्वनि, शब्द, वाक्य, अर्थ के स्तर पर यह तैयार की जाती है ।

11 यह निरन्तर सृजनशील होती है ।

12 प्रथमत: मौखिक व उसके बाद लिखित रूप में व्यक्त होती है, जो सभ्यता संस्कृति की देन है ।

भाषा को वैज्ञानिक रीति से समझने के लिए भाषा विज्ञान विषय का भी आविर्भाव हुआ । आधुनिक भाषा विज्ञान का श्रीगणेश सन् व 1789 ई. में यूरोप में सर विलियम जोन्स (Sir William Jones) ने किया । उन्होंने संस्कृत, ग्रीक और लैटिन भाषाओं की अत्यधिक समानता और उनके मूल में किसी एक भाषा की संभावना पर अध्ययन किया । तब से आज तक भाषा विज्ञान के क्षेत्र में कई भाषाविदों, मनोवैज्ञानिकों व दार्शनिकों ने गहन अन्वेषण किया है- जिनमें ब्लूमफील्ड, पियाजे ब्रूनर, स्कीनर, मेडम मांटेसरी, नोम चॉम्सकी, रोबर्ट लैडो, विलियम फ्रांसिस मकाई, आदि के नाम उल्लेखनीय हैं । इन सभी भाषा वैज्ञानिकों ने भाषा क्या है, क्यों है? भाषार्जन, भाषा विकास आदि अनेक पक्षों पर विस्तृत विवेचन प्रस्तुत किए हैं । प्रत्येक भाषा की अपनी एक प्रकृति और एक निश्चित व्याकरण होता है । बालक जिस भाषा के वातावरण में रहता है उसको वह स्वाभाविक रूप से सीख लेता है ।

4.9.1 भाषा-शिक्षण के अभिधेयार्थ

भाषा एक कौशल है, एक आदत है । यह विज्ञान, गणित, सामाजिक अध्ययन, कॉमर्स आदि के समान ज्ञान का विषय नहीं है, जिनके शिक्षण का उद्देश्य मानव मस्तिष्क में सूचनाओं और ज्ञान के संग्रहण से रहता है । भाषा-शिक्षण का उद्देश्य इससे भिन्न है । इसे समझने के लिए शैक्षिक उद्देश्य को समझना आवश्यक है । भाषा वैज्ञानिक ब्लूमफील्ड ने शैक्षिक उद्देश्यों को निम्नानुसार वर्गीकृत किया है-

संज्ञानात्मक पक्ष (Cognitive Domain)	**भावात्मक पक्ष (Affective Domain)**	**म्नोगत्मात्मक पक्ष (Psychomotar Domain)**
ज्ञान (Knowledge)	विचारना (Conceptualization)	उद्दीपन (Impulsion)
अवबोध (Comprehension)	ग्रहण (Recelving)	क्रियान्वयन (Manipulation)
प्रयोग (Application)	अनुक्रिया (Response)	स्वभावीकरण (Naturalition)
विश्लेषण (Analysis)	अनुमूल्यन (Valuing)	नियंत्रण (Control)

संश्लेषण (Synthesis)	व्यवस्थापन (Organization)	समन्वयन-समायोजन (Coordination)
मूल्यांकन (Evaluation)	चरित्र-चित्रण (Characterization)	आदत बनाना (Habit-Formation)

भाषा एक कौशल है अत: मनोगत्यात्मक पक्ष से विशेष संबंध रखती है इस कारण भाषा-शिक्षण का सिद्धांत मूल रूप से भाषा अधिगम की प्रक्रिया पर निर्धारित किया जाना चाहिए । इस दृष्टि से शैक्षिक उद्देश्यों में मनोगत्यात्मक (मनोक्रियात्मक) पक्ष के सभी तत्व भाषा जैसे विषय से संबद्ध हैं । बालक जब किसी से कोई भाषा सुनता है तो वह बोलने का प्रयास करता है अभ्यास से कुशलता विकसित करता है, धीर-धीरे उस पर नियंत्रण होने लगता है । इसके पश्चात् वह उस भाषा को व्यवहार में स्वाभाविकता लाने का प्रयास करता है और अन्त में उस भाषा का प्रयोग उसकी आदत बन जाती है ।भाषा संगीत, नृत्य, तैराकी, खेल चित्रकला आदि विषयों के समान है जो क्रियात्मक हैं । भाषा की कुशलता हेतु भाषायी कौशलों से युक्त होना आवश्यक है । भाषायी कौशल निम्नानुसार हैं :-

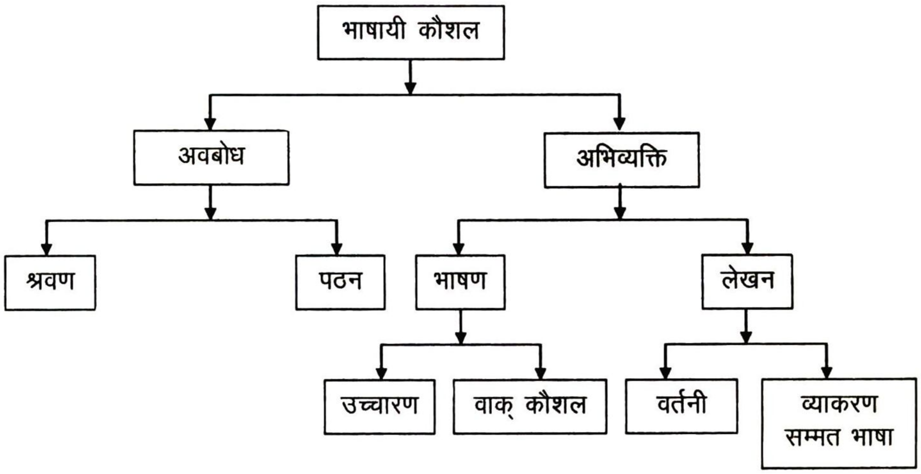

भाषा अध्यापन के प्रमुख उद्देश्य कौशलात्मक ही होते हैं । प्रारम्भिक कक्षाओं में भाषा अध्यापन का प्रमुख कार्य भाषायी कौशलों का विकास करना होता है जिससे कि बालक सुनकर और पढ़कर अर्थ ग्रहण कर सके, तथा बोलकर और लिखकर अपने विचार व्यक्त कर सके। इन कौशलों के अंतर्गत शुद्ध उच्चारण, व्याकरण सम्मत भाषा तथा उचित बलाघात, स्वराघात, यति, गति का ध्यान रखते हुए वाक् कौशल के यथाविधि प्रशिक्षण की भी व्यवस्था होनी चाहिए। भाषायी कौशल सिखाने की उपयुक्ता आयु बाल्यकाल है अत: आरम्भिक कक्षाओं में उनका शुद्ध रूप से मनोयोगपूर्वक अभ्यास करवाना चाहिए ।

भाषा-शिक्षण में यदि बालकों का मातृभाषा से अतिरिक्त अन्य कोई भाषा सिखानी है तो उस भाषा में भी इन चारों कौशलों का शिक्षण क्रमश: सुनाकर, कहलवाकर, पढ़वाकर और लिखवाकर किया जाना चाहिए । बालक जिस प्रकार मातृभाषा अधिगम में सर्वप्रथम सुनता है

फिर बोलता है उसी प्रकार जो भी अन्य भाषा सिखाई जाये, श्रवण से आरम्भ की जाय तददन्तर बोलना, पढ़ना और लिखना सिखाना चाहिए ।

4.9.2 हिन्दी शिक्षण-संज्ञानात्मक मानचित्र

हिन्दी शिक्षण के लिए मस्तिष्क में क्रमबद्ध तरीके से शिक्षण की एक रूपरेखा तैयार की जानी चाहिए । पढ़ाने से पूर्व तैयार होने वाले संज्ञानात्मक मानचित्र में सम्बन्धित जिन पक्षों को सम्मिलित किया गया है उन सभी को आगे प्रदर्शित भाषा के संज्ञानात्मक मानचित्र से ज्ञात किया जा सकता है ।

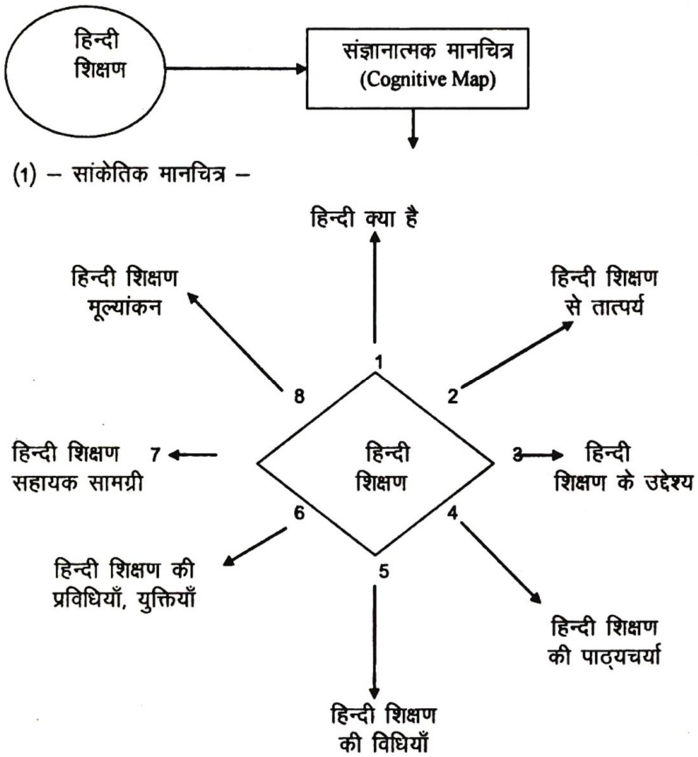

(2) विस्तृत मानचित्र

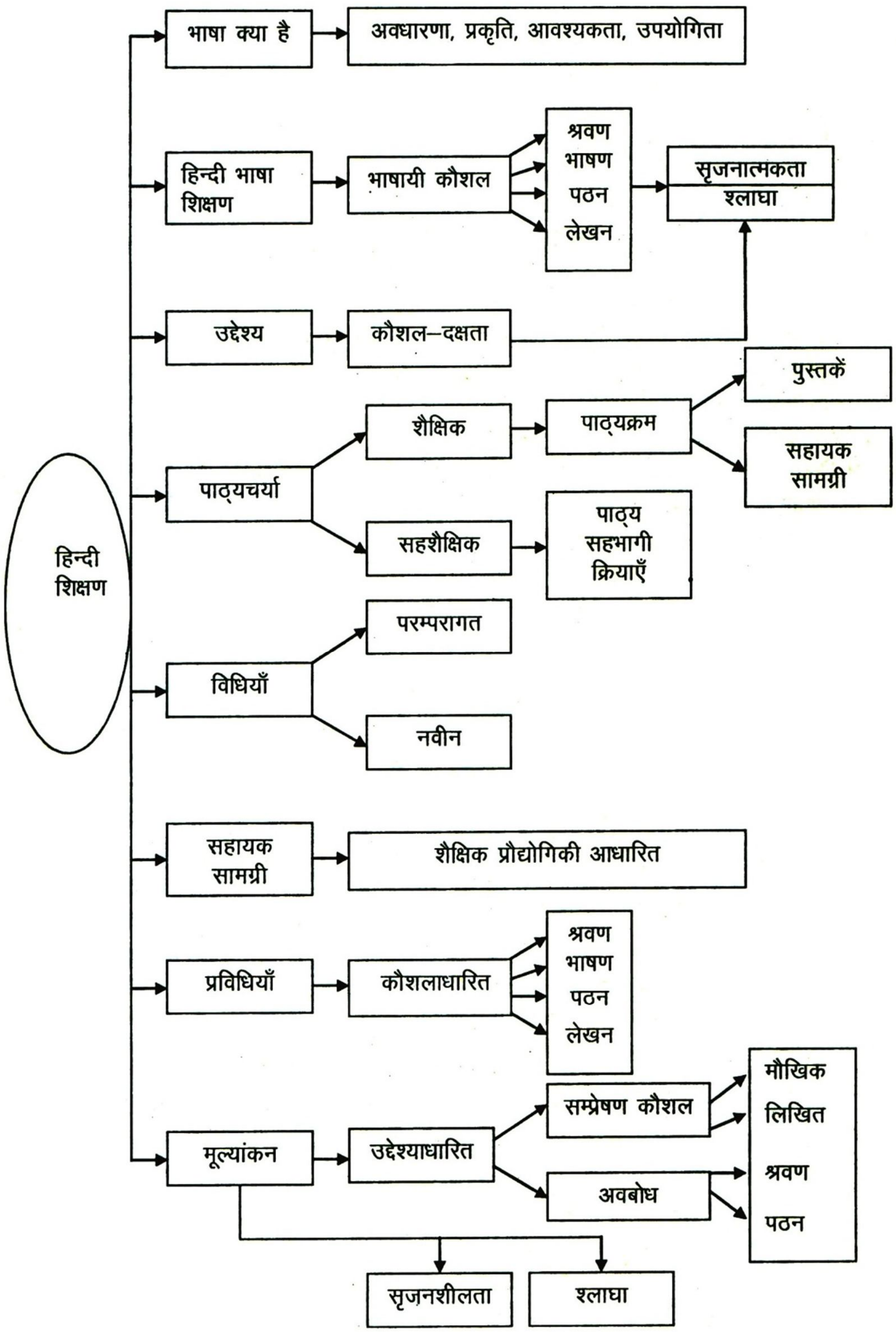

हिन्दी शिक्षण
भाषा क्या है
अवधारणा, प्रकृति, आवश्यकता, उपयोगिता
हिन्दी भाषा शिक्षण
भाषायी कौशल
श्रवण
भाषण
पठन
लेखन
सृजनात्मकता
श्लाघा
उद्देश्य
कौशल–दक्षता
पाठ्यचर्या
शैक्षिक
पाठ्यक्रम
पुस्तकें
सहायक सामग्री
सहशैक्षिक
पाठ्य सहभागी क्रियाएँ
विधियाँ
परम्परागत
नवीन
सहायक सामग्री
शैक्षिक प्रौद्योगिकी आधारित
प्रविधियाँ
कौशलाधारित
श्रवण
भाषण
पठन
लेखन
मूल्यांकन
उद्देश्याधारित
सम्प्रेषण कौशल
अवबोध
मौखिक
लिखित
श्रवण
पठन
सृजनशीलता
श्लाघा

4.10 सारांश

इस पाठ के अन्तर्गत आपने ज्ञान के प्रत्यक्षीकरण व उसे मूर्तरूप प्रदान करने के लिए भाषागत अभिव्यञ्जना के संज्ञानात्मक स्वरूप का आवश्यक अध्ययन किया है । इसके साथ ही इस पाठ में भाषा-अधिगम के संज्ञानात्मक मानचित्र, भाषायी कौशलों के विकास में भाषा शिक्षण की आवश्यकता आदि भाषा के मनोगत्यात्मक स्वरूप पर जो भी सारगर्भित विचार व्यक्त किए गए हैं, उनसे आपको भाषा-संरचना व शिक्षण के सम्प्रत्ययों के सन्दर्भ में अपेक्षित ज्ञान प्राप्त होगा ।

4.11 अभ्यासार्थ प्रश्न

1 भाषा शिक्षण के अभिधेयार्थ को स्पष्ट करते हुए, इसकी आवश्यकता पर प्रकाश डालिए।

2 "भाषा अध्यापन के अधिकांश उद्देश्य कौशलात्मक होते हैं" कथन के औचित्य पर अपने विचार व्यक्त कीजिए।

3 हिन्दी शिक्षण के मानचित्र में सम्मिलित विभिन्न तत्त्वों (पक्षों) का विवेचन कीजिए।

4 एक शिक्षक के लिए शिक्षण से पूर्व संज्ञानात्मक मानचित्र का ज्ञान होना क्यों आवश्यक है? विचार स्पष्ट कीजिए।

अध्ययन हेतु संदर्भ पुस्तक सूची

1. अग्रवाल, डॉ. रामेश्वर दयालु (1969) : भाषा विज्ञान के सिद्धान्त, दिल्ली-6 सामयिक प्रकाशन, दरियागंज, पृष्ठ 54
2. Dash, Mand. Neena (2003) : Fundamentals of Educational Phychology New Dehli:, Atlantic Publishers And Distributors, B-2 Vishal Enclave, opp Rajouri Garders: P.99
3. गुप्ता, डॉ. अलका एवं डॉ. एस.पी. (2007) : उच्चतर शिक्षा मनोविज्ञान, इलाहाबाद शारदा पुस्तक भवन, पृ - 149,152,323
4. Piqqet, Jean : “The Language and thought of the child” London. Routledge and Kegan Paul, 1952
5. Bruner,JeromS-(1963) : The process of Education, Cambridge, Harward University press
6. मारिया मोंटेसरी : "शिक्षा शास्त्र के नए क्षितिज" ग्रहण शीलमन बाल मनोविज्ञान का विवेचन, नई

			दिल्ली ग्रंथ शिल्पी, उत्तर नगर, 2004 पृ. 93-101
7.	शर्मा, आर.ए. चतुर्वेदी शिखा, 2002	:	सूर्या पब्लिकेशन
8.	शास्त्री डॉ. सूर्यदेव,	:	"मनोभाषिकी" पटना: बिहार हिन्दी गश्व अकादमी, 1973 पृ. 292-301, 145.
9.	Bloomfield Leonard	:	Lanuguage

इकाई-5

"हिन्दी शिक्षण पद्धतियों एव उपागम-विषय आधारित शिक्षण" "पद्धतियों के विशिष्ट उदाहरण-तथा विषय आधारित कौशल"

**Approaches of Teaching Methods, Specification Illustration of Content Based Methodology, Subject Specific Skills^^

इकाई की रूपरेखा

5.0 भूमिका एवं उद्देश्य

5.1 शिक्षण पद्धतियों एवं उपागमों की आवश्यकता एवं महत्व

5.1.1 शिक्षण पद्धतियों एवं उपागमों के अर्थ-स्पष्टीकरण

5.2 शिक्षण पद्धतियों का विषय आधारित विवेचन

5.3 अभ्यासार्थ प्रश्न

5.4 भाषायी-कौशल

5.5 भाषा-कौशल की आवश्यकता

5.6 श्रवण-कौशल-विकास

5.6.1 श्रवण-कौशल-विकास के उद्देश्य व अपेक्षित व्यवहारगत परिवर्तन

5.6.2 श्रवण-कौशल-विकास हेतु प्रयास

5.7 वाचन तथा उच्चारण कौशल विकास

5.7.1 वाक् कौशल विकास के उद्देश्य व अपेक्षित व्यवहारगत परिवर्तन

5.7.2 वाक्-कौशल विकास हेतु क्रिया-कलाप

5.8 पठन-कौशल-विकास

5.8.1 पठन कौशल विकास के उद्देश्य व अपेक्षित व्यवहार-परिवर्तन

5.8.2 पठन-कौशल-विकास हेतु क्रिया-कलाप

5.9 लेखन कौशल-विकास

5.9.1 लेखन कौशल विकास के उद्देश्य व अपेक्षित व्यवहार-परिवर्तन

5.9.2 लेखन कौशल विकास हेतु प्रस्तावित क्रिया-कलाप

5.10 सारांश

5.11 अभ्यासार्थ प्रश्न

5.12 अध्ययनार्थ संदर्भ पुस्तकें

50. भूमिका एवं उद्देश्य

सर्वोत्तम शिक्षा प्रणाली वही मानी जाती है, जिसमें विद्यार्थियों को क्रिया एवं स्वअनुभव के माध्यम से स्वतंत्रतापूर्वक आत्मरक्षा, आत्म प्रकाशन, आत्मविकास और आत्मविश्वास से परिपूर्ण व्यक्तित्व के का अवसर मिले । इस हेतु अध्यापकों को आवश्यकता अनुसार शिक्षण पद्धतियों एवं उपागमों का प्रयोग करना चाहिए जिनसे विद्यार्थियों में सीखने के प्रति रुचि, लगन एवं निष्ठा बनी रहे । एक अध्यापक वस्तुत: पथ-प्रदर्शक होता है जो प्रेम और सहानुभूति से परिपूर्ण शिक्षण प्रक्रिया में विद्यार्थियों को सक्रिय रूप से भाग लेने और आत्मप्रकाशन का पूरा अवसर प्रदान करता है । उसका उद्देश्य शिक्षण प्रक्रिया को विद्यार्थियों के लिए अधिक रोचक, प्रिय और सुग्राह्य बनाने का रहता है ।

प्रस्तुत इकाई में कतिनस शिक्षण पद्धतियों उपागमों तथा शिक्षण-क्षेत्र में उनके योगदान का उल्लेख किया गया है । इनके अध्ययनोपरात आप निम्नांकित उपलब्धियाँ अर्जित कर सकेगें-

उद्देश्य

1 शिक्षण पद्धतियों एवं उपागमों का हिन्दी शिक्षण में महत्व एवं उपयोगिता का बोध विकसित कर सकेगें ।

2 विविध शिक्षण पद्धतियों तथा उपागमों का, हिन्दी कें अध्यापन में प्रसंगानुसार उपयोग करने की योग्यता का विकास कर सकेगें ।

3 भाषायी कौशलों की विशेषताओं तथा उन्हें प्रभावित करने वाले तत्वों के विषय में आवश्यक ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे ।

4 हिन्दी भाषायी कौशलों के सम्यक विकास के लिए उपयोगी पद्धतियों तथा उपगमो के विषय में पर्याप्त बोध विकसित कर सकेंगे ।

5 भाषायी कौशलों के विकास में होने वाली सामान्य त्रुटियों के निवारणार्थ आवश्यक सुधारात्मक प्रक्रिया को अपनाते हुए अध्यापन में प्रवृत्त हो सकेंगे ।

6 हिन्दी शिक्षण पद्धतियों एवं उपागमों के विषय में आवश्यक अध्ययन कर अपने अध्यापन को विशेष सारग्राही बना सकेंगे ।

5.1 शिक्षण पद्धतियों एवं उपागमों की आवश्यकता एवं महत्व

शिक्षण एक गतिशील तथा सुनियोजित प्रक्रिया है । इसका उद्देश्य हैं कि विद्यार्थी अधिक से अधिक सीखने के अनुभव अर्जित करे । इस उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए अनेक प्रणालियों पद्धतियों, उपागमों, प्रविधियों एवं युक्तियों का प्रयोग किया जाता है । यहाँ यह स्मरण रखना चाहिए कि विधियों और प्रविधियों तथा युक्तियों में बहुत अंतर है । शिक्षण पद्धतियों का सीधा संबंध शिक्षण के उद्देश्य से होता है । अत: प्रत्येक शिक्षण पद्धति शिक्षण की दिशा तथा गति को निर्धारित करती है । इसके विपरीत शिक्षण उपागम का संबंध शिक्षण विषय-वस्तु की विधि से होता है । शिक्षण पद्धति का शिक्षण के उद्देश्यों से प्रत्यक्ष संबंध होता है तथा उपागमों का अप्रत्यक्ष । शिक्षण पद्धति विषय वस्तु की उचित क्रमबद्धता पर बल देती है

। जबकि उपागम विषय-वस्तु के तार्किक पक्षों पर बल देते हुए उन प्रक्रियाँए की ओर संकेत करते है जिनके द्वारा शिक्षण को प्रभावी तथा पूर्ण बनाया जा सकता है ।

5.1.1 शिक्षण पद्धतियों एवं उपागमों का अर्थ स्पष्टीकरण

शिक्षण एक अत: क्रियात्मक प्रक्रिया है, जो कक्षागत परिस्थितियों में वांछित उद्दश्यों को प्राप्त करने के लिए छात्र एवं शिक्षकों के द्वारा सम्पन्न की जाती है । शिक्षण पद्धतियों एवं उपागमों को प्रभावित करने वाले तत्व निम्नांकित हैं-

1 उद्देश्य- शिक्षण पद्धतियाँ तथा उपागम, शैक्षिक उद्दश्यों की परिपूर्ति हेतु प्रयुक्त होते हैं ।

2 अधिगम के सिद्धान्त:- शिक्षण में जिन अधिगम सिद्धान्तों का प्रयोग किया जाता है वे शिक्षण पद्धतियाँ एवं उपागमों पर आधारित होते हैं तथा विद्यार्थियों के व्यवहारगत परिवर्तन में सहायक होते हैं ।

3 पृष्ठ-पोषण- अधिगम या शिक्षण को प्रभावी तथा सहज बनाने के लिए पद्धति और उपागमों का प्रयोग किया जाता है । विषय-वस्तु के सम्यक् प्रस्तुतीकरण के लिए पुनर्बनल, प्रेरणा आदि का उपयोग होता है जिससे विद्यार्थी अनुप्रेरित होकर कार्य की तरफ प्रेरित होते हैं ।

4 क्रम बद्धता तथा सार्थकता:- शिक्षण को अधिक प्रभावी बनाने के लिए जिन पद्धतियों एवं उपागमों का प्रयोग किया जाता है उनमें क्रमबद्धता और सार्थकता का पूरा ध्यान रखना चाहिए । इस दशा में अध्यापक-वर्ग को भी विषय वस्तु का सम्पूर्ण ज्ञान होना चाहिए जिससे कि पद्धति के माध्यम से शैक्षिक प्रक्रिया क्रमबद्ध तथा सार्थक हो सके।

महत्व

आज की आधुनिक शिक्षा संरचना में शिक्षण को वास्तविक गति, विभिन्न पद्धतियों या उपागमों द्वारा ही प्रदान की जा सकती है । सफल शिक्षण की आधार शिला उसके नियोजन पर होती है । शिक्षण को यथासम्भव सार्थक व ग्राह्य बनाने के लिए अध्यापक को विविध पद्धतियों व उपागमों में से कतिपय पद्धतियों व उपागमों को नियोजित कर लेना चाहिए । ये शिक्षण पद्धतियाँ विषय वस्तु की सार्थकता विकसित करने के साथ-साथ विद्यार्थियों के मध्य अंतःक्रिया उत्पन्न कर उनमें सामाजिक गुणों के विकास के लिए भी पर्याप्त अवसर प्रदान करती है । विद्यार्थियों की चिंतन शक्ति तथा अध्ययनशील प्रवृति के विकास में भी इन पद्धतियों तथा उपागमों के प्रयोग का विशेष महत्व है ।

5.2 शिक्षण पद्धतियों का विषय आधारित विवेचन

अध्यापन प्रक्रिया को गत्यात्मक एवं स्थिरात्मक लक्ष्य की प्राप्ति के लिए तथा बालकों के ज्ञान में अभिवृद्धि करने एवं उनकी चिंतन की प्रक्रिया को प्रोत्साहित करने हेतु शिक्षण में उपागम एवं पद्धतियों का प्रयोग करना आवश्यक है । यही प्रक्रिया शिक्षक की सफलता एवं असफलता का निर्धारण करती है तथा उद्देश्य पूर्ण ढंग से सीखने को प्रोत्साहित करती है । आधुनिक समय में विश्व की कक्षाओं में लगभग 100 सौ से भी अधिक शिक्षण-पद्धतियों का उपयोग किया जा रहा है । भारतीय विद्यालयों में शिक्षण हेतु प्रयुक्त प्रमुख पद्धतियों तथा उपागमों का ही विवरण निम्नलिखित रूप से प्रस्तुत किया जा रहा है :-

1. पाठय - पुस्तक पद्धति	2. व्याख्यान या भाषण पद्धति
3. निरीक्षण-पद्धति	4. आगमन-पद्धति
5. निगमन-पद्धति	6. प्रश्नोतर-पद्धति
7. कहानी-कथन पद्धति	8. अनुसंधान या ह्यूरिस्टिक पद्धति
9. इकाई-पद्धति	10. कार्य-गोष्ठी पद्धति
11. वार्तालाप-पद्धति	12. विचार विनिमय-पद्धति
13 वाद विवाद-पद्धति	14. समस्या समाधान पद्धति
15. प्रोजेक्ट-पद्धति	16. स्रोत संदर्भ-पद्धति
17. पर्यवेक्षित अध्ययन पद्धति	18. दलीय-शिक्षण
19. बालोद्यान-शिक्षण पद्धति (किंडर गार्डन)	20. डाल्टन-शिक्षण पद्धति
21. मॉण्टेसरी शिक्षण पद्धति	22. बुनियादी-शिक्षण पद्धति
23. खेल-शिक्षण पद्धति	24. सूक्ष्म-शिक्षण पद्धति
25. बालकेन्द्रित शिक्षण पद्धति	26. अनुदेशनात्मक-शिक्षण पद्धति
27. क्षेत्रीय भ्रमण-शिक्षण पद्धति, म्यूजियम, कला संग्रहालय	28. दूरदर्शन-शिक्षण पद्धति
29. कम्प्यूटर- शिक्षण पद्धति	30. भाषा प्रयोग-शाला

शिक्षण पद्धतियों का विषय-वस्तु आधारित विवेचन

1 पाठ्य-पुस्तक शिक्षण पद्धति

यह पद्धति सर्वाधिक प्रचलित है । पाठ्य-पुस्तक पर आधारित होने के कारण अध्यापक को विषय सामग्री तैयार नहीं करनी पड़ती है । पाठ्य पुस्तकें विद्यार्थियों को लक्ष्य करके लिखी जाती हैं । इसलिए यह पद्धति विद्यार्थियों के लिए लाभकारी है । अध्यापक को हिन्दी का पाठ्यक्रम नहीं देखना पड़ता क्योंकि पुस्तकें पाठ्यक्रम के अनुसार ही लिखी जाती हैं । पाठ्य-पुस्तक शिक्षण से विद्यार्थियों की स्मरण शक्ति का विकास होने के साथ ही उन्हें स्वाध्याय के लिए प्रोत्साहन मिलता है । विषय सामग्री की आवृति के लिए भी पाठ्य पुस्तक पद्धति उपयोगी सिद्ध होती है । सामूहिक शिक्षण व्यवस्था में पाठ्य पुस्तक शिक्षण पद्धति सर्वाधिक आवश्यक शैक्षणिक उपकरण है क्योंकि पाठ्य पुस्तक के आधार पर अभीष्ट पाठ्य-सामग्री का ज्ञान सम्पूर्ण कक्षा में एक साथ प्रदान किया जा सकता है ।

2 व्याख्यान

यह पद्धति शिक्षण की प्राचीन पद्धति है । अध्यापक पूर्व निर्धारित विषय सामग्री विद्यार्थियों के समक्ष भाषण के माध्यम प्रस्तुत करता है जिसे विद्यार्थी उसके सामने बैठकर हृदयगम करते हैं । विद्यार्थी गण अध्यापक के व्याख्यान से अपने-अपने नोट्स या बिन्दु लिखते हैं और उसके तुरन्त पश्चात् विद्यार्थी गण प्रश्न पूछते हैं । इस पद्धति से श्रवण कौशल का विकास होता है । यह बाल केन्द्रित न होकर अध्यापक केन्द्रित पद्धति है । अपने विषय में

निष्णात अध्यापक ही विषय सामग्री को प्रभाव पूर्ण तरीके से विद्यार्थियों के समक्ष प्रस्तुत कर सकता है । इसमें मुख्यतया विद्यार्थियों के स्तरानुकूल ही व्याख्यान देना होता है तथा विद्यार्थियों की रुचि और क्षमता का भी ध्यान रखना पड़ता है । यह विधि व्ययकारी नहीं है । इस पद्धति में अध्यापक को पाठ्य-वस्तु प्रस्तुत करने में विशेष सक्रिय व अध्ययन शील रहना पड़ता है ।

3 निरीक्षण पद्धति

यह शिक्षण पद्धति हिन्दी में महत्वपूर्ण है । इसमें विद्यार्थी किसी वस्तु स्थान या व्यक्ति को देखकर ही उसके बारे में ज्ञान प्राप्त करता है । यह पद्धति "देखकर सीखना" नामक सिद्धांत पर आधारित है । इस पद्धति द्वारा प्राप्त ज्ञान स्थायी होता है । यह पद्धति क्रियाशीलता के सिद्धांत का पालन करती है । विद्यार्थी वास्तविक स्थिति में ज्ञानार्जन करते हैं अत: विद्यार्थी में सीखने की जिज्ञासा एवं उत्सुकता बनी रहती है तथा उनमें कल्पना शक्ति एवं तुलनात्मक शक्ति का भी विकास होता है । हिन्दी भाषा लेखन-कौशन विकास में यह पद्धति विशेष उपयोगी है ।

4 आगमन पद्धति

इस पद्धति में विद्यार्थी विशिष्ट से सामान्य की ओर अग्रसर होते हैं । अभीष्ट ज्ञान प्रदान करने के लिए विद्यार्थियों के समक्ष सर्वप्रथम अनेक उदाहरण प्रस्तुत किये जाते हैं । उसके पश्चात् विद्यार्थी इन उदाहरणों के आधार पर अपना कोई निष्कर्ष निकालते हैं । व्याकरण शिक्षण के अंतर्गत इस पद्धति का पर्याप्त उपयोग किया जाता है । यह शिक्षण पद्धति मनोविज्ञान आधारित है, क्योंकि इसमें मूर्त से अमूर्त की ओर जाते हैं । उच्च स्तर पर इसका प्रयोग करना ठीक नहीं है । अध्यापक एवं विद्यार्थी दोनों ही क्रियाशील रहते हैं । इसमें रटने की प्रवृति को हतोत्साहित्य किया जाता है

5 निगमन शिक्षण पद्धति

यह शिक्षण पद्धति आगमन शिक्षण पद्धति की विपरीत शिक्षण पद्धति है क्योंकि इसमें पहले कोई सिद्धांत या नियम अथवा सूत्र प्रस्तुत किया जाता है फिर विद्यार्थियों के समक्ष कई उदाहरणों से उस अथवा सिद्धांत या सूत्र की पुष्टि की जाती है । इस पद्धति में सामान्य से विशिष्ट की ओर जाते हैं । इस शिक्षण पद्धति से पाठ्यक्रम निश्चित समय पर आसानी से पूरा किया जा सकता है क्योंकि सिद्धांतों या नियमों की पुष्टि दो, तीन उदाहरणों को देकर कर सकते हैं । यह शिक्षण पद्धति उच्च स्तर पर बहुत उपयोगी है । इससे विद्यार्थियों में रटन की प्रवृति को प्रोत्साहन मिलता है । इसमें सोचने एवं तर्क करने का अवसर नहीं मिलता है । छोटी कक्षाओं में इससे शिक्षण किया जाना कठिन है ।

हिन्दी की व्याकरण शिक्षा में उपर्युक्त दोनों शिक्षण पद्धतियों का विशेष प्रयोग किया जाता है ।

6 प्रश्नोत्तर शिक्षण-पद्धति

'सोक्रेटिक टैक्नीक" के नाम से प्रसिद्ध यह शिक्षण पद्धति अध्यापन क्षेत्र में अपना महत्वपूर्ण स्थान रखती है । इस पद्धति में अध्यापक विद्यार्थियों से प्रश्न पूछकर अपने पाठ का विकास करता है । अध्यापक में विद्यार्थियों से पूर्व ज्ञान से संबंधित "प्रश्न पूछता हैं" तथा

शिक्षण बिन्दुओं के साथ भी प्रश्न पूछता हुआ पाठ का विकास करता है । अध्यापन में सक्रिय वातावरण का सृजन करने में यह पद्धति निर्विवाद रूप से अप्रतिम है । इस पद्धति से विद्यार्थियों में आत्मविश्वास, तर्कशक्ति तथा संप्रेषण क्षमता का विकास स्वाभाविक रूप से होता रहता है । किसी भी पाठ्य वस्तु के संबंध में विद्यार्थियों की समस्याओं का समाधान भी तत्काल हो जाता है ।

विद्यार्थियों के सृजनात्मक-लेखन की प्रक्रिया में यह पद्धति विशेष उपयोगी है । इस पद्धति के द्वारा विद्यार्थी मानसिक रूप से पूर्ण सजग रहता हुआ प्रभावी-रूप से ज्ञानार्जित करता है क्योंकि इसके माध्यम से वह अपनी रुचि तथा प्रवृत्तियों के अनुसार कार्य में व्यस्त रहता है ।

7 कहानी कथन-शिक्षण पद्धति

ज्ञान प्राप्ति के एक स्रोत के रूप में कहानियाँ सुनने-सुनाने की परम्परा अति प्राचीन है। अध्यापक का कहानी कहने की शैली एवं बनाने की कला में निपुण होना आवश्यक है। प्रसंगानुसार शिक्षण सहायक सामग्री का भी प्रयोग करना चाहिए । भाषा के अभिवृत्ति-विकास (मूल्यगत-आचरण) के उद्देश्य की पूर्ति में यह अत्यधिक सहायक पद्धति है ।

8 अनुसंधान शिक्षण पद्धति या हयूरिष्टि पद्धति

इस पद्धति के जन्मदाता आर्मस्ट्रांग थे । यह शिक्षण पद्धति स्वयं खोज करने अथवा अपने आप सीखने की पद्धति है । इस पद्धति में विद्यार्थियों को स्वयं तथ्यों का अध्ययन, अवलोकन और निरीक्षण करने का अवसर दिया जाता है । विद्यार्थी अपने प्रयासों से सत्य को ज्ञात करें और नियमों को निर्धारण करें । अनुसंधान शिक्षण पद्धति तर्क, निर्णय तथा चिन्तन आदि शक्तियों का विकास करती है । इस शिक्षण पद्धति में विद्यार्थी "करके सीखने" के सिद्धांत का प्रयोग करता हैं । इस शिक्षण की कार्य विधि पूर्णत: वैज्ञानिक है ।

सर्वप्रथम अध्यापक विद्यार्थियों के समक्ष कोई समस्या प्रस्तुत करता है तत्पश्चात उन्हें समस्या पर विचार करने के लिए उत्साहित करता है । विद्यार्थी अपने कार्य करने में स्वतंत्र होते हैं । वे आवश्यकता तथा परिस्थिति के अनुसार वाद-विवाद तथा विचार विनिमय भी करते रहते हैं

इस शिक्षण पद्धति में विद्यार्थी क्रियाशील एवं परिश्रम करना सीखते हैं । इस शिक्षण पद्धति में अनेक महत्वपूर्ण शिक्षण सूत्रों का प्रयोग किया जा सकता है । यथा स्थूल से सूक्ष्म की ओर आदि । साहित्यिक विषयों के अध्यापन से आधिक यह शिक्षण पद्धति समीक्षात्मक लेखन के लिए अधिक उपयोगी है ।

9 इकाई शिक्षण पद्धति

इकाई शिक्षण वह पद्धति है जो कि सीखने के किसी महत्वपूर्ण क्षेत्र पर केन्द्रित रहती है। इकाई शिक्षण पद्धति किसी विषय का एक बड़ा उपविभाग है, जिसका कोई मूलभूत सिद्धांत या प्रकरण होता है । विद्यार्थी की क्रियाओं को प्रकरण के अनुसार ऐसे ढंगों से नियोजित किया जाता है जिसमें कि उन्हें विषय के आवश्यक तत्वों का पूर्ण ज्ञान हो जाए । इकाई ज्ञान की किसी शाखा का तार्किक विभाजन है, जिससे क्रियाओं तथा इन्द्रियानुभव को केवल युक्ति

युक्तता की दृष्टि से स्थान दिया जाता है हिन्दी भाषा की पुस्तकों के प्रत्येक पाठ स्वयं में एक स्वतंत्र इकाई होते हैं ।

10 कार्यगोष्ठी शिक्षण पद्धति

इस पद्धति के अन्तर्गत अध्यापक और विद्यार्थी मिलकर विषय वस्तु में से किन्हीं समस्याओं का चयन करते हैं, प्रत्येक विद्यार्थी को उसकी रुचि का क्षेत्र प्रदान किया जाता है, तत्पश्चात् सामूहिक चर्चा होती है तथा अन्त में निर्धारित कार्य का मूल्यांकन किया जाता है । कार्यगोष्ठी पद्धति का मुख्य उद्देश्य विद्यार्थियों में उत्तरदायित्व, सामाजिकता तथा अनुशासन की भावना का विकास करना है । भाषा अध्यापन की दृष्टि से इस पद्धति के द्वारा विद्यार्थियों को उनके वक्तृत्व व लेखन कौशल के विकास के लिए अनेक अवसर अनायास ही प्राप्त हो जाते हैं । किसी समस्या के विविध पक्षों पर विचार-विमर्श करते हुए सामूहिक रूप से चिन्तन करना तथा सामूहिक रूप से लिखने का भी अभ्यास हो जाता है ।

इस पद्धति से विद्यार्थी की अंतर्दृष्टि का सम्यक् विकास होता है । कार्यगोष्ठी पद्धति से विद्यार्थियों में सामाजिक व्यवहार-जीवन कौशलों को अर्जन करने में सहायता मिलती है । विद्यार्थियों में स्वाध्याय और गंभीर अध्ययन की प्रवृत्ति का विकास होता है ।

11, 12,13 वार्तालाप, विचार-विनिमय एवं वाद-विवाद शिक्षण पद्धति

"विचार-विनिमय को वाद-विवाद भी कह सकते हैं" । वर्तमान परिप्रेक्ष्य में विद्यार्थी को एक मात्र निक्रिय श्रोता नहीं माना जाता हैं । वह स्वयं भी ज्ञान का आदान-प्रदान वार्तालाप; विचार-विनिमय और वाद-विवाद की प्रक्रिया के माध्यम से करता है । यह मनोवैज्ञानिक रूप से भी सत्य है कि विद्यार्थी जिस ज्ञान को स्वयं सक्रिय होकर प्राप्त करता है, वह उसके मस्तिष्क में स्थायी हो जाता हैं ।

हिन्दी के विभिन्न कौशलों के विकास में विद्यार्थियों को सक्रिय करने के लिए विचार-विनिमय और वार्तालाप का प्रयोग प्राय: किया जाता है ।

वाद-विवाद शिक्षण पद्धति

इसके संचालक के लिए किन्हीं निर्धारित नियमों की आवश्यता होती है । इसमें कोई भी प्रकरण या समस्या निश्चित कर स्वतंत्रतापूर्वक विचारों का आदान-प्रदान प्रदान पक्ष या विपक्ष में किया जाता है । हिन्दी में विविध कौशलों के विकास में इस प्रक्रिया का अधिकाधिक प्रयोग किया जाता है ।

इन पद्धतियों से छात्रों के ज्ञान की अभिवृद्धि के साथ अन्तर्दृष्टिकोण विकसित होता है । राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय नीतिगत विचारों को सोचने एवं कार्य व्यवहार में प्रयोग करने की दृष्टि का भी विकास होता है ।

इन पद्धतियों के प्रयोग से विद्यार्थियों में नेतृत्व शक्ति, तार्किक शक्ति तथा लिखित-मौखिक अभिव्यक्ति-विकास के साथ-साथ उनके स्वस्थ सामाजीकरण के लिये आवश्यक सद्वृत्तियों के विकास के लिए भी अनेक अवसर प्रदान किये जा सकते हैं ।

14 समस्या समाधान शिक्षण पद्धति

समस्या समाधान शिक्षण पद्धति के द्वारा सीखने की प्रक्रिया को उन चुनौतिपूर्ण स्थितियों में सृजन द्वारा प्रोत्साहित किया जाता है, जिनका समाधान करना आवश्यक है ।

इस पद्धति का प्रयोग विद्यार्थियों में भाषा सम्बन्धी समस्या हल करने की क्षमता उत्पन्न करने के लिए किया जाता है । विद्यार्थी भाषागत समस्या का चयन करते हैं । कारणों को खोजते, है, तथा नियम एवं पद्धति निर्धारित कर उसे पूर्ण करते हैं । यथा 'वर्तनी की अशुद्धियाँ, उच्चारण की अशुद्धियाँ आदि' ।

परीक्षण के पश्चात् उस समस्या का उचित मूल्यांकन करते हैं ।

इस शिक्षण पद्धति से विद्यार्थियों की चिन्तन और तर्क शक्ति का विकास होता है । विद्यार्थी जो कुछ सीखता है वह क्रियाशील होकर ही सीखता है । इसे ज्ञान प्राप्ति करने की मनोवैज्ञानिक प्रणाली कहा जाये तो अनुचित नहीं होगा । यह शिक्षण पद्धति विद्यार्थियों में स्वध्याय का प्रशिक्षण प्रदान करती है, उनमें वैज्ञानिक ढंग से चिन्तन करने की क्षमता का विकास होता है तथा कक्षागत वातावरण को क्रियाशील बनाती हैं ।

15 प्रोजेक्ट या प्रायोजना शिक्षण पद्धति

परियोजना या प्रोजेक्ट पद्धति के प्रवर्त्तक विलियम किलपैट्रिक प्रसिद्ध शिक्षा शास्त्री जान डीवी के विचारों के अनुसार शिक्षा को वास्तविक जीवन से समायोजित करने के पक्षधर थे । उसके अनु सार किसी कार्य अथवा व्यवसाय को आधार बनाकर विविध विषयों की शिक्षा देनी चाहिए ।

व्यवहारवाद को प्रोजेक्ट पद्धति का दार्शनिक आधार कहा जाता है । इस पद्धति में विद्यार्थी उद्देश्यपूर्ण क्रियाऐं पूर्ण संलग्नता से सामाजिक वातावरण में सम्पन्न करते हैं । विद्यार्थी जो कुछ भी सीखता है, वह क्रियाशील होकर सीखता है तथा वह जो क्रियाऐं सीखता है वे सामाजिक जीवन से भी सम्बन्धित होती हैं । इस विधि का प्रयोग हिन्दी शिक्षण में प्रमुख रूप से किया जाता हैं ।

प्रोजेक्ट विधि को पूर्ण करने के लिये निम्नलिखित पदों का प्रयोग किया जाता हैं-

1 परिस्थिति उत्पन्न करना उद्देश्य निर्धारण

2 प्रायोजना का चयन

3 प्रायोजना पूर्ण करने के कार्यक्रम का निर्माण

4 कार्यक्रम को क्रियान्वित करना

5 कार्यक्रम का मूल्यांकन

6 कार्य लेखन - प्रायोजना का प्रतिवेदन तैयार करना

प्रोजेक्ट प्रमुखत: चार प्रकार के होते हैं-

1 रचनात्मक प्रोजेक्ट

2 समस्यात्मक प्रोजेक्ट

3 रसास्वादन प्रोजेक्ट

4 अभ्यास प्रोजेक्ट

प्रोजेक्ट शिक्षण पद्धति से विद्यार्थीगण यथार्थ समस्याओं का हल करना भी सीखते हैं । यह चरित्र निर्माण में सहायक होकर विद्यार्थी के सर्वागीण विकास में सहायक होते हैं । यह थार्नड्राइक के सीखने के नियम पर आधारित है इसमें (प) तत्परता का नियम (पप) अभ्यास नियम तथा (पपप) प्रभाव नियम इन तीनों मनोवैज्ञानिक नियमों को प्रयोग विद्यार्थी सफलता के साथ करता है । इस पद्धति से विद्यार्थियों की सृजनात्मकता का अच्छा विकास होता हैं ।

16 स्रोत संदर्भ शिक्षण पद्धति

हिन्दी शिक्षण में स्रोत-संदर्भ शिक्षण पद्धति एक प्रभावशाली शिक्षण पद्धति है । "स्रोत" एक प्रकार के ज्ञान एवं सूचनाओं का वह प्रमाणित मूल है जो किसी घटना या व्यक्ति से सम्बन्धित होने के कारण उस घटना या व्यक्ति के सम्बन्ध में हमें प्रामाणिक जानकारी प्रदान करता है ।

इस शिक्षण पद्धति का प्रयोग मुख्यत: हिन्दी में अतीत के इतिहास पर प्रकाश डालने के लिये किया जाता है । ये स्रोत दो भागों में विभाजित किये जाते हैं :-

1. मौलिक स्रोत 2. सहायक स्रोत

1 मौलिक स्रोत में ऐतिहासिक स्मारक, सिक्के, यंत्र-वस्तु मानव-कंकाल, आज्ञा-पत्र, आदेश, फरमाना, संविधान, संधियाँ, न्यायालयों के निर्णय आदि आते हैं ।

2 सहायक स्त्रोत के अंतर्गत पुस्तकें, जीवन चरित्र, आत्मकथाएँ या विवरण आदि हैं । हिन्दी में स्रोत शिक्षण पद्धति का उपयोग

(1) पाठ के प्रारम्भ में जिज्ञासा जागृत करने के लिये

(2) पाठ के विकास में विद्यार्थियों के द्वारा स्वयं सक्रिय होकर अन्वेषण करने तथा

(3) पाठ वस्तु के समाहार स्वरूप समीक्षा करके निष्कर्ष निकालने के लिए किया जा सकता है ।

संदर्भ

संदर्भ का अर्थ मूल स्रोत के प्रमाणित या मौलिक विषय-वस्तु से है । ये ऐसे मूलसाधन हैं जिनके आधार पर हम भूत और वर्तमान आदि को भली प्रकार समझ सकते हैं ।

17 पर्यवेक्षित अध्ययन पद्धति

इस अध्ययन पद्धति को निरीक्षण पद्धति भी कह सकते हैं । इसमें शिक्षक निर्देशन या मार्गदर्शन का कार्य करता है, और विद्यार्थी शिक्षक के मार्ग-दर्शन में कार्य करते हैं । इसमें विद्यार्थियों को स्वाध्याय करने की आदत का विकास होता हैं । विद्यार्थी स्वयं विषय-वस्तु का अध्ययन करता है, और अपनी समस्या का समाधान करता है । इसमें विद्यार्थी को उनकी विभिन्नता के आधार पर कार्य को आवंटन किया जाता है । विद्यार्थी नियोजन रूप में अध्ययन करते हैं, और अपनी गति से सीखने के अवसर प्राप्त करते हैं । विद्यार्थी स्वयं सक्रिय रहता है, अध्यापक निरीक्षण करता हुआ आवश्यकतानुसार उन्हें मार्ग दर्शन देता है । इसमें विद्यार्थियों के बोधस्तर पर शिक्षण होता हैं । विद्यार्थियों के समय का अपव्यय इस पद्धति में नहीं होता है । हिन्दी में अलंकार, समास और व्याकरण आदि के पाठों का विकास परिवीक्षित पद्धति से

करना लाभप्रद है । यह पद्धति छोटी कक्षाओं के लिए उपयोगी नहीं है । इसमें शिक्षक को अधिक श्रम करना पड़ता है ।

18 दलीय शिक्षण पद्धति

दलीय शिक्षण पद्धति का जन्म संयुक्त राज्य अमेरिका में हुआ। भारत में यह तकनीक नई है । दलीय शिक्षण, शिक्षण संरचना का वह व्यवस्थित स्वरूप है जिसमें दो या दो से अधिक शिक्षक परस्पर एक दूसरे से सहयोग करते हुए विद्यार्थियों के एक समूह को विषय विशेष का शिक्षण देते हैं । दल के शिक्षक अपने-अपने क्षेत्र में विशेष योग्यता रखते हुए शिक्षण कला में दक्ष होते हँ । एक शिक्षक इस दल का नेता होता है जो पूरी शिक्षण व्यवस्था का संचालन करता है तथा विषय का निष्णांत होता है । दल के नेता के निर्देशन में अन्य शिक्षक निष्ठापूर्वक कार्य करने के लिए तत्पर रहते हैं । यह पद्धति निरन्तर परस्पर सहयोग करने पर आश्रित रहती हैं । अत: कतिपय शिक्षा शास्त्री इसे "सहकारिता शिक्षण पद्धति" भी कहते हैं । यह परम्परागत कक्षा-शिक्षण व्यवस्था को बदलने एवं सुधारने की प्रेरणा देने वाली उत्तम शिक्षण-पद्धति कही जाती है । शिक्षक का एकाकीपन दूर होता है और शिक्षण में गुणात्मक वृद्धि होती है । विद्यार्थी शिक्षकों की विशेष योग्यता से लाभान्वित होते हैं । शिक्षकों का भी व्यावसायिक उन्नयन होता है । विद्यार्थियों को खुली चर्चा का अवसर मिलता है । शिक्षक-विद्यार्थियों का घनिष्ठ संबंध स्थापित होता है । विद्यालय में उपलब्ध संसाधनों का अधिकतम उपयोग करने की भावना का विकास होता है ।

19 बालोद्यान शिक्षण पद्धति

इस पद्धति के जन्मदाता जर्मनी के प्रसिद्ध शिक्षा-शास्त्री फ्रॉबेल है । उन्होंने विद्यालय को एक उद्यान की संज्ञा दी हैं । इसके अनुसार "जिस प्रकार पौधे के विकास के लिए खाद-पानी और उपयुक्त वातावरण की आवश्यकता होती है । इन्हें पाकर पौधा अपने आप विकसित होता है । उसी प्रकार विद्यार्थी उपयुक्त संरक्षण एवं सुविधाओं में विकसिक होता है ।" फॉब्रेल ने इस पद्धति में खेल का महत्वपूर्ण स्थान दिया हैं । यह पद्धति छोटी कक्षाओं के लिए उपयोगी है । भारत के अनेक विद्यालयों में इस पद्धति से भाषा का अध्यापन किया जा रहा है! खेल आधारित इस पद्धति से विद्यार्थी अक्षरों को पहचानना तथा लिखना भी सरलता से सीख जाते हैं । नयी-नयी वस्तुओं के नाम एवं आकार की जानकारी भी इन्हें खेल के माध्यम से करायी जाती है । इस शिक्षण पद्धति में (1) गीत (2) कहानी (3) अभिनय मुख्य साधन हैं । गीतों और कहानी के माध्यम से विद्यार्थियों की मौलिक अभिव्यक्ति के विकास के लिए अवसर प्रदान किए जाते हैं । शुद्ध उच्चारण का अभ्यास होता है । कहानी सुनने से मनोरंजन के साथ-साथ कल्पना शक्ति का विकास होता है । शब्द भण्डार में वृद्धि होती है । खेल पद्धति होने से आनन्द मिलता है और विद्यार्थी वृन्द हँसते-हँसते कठिन प्रकरणों को सरलता और सुगमता से समझ लेते है ।

20 मॉण्टेसरी पद्धति

इस पद्धति की प्रवर्तिका इटली की महिला डॉ. मॉण्टेसरी हैं । उन्होंने मनोवैज्ञानिक प्रशिक्षण को शिक्षा में बड़ा महत्व दिया है । उनके मतानुसार बालक स्वेच्छा से उठे, बैठे, खेले

एवं कार्य करे । उन्हें आदेश देना या बंधित करना उपयुक्त नहीं है । उन्होंने ज्ञानेन्द्रियों की शिक्षा पर भी बल दिया है । उनकी पाठशाला में शिक्षा कार्यक्रम तीन भागों में विभाजित किया है-

1 दैनिक जीवन की क्रियाएँ

2 ज्ञानेन्द्रियों की क्रियाएँ एवं उनकी शिक्षा

3 प्रारम्भिक पाठ्य-वस्तु (हिन्दी-गणित-सामाजिक ज्ञान)

मॉटेसरी पद्धति के अनुसार भाषा शिक्षण में लिखने से पहले बोलकर पढ़ना उपयुक्त है । उनके अनुसार लिखने की क्रिया शारीरिक क्रिया है जब कि पढ़ने की तथा बोलने की क्रियाएँ मानसिक है । अत: बालकों को लेखनी पकड़ने के पहले अक्षरों का स्वरूप जानने एवं अक्षरों का ध्वन्यात्मक विश्लेषण करने का अभ्यास कराना चाहिए । जैसे अक्षरों के कट आउट पर अँगुलियों को फेरना, रेत में अंगुलियों को अक्षरों की आकृति के अनुरूप चलाना । यह पद्धति प्रारम्भिक कक्षाओं के लिए ही उपयुक्त है । यह छोटे बालकों की प्रारम्भिक रूप भाषा-ज्ञान प्रदान करने की दृष्टि से अत्युत्तम तथा सर्वाधिक प्रचलित पद्धति है ।

21 डाल्टन पद्धति

डाल्टन पद्धति अथवा प्रयोगशाला योजना के प्रवर्तक अमेरिका की मिस पार्क हर्स्ट है । इस पद्धति में विद्यालय संगठन का बहु त महत्वपूर्ण योगदान होता है । बालकों को विषय-वस्तु पर निर्देश दिए जाते हैं उन्हें उस पर आवश्यक सुझाव भी दिए जाते हैं । ज्ञानार्जन हेतु पुस्तकों की भी जानकारी दे दी जाती है । उसमें छात्र स्वत: विषय-वस्तु पर कार्य पूरा करते हैं इसमें अध्यापक मात्र पथ-प्रदर्शक या सुविधा दाता होता है ।

हिन्दी में विशेष अध्ययन हेतु उच्च कक्षाओं के लिए यह पद्धति विशेष उपयुक्त है । इसके लिए विद्यालय में समृद्ध पुस्तकालय की आवश्यकता होती है । कवियों की कविताओं का संग्रह करना और उनकी .तियों की समीक्षा करना इस पद्वति से सम्भव हो सकता है । काव्य रसानुभूति, श्लाघापरक अभिव्यक्ति अथवा गहन अध्ययन इस पद्धति से सम्भव नहीं ।

22 बुनियादी शिक्षण पद्धति

बुनियादी शिक्षा के माध्यम से शिक्षा को उद्योग केन्द्रित बनाने के लिए प्रयास किया जाता है । इस शिक्षण पद्धति के जन्मदाता महात्मा गांधी थे । उन्होंने शिक्षा का माध्यम मातृभाषा को बनाये जाने पर विशेष बल दिया । शिक्षा को प्रारम्भ से ही श्रम एवं स्वावलम्बन जैसे संस्कारों से जोड़ दिया गया । इस शिक्षण पद्धति को समवायी शिक्षण पद्धति का नाम दिया गया है । हिन्दी शिक्षण में इस पद्धति द्वारा भाषा के सभी कौशलों की शिक्षा प्राथमिक स्तर पर ही सफलता पूर्वक दी जा सकती हैं ।

23 खेल शिक्षण पद्धति

खेल द्वारा शिक्षा के जन्मदाता यूरोप के प्रसिद्ध शिक्षा शास्त्री श्री काल्डवेल कुक हैं । सुप्रसिद्ध मनोवैज्ञानिक मैक्डगल ने खेल को एक "सामान्य स्वाभाविक प्रवृति" कहा है और उनके अनुसार "खेल एक स्वाभाविक आनन्द एवं जन्मजात मूल प्रवृति एवं शक्ति है ।"

खेल शिक्षण पद्धति से विद्यार्थियों का शारीरिक-मानसिक तथा भावात्मक विकास होता है। औपचारिक शिक्षा के साथ-साथ विद्यार्थियों के सम्यक् सामाजिकीकरण के लिए भी यह पद्धति विशेष उपयोगी है । बालक मानसिक तनाव से मुक्त होता है । अत: खेल संबंधी क्रियाओं से बालक विषय-वस्तु को क्रियाओं द्वारा सीखता है । अत: विषय-ज्ञान सुदृढ़ होता है । हिन्दी शिक्षण में खेल शिक्षण पद्धति का बड़ा महत्व है । भाषा शिक्षण में अभिनय, कविता पाठ, अंतयाक्षरी, कविदरबार शब्द रचना आदि विविध विधाओं में खेलों का आयोजन करके भाषा की विषय वस्तु को सुदृढ़ बनाया जा सकता है । भाषा में दक्षता या प्रवीणता के लिए विभिन्न प्रकार के खेलों का प्रयोग किया जा सकता है यथा पहेलियों के अर्थ, सुन्दर सूक्तियों को लिखवाना यथा स्थान टंगवाना, साहित्यकारों के जन्मोत्सवों का आयोजन आदि । नये शब्दों के निर्माण के लिए वर्तनी खेल, वाद- विवाद, लेख, रिक्त स्थानों में शब्द पूर्ति, शब्दों को जोड़ना आदि । भाषा शिक्षण नीरसता भी इन खेलों के माध्यम से पूर्णतया निवारण की जा सकती है ।

24 सूक्ष्म शिक्षण पद्धति

शिक्षण प्रशिक्षण की पद्धति के रूप में यह एक नवीन धारणा है । इस पद्धति को समझने तथा इसके माध्यम से शैक्षिक कुशलताओं को अर्जित करने हेतु शिक्षण दिया जाता है । सूक्ष्म शिक्षण के माध्यम से शिक्षक के रचना कौशल तथा उसकी युक्तियों एवं दक्षताओं को सीखने हेतु अभ्यासकर्त्ता शिक्षक को एक सुरक्षित परिस्थिति उपलब्ध करना उस पद्धति का प्रमुख ध्येय है । सूक्ष्म-शिक्षण का अर्थ है-छोटे पैमाने पर सम्पादित शिक्षण क्रिया, इसमें अभ्यासकर्त्ता किसी विषय के लधु अंश से संबंधित प्रकरण को एक लधु कक्षा-आकार (5 से 10 विद्यार्थी) एंव लधुअवधि (5 से 10 मिनिट) के संदर्भ में एक समय पर एक ही शिक्षण कौशल का अभ्यास करने हेतु आयोजित करता है । इस शिक्षण पद्धति के माध्यम से नवीन कौशल अर्जित करने या पुराने सीखे हुए कौशल का परिष्करण करने का प्रयास किया जाता है । अत: सूक्ष्म-शिक्षण की धारणा में कृत्रिमता के स्थान पर वास्तविकता का पुट रहता है । इसमें सरलीकरण, विशिष्ट कार्य के सम्पादन पर बल नियंत्रण तथा प्रतिपुष्टि आदि तत्व इसकी विलक्षणता के विशेष परिसूचक है । यह पद्धति अध्यापक- व्यवहार पर केन्द्रित पद्धति है । सूक्ष्म शिक्षण पद्धति अध्यापन से पूर्व सेवा कालीन- शिक्षण की जटिलता को कम करती है । प्रभावशाली रूप से प्रशिक्षणर्थियों का प्रशिक्षण कराती है । इस पद्धति में शिक्षण पद्धतियों के सिद्धांत और व्यवहार में एकीकरण प्रक्रिया का विश्लेषण आसानी से किया जा सकता है । सूक्ष्म शिक्षण द्वारा प्रशिक्षणार्थी की प्रतिपुष्टि शीघ्रता से होती हैं । यह व्यक्तिगत शिक्षण की एक सफल पद्धति है । लघु अवधि के विभिन्न कौशलों पर आधारित पाठों से मात्र शिक्षक के शैक्षिक कौशलों का विकास होता है । सूक्ष्म शिक्षण की धारणा को अपेक्षात अभिनव सम्प्रत्यय की श्रेणी में रखा जा सकता है । इसके अन्तर्गत वास्तविक शिक्षण के साथ अनुदेशन कौशल का अधिगम हेतु प्रभावी व्यवस्था उपकल्पित होती है । इसे प्रमुखत: प्रशिक्षण की पद्धति के रूप में अपनाया गया है ।

25 बालकेन्द्रित-शिक्षण पद्धति

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1988 से पूर्व कोठारी आयोग 1964-66 ने भी नवीन शिक्षा व्यवस्था में बालक की शिक्षा के लिए अध्यापक को एक निर्देशक, प्रथप्रदार्शक और सहायक के रूप में स्वीकार किया है । शिक्षक को चाहिए कि वह बालक की आंतरिक शक्तियों को सम्यक् अध्ययन कर उनके अनुसार शिक्षण सामग्री प्रदान करे । शिक्षक को तो केवल यह प्रयत्न करना चाहिए कि बालक अपनी अभिरुचियों के अनुसार ज्ञान प्राप्त करते हुए स्वाभिव्यक्ति में कुशलता प्राप्त कर ले । इस शिक्षण पद्धति में शिक्षक की अपेक्षा बालक को अधिक महत्त्व दिया जाता है । अध्यापक को बालक की रुचि, क्षमता तथा स्वभाव के अनुकूल शिक्षा प्रदान करनी चाहिए ।

26 अनुदेशनात्मक शिक्षण पद्धति

इस पद्धति पर इकाई संख्या 11 में विस्तृत एवं विशद वर्णन किया गया है । शिक्षण के क्षेत्र में यह एक प्रभावशाली शिक्षण पद्धति है । इसमें सुव्यवस्थित ढंग से अनुदेशन को पद्धति के रूप में प्रयोग किया जाता है । विद्यार्थी इसके माध्यम से पाठ्य वस्तु को अपनी गति के अनुसार सीखता है । इस पद्धति के द्वारा विद्यार्थी अपनी अंतर्निहित क्षमता और विषय वस्तु से परिचित पृष्ठभूमि में संप्रत्ययों, प्रनियमों का बोध कर लेता है ।

27 क्षेत्रीय भ्रमण

भ्रमण करने की विद्यार्थियों में स्वाभाविक रुचि होती है । यह भ्रमण विद्यालय में अवकाश के दिन होना चाहिए । इस प्रकार के भ्रमण में विद्यार्थियों को ऐतिहासिक स्मारक, वन, व्यापारिक संस्थान, खेत-खलियान मुख्य फसल-कुटिर उद्योग, गाँव के लोगों के आर्थिक जीवन के विषय में प्रत्यक्ष रूप से देखने और जानने का अवसर मिलता है । ग्रामीण अंचल के विद्यार्थियों को नगर और नगर के विद्यार्थियों को ग्रामीण अंचल में भ्रमण का अवसर प्रदान करना चाहिए जिससे कि उन्हें जीवन की वास्तविकता का अधिकाधिक ज्ञान प्रत्यक्ष हो सके । क्षेत्रीय-शैक्षिक भ्रमण के पश्चात् तत्सम्बन्धित विचार-विनियम हो, उसके उपरांत विद्यार्थियों की लिखित अभिव्यक्ति विकास हेतु कोई लेख, रिपोर्ताज अथवा कथा शैली या पद्य के माध्यम से उन्हें भाव-प्रकाशन का अवसर प्रदान करना चाहिए । भ्रमण पर जाने से पूर्व उसकी योजना बना लेनी चाहिए । विद्यार्थियों को भी ज्ञात होना चाहिए कि भ्रमण पर वे क्यों जा रहे हैं ।

28 दूरदर्शन-शिक्षण पद्धति

आधुनिक युग में दूरदर्शन का शिक्षण के क्षेत्र में व्यापक सफल प्रयोग हो रहा है । यह शिक्षण पद्धति बड़े एवं आर्थिक रूप से सम्पन्न विद्यालयों में ही सम्भव हो सकती हैं । जहाँ एक ही विषय की कई कक्षाएँ पृथक-पृथक कक्षों में चलती हों तथा विद्यालयों के पास दूरदर्शन कैमरे होते हैं । तब किसी एक कक्षा में एक अध्यापक विद्यार्थियों को पढाता है जिसका प्रसारण टेलिविजन कैमरों के माध्यम से अन्य कक्षाओं में किया जाता है जहाँ विद्यार्थी टेलिविजन के माध्यम से अध्ययन करते हैं । दूरस्थ शिक्षा कार्यक्रमों में इस पद्धति का सर्वाधिक उपयोग होता है ।

शिक्षण के लिए दूरदर्शन की अपनी विशिष्टता एवं उपादेयता है । सभी विषयों के शिक्षण में दूरदर्शन का प्रयोग बड़ी सरलता एवं सफलता के साथ किया जाता है । इसमें शिक्षण सिद्धान्तों, शैक्षिक संगठनों, शैक्षिक क्रियाकलापों पर वाद-विवाद चर्चा-परिचर्या उनकी कार्य प्रणाली का प्रदर्शन, अनेक भाषायी मुद्दों तथ्यों तथा प्रत्ययों का स्पष्टीकरण उच्च कोटि के विद्वानों तथा शिक्षकों के द्वारा सफलतापूर्वक किया जाता सकता है । दूरदर्शन के द्वारा जीवित चित्र (स्प्टम्), उद्योग, खनिजों, कृषि सम्पदा, ऐतिहासिक प्राकृतिक आदि के संबंध में चित्रमय विवरण प्रस्तुत कर शिक्षण को प्रभावी तथा मनोरंजन बनाया जाता है । दूरदर्शन शिक्षण पद्धति से शिक्षण में सरलता, प्रभावोत्वादकता तथा प्रेरणा प्राप्त होती है, इस पद्धति के माध्यम से बहुत बडी संख्या में विद्यार्थी एक साथ शिक्षण से लाभान्वित होते हैं । इसमें समय, श्रम और साधनों की बचत होती है ।

29 कम्प्यूटर शिक्षण पद्धति

लारेंस स्टोलुरो तथा डेमियल डेविज ने शिक्षण प्रतिमान का विकास किया, जिसमें शिक्षक के स्थान पर कम्प्यूटर को अनुदेशन के प्रस्तुतीकरण के लिए प्रयोग किया गया है । इस पद्धति में छात्रों को पूर्वज्ञान के आधार पर उनके अनुरूप शिक्षण विषय-वस्तु प्रस्तुत की जाती है और इसका नियंत्रण भी कम्प्यूटर द्वारा होता है, छात्रो को पुनर्बलन भी वही प्रदान करता है । यह एक सर्वथा नवीन पद्धति है तथा विद्यालयों में इसको प्रयोग करने हेतु निम्नलिखित साम्रगी उपलब्ध होना अनिवार्य है-

1. मल्टी मीडिया सुविधा युक्त कम्प्यूटर
2. स्पीकर
3. स्केनर
4. वेबकैमरा
5. प्रिंटर
6. इन्टर नेट सुविधा
7. विभिन्न प्रकरणों पर आधारित सी.डी
8. पर्याप्त मात्रा में खाली सी.डी.
9. भाषा एवं गणना संबंधी साफ्टवेयर

भाषा अध्ययन- शिक्षण के अन्तर्गत कम्प्यूटर शिक्षण में निम्नलिखित की आवश्यकता होती है-

1 विषय-वस्तु से संबंधित सूचनाकार्डों का संचय । लापी एवं सी.डी. में विषय वस्तुओं का संकलन।

2 प्रकरणों पर हर प्रकार की इन्टरनेट की सहायता ।

3 शिक्षक के पास अतिरिक्त सूचनाओं का संकलन आदि ।

30 भाषा प्रयोगशला- इकाई संख्या 12 में विस्तृत विवरण उपलब्ध है ।

5.3 अभ्यासार्थ-प्रश्न

1 शिक्षण पद्धतियों की आवश्यकता व महत्व पर प्रकाश डालिए ।

2 हिन्दी शिक्षण में कहानी-कथन पद्धति तथा विचार विनियम पद्धति का विशेषताओं पर अपने विचार व्यक्त कीजिए ।

3 प्रायोजना पद्धति की विशेषताओं की विवेचना करते हुए हिन्दी शिक्षण में इनकी उपयोगिता सिद्ध कीजिए ।

4 हिन्दी शिक्षण में कम्प्यूटर शिक्षण एवं दूरदर्शन के महत्व को स्पष्ट कीजिए ।

5.4 भाषायी कौशल

मानव समाज के लिए भावाभिव्यक्ति का सर्वश्रेष्ठ साधन भाषा है । व्यक्ति अपने विचारों को, शब्दों के माध्यम से बोलकर, सुनकर पढ़कर अथवा लिखकर, आंगिक संकेतों एवं कुछ ध्वनियाँ उत्पन्न करके प्रकट करता है । यही कारण है कि भाषा अध्यापन के अधिकांश उद्देश्य कौशलात्मक होते हैं । आरम्भिक कक्षाओं में भाषा अध्यापन का प्रमुख कार्य भाषायी कौशलों का विकास करना होता है । शनैः-शनैः जब ये कौशल विकसित होते हैं, तब भाषा संप्रेषण का प्रबल माध्यम बन जाती है ।

भाषा शिक्षक के लिए भाषायी कौशल, उनका स्वरूप उनका उपाय, तथा त्रुटियों के निवारण की विधियाँ जानना आवश्यक है । प्रस्तुत इकाई के अध्ययनोपरांत आप निम्नांकित उपलब्धियाँ अर्जित कर सकेंगे ।

उद्देश्य

1 भाषा सीखने में प्रयुक्त होने वाले प्रमुख कौशलों (सुनना, बोलना, पढ़ना, लिखना) का परिज्ञान ।

2 भाषायी कौशलों की विशेषताओं, प्रभावित होने वाले तत्वों एवं शिक्षण के महत्व का ज्ञान ।

3 भाषायी कौशलों को सीखने में होने वाली सामान्य त्रुटियों, उनकी पहचान तथा निवारण हेतु उपचारात्मक योजनाओं का बोध ।

4 भाषायी कौशलों का विकास करने में प्रयुक्त पद्धतियों का अभिज्ञान ।

5 भाषायी कौशल की अपेक्षित दक्षताओं का अवबोध ।

5.5 कौशलों की आवश्यकता

भाषा का मुख्य प्रयोजन संप्रेषण होता है । यह विचार करें कि संप्रेषण किस प्रकार होता है? वक्ता अपनी बात को कहना चाहता है । वह उपयुक्त शब्दावली युक्त वाक्य बोलकर वांछित संदेश प्रेषित करता है । दूसरी ओर संदेश को ग्रहण करने वाला सुनकर वक्ता की बात को समझ जाता है ।

भाषा विकास की दृष्टि से बोलना एक महत्त्वपूर्ण कौशल-माना जाता है ।

संदेश देने वाला तथा ग्रहण करने वाला इस संप्रेषण को लिखकर तथा पढ़कर भी संदेश का आदान-प्रदान कर सकते हैं । इस प्रकार भाषायी संप्रेषण के दो प्रमुख आयाम हुए- अपने कथ्य की अभिव्यक्ति तथा दूसरे के संप्रेषण कथ्य को समझना- ये दोनों आयाम दो रूपों में

क्रियान्वित होते हैं- सुनकर अथवा पढ़कर समझना तथा बोलकर अथवा लिखकर अभिव्यक्ति करना । अत: भाषायी कौशल चार प्रकार के हुए जो निम्नलिखित हैं:-

1 सुनना- सुनकर समझना- (श्रवण-कौशल)

2 बोलना-बोलकर समझना- अभिव्यक्ति करना (उच्चारण-कौशल)

3 पढ़ना- पढ़कर समझना- (पठन-कौशल)

4 लिखना- लिखकर समझना- (लेखन-कौशल)

कौशल - उपार्जन में अभ्यास तथा बार-बार आवृत्ति की प्रमुख भूमिका रहती है । इस कारण किसी भी कार्य में कौशल का प्रयोग करते समय व्यक्ति को अधिक मानसिक शक्ति की आवश्यकता नहीं रहती है- लेकिन कौशल यंत्रवत भी नहीं होता । कौशल की विशेषता यह है कि वह आदत बन जाती है । कौशल के प्रयोग करने में विशेष प्रयत्न की भी आवश्यकता नहीं होती है । कौशलों का प्रयोग करते-करते उनके विषय में नए ज्ञान की उदभावन्ना होती है । इन कौशलों को भली-भाँति अर्जित करने के लिए भाषायी तत्वों का अपेक्षित ज्ञान होना परम आवश्यक है: इसके अंतर्गत वर्तनी, उच्चारण शब्द ज्ञान, वाक्य रचना आदि का समावेश किया जाता है ।

5.6 सुनना-श्रवण कौशल

विकास भाषा सीखने में सुनना (श्रवण) कौशल का महत्वपूर्ण स्थान है । जन्म से ही अनेकानेक सार्थक एवं निरर्थक ध्वनियाँ बालक के कर्ण-यंत्रों को तरंगित करती रहती हैं और इन्हीं के अनुकरण से वह बोलना सीखता है । यदि सार्थक ध्वनियाँ बालक के कान में बार-बार न पड़े तो बालक गूंगा या बहरा रह जाए । विद्यालय में प्रवेश के पूर्व एक बालक मौखिक भाषा बहुत कुछ सीख जाता है । आरम्भिक कक्षाओं में बालक का 84 प्रतिशत समय सुनने में व्यतीत होता है । प्राथमिक कक्षाओं में यह प्रतिशत 58 प्रतिशत रह जाता है । परन्तु माध्यमिक कक्षाओं में सुनने का प्रतिशत पुन: बढ़ने लगता है । मनोवैज्ञानिक शोधों से ज्ञात हुआ कि हम पढ़कर सीखने की अपेक्षा सुनकर अधिक सीखते है । भारतीय छात्रों में विद्वानों के लिए "बहुश्रुत" शब्द का प्रयोग उसी कारण किया जाता है । भाषा विकास की दृष्टि से "बोलना" एक महत्वपूर्ण कौशल माना जाता है । किन्तु शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया में इस कौशल के विकास पर बहुत कम बल दिया जाता है । मानक भाषा बोलते समय बालक की अपनी बोली सबसे बड़ी रुकावट पैदा करती है । कतिपय अध्यापक भी हिन्दी भाषा पढ़ाते समय स्थानीय बोली का प्रयोग करते हैं । इसी कारण बालकों में मानक भाषा बोलने की अपेक्षित विकास में कठिनाई उत्पन्न हो जाती है ।

शुद्ध उच्चारण तथा स्वर की क्रियाएँ साथ-साथ में चल सकती है । वस्तुत: भाषा का प्रधान कौशल तो वाचन ही है तथा उच्चारण उसका एक कौशल है वाचन के दो रूप होते हैं - स्वरों के साथ वाचन, जिसे स्वर वाचन कहते हैं और दूसरा मुनि-वाचन जो केवल नेत्रों से किया जाता है । अत: इसे मौन पठन कहना उचित है । सस्वर वाचन के कुछ लक्षणों का विवेचन

उच्चारण के साथ होता है । बालाघात गति, यति, तथा, सुर का ध्यान सामान्य गद्य-पद्य के अतिरिक्त कविता, अभिनय, कहानी, गद्य, काव्य, आदि में भी रखना चाहिए ।

अपने संदेश को सुश्रवणीय बनाने के लिए विद्यार्थियों में सम्प्रेषणीय क्षमता का विकास होना आवश्यक है- स्पष्ट सम्प्रेषणीयता के कतिपय लक्षण निम्नलिखित हैं-

1 आत्म विश्वास के साथ बोलना या उच्चारण करना या वाचन करना ।

2 उचित स्वराघात व अनुतान

3 भावानुरूप स्वर की उच्चता एवं मंदता

4 विराम स्थलों का ध्यान, उचित यति व गति

5 प्रसंग एवं अवसर के अनुकूल वाणी में ओज, प्रसाद, तथा माधुर्य का समावेश

6 अर्थ तथा भावान्विति की दृष्टि से उचित शब्द-समूहों का स्पष्ट उच्चारण ।

श्रवण कौशल के साथ- साथ, चक्षु- प्रशिक्षण पर भी बल देना आवश्यक है । प्रारम्भिक अवस्था में श्रोत्रेन्द्रियों का विशेष महत्व है क्योंकि अनुकरण का आधार वही है । शिक्षण के संदर्भ में श्रवण- कौशल (सुनना) के अंतर्गत तीन प्रकार की शक्तियों का समावेश किया जाता है । (1) अंतर बोध शक्ति (2) धारणा शक्ति (3) बोधन शक्ति अत: कहा जा सकता है कि वक्ता की उच्चरित भाषा का श्रोता पर सक्रिय प्रभाव पड़ता है ।

5.6.1 श्रवण- कौशल के विकास के अपेक्षित व्यवहारगत - परिवर्तन

विद्यार्थियों को अच्छा श्रोता बनाना भी भाषा शिक्षण का एक महत्वपूर्ण उद्देश्य है, जिसकी अभी तक उपेक्षा होती रही हैं । एन. सी. ई. आर. टी. तथा माध्यमिक शिक्षा बोर्ड ने माध्यमिक कक्षाओं के बालकों में श्रवण (सुनना) संबंधी कौशल के विकास को निम्नलिखित अपेक्षित व्यवहारगत परिवर्तन के रूप में प्रस्तुत किया है ।

उद्देश्य- दूसरों द्वारा वर्णित या पठित सामग्री सुनकर अर्थ ग्रहण करने की योग्यता प्राप्त कराना ।

श्रुत कौशल। विकास संस्थितियाँ	अपेक्षित व्यवहारगत परिवर्तन
वार्तालाप	1. वह धैर्यपूर्वक सुनेगा ।
वाद-विवाद	2. वह सुनने के शिष्टाचार का पालन करेगा
प्रवचन	3.वह मनोयोगपूर्वक सुनेगा ।
भाषण	4. वह ग्रहणशीलता की मन: स्थिति बनाए रखेगा ।
आदेश-निर्देश कहानी- श्रवण	5. वह शब्दो, मुहावरों, लोकोक्तियों, उक्तियों का प्रसंगानुकूल अर्थ और भाव समझ सकेगा।
सस्वर वाचन	6. वह स्वराघात, बलाघात अनुसार अर्थग्रहण कर सकेगा ।
कविता पाठ	7. वह श्रुत सामग्री के विषय में जान सकेगा ।
आकाशवाणी से प्रसारित विभिन्न	8. वह महत्वपूर्ण विचारों, भावों एवं तथ्यों का चयन कर सकेगा । 9. वह विचारों, भावों एवं तथ्यों का परस्पर संबंध समझ सकेगा ।

कार्यक्रम	10. वह सारांश ग्रहण कर सकेगा । 11. वह वक्ता के मनोभावों को समझ सकेगा । 12. वह भावानुभूति कर सकेगा । 13. वह अभिव्यक्ति के ढंग को समझ सकेगा । 14. वह वक्ता के कथन में निहित व्यंग्य, विनोद आदि को समझ सकेगा।

5.6.2 श्रवण (सुनना) कौशल का विकास हेतु प्रयास

श्रवण कौशल के विकास हेतु अध्यापक के पूर्व नियोजित प्रयासों से विद्यार्थियों को अच्छा श्रोता बनाया जा सकता है । ये प्रयास निम्नलिखित है:-

(1) मौखिक कार्यों को प्रोत्साहन

श्रवण कौशल के विकास का प्रथम साधन कक्षा में अध्यापक का दृष्टिपात है कि विद्यार्थी मनोयोग कार्य कर रहा है अथवा नहीं । वह अच्छे श्रोता के शिष्टाचार का पालन कर रहा है अथवा नहीं? उक्त स्थितियों को प्रोत्साहन के लिए शिक्षक अपनी पैनी दृष्टि से विद्यार्थियों को उचित निर्देश दे सकता है ।

(2) कक्षा-कक्ष में स्वस्थ नियंत्रण

विद्यार्थियों के द्वारा श्रुत सामग्री का अर्थग्रहण की योग्यता का विकास करने के लिए अध्यापक को कक्षा में विभिन्न प्रकार के संबद्ध प्रश्न, विषय-वस्तु के विषय में विश्लेषणात्मक प्रश्न, विषय वस्तु में अंतर्निहित व्यंग्य, विनोद अथवा अनकहे कथन के विषय में प्रश्न आदि का सम्पादन करना चाहिए । भाषायी तत्वों के प्रभावों को हृदयंगम करवाने के लिए भी अध्यापक कक्षा में स्वराघात, बलाघात, ध्वनिभेद आदि के विषय में विद्यार्थियों का ध्यान आकृष्ट कर सकता है ।

(3) शैक्षिक क्रियाएँ

विद्यार्थियों में श्रवण कौशल विकास करने के लिए आप अनेक प्रकार की शैक्षिक क्रियाओं की भी आयोजना कर सकते हैं यथा:-

(i) विविध स्वरों तथा व्यंजनों की उच्चारण विधि तथा उच्चारण स्थान का ज्ञान प्रदान करना

(ii) विशिष्ट व्यंजन ध्वनियों यथा घोष-अघोष, अल्पप्राण, महाप्राण, ह्रस्व दीर्घ मात्रा आदि की स्थिति को सुनो का अभ्यास प्रदान करना ।

(iii) अध्यापक द्वारा सस्वर भावानुकूल वाचन करना तथा यथावसर कविता, नाटक, संवाद आदि को सुनना-सुनाना ।

(iv) विभिन्न मनोभावों हर्ष, क्रोध, आश्चर्य, घृणा, करुणा, व्यंग्य आदि से परिपूर्ण विषय सामग्री की कक्षा में यदा-कदा सुनाना ।

इसके अतिरिक्त अनेक पाठ्य सहगामी क्रियाएँ तथा नाटक, भाषण, वाद-विवाद, कविता पाठ, अंत्याक्षरी भी श्रवण कौशल का विकास करने में सहायक होते हैं । अध्यापक के रूप में आपका प्रयास होना चाहिए कि विद्यार्थियों का श्रवण-कौशल विकास सम्यक् विधि से हो ।

5.7 बोलना- वाचन तथा उच्चारण कौशल

मौखिक भाषा का दूसरा महत्वपूर्ण कौशल 'बोलना' अर्थात बोलकर अपने विचारों को अभिव्यक्त करना है । जब बोलकर कोई बात कही जाती है तो उच्चारण कौशल अनिवार्य हो जाता है । अर्थपूर्ण सम्प्रेषण करने के लिए बोलने की उचित गति, स्वर, बलाघात आग्रह आदि बातें भी आवश्यक होती हैं ।

5.7.1 बोलना-कौशल के विकास के उद्देश्य तथा अपेक्षित व्यवहारगत परिवर्तन

उद्देश्य - विद्यार्थी को शुद्ध बोलना या मानक शब्दों के प्रयोग में दक्षता प्राप्त कराना ।

वाक-कौशल संस्थितियाँ	**अपेक्षित व्यवहारगत परिवर्तन**
वार्तालाप	1. बालक सुश्रव्य वाणी मै बोल सकेगा ।
भाषण-प्रवचन	2. वह प्रसंगानुसार उचित गति से बोल सकेगा ।
वाद-विवाद	3. वह शुद्ध उच्चारण में बलाघात का ध्यान रखते हुए बोल सकेगा।
परिचर्चा	
कहानी कथन	4. वह उचित विराम के साथ बोल सकेगा
कविता पाठ	5. वह प्रवाह के साथ बोल सकेगा ।
आदेश-निर्देश	6. वह व्याकरण सम्मत एवं मानक भाषा का प्रयोग सकेगा ।
मार्क पार्लियामेंट का आयोजन	
रिपोतार्ज-प्रस्तुतीकरण	7. वह प्रसंगानुकूल, शब्दों, मुहावरों, लोकोक्तियों, सूक्तियों का चयन कर सकेगा ।
आशु-भाषण	8. वह शिष्टाचार का पालन करते हुए बोल सकेगा ।
प्रश्नोत्तर	9. वह उचित भाव-भंगिमा के साथ बोल सकेगा ।
शैक्षिक-यात्रा-वृत्तान्त	10. वह प्रसंग तथा विषय के अनुकूल शैली का चयन कर बोल सकेगा ।
विविध पाठ्य सहगामी क्रियाएँ	11. वह अनुकरण एवं पुनरावृति कर सकेगा।

5.7.2 बोलना-कौशल का विकास हेतु क्रिया-कलाप

मातृभाषा तो विद्यार्थी घर पर सीख लेते हैं किंतु विद्यालय का दायित्व उन्हें मानक भाषा बोलना सिखाना है । उन्हें मानक भाषा बोलना सिखाने के साथ-साथ उनकी भाषा पर बोली के प्रभाव को दूर करने में भी अध्यापक विशेष उत्तरदायी है । विद्यार्थी में इस कौशल का विकास करने तथा विकास करते समय आने वाली कठिनाइयों को दूर करने के लिए विद्यालय में निम्नलिखित क्रिया-कलाप सम्पन्न किए जा सकते हैं:-

(क) चित्र-वर्णन - परिचित वस्तुओं, कहानियों तथा घटनाओं के चित्र दिखाकर बालकों से कहें कि उनके विषय में अपनी भाषा में वर्णन करें । आप स्वयं भी चित्र पर आधारित प्रश्न पूछकर उनसे उत्तर निकलवाएँ ।

(ख) मौखिक वर्णन - विद्यार्थियों से परिचित तथा अपरिचित वस्तुओं, रोचक अनुभवों तथा घटनाओं, परिस्थितियों, पढ़ी और सुनी कहानियों को सरल तथा छोटे-छोटे वाक्य में वर्णन करने को कहें । प्राकृतिक दृश्य, त्यौहार, मेले, जयंती, उत्सव, प्रमुख राष्ट्रीय व्यक्ति घटनाएँ, मेच, मेरा स्कूल, से संबंधित अनेक विषयों का मौखिक वर्णन कराया जा सकता है ।

(ग) वार्तालाप एवं संवाद - कक्षा में सुनाये गए वार्तालाप के आधार पर दो-तीन विद्यार्थियों को अलग-अलग पात्रों की भूमिकाएँ बांट दें और उन्हें अपने-अपने संवाद बोलकर कक्षा में प्रस्तुत करने को कहें । टेपरेकार्डर पर वार्तालाप टेप कर लें और कक्षा में सुनाएं । सुनाने के पश्चात् दो-तीन विद्यार्थियों के बीच संवाद कराएं । किसी विषय को देकर विद्यार्थियों से उस पर वार्तालाप करने को भी कहा जा सकता है । उच्चारणगत दोषों का तत्काल निवारण करें

(घ) भाषण तथा वाद-विवार प्रतियोगिता - विद्यालय की साप्ताहिक बैठक, वार्षिक समारोह, बात-सभा आदि के अवसर पर किसी उपयोगी अथवा रोचक विषय पर भाषण तथा वाद-विवाद प्रतियोगिताओं का आयोजन करें तथा विद्यार्थियों को उसमें भाग लेने के लिए प्रोत्साहित करें ।

(ङ) अभिनय - पाठ्य-पुस्तक में आए किसी नाटक, एकांकी को चुनकर कक्षा में विभिन्न बालकों द्वारा उस एकांकी के पात्रों की भूमिका का अभिनय कराया जा सकता है ।

(च) कविता का सस्वर पाठ - बालकों से कविताओं को शुद्ध उच्चारण का ध्यान रखते हुए सुनाने को कहें । कविताओं के सामूहिक पाठ का आयोजन भी हो सकता है ।

(छ) पढ़ाई गई कविता, नाटक, कहानी, निबंध आदि पर प्रश्न पूछें । उत्तर देते समय बालकों के उच्चारण संबंधी त्रुटियों को नोट करें तथा बाद में उनको शुद्ध उच्चारण का अभ्यास कराएं

(ज) स्वयं (अध्यापक) का उच्चारण शुद्ध होना अत्यावश्यक है ।

(झ) ऐसे शब्दों के जोड़े बनाएं जिनकी ध्वनियों में बालक त्रुटि करते हैं । जैसे और-ओर, घोर-घोड़ा, साख-शाखा, बन-वन, हंस-हँस आदि ।

इस तरह के शब्दों का कक्षा में अभ्यास कराएं ।

वाक् कौशल विकास हेतु पाठ योजना का स्वरूप-

आवश्यकता होने पर आप कभी-कभी पृथक् से कक्षा ले सकते हैं । इसकी पाठ योजना अति संक्षिप्त होगी-

जिसके पाठ- संकेत निम्नलिखित होने चाहिए ।

(1) अभीष्ट उद्देश्यपूर्ति में सहायक प्रकरण का चयन ।

(2) जिस विशिष्ट कौशल का अभ्यास देंगे उसका स्पष्टीकरण ।

(3) मौखिक कार्य संबंधी नियमों, क्रिया विधि के विषय में स्पष्ट निर्देश- लेखन ।

(4) विद्यार्थियों द्वारा अनुप्रयुक्ति संवाद, अथवा भाषण आदि कार्यों का विवेचन तथा अभ्यास कार्य ।

(5) विद्यार्थियों के अभिव्यक्ति कौशल का समीक्षात्मक आलेख, त्रुटि- संशोधन तथा संशोधित कार्य आवृति ।

ध्यान देने योग्य बातें

(1) भाषा की शुद्धता- विद्यार्थी जिस भाषा का प्रयोग करे वह अर्थ, व्याकरण और उच्चारण की दृष्टीसे शुद्ध हो । उस पर विशेष ध्यान देना चाहिए । प्रारम्भिक कक्षाओं में यदि इस पर ध्यान न दिया तो बाद मे उच्चारण की गलती को सुधारना बहु त कठिन हो जाता है।

(2) प्रभावपूर्ण अभिव्यक्ति- विद्यार्थी अपनी बात को प्रभावी ढंग से व्यक्त करने में समर्थ हो सके, इसके लिए उनकी मौखिक अभिव्यक्ति में शिष्टता, व्यावहारिकता, अवसरानुकूलता, प्रवाह और स्वराघात जैसे गुणों का होना अपेक्षित है ।

मौखिक अभिव्यक्ति के अन्य कतिपय गुणों का भी विशेष ध्यान रखना चाहिए-

1 व्याकरणिक दृष्टि से वाक्यों की शुद्धता, आत्म विश्वास पूर्ण अभिव्यक्ति

2 व्यक्त विचारों की क्रम बद्धता

3 अभिव्यक्ति में गतिशीलता- रुक-रुक कर स्वयं को अभिव्यक्त करना वस्तुत: आत्म विश्वास के अभाव का परिचायक है ।

4 उपयुक्त शब्दावली का चयन, जिससे कि अभिव्यक्ति प्रभावोत्पादक प्रतीत हो ।

5 अभिव्यक्ति के समरूप स्वरानुकूलता- आप कक्षान्तर्गत अथवा पाठ्य सहगामी क्रियाओं के आयोजन के समय ऐसी परिस्थितियों की उद्भावना कर सकते हैं, जिससे विद्यार्थी परस्पर वार्तालाप, पाठ्य विषय विवेचना करते हु ए स्वयं को अभिव्यक्त कर सके। त्रुटि- संशोधन में आपकी भूमिका एक संवेदनशील पर्यवेक्षक की होनी चाहिए ।

5.8 पठन-कौशल- (पढ़कर समझना)

"पढ़ना" भाषा शिक्षण का व्यावहारिक रूप है । 'पठन' एक ऐसी क्रिया है, जिसमें प्रतीक, ध्वनि और अर्थ साथ-साथ चलते हैं । लिखित भाषा का अर्थ-ग्रहण करते हु ए पढ़ने की क्रिया को पठन कहते हैं । अर्थ-बोध पठन क्रिया को आवश्यक लक्षण है ।

इस दृष्टि से पठन के दो भेद है- 1 सस्वर पठन 2 मौन पठन ।

1 सस्वर पठन - लिखित भाषा के ध्वनि युक्त पठन को सस्वर पठन कहते हैं । सस्वर पठन की क्रिया में अर्थ- ग्रहण आवश्यक होता है । अर्थ ग्रहण की सीमा पठन कर्त्ता के ज्ञान व कौशल पर निर्भर करती है ।

2 मौन पठन - लिखित सामग्री को मन ही मन में शांतिपूर्वक बिना उच्चारण किए पठन को मौन पठन कहते हैं ।

मौखिक पठन भी दो प्रकार का होता हैं-

1。 व्यक्तिगत 2. सामूहिक पठन ।

कक्षा अध्ययन करते समय सर्वप्रथम अध्यापक द्वारा पाठ्य वस्तु का आदर्श पठन प्रस्तुत किया जाता है । जिसका अनुकरण करके विद्यार्थी- वर्ग, पाठ्य सामग्री का व्यक्तिगत रूप अथवा सामूहिक रूप से पठन करते हैं । उसको अनुकरण पठन कहा जाता है । समवेत पठन प्राय: प्राथमिक कक्षाओं में ही कराया जाता है । मौखिक पठन के आवश्यक तत्वों पर अध्यापक को ध्यान अवश्य रखना चाहिए यथा

1 विद्यार्थियों के द्वारा स्पष्ट अक्षरोच्चारण कराना ।

2 उचित रूप से खड़े होकर पठन क्रिया करना।

3 विद्यार्थियों के द्वारा उचित बलाघात, शुद्ध ध्वनि निर्गम, सुस्वरता तथा धैर्य के साथ पठन करना ।

अध्यापक का गद्य तथा पद्य के मौखिक पठन के अंतर को भी ध्यान में रखकर भाषा अभ्यास कराना चाहिए । गद्य पाठ में पठन का उद्देश्य स्पष्ट तथा शुद्ध शब्दोच्चारण, उचित ध्वनि निर्गम तथा विराम चिहों का ध्यान रखते हुए अर्थ बोध कराना होता है । लेकिन पद्य पाठ के पठन का मूल उद्देश्य स्पष्ट यति, गति, शुद्ध स्वराघात, बलाघात के साथ पठन करते हुए विद्यार्थियों के द्वारा भावग्रहण करते हुए रसानुभूति की प्रक्रिया सम्पन्न करानी होती है ।

5.8.1 पठन कौशल के अपेक्षित व्यवहारगत- परिवर्तन एवं उद्देश्य

उद्देश्य- पठन सामग्री से सस्वर व मौन पठन की योग्यता प्राप्त कराना ।

पठन सामग्री	**व्यवहारगत परिवर्तन**
गद्यात्मक साहित्य, पुस्तक	1 विद्यार्थी धैर्यपूर्वक पढ़ेगा । शब्द एवं सुक्ति भण्डार में वृद्धि करेगा ।
पद्यात्मक साहित्य	2 मनोयोग पूर्वक पढ़ेगा । अध्ययन के प्रति रुचि उत्पन्न करेगा ।
नाटक चित्र कथाएँ	3 वह ग्रहणशीलता की स्थिति बनाए रखेगा । विविध लेखन शैलियों से परिचित होगा ।
एकांकी, संवाद रिपोर्ताज	4 शुद्ध उच्चारण व उचित स्वराघात, बलाघात व स्वर के उतार- चढ़ाव के साथ (सस्वर वाचन) करता हुआ पढ़ेगा ।
कहानी यात्रा- वृत्तांत व कथाऐं	5 वह विराम चिह्नों का समुचित ध्यान रखते हुए सस्वर वाचन कर सकेगा।

रेखाचित्र	6 वह विषयानुसार गति पूर्वक पढ़ते हुए केन्द्रिय भाव ग्रहण कर सकेगा ।
आत्म कथाएँ उपन्यास	7 वह प्रसंगानुसार उचित गति, और ध्वनि के साथ वाचन कर सकेगा ।
आलोचना मासिक, पाक्षिक पत्रिकाएँ	8 विद्यार्थी कविता पाठ करते समय भावानुरूप सस्वर वाचन कर रसानुभुति कर सकेगा ।
समाचार पत्र (दैनिक)	9 विद्यार्थी लयपूर्वक वाचन कर सकेगा ।
पाण्डुलिपियाँ	10 विद्यार्थी समुचित रूप से पठित सामग्री का विश्लेषण कर उसका मूल्यांकन कर सकेगा ।
प्रकृति, वर्णन, व्यंग्य, संस्मरण	11 विद्यार्थी अपनी भाषा, साहित्य, देश के प्रति आदर का भाव विकसित कर सकेगा ।

सस्वर वाचन (मौखिक पठन) और मौन पठन-दोनों का उद्देश्य विद्यार्थियों के द्वारा लिखित साम्रगी का अर्थग्रहण तथा भावानुभूति करना है । मौखिक पठन में स्वर की प्रधानता रहती है तथा मौन पठन उच्चारण के अभाव में सम्पन्न होता है । शिक्षण उद्देश्य समान होते हैं । तथा व्यवहारगत-परिवर्तन में केवल पठन प्रक्रिया के अनुरूप अंतर आ जाता है । कविता शिक्षण में मौन पठन की कोई आवश्यकता नहीं । गद्य पाठों में मौन पठन अनिवार्यत:सम्पन्न होना चाहिए । वैसे भी व्यावहारिक जीवन में विद्यार्थियों को सस्वर वाचन की अपेक्षा मौन पठन की अधिक आवश्यकता होती है । उनको स्वाध्याय की प्रवृति के समुचित विकास के लिए भी मौन पठन का अभ्यास करना अपरिहार्य है ।

पठन कौशल के विकास में सामान्यत: विद्यार्थियों को जो कठिनाई सामने आती है, उन पर अध्यापक को विशेष ध्यान देना चाहिए । कतिपय कठिनाइयाँ निम्नलिखित हैं-

1 कम प्रचलित वर्णों और संयुक्ताक्षर शब्द को अशुद्ध उच्चारण के साथ पढ़ना ।
2 मिलती-जुलती आकृति वाले वर्णों में विभेद न कर सकता । जैसे-ज-ज्ञ, ड-ड़, व-ब, ट-ढ ढ़, म-म,प-फ, क-फ आदि ।
3 अटक-अटक कर पढ़ना व अक्षरों को छोड कर पढना आदि ।

5.8.2 पठन-कौशल विकास हेतु क्रिया कलाप

पढ़ना एक कला है और कौशल भी, उसमें पारंगत होने के लिए अधिक से अधिक अभ्यास की आवश्यकता है । जितना अधिक अभ्यास होगा, उतनी ही पठन कुशलता आएगी । पढ़ने की सफलता इस बात में है कि विद्यार्थी पढ़कर स्वयं अर्थग्रहण करले ।

पठन कौशल विकास हेतु निम्नलिखित क्रियाकलाप हैं-

1 आदर्श पठन- विद्यार्थी के पठन में सुधार लाने के लिए आदर्श पठन का विशेष महत्व है। गद्य पाठ और कविता का पाठ करते समय आप स्वयं शुद्ध उच्चारण प्रभावपूर्ण और उचित हावभाव के साथ पठन करें ।

2 अनुकरण पाठ- आदर्श पठन के पश्चात तीन-चार विद्यार्थियों से यथा विधि-पाठ पढ़वाये।

3 उच्चारण में संशोधन- बालकों के सस्वर वाचन के समय होने वाली अशुद्धियों पर ध्यान रखें और बाद में उनमें संसोधन करें । उनको पढ़ते समय न टोके । सामान्य रूप में पाई जाने वाली उच्चारण संबधी अशुद्धियों को वर्गीकृत करके सूची बद्ध करें तथा उनका सामूहिक रूप से उच्चारण अभ्यास कराएं । (शुद्ध उच्चारण संबंधी "भाषा-शिक्षण" पर बनी फिल्म का प्रयोग करें)

4 अभ्यास कार्य- (1) जिन वर्णों की आकृति में विद्यार्थी विभेद नहीं कर पाते उनसे बनने वालें शब्दो की सूची बनाएं- उन्हें बार-बार पढ़वायें और उनके अर्थ के अंतर की ओर भी ध्यान दिलाएँ जैसे धन-घना (ध-घ) भरना-मरना, (भ-म) (वन-बन), (व-ब), सड़क, डमरू(ड़-ड) आदि । (2) ध्वनि में समान शब्दों के जोड़ों को साथ-साथ पढ़ना, सिखाएँ, यथा (कल-खल), (पल-फल), (चल-जल), (लोट-लौटा), (मोरा-सोरा) आदि । (3) विद्यार्थियों को पाठ्यपुस्तक के अतिरिक्त समाचार-पत्र के अंश और पत्र-पत्रिकाओं से चयन की गई कहानियाँ, सरल गद्यांश, बाल-गीत, कविताएँ, निबंध आदि को शुद्ध उच्चारण तथा प्रवाह के साथ पढ़ने के अवसर दें । (4) बाल गीतों तथा कविताओं को लय, हाव भाव तथा भाव के अनुरूप पढ़ने का अभ्यास कराएं । (5) अर्थग्रहण करते हुए पढ़ने की क्षमता विकसित करने के लिए पठित सामग्री पर बोध प्रश्न पूछें । (6) शब्द-कोश देखने का अभ्यास कराएं । अनुच्छेद, कहानी, संवाद या वर्णन आदि पढ़ते समय बालकों को जो शब्द अर्थ की दृष्टि से कठिन लगे, उन्हें श्याम पट्ट पर लिखें । फिर एक-एक शब्द लेकर उसके पहले वर्ण के अंतर्गत शब्द कोश में वह शब्द और उसका अर्थ ढूँढ़ने का अभ्यास कराएं । (गद्य पाठ के पठन के लिए "भाषा-शिक्षण" पर बनी फिल्म का प्रयोग करें)

ध्यान देने योग्य बातें -

विद्यार्थियों में पढ़ने के कौशल विकसित करते समय निम्नलिखित बातों पर ध्यान देना चाहिए ।

1 विद्यार्थी को आत्मविश्वास के साथ निःसंकोच पढ़ने के अवसर प्रदान करना ।

2 प्रसंग तथा अवसरनुकूल स्वर में ओजस्विता और माधुर्य का समावेश ।

3 शुद्ध व स्पष्ट उच्चारण पर विशेष ध्यान देना ।

4 उचित यति, गति से पढ़ने में प्रवृत्त होना ।

5 भावाभिव्यक्ति की स्पष्टता, उचित मुद्रा व भावभगीमा के साथ पढ़ने पर विशेष ध्यान।

6 सन्दर्भ पुस्तकों को पढ़ते रहने का अभ्यास, कठिन शब्दों के अर्थ-स्पष्टीकरण हेतु कोश का उपयोग आदि ।

5.9 लेखन-कौशल - लिखना-लिखकर समझना

लेखन-कौशल अनेक अर्थों में मौखिक अभिव्यक्ति कौशल से कहीं अधिक प्रभावशाली होता है । वैसे भी लिखित भाषा ही मौखिक अभिव्यक्ति को परिमार्जित कर उसे स्थायीत्व प्रदान करती है । मानव-समाज के व्यावहारिक जीवन में यद्यपि मौखिक भाषा का अधिक प्रयोग किया जाता है तथापि यह ध्रुवसत्य है कि मानव समाज के सभी प्रकार के कार्यों को संरक्षित करने में लिखित भाषा की ही आवश्यकता रहती है । अत: भाषा शिक्षण द्वारा विद्यार्थियों के लेखन-कौशल का विकास करना अत्यावश्यक है ।

एक अध्यापक के रूप में आपके लिए यह स्मरण रखना आवश्यक है कि भाषा का मूल स्वरूप मौखिक होता है, लेकिन जब आप अपने भाव व विचारों को लिखकर व्यक्त करते हैं, तब मौखिक अभिव्यक्ति से भिन्न कुछ अन्य कौशलों की आवश्यकता होती है । प्रत्येक भाषा की उच्चरित ध्वनियों को कतिपय चिन्ह-विशेषों से आवृत किया गया है- इन चिह्न विशेषों को उस भाषा की लिपि कहा जाता है-और लिखने की दृष्टि से सर्वप्रथम 1 -लिपि का ज्ञान होना आवश्यक है 2-द्वितीय स्तर पर शब्द ज्ञान तथा 3- तृतीय स्तर पर वाक्य रचना का ज्ञान - लिखित भाषा के ये तीन मूल तत्व है । लेखन-कौशल के विकास के लिए विद्यार्थियों को अनेकानेक ऐसे अभ्यास दिए जाएँ, जिनमें वे वर्णो के लिए प्रयुक्त शुद्ध लिपि चिह्नों को ही लिखें, शब्दों को भी उनके शुद्ध रूप में लिखें तथा व्याकरण के नियमों का पालन करते हुए ही वाक्य रचना करें । हिन्दी के विद्यार्थियों को एक विशेष सुविधा यह भी है कि हिन्दी में वर्णो और उनकी ध्वनि में साम्य है, जिसके कारण उच्चारण तथा वर्तनी के मध्य भी घनिष्ठ सहसंबंध है । अत: वाक्-कौशल की शुद्धता तथा दक्षता का प्रभाव लेखन कौशल पर भी पड़ना स्वाभाविक है । लिखित अभिव्यक्ति में वर्तनीगत शुद्धता के साथ-साथ उपयुक्त शब्दों का प्रयोग, शुद्ध वाक्य संरचना, विराम चिह्नों का सही प्रयोग, विचारों की क्रमबद्धता, प्रवाह तथा प्रांजलता, आवश्यकतानुसार अनुच्छेदीकरण विषयानुकूल भाषा शैली, लोकोक्तियों तथा मुहावरों का प्रासंगिक उपयोग आदि तत्त्व भी महत्वपूर्ण होते हैं । "लेख" का स्पष्ट व सुन्दर होना आवश्यक है । प्रारम्भिक कक्षाओं में अनुलेख, प्रतिलेख तथा श्रुतलेख की आवश्यकता रहती है । उच्च माध्यमिक कक्षाओं में भी सुलेख तथा शुद्ध वर्तनी पर ध्यान अवश्य देना चाहिए ।

5.9.1 **लेखन-कौशल के विकास के उद्देश्य तथा अपेक्षित व्यवहार परिवर्तन-**

उद्देश्य-विद्यार्थियों को अपने भावों, विचारों की लिखित रूप से अभिव्यक्त करने में दक्ष करना ।

लेखन संस्थितियाँ	अपेक्षित व्यवहार गत परिवर्तन
औपचारिक-पत्र, प्रार्थना- पत्र	1 विद्यार्थी सुपाठ्य लेख लिख सकेगा ।
अनौपचारिक- आवेदन-पत्र	2 वह प्रसंगानुसार आवश्यक गति से लिख सकेगा ।

व्यावसायिक-पत्र	3	वह शब्दों की शुद्ध वर्तनी लिख सकेगा ।
निबंध लेखन	4	वह विराम चिह्नों का यथोचित प्रयोग कर सकेगा ।
डायरी लेखन	5	वह लेखन कार्य में अनुच्छेद रचना ठीक प्रकार से कर सकेगा।
जीवन चरित्र आत्म कथा	6	वह व्याकरण सम्मत शुद्ध भाषा का प्रयोग कर सकेगा ।
संवाद-लेखन अनुच्छेद-लेखन कथोपकथन-लेखन समाचार-लेखन	7	वह प्रसंगानुसार शब्दों मुहावरों, लोकोक्तियों तथा सूक्तियों का चयन कर लिख सकेगा ।
अपठित- गद्यांश लेखन,कहानी लेखन	8	वह प्रसंगानुसार शब्दों, मुहावरों, लोकोक्तियों तथा सूक्तियों का शुद्ध प्रयोग कर सकेगा ।
सारांश- लेखन प्रतिवेदन लेखन	9	वह वाक्यों में शब्दों, वाक्यांशों तथा वाक्यों का क्रम अर्थानुकूल रख सकेगा ।
शैक्षिक यात्रा-वृतान्त सृजनात्मक- लेखन संस्मरण	10	वह वाक्यों में क्रमबद्धता तथा सुसबद्धता ला सकेगा ।
	11	वह भाषा की दृष्टि से अभिव्यक्ति में संक्षिप्तता ला सकेगा
	12	वह लिखित अभिव्यक्ति के विभिन्न रूपों के माध्यम से स्वयं को व्यक्त कर सकेगा ।
विज्ञप्ति लेखन	13	विद्यार्थी संक्षेपीकरण, विस्तारीकरण, प्रासंगिकता का ध्यान रख सकेगा ।
विस्तृतीकरण	14	वह विषय तथा अभिव्यक्ति के रूप में अनुकूल शैली का प्रयोग कर सकेगा ।
संक्षेपीकरण	15	वह लिखित अभिव्यक्ति के विभिन्न रूपों व शिल्प का विधिवत पालन कर सकेगा ।
	16	वह विषय वस्तु को प्रभावशाली ढंग से अभिव्यक्त कर सकेगा ।
	17	वह विषय तथा उसके अन्तर्गत निहित भावों एवं विचारों के लिए साहित्य की उपयुक्त विधा का चयन कर सकेगा ।
	18	विद्यार्थी अपने भाव विचार व अनुभवों के आधार पर सृजनात्मक लेखन में प्रवृत्त हो सकेगा ।

5.9.2 लेखन-कौशल विकास हेतु प्रस्तावित क्रिया कलाप

लेखन कौशल- विकास के लिए वर्तनी शुद्धता, लिपि का सही ज्ञान, उच्चारण की शुद्धता और व्याकरणीय रूपों का पूर्ण शान होना चाहिए । इसके लिए निम्नलिखित क्रियाकलापों की व्यवस्था की जानी चाहिए-

1 आरम्भिक स्थिति में लिखना सिखाने से पहले विद्यार्थियों को सीधी, आड़ी, तिरछी और गोलकार रेखाएं खींचने का अभ्यास करना आवश्यक है । हाथ और पैंसिल पर नियंत्रण हो जाने के बाद लिखना सिखाना चाहिए फिर विद्यार्थी को क्रमश: साम्यवर्ण, संयुक्ताक्षर, एवं लेखन का अभ्यास कराएं । लेखनी को बाएं से दाएं चलाने का अभ्यास कराएं । देवनागरी लिपि के चार रेखाओं वाली अभ्यास पुस्तिका का प्रयोग किया जा सकता है । (प्राथमिक कक्षाओं के लिए)

2 विद्यार्थियों को सुलेख और श्रुतलेख का अभ्यास बार-बार कराएं । सुलेख कराते समय वर्णों और शब्दों की आकृति की सुडौलता पर ध्यान रखना चाहिए ।

3 वर्तनी संबंधी अशुद्धता दूर करने के लिए कुछ अभ्यास कराएं जा सकते है । श्रुत लेख के बाद बालकों की त्रुटियों को ज्ञात कर शुद्ध रूप को श्याम पट्ट पर लिखें प्रत्येक शब्द तीन से पांच बार शुद्ध उच्चारण करवाएं और अपनी अभ्यास पुस्तिका में शुद्ध रूप लिखने को कहें ।

4 व्याकरण संबंधी नियमों की जानकारी के अभाव में भी वर्तनी की अशुद्धियाँ होती है । अत: उनके शुद्ध रूप से अभ्यास कराएं यथा (1) बहुवचन करते समय "ई", 'ऊ' की मात्रा का ह्रस्व होना जैसे नदी सें नदियाँ- भालू से भालुओं, का अभ्यास (2) संधि या संधिविच्छेद कराये, जिसमें स्वर तथा व्यंजन सभी प्रकार के अभ्यास हों जैसे अन् अधिकार त्र अनधिकार, विद्या आलय त्र विद्यालय

5 अधिक प्रयोग में आने वाले विराम चिह्नों से परिचित करवाकर उनका प्रयोग करना सिखाए ।

श्रुत लेख के लिए पूर्ण विराम (।) अल्पविराम (,) प्रश्नवाचक (?) अर्थात् विराम चिह्नों की जानकारी अवश्य कराएं ।

6 अनुस्वार, चन्द्रबिन्दु, आनुनासिक हलंत के प्रयोग संबंधी अभ्यास विशेष रूप से कराएं । वर्तनी की दृष्टि से इनकी सबसे अधिक अपेक्षा की जाती है ।

7 निबंध पत्र अनुच्छेद आदि लिखवाये और उनमें पाई गई त्रुटियों का संशोधन करें । फिर संशोधित रूप की ओर बालकों का ध्यान दिलायें और उनसे पुन: लिखने का अभ्यास करवायें ।

8 बालकों के लिखित कार्यों में पाई गई त्रुटियों को बताकर उसे बालक से स्वंय शुद्ध करने को कहें ।

9 यदि शब्द कोश या अन्य सहायक सामग्री उपलब्ध नहीं है तो बालकों की कॉपी में ही पृष्ठ के नीचे कुछ खाली स्थान छुड़वा दिए जाएं, बालक लिखे गए अशुद्ध शब्दों को खाली स्थान पर पुन: लिखें । अशुद्धियों को पाँच-पाँच बार लिखने को कहें ।

ध्यान देने योग्य बाते

"लिखनी" कौशल का विकास करते समय निम्नलिखित बातों पर ध्यान अवश्य देना चाहिए ।

1 वर्णों की सुडौलता पर बालकों का ध्यान आकृष्ट करें ।

2 शब्दों में वर्णों के बीच की दूरी और वाक्यों में शब्दों के बीच की दूरी की समानता पर ध्यान दे ।

3 स्वयं शुद्ध उच्चारण करें और बालकों के शुद्ध उच्चारण पर बल देवें ।

4 जिन- वर्णों, संयुक्ताक्षरों और शब्दों में विशेष रूप से बालक अशुद्धि करते हैं उन्हीं वर्णों, संयुक्ताक्षरों और शब्दों के सुधार हेतु उपचारात्मक शिक्षण की व्यवस्था करें ।

5 बालकों की अशुद्धियों को शात करने के लिये निदानात्मक परीक्षण देकर उनको शुद्ध करने के लिऐ अधिगम क्रियाएँ आयोजित की जानी चाहिए ।

6 बालकों को इस कौशल के विकास की दशा में होने वाली उनकी प्रगति से अवगत कराऐं।

5.10 सारांश

प्रस्तुत इकाई में विभिन्न शिक्षण पद्धतियों एवं उपागमों पर प्रकाश डालते हुए भाषायी कौशलों के विकास में इनके प्रासगिक उपयोग के सम्बन्ध में आवश्यक विवेचना की गई है । हिन्दी अध्यापन में प्रयुक्त शिक्षण पद्धतियाँ अध्यापन प्रक्रिया को गत्यात्मक एवं स्थिरात्मक लक्ष्य की प्राप्ति के लिए तथा विद्यार्थियों के ज्ञान में अभिवृद्धि करने एवं उनकी चिन्तन क्रिया को प्रोत्साहित करने हेतु भी आवश्यक है ।

भाषायी कौशलों में भाषा के चार कौशल प्रमुख हैं - सुनकर अर्थ ग्रहण करना, बोलकर अर्थग्रहण करना पढ़कर अर्थग्रहण और लिखकर अर्थग्रहण करना । इन चार प्रमुख कौशलों के अन्तर्गत कुछ उपकौशल हैं, जिन्हें निम्नांकित चार्ट द्वारा प्रस्तुत किया जा सकता हैं ।

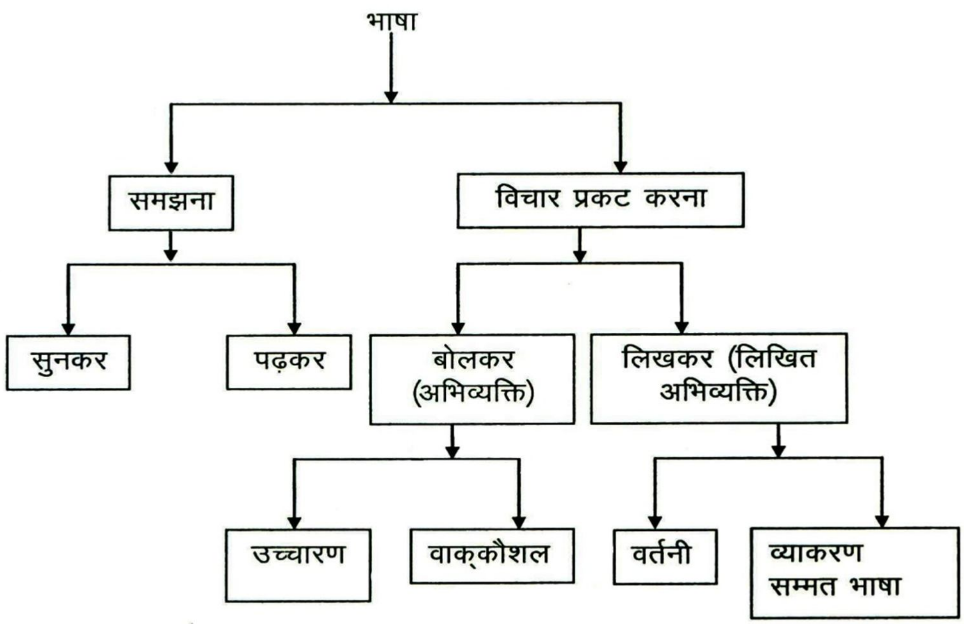

भाषायी कौशलों के उद्देश्य, अपेक्षित व्यवहारगत परिवर्तन तथा कौशल विकास हेतु प्रस्तावित क्रियाकलापों की भी प्रस्तुत पाठ में पर्याप्त विवेचना की गई है ।

5.11 अभ्यासार्थ प्रश्न

1 भाषा - शिक्षण की दृष्टि से प्रोजेक्ट पद्धति के योगदान पर विचार कीजिए ।

2 निर्दिष्ट कार्य पद्धति एवं निरीक्षित स्वाध्याय पद्धति की भाषा शिक्षण में क्या उपयोगिता है? स्पष्ट कीजिए ।

3 "शिक्षण पद्धति मौलिक रूप से अधिगम संरचना की आधार शिला है" इस कथन की पुष्टि कीजिए?

4 "मौन पठन जीवन पर्यन्त चलने वाली प्रक्रिया है व्यक्तिगत जीवन में आनन्द एवं उपयोगिता दोनों की दृष्टि से मौन पठन सफल साधन है" उदाहरण सहित स्पष्ट कीजिए ।

5 लेखन - कौशल विकास के अपेक्षित व्यवहारगत परिवर्तन हेतु कक्षान्तर्गत स्थितियों का विवरण प्रस्तुत कीजिए ।

5.12 अध्ययनार्थ संदर्भ पुस्तकें

1. कौशिक, जयनारायण : 'हिन्दी शिक्षण' चंडीगढ़, हरियाणा साहित्य अकादमी चंडीगढ़ 1987
2. वर्मा, रामचन्द्र : 'अच्छी हिन्दी' लोकभारती प्रकाशन 1974 इलाहबाद, उ प्र.
3. बाहरी, हरदेव : 'शुद्ध हिन्दी' लोकभारती प्रकाशन 1965 इलाहबाद- उत्तर प्रदेश
4. सिंह, निरंजन कुमार : "माध्यमिक विद्यालयों में हिन्दी- शिक्षण" राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी जयपुर, 1994
5. पाण्डेय, (डॉ.) रामशकल : 'नूतन हिन्दी शिक्षण', विनोद पुस्तक मन्दिर आगरा - 2
6. अग्रवाल, (डॉ.) एस. : 'हिन्दी शिक्षण', स्वाति पब्लिकेशन, जयपुर।

इकाई - 6
"संचार माध्यम और हिन्दी शिक्षण में इनका अनुप्रयोग"
(Media and media integration)

इकाई की रूपरेखा

6.0 भूमिका तथा उद्देश्य

6.1 संचार माध्यम - अभिधेयार्थ

6.2 संचार माध्यम के प्रकार

6.2.1 समन्वित माध्यम की प्रमुखता

6.3 अभ्यासार्थ प्रश्न

6.4 संचार माध्यम तथा शिक्षण अधिगम

6.5 हिन्दी शिक्षण और माध्यम प्रयोग

6.6 विभिन्न माध्यम तथा भाषायी दक्षता विकास

6.6.1 भाषा शिक्षण व मुद्रित माध्यम

6.6.2 भाषा शिक्षण व श्रव्य माध्यम

6.6.3 भाषा शिक्षण व श्रव्य-दृश्य माध्यम

6.7 अभ्यासार्थ प्रश्न

6.8 कम्प्यूटर आधारित सम्प्रेषण माध्यम तथा भाषा शिक्षण

6.8.1 इन्टरनेट

6.8.2 हिन्दी और वेब

6.8.3 हिन्दी सीखने के अन्य कार्यक्रम

6.8.4 ई-मेल

6.8.5 हिन्दी सर्चइन्जिन

6.8.6 जिस्ट शैल

6.8.7 टेलिकोन्फ्रेन्सिंग

6.8.8 इलेक्ट्रोनिक पुस्तकें

6.9 सूचना और सम्प्रेषण प्रौद्योगिकी तथा भाषा शिक्षण

6.9.1 इनसेट, एजूसेट

6.9.2 बहु विधमाध्यम

6.10 सारांश

6.11 अभ्यासार्थ प्रश्न

6.12 अध्ययन हेतु सन्दर्भ पुस्तक सूची

6.0 भूमिका एवं उद्देश्य

संचार-साधनों के उद्भव, विकास व विस्तार का मूल कारण प्रत्येक व्यक्ति, समाज अथवा राष्ट्र के द्वारा स्वयं अपने आदर्शों, लक्ष्यों, मूल्यों व उद्देश्यों को मानवहित के लिए श्रेष्ठतर समझते हुए उनका प्रचार व प्रसार करने की प्रवृत्ति है । इसके माध्यम से व्यक्ति की सम्प्रेषणीयता को भी अपरिमित आयाम उपलब्ध हो जाते हैं ।

बीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध से ही विज्ञान व प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में तीव्रगामी प्रगति ने इस नैसर्गिक सम्प्रेषण शक्ति को अनेक सामाजिक सरोकारों तथा साधनों से संपृक्त कर दिया है। परिणामत: सूचना प्रौद्योगिकी के द्वारा वर्तमान में न केवल सूचनाओं का संग्रहण, सम्पादन, प्रसारण व विश्लेषण किया जाता है अपितु नवीन सार्थक सामाजिक-शैक्षिक सम्प्रत्ययों व उद्देश्यों की सम्प्राप्ति हेतु जन चेतना जागत करने के लिए जनमत भी तैयार किया जाता है।

ये संचार साधन अन्यान्य नवीन व्यावसायिक उत्पादों के विज्ञापन करने, मनोरंजक प्रवृत्तियों के प्रकाशन तथा ज्ञान-विज्ञान के क्षेत्र की अनेकानेक उपलब्धियों के प्रभावी प्रदर्शन में भी अत्यधिक सफल रहते हैं ।

दृश्य-श्रव्य उपकरणों के समन्वित रूप संचार साधनों के विविध माध्यमों के द्वारा प्रसारित समस्त कार्यक्रम बाल-वृद्ध सहित समस्त जन मानस को गहराई से प्रभावित करते हैं । भारत जैसे विशाल भूभाग व एक अरब की जनसंख्या वाले देश में सभी के लिए सार्वजनिक शिक्षा, स्वास्थ्य व अन्य कल्याणकारी कार्यक्रमों की व्यवस्था हेतु आधुनिक संचार साधन अत्यधिक महत्त्वपूर्ण सिद्ध हुए हैं।

इस इकाई पाठ के अध्ययनोपरान्त आप निम्नलिखित उपलब्धियाँ अर्जित करेंगे ।

1 संचार माध्यम के अभिधेयार्थ स्पष्ट हो सकेंगे ।

2 संचार माध्यम के विभिन्न प्रकारों का जान प्राप्त कर सकेंगे ।

3 शिक्षण और अधिगम में संचार माध्यम की भूमिका का अभिज्ञान कर सकेंगे ।

4 हिन्दी शिक्षण व अधिगम में विभिन्न माध्यमों की उपयोगिता का प्रत्यभिज्ञान कर सकेंगे।

5 हिन्दी शिक्षण व अधिगम हेतु विकसित माध्यमों के सम्बन्ध में आवश्यक ज्ञान प्राप्त कर अपने शिक्षण में उनका प्रयोग कर सकेंगे ।

6.1 संचार माध्यम के अभिधेयार्थ

सूचनाएँ संप्रेषित करने के लिए जो भी साधन प्रयुक्त किए जाते हैं वे संचार माध्यम कहलाते हैं । अंग्रेजी में इसके लिए मास मीडिया (डें डमकपं) शब्द का प्रयोग किया जाता है जिसका तात्पर्य आक्सफोर्ड एडवान्लर्नर्स डिक्शनरी के अनुसार "विशाल समूह से सम्पर्क करने का एक माध्यम है ।"

सामान्य जन समुदाय के प्रत्येक क्षेत्र से संबंधित आवश्यक तथा उसे प्रभावित करने व ज्ञान प्रदान करने में संचार माध्यमों का विशेष योगदान है । इनके द्वारा विभिन्न प्रकार के मनोरंजक कार्यक्रम, संदेश, विज्ञापन, समाचार और सूचनाएँ संप्रेषित की जाती हैं ।

मीडिया या माध्यम द्वारा सूचनाओं को सार्वजनिक करने का उपक्रम सर्वप्रथम सन् 1921 में न्यूयार्क में प्रारम्भ किया गया । इस प्रक्रिया में जिन माध्यमों द्वारा जिन विषयों या क्षेत्रों से संबंधित सूचनाएँ प्रसारित की गई वे उन्हीं नामों से प्रचलित हो गई । कतिपय विषय-क्षेत्र निम्नलिखित हैं:-

- विज्ञापन माध्यम. ....
- राजनीति माध्यम
- मार्केटिंग माध्यम ....
- शिक्षा माध्यम... ....
- पब्लिक रिलेशन्स
- जर्नलिज़्म
- लोक सेवा घोषणा
- समर्थन
- आम राय
- आन्दोलन
- खेल
- प्रचार आदि ।

इन माध्यमों के द्वारा प्रसारित कार्यक्रम सामाजिक सरोकारों से घनिष्ठता से आबद्ध थे। ज्ञान को सरल और सुलभ विधि से प्रस्तुत करने में ये माध्यम पर्याप्त सफल रहे ।

6.2 संचार माध्यमों के प्रकार

उन्नीसवीं शताब्दी तक सूचना संप्रेषण के मुख्य साधन समाचार पत्र व पत्रिकाएँ प्रचलित थी । तदनन्तर विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में तीव्रगति से सम्पन्न प्रगति के परिणामस्वरूप आज विभिन्न माध्यमों द्वारा सूचना प्रसारित करने में प्रतिस्पर्धा बनी हुई है । वर्तमान में सूचना संप्रेषण हेतु तीन मुद्रित, अमुद्रित और समन्वित माध्यमों का प्रचुरता से उपयोग किया जा रहा है। मुद्रित माध्यम के अन्तर्गत समाचार-पत्र व पत्रिकाएँ होती हैं, अमुद्रित माध्यम जैसे कम्प्यूटर है तथा समन्वित माध्यम यथा-दूरदर्शन, फिल्म आदि माने जाते हैं । वैसे कम्प्यूटर पर भी समन्वित माध्यम की सुविधाएँ उपलब्ध हैं । तकनीकी क्षेत्र में नित्य नूतन प्रगति के परिणाम स्वरूप वर्तमान में समन्वित माध्यम अर्थात् दृश्य-श्रव्य माध्यमों का प्रयोग ही अधिक किया जाने लगा है

निम्नलिखित सारिणी में इन माध्यमों को वर्गीकृतरूप से प्रस्तुत किया गया है:-

माध्यमों के प्रकार

(1) **श्रव्य**

रेडियो
टेपरिकोर्डर
श्रव्य केसेट
ओडियो टेप
ग्रामोफोन

(2) **दृश्य**

समाचार पत्र
पत्रिकाएँ
दूरदर्शन
वीडियो केसेट
कम्प्यूटर
फिल्म

(3) **श्रव्य–दृश्य**

दूरदर्शन
चलचित्र
कम्प्यूटर
वीडियो केसेट
इन्टरनेट
वेब साइट
ई–मेल
ई–पुस्तकें
ई–पुस्तकालय
ई–यूनिवर्सिटी
आई.टी.
आई.सी.टी.
एजूसेट
मल्टीमीडिया

ये सभी माध्यम सामान्य प्रयोग के साथ ही शिक्षा में भी अत्यन्त उपयोगी सिद्ध होते है। शिक्षण क्रिया को सफल, सजीव, सुग्राहय और प्रभावी बनाने के लिए, नवीन ज्ञान भाव, एवं विचारों के स्वरूप को प्रत्यक्ष, स्पष्ट और मूर्त रूप देने की आवश्यकता की पूर्ति हेतु इन माध्यमों विशेषत: समन्वित माध्यम का प्रसंगानुकूल उपयोग किया जाता है ।

6.2.1 समन्वित माध्यम की प्रमुखता के कारण

शिक्षण के सम्यक् नियोजन के लिए सर्वाधिक उपयोगी माध्यम का चयन करना चाहिए। अत: वर्तमान में शिक्षण- अधिगम को अपेक्षाकृत अधिक रुचिकर और सुगम बनाने के लिए दृश्य माध्यमों के साथ श्रव्य माध्यमों का भी समन्वय आवश्यक समझा जाने लगा है । समन्वित माध्यम व्यक्तिगत सम्पर्क की कमी को भी पूरा करते हैं । शिक्षण-अधिगम में आवश्यकताओं, उद्देश्यों, साधनों, पाठ्यवस्तु तथा अन्य स्थितियों की दृष्टि से यह माध्यम बहुत लाभप्रद सिद्ध हुआ है ।

समन्वित माध्यम की विशेषताएँ व सन्निहित लाभ

समन्वित माध्यम में 60 से 80 प्रतिशत सामग्री दृश्य साधन तथा 20 से 40 प्रतिशत सामग्री श्रव्य साधनों की प्रयुक्त की जाती है । इससे अधोलिखित लाभ प्राप्त होते हैं-

1 समन्वित माध्यम से शिक्षण की विविधता की पूर्ति होती है ।

2 इनमें दृश्य और श्रव्य दोनों माध्यम एक दूसरे के पूरक बनते हैं ।

3 इसमें विभिन्न माध्यम एक-दूसरे के सहायक होते हैं और सहायक प्रणाली दूरवर्ती शिक्षा में सहयोगी होती है ।

4 विषय-वस्तु के अनुसार किसी माध्यम को अधिक या कम प्रयुक्त किया जा सकता है ।

5 समन्वित माध्यम में सभी माध्यम साथ होते हुए भी स्वतंत्र होते हैं । किसी एक माध्यम को पृथक् रूप में भी प्रयुक्त किया जा सकता है ।

6 समन्वित माध्यम को विद्यार्थी शिक्षण की एक विशिष्ट विधि के समान अनुभव करते हैं।

7 इस माध्यम से शिक्षण व अधिगम आनन्ददायी हो जाता है ।

विद्यार्थियों की एकाधिक इन्द्रियों को एक साथ क्रियाशील बनाएँ रखने के कारण दृश्य-श्रव्य माध्यमों का यह समन्वित रूप उनकी प्रभावी अधिगम क्रिया की वृद्धि में विशेष सहायक होता है क्योंकि इन माध्यमों के द्वारा विद्यार्थियों को अभीष्ट ज्ञान अनुरंजन के साथ प्रदान करने की पर्याप्त सुविधा रहती है ।

6.3 अभ्यासार्थ-प्रश्न

1 संचार माध्यम का प्रयोग किन आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु किया जाता है? स्पष्ट कीजिए ।

2 वर्तमान में कितने प्रकार के माध्यम प्रयुक्त किए जाते हैं और क्यों? विचार व्यक्त कीजिए ।

3 समन्वित माध्यम की किन्ही पाँच विशेषताओं का उल्लेख कीजिए ।

6.4 संचार माध्यम तथा शिक्षण-अधिगम

शिक्षण-अधिगम परिस्थितियों के सम्यक् विकास की प्रक्रिया में शिक्षण विधियाँ तथा माध्यम दोनों ही समान रूप से महत्वपूर्ण होते हैं । शिक्षण विधियाँ पाठ्यवस्तु के प्रस्तुतीकरण हेतु प्रयुक्त की जाती हैं तथा पाठ्यवस्तु को कक्षा-शिक्षण और दूरवर्ती शिक्षण के लिए प्रभावी रूप से सम्प्रेषित करने के लिए विभिन्न माध्यमों का सार्थक उपयोग किया जाता है । विभिन्न माध्यमों के द्वारा शिक्षक, शिक्षाक्रम और शिक्षार्थियों के बीच का अन्तराल कम करने का प्रयास किया जाता है । जो विद्यार्थी औपचारिक शिक्षा ग्रहण करने में असमर्थ होते है उन तक ये माध्यम सामान्य सम्प्रेषण द्वारा ज्ञान पहुँचाने का प्रयास करते हैं । माध्यम से विद्यार्थियों के

घर तक शिक्षा पहुँचाने का प्रयास किया जाता है । दूरस्थ-शिक्षा के प्राय: सभी कार्य एवं प्रवृतियाँ इन संचार माध्यमों से प्रभावित ही नहीं, आधारित भी हैं ।

6.5 हिन्दी शिक्षण और संचार माध्यम प्रयोग

यह निर्विवाद सत्य है कि विभिन्न संचार माध्यमों के द्वारा सूचनाओं के सम्प्रेषण में जितना विस्तार तथ्यों का होता है उससे कहीं अधिक भाषा का होता है । भाषा विचार विनिमय का सर्वाधिक प्रभावी साधन है, क्योंकि इसी के द्वारा कोई एक व्यक्ति अपने भाव, व्यवहार-प्रतिक्रियाएँ अथवा अनुभव व्यक्त करता है । भाषा वस्तुत: एक सामाजिक प्रक्रिया है जिसका अर्जन किया जाता है ।

भाषार्जन निम्नांकित चार कौशलों पर आधारित होता है -

1. सुनना
2. बोलना
3. पढ़ना
4. लिखना

प्रत्येक माध्यम में भाषा के मौखिक तथा लिखित रूप प्रयुक्त किए जाते हैं । हिन्दी शिक्षण में विविध माध्यमों का प्रयोग करते समय उपर्युक्त चारों कौशलों के विकास का ध्यान रखना आवश्यक है ।

अन्यान्य कारणों से हिन्दी का प्रचार-प्रसार भारत के साथ-साथ विदेशों में भी अबाधगति से हो रहा है । हिन्दी के इस प्रयोजनमूलक रूप के निरन्तर विस्तार में संचार माध्यमों के द्वारा प्रसारणों की महत्वपूर्ण भूमिका है । प्रसारणों में हिन्दी व्याकरण तथा हिन्दी वाक्य विन्यास की दृष्टि से कतिपय त्रुटियों का निवारण प्रभावी हिन्दी शिक्षण के द्वारा किया जा सकता है ।

मुद्रित, अमुद्रित तथा समन्वित सभी माध्यमों के द्वारा हिन्दी भाषा शिक्षण किया जा रहा है जो विद्यार्थियों में चारों कौशलों के विकास में सहायक सिद्ध हो रहा है । श्रवण कौशल का विकास रेडियो, टेपरिकॉर्डर आदि से किया जाता है । पठन कौशल के विकास में समाचार पत्र, पत्रिकाएँ कम्प्यूटर आदि माध्यम हैं तथा समन्वित माध्यम इन दोनों कौशलों के साथ भाषण कौशल का विकास करने में भी सक्षम होते हैं । लेखन कौशल को विकसित करने में ये सभी माध्यम प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से सहायक होते हैं ।

6.6 विभिन्न माध्यम और भाषायी दक्षता विकास

हिन्दी की दक्षता-प्राप्ति हेतु विभिन्न माध्यमों की उपयोगिता निम्नलिखित है :-

6.6.1 भाषा शिक्षण व मुद्रित माध्यम

(1) समाचार-पत्र

समाचार-पत्र सर्वाधिक लोकप्रिय और प्रभावशाली संचार माध्यम है । इसे समकालीन साहित्य भी कहा जाता है । समाचार पत्र का प्रथम प्रकाशन 1605 में हुआ था । समाचार पत्र में समाचार, सूचनाएँ, विज्ञापन, लेख, मनोरंजन तथा अन्य स्थानीय सामाजिक, प्रादेशिक,

राजनीतिक, शैक्षिक, राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय सूचनाएँ प्रकाशित व प्रसारित की जाती हैं । विविध प्रकार की ज्ञानवर्धक सामग्री निम्नांकित प्रकार के समाचार पत्रों से जन-जन तक पहुँचती है :-

- दैनिक समाचार-पत्र
- साप्ताहिक समाचार-पत्र
- स्थानीय समाचार-पत्र
- राष्ट्रीय समाचार-पत्र
- अन्तर्राष्ट्रीय समाचार-पत्र
- ओन लाईन समाचार-पत्र; इत्यादि ।

बीसवीं शताब्दी में संचार माध्यमों में सम्पन्न क्रांति ने समाचार पत्रों के अस्तित्व को जबरदस्त चुनौती दी हैं । इसके परिणामस्वरूप परम्परागत रूप से प्रकाशित होने वाले समाचार पत्रों का स्थान तीव्रता से परिवर्तित होने लगा है । इलेक्ट्रोनिक मीडिया व द्रुत गति से परिवर्तित तकनीक के परिणाम स्वरूप अब विभिन्न माध्यमों पर आनलाईन समाचार भी पढ़े व सुने जा सकते हैं ।

शिक्षा की दृष्टि से समाचार पत्र न केवल सूचना प्रदान करते है अपितु ज्ञानार्जन भी कराते है । प्रतिदिन समाचार पढ़ते हुए पाठक इसके इतने अधिक अभ्यस्त हो जाते हैं कि समाचार पत्र उनके वाचन-पठन की दैनन्दिन क्रिया हो जाती है ।

जन साधारण को शिक्षित करने के कर्त्तव्य-निर्वहन के साथ-साथ समाचार पत्रों के द्वारा विद्यार्थी-वर्ग पठन योग्यता के विकास में आत्मनिर्भरता की वृद्धि करते हुए निम्नांकित उपलब्धियाँ भी प्राप्त करता है-

1 वांछित व उपयुक्त विषय-वस्तु को ढूँढ़ना ।
2 वांछित व उपयुक्त विषय-वस्तु को पढ़कर अर्थग्रहण करना ।
3 विभिन्न प्रकार के शब्दों के प्रयोग जानना ।
4 वाक्यों की भिन्न संरचनाएँ पढ़ना ।
5 अभिधा, लक्षणा और व्यंजना के अनेकानेक उदाहरण पढ़ना व समझना ।
6 विविध विषयों पर समीक्षात्मक अभिव्यक्ति से परिचित होना ।
7 विस्तृत वार्ता का संक्षिप्तीकरण करना सीखना ।
8 स्पष्टीकरण के पक्षों को जानना, इत्यादि ।

विद्यार्थियों की भाषायी दक्षता वृद्धि के साथ-साथ समाचार-पत्र उन्हें सामाजिक संदर्भों, मानवाधिकारों तथा जागरूक नागरिक के गुणों से भी परिचित कराते हैं ।

(2) पत्रिकाएँ

प्रकाशित की जाने वाली कहानियों, निबंधों, कविताओं तथा समालोचनाओं आदि के संग्रह को पत्रिका कहा जाता है । इनका प्रकाशन सामान्यत: साप्ताहिक, मासिक, त्रैमासिक, छः मासिक एवं वार्षिक अन्तराल में किया जाता है । वार्षिक पत्रिकाएँ केवल विशिष्ट पाठकों, वर्गों अथवा समाजों को लक्षित करके प्रकाशित की जाती है । भाषा विशेष से संबंधी पत्रिकाएँ भाषा ज्ञान व साहित्य ज्ञान में समसामयिक विकास व परिवर्तन से विद्यार्थियों को अवगत कराती हैं साथ ही उस भाषा के परिवर्धित रूप से विद्यार्थियों की भाषायी क्षमता व दक्षता को सशक्त

और प्रासंगिक बनाने में सहायता प्रदान करती है । पत्रिकाएँ भाषायी कौशलों में पठनावबोध की वृद्धि के साथ सृजनात्मक अभिव्यक्ति के विकास का मार्ग भी प्रशस्त करती है ।

6.6.2 भाषा शिक्षण व श्रव्य माध्यम

(1) रेडियो

हिन्दी शिक्षण-अधिगम की परिस्थितियों के विकास में रेडियो एक बड़ी संख्या के लिए सरलता से उपलब्ध होने वाला माध्यम है । सर्वमान्य भाषा का प्रयोग करने वाला रेडियो न केवल श्रवण कौशल विकसित करने का माध्यम है अपितु मौखिक अभिव्यक्ति विकसित करने का भी एक लोकप्रिय माध्यम है ।

भारत में 23 जुलाई 1927 को लार्ड इरविन द्वारा बम्बई में प्रथम रेडियो स्टेशन का उद्घाटन किया गया । इसके पश्चात् अखिल भारतीय स्तर पर साक्षरता-प्रसार, स्वास्थ्य-रक्षा, कृषि-उन्नति, प्रौद्योगिक प्रगति आदि से सम्बन्धित अनेक विषयों पर प्रसारण प्रारंभ किए- सन् व 1970 से भाषा-शिक्षण को विशेष रूप से प्रसारित करने की व्यवस्था की गई । राजस्थान में भी बीसवीं शताब्दी के आठवें दशक में प्राथमिक विद्यालयों के 500 विद्यार्थियों को आकाशवाणी प्रसारणों से हिन्दी सिखाई गई जिसमें पर्याप्त सफलता प्राप्त हुई।

रेडियो पर साहित्य की प्राय: सभी विधाओं से संबंधित कार्यक्रम प्रसारित किए जाते हैं:

1. समाचार	2. कहानी	3. नाटक
4. परिचर्चा	5. कविता	6. व्याख्यान
7. उपदेश	8. अन्त्याक्षरी	9. समीक्षा
10. विश्लेषण	11. प्रश्नोत्तरी	12. संवाद
13. संस्मरण	14. यात्रावृत्तांत	15. पशु-पक्षियों की वाणी
16. व्यंग्य	17. विविध प्राकृतिक ध्वनियाँ (हवा, पानी, वर्षा, पत्ते आदि)	

उपर्युक्त सभी प्रसारणों का श्रवण करके विद्यार्थी अपनी भाषिक अभिव्यक्ति विकास की दिशा में निम्नलिखित उपल अब्धियाँ अर्जित करते हैं

इससे विद्यार्थियों के श्रवण-कौशल तथा लेखन कला के विकास के लिए पर्याप्त औपचारिक-अनौपचारिक अवसर प्राप्त होते हैं यथा -

1 विद्यार्थी रेडियो पर हिन्दी के वर्णों की ध्वनियाँ सुन कर उनके सही उच्चारण को सीखते हैं ।

2 शब्दों की विविध संरचनाओं की आवृत्तियों को सुनकर उनके विविध संदर्भों में विविध अर्थों को ग्रहण करते है ।

3 विविध प्रकार के वाक्यों की संरचनाओं सुनते हैं और उनके सामाजिक, राजनीतिक, शैक्षिक आदि विविध संदर्भों में प्रयोग और संप्रेषण के तरीकों को सीखते हैं ।

4 वाक्यों को आरोहावरोह तथा बलाघातपूर्वक प्रयोग सुनकर उनके विविध अर्थों को समझने का प्रयास करते हैं । स्वयं भी तदनुसार बोलने की चेष्टा करते है ।

5 हिन्दी की विभिन्न विधाओं से परिचित होते हैं तथा उनमें निहित विचार को ग्रहण कर लेखबद्ध करते हैं ।

6 सुने गए वृत्तान्त के सारांश की मौखिक व लिखित अभिव्यक्ति करते हैं । एकाग्र हो कर सुनने की क्षमता का विकास करते हैं ।

7 सुनी गई ध्वनियों को मुद्रित विषय-वस्तु से तुलना करते हैं ।

8 सुने गए वृत्तान्त पर पूछे गए प्रश्नों के मौखिक व लिखित उत्तर देते है ।

(2) टेप रिकोर्डर के द्वारा श्रवण-कौशल के विकास

श्रव्य माध्यम में श्रव्य कसेट का भाषा शिक्षण में महत्त्वपूर्ण स्थान है । इसमें रिकोर्ड किए गए हिन्दी भाषा संबंधी विभिन्न पाठों, संवादों, वार्ताओं आदि को बार-बार सुना जा सकता है । उच्चारण शुद्ध करने हेतु व्यक्तिगत अभ्यास के लिए यह एक बहुत उपयोगी माध्यम है । टेप रिकोर्डर की शैक्षिक उपयोगिता निम्नांकित है:-

1 हिन्दी भाषा की कठिन व मिश्रित ध्वनियों को बारबार सुन सकते हैं और स्पष्ट व शुद्ध उच्चारण सीख सकते है ।

2 अध्यापक टेप रिकार्डर द्वारा विषय-वस्तु सुनाकर उस पर अवबोध के प्रश्न पूछ सकता है ।

3 कोई गीत, कविता या दोहे सुनाकर उन पर रसानुभूति के प्रश्न पूछे जा सकते है ।

4 छात्र रिकार्ड की गई किसी भी विषय-वस्तु को सुनते हुए उसका लेखन कर सकते हैं । (श्रुतलेख)

5 छात्र टेप रिकोर्डर के साथ-साथ लिखित विषय-वस्तु का वाचन कर सकते हैं ।

6 छात्र स्वयं अपनी आवाज में शब्दों, कथनों व संवादों तथा अन्य किसी भी विषय-वस्तु को रिकोर्ड करके पुन: सुन सकते हैं तथा संशोधन हेतु अभ्यास कर सकते है ।

7 छात्र हिन्दी के विभिन्न कार्यक्रमों को रिकोर्ड करके पुन: सुन सकते हैं ।

8 श्रवण कौशल विकास के साथ-साथ टेप रिकोर्डर से पठन दक्षता को भी विकसित कर सकते हैं ।

6.6.3 "भाषा शिक्षण व श्रव्य-दृश्य माध्यम"

1 चलचित्र तथा भाषा शिक्षण

'चलचित्र' श्रव्य-दृश्य शिक्षण का एक सशक्त माध्यम है । फिल्म के माध्यम से कठिन से कठिन शिक्षण इकाइयों को वास्तविक रूप से स्पष्ट किया जा सकता है । विद्यार्थियों को कुशल शिक्षण में प्रेरित करने मदद करेगा । इससे विषय-वस्तु तीव्रता से संप्रेषित की जा सकती है । किसी भी विषय-वस्तु के अनेक रूप होते हैं जिनमें से तीन प्रमुख घटक निम्नलिखित हैं-

1 विषय-वस्तु तथा उसकी संरचना

2 संप्रेषण पद्धति

3 श्रोता की ग्रहण शक्ति

फिल्मों के संदर्भ में इन तीनों का सफलतापूर्वक क्रियान्वयन किया जाता है ।

चलचित्र दृश्यात्मक होते है और ये उन्हीं सिद्धांतों से संप्रेषण करते हैं जिनका उपयोग भाषा करती है । जिस प्रकार लिखित भाषा इन कोडिंग और डिकोडिंग की सहायता से लेखक और पाठक के बीच सामंजस्य स्थापित करती है उसी प्रकार चलत्रित भी निर्माता और दर्शक को अनुभव के एक धरातल पर खड़ा करते हैं ।

शैक्षिक चलचित्रों में प्राकृतिक स्थान, ऐतिहासिक घटनाएँ, राजनीतिक गतिविधि, सामाजिक संदर्भ, संस्कृति, पर्व, त्योहार परम्पराएँ आदि से संबंधित विषय-वस्तु प्रदर्शित की जाती है ।

- जो चलचित्र शिक्षात्मक होता है वह ज्ञानवर्द्धन पर बल देता है ।
- जो चलचित्र प्रेरणात्मक होता है वह व्यक्तिगत मूल्यों और अभिवृत्तियों को प्रभावित करता है ।
- जो चलचित्र प्रदर्शनात्मक होता है, वह कौशल प्रयोग पर बल देता है ।

दृश्य-श्रव्य माध्यम

1 भाषा शिक्षण में चलचित्र की उपयोगिता

चलचित्रों से दृश्य साक्षरता का विकास होता है । दृश्य साक्षरता भी शाब्दिक साक्षरता के समान है, जिसमें पढ़कर अर्थ को समझा जाता है । जिस प्रकार भाषण में शब्द, व्याकरण और संरचना होती है उसी प्रकार चित्रों की भी होती है । केवल दृश्य ही किसी चित्र का सम्पूर्ण अर्थ नहीं समझा सकता । इसके लिए संवाद या स्क्रीन-अंकित वाक्यों की आवश्यकता भी होती है । चित्रों से अर्थ निकालकर उनका वर्गीकरण करना बौद्धिक क्षमता पर आधारित होता है । विद्यार्थियों के बौद्धिक या मानसिक विकास हेतु पियाजे के सिद्धांत का अनुसरण करना चाहिए तथा विद्यार्थियों के सामाजिक व सांस्कृतिक वातावरण को ध्यान में रखकर ही चलचित्रों का चुनाव किया जाना चाहिए ।

चलचित्र कम पढ़ने की क्षमता वाले छात्रों के लिए विशेष रूप से उपयोगी रहता है, क्योंकि इनमें चित्र और शब्दों के सहयोग से संप्रेषण किया जाता है । विद्यार्थियों के लिए इस माध्यम का प्रयोग व्यक्तिगत व सामूहिक दोनों रूपों में किया जा सकता है । शोधों से यह भी सिद्ध हो चुका है कि चलचित्रों के माध्यम से न केवल भाषिक दक्षता का विकास होता है अपितु विद्यार्थियों में चारित्रिक उदात्त गुणों के विकास का भी मार्ग प्रशस्त होता है ।

2 दूरदर्शन

दूरदर्शन संप्रेषण और प्रसारण का प्रमुख साधन है । तकनीकी दृष्टि से यह दृश्य और श्रव्य दोनों से युक्त होता है । भारत में 15 सितम्बर 1959 को दिल्ली में दूरदर्शन के आगमन के साथ ही एक सप्ताह के अंतर्गत ही शैक्षिक और विकासोन्मुखी कार्यक्रम प्रदर्शित किए जाने लगे। शैक्षिक दूरदर्शन परियोजनाओं में निम्नांकित प्रमुख हैं:-

(1) माध्यमिक स्कूल दूरदर्शन

(2) दिल्ली कृषि दूरदर्शन

(3) सेटेलाइट इन्स्ट्रक्शनल दूरदर्शन प्रयोग

(4) पोस्ट साइट परियोजना

(5) इंडियन नेशनल सेटेलाइट (इन्सैट)

(6) हायर एजुकेशन दूरदर्शन परियोजना

(7) इनके अतिरिक्त दूरदर्शन के अन्य प्रसारित कार्यक्रमों से भाषिक-संप्रेषण वृद्धि की जा सकती है- यथा

मौखिक अभिव्यक्ति विकास हेतु

(अ) एकाकी वार्ता

इस प्रकार के कार्यक्रम में केवल एक व्यक्ति वक्ता के रूप में प्रस्तुत होता है इसमें प्राय: समाचार विशेष सूचना, अध्यापन या मनोरंजन के लिए व्यक्ति विशेष द्वारा कार्यक्रम प्रस्तुत किया जाता है । इनकी अभिव्यक्ति में प्रयुक्त शब्दावली, कथन, कथनों में आरोहावरोह बलाघात प्रवाहिता भावभंगिमा आदि से दर्शक संप्रेषण कौशल के तत्वों से परिचित होते है ।

(ब) वार्तालाप- द्वारा संवाद क्षमता व आत्मविश्वास का विकास

यह दो व्यक्तियों के बीच के संवाद को प्रस्तुत करता है । इसमें जनसाधारण संबंधी कोई समस्या, शैक्षिक सूचना या साक्षात्कार संबंधी विषय-वस्तु प्रस्तुत की जाती है । किसी विषय पर अपनी राय देना, प्रश्न करना या उत्तर देने संबंधी अभिव्यक्ति कौशल के लिए यह कार्यक्रम शिक्षार्थियों के लिए बहुत ही उपयोगी होता है क्योंकि भाषा का प्रयोग मूलरूप से वार्तालाप (संवाद) द्वारा ही किया जाता है । किसी भी संस्थिति में दो या दो से अधिक लोग परस्पर संवादों से ही विचारों का आदान-प्रदान करते हैं । इस दृष्टि से ऐसे कार्यक्रम संवाद प्रशिक्षण के मानकीकृत माध्यम हो सकते हैं ।

(स) साक्षात्कार- नियन्त्रित व संयमित रूप से अभिव्यक्ति-कौशल विकास

साक्षात्कार में कम से कम दो व्यक्तियों की आवश्यकता होती है । इसके द्वारा किसी उच्च एवं प्रतिभाशाली या प्रसिद्ध व्यक्तित्व का वैचारिक दृष्टिकोण प्रस्तुत किया जाता है । इसमें साक्षात्कार कर्त्ता तथा साक्षात्कार देनेवाला दोनों को धैर्यपूर्वक संयत, उपयुक्त और सुगम्य भाषा का प्रयोग करना होता है । साक्षात्कार से विद्यार्थी सार्वजनिक अभिव्यक्ति के दिशा-निर्देशों के संबंध में आवश्यक ज्ञान प्राप्त करते है कि पूर्णत: नियन्त्रित रहकर, संतुलित, शुद्ध, स्पष्ट प्रवाहपूर्ण और उचित भावभंगिमा के साथ अपनी बात को संप्रेषित कैसे किया जाता है?

(द) विशेषज्ञ समिति (पेनलचर्चा) समालोचनात्मक दृष्टिकोण व तार्किक चिन्तन हेतु प्रयुक्त भाषिक-कौशल विकास

इस प्रकार के प्रारूप में विशेषज्ञ समिति के सदस्य अपने विषय में उपलब्ध विरोधी प्रकरणों पर चर्चा करते है । इस समिति में चर्चा हेतु विभिन्न दृष्टिकोणों वाले व्यक्तियों का चयन किया जाता है । इसमें पूर्व निर्धारित प्रकरण हो भी सकता है और नहीं भी । इसे सुनने व देखने से विद्यार्थी की चिन्तन शक्ति का विकास होता है । भाषायी दृष्टि से शिक्षार्थियों में समीक्षात्मक दक्षता का विकास होता है जिसमें वे तथ्य-प्रस्तुतीकरण के लिए उदाहरण देना, व्याख्या करना, तुलना करना, अपने मत की पुष्टि करना, स्पष्ट करना, निष्कर्ष निकालना आदि प्रक्रियाएँ सीखते हैं ।

(इ) रंगमंच के द्वारा भाषिक कौशल विकास

नाटक मनोरंजन के साथ-साथ, राष्ट्रीय, सामाजिक व सांस्कृतिक मूल्यों के संरक्षण तथा विकास के प्रभावी साधन हैं । नाटक साहित्य की सबसे रुचिकर व महत्वपूर्ण विधा है । दूरदर्शन पर विद्यार्थी जब कोई धारावाहिक देखता है तो संवादों के माध्यम से नए शब्द, वाक्य संयोजन, विभिन्न संदर्भ में विभिन्न शब्दों के प्रयोग तथा पात्रों के हाव-भाव और अभिनय से बाक्-कौशल सीखते हैं । रामायण, महाभारत, भारत एक खोज तथा अन्य कई ऐसे नाटक हैं जिन्हें देखकर बालकों की व्यावहारिक शब्दावली में कई कठिन शब्द सम्मिलित हुए । जैसे- भ्राताश्री, आज्ञा माते, पिताश्री, कष्ट, अनुमति, अनुज, प्रणाम आदि ।

एक भाषा शिक्षक दूरदर्शन पर प्रसारित विविध कार्यक्रमों के द्वारा विद्यार्थियों की निम्नांकित भाषायी दक्षताओं का विकास कर सकता है । जैसे-

1 कार्यक्रम के नाम के आधार पर कथानक का अनुमान से लेखन ।
2 किसी कार्यक्रम का परिचयात्मक विवेचन ।
3 विभिन्न पात्रों की चारित्रिक विशेषताओं का उल्लेख करते हुए समालोचना-लेखन ।
4 देखे गए कार्यक्रम में प्रयुक्त शब्दों का संकलन व सूची बनाना ।
5 विविध शैक्षिक कार्यक्रमों की प्रश्नोत्तर-प्रणाली के द्वारा समीक्षा करना ।

इस समय दूरदर्शन पर न केवल भारतीय अपितु विश्वस्तर पर हिन्दी भाषा में तैयार किए गए कार्यक्रमों का प्रसारण किया जाता है । अमेरिका में आकाशवाणी और दूरदर्शन पर लगभग पचास कार्यक्रम हिन्दी में प्रसारित किए जाते है । भारत में शैक्षिक कार्यक्रम विशेष रूप से ज्ञानवाणी, ज्ञानदर्शन महर्षि चैनल, आस्था, डी. डी. वन, और टू आदि चैनलों पर प्रसारित हो रहे हैं जिनमें भाषा-लालित्य का पूर्ण ध्यान रखा जाता है- हिन्दी भाषा अधिगम की दृष्टि से यह महत्त्वपूर्ण वातावरण की सृष्टि करता है ।

6.7 अभ्यासार्थ-प्रश्न

1 भाषायी कौशल क्या हैं तथा उनके विकास में विभिन्न माध्यमों की क्या उपयोगिता है? सोदाहरण प्रकाश डालिए ।
2 "रेडियो जैसे श्रव्य-उपकरण भाषा शिक्षण में प्रभावी भूमिका का निर्वाह करते है" कथन पर अपने विचार व्यक्त कीजिए।
3 दूरदर्शन भाषा शिक्षण का एक माध्यम क्यों माना जाता है? स्पष्ट कीजिए।
4 हिन्दी शिक्षण में समाचार-पत्र एवं पत्रिकाओं की उपयोगिता सिद्ध करते हुए विचार व्यक्त कीजिए।

6.8 कम्प्यूटर - आधारित संप्रेषण माध्यम व भाषिक योग्यता विकास

दृश्य-श्रव्य माध्यम का सर्वश्रेष्ठ समन्वित रूप कम्प्यूटर से आज कोई भी अपरिचित नहीं है। इस माध्यम ने शिक्षण व अधिगम की दुनिया में अपना आश्चर्यजनक वर्चस्व स्थापित किया है। भाषा के शिक्षण में यह भाषा चारों कौशलों के विकास में अपना महत्त्वपूर्ण योगदान

देने का सामर्थ्य रखता है। भाषा शिक्षण के लिए कम्प्यूटर एक अत्याधुनिक तकनीक का सशक्त माध्यम है जिससे एक अध्यापक अपने शिक्षण को प्रभावी बना सकता है। अमेरिका के इलियन्स विश्व विद्यालय के प्रो. डगलस मिलन के अनुसार कम्प्यूटर दो प्रकार का अभ्यास करवाता है-

1. यांत्रिक अभ्यास
2. अर्थपूर्ण अभ्यास

यांत्रिक अभ्यास में निम्नांकित क्रियाएँ की जाती हैं-

- सूचना प्रदान करना।
- विद्यार्थी को उसकी रुचि के अनुसार अभ्यास चयन की स्वतंत्रता प्रदान करना।
- सीखने वाले की प्रक्रिया को नियंत्रित रखना।
- अभ्यास में विद्यार्थी को उसकी उपलब्धि से अवगत कराना तथा मूल्यांकन करना।
- अभ्यास में विद्यार्थी के साथ सहभागी की भूमिका का निर्वाह करना।
- विषय-वस्तु के प्रति ध्यान केन्द्रित करवाना।
- अभ्यास में उदाहरण देते हुए यांत्रिक रूप से पूर्ण अभ्यास करवाना।

अर्थपूर्ण अभ्यास के अन्तर्गत कम्प्यूटर निम्नांकित प्रक्रिया संपादित करता है:-

- एक उपकरण के रूप में कम्प्यूटर सार्थक संप्रेषण के निहितार्थ उपलब्ध करता है।
- एक वातावरण के रूप में यह अर्थपूर्ण संप्रेषण के विभिन्न संदर्भ उपलब्ध करता है।
- एक स्रोत के रूप में सार्थक संप्रेषण के लिए विषय-वस्तु उपलब्ध करता है।
- भाषा के प्रयोग की एकाग्रता पर ध्यानाकर्षित करता है।
- अभ्यास की समस्त प्रक्रिया को शिक्षार्थी से नियन्त्रित करने के अवसर प्रदान करता है।

उपर्युक्त दोनों तरह के अभ्यास कम्प्यूटर पर इन्टरनेट से जुड़कर किए जाते हैं।

6.8.1 इन्टरनेट

इन्टरनेट संसार के समस्त कम्प्यूटर्स का अन्तर्सम्बधित संग्रहण है। यह दुनिया के अधिगम कम्प्यूटर्स का एक ऐसा नेटवर्क है जो परस्पर सूचनाओं का संप्रेषण उपलब्ध करवाता है। कम्प्यूटर में इन्टरनेट से जुड़ने के लिए टेलिफोन से कम्प्यूटर को जोड़ना पड़ता है। टेलिफोन के माध्यम से इन्टरनेट द्वारा कम्प्यूटर पर दुनिया की किसी भी विषय की जानकारी प्राप्त की जा सकती है। यह सभी क्षेत्रों में सभी विषयों पर सामग्री उपलब्ध करवाने की एक अद्भुत व्यवस्था है। इससे ई-मेल, चैट, बड़ी फाईल (अटैचमेन्ट), वर्ल्ड वाइड वेब, ओन लाईन कान्फ्रेन्सिग आदि के द्वारा अन्य सभी जानकारियों के समान भाषा संबंधी सूचनाएँ प्राप्त की जा सकती हैं। इन्टरनेट पर हिन्दी भाषा के लिए कठिनाई "हिन्दी फोन्ट" को लेकर है। सर्च इंन्जिन थोड़ी दूर तक साथ दूर साथ देता हे तत्पश्चात् अंग्रेजी भाषा की सहायता लेनी पड़ती है। इस दिशा में सर्च इन्जिन को विकसित करने की आवश्यकता है।

6.8.2 हिन्दी और वेब

भारत सरकार के राजभाषा विभाग ने सी-डैक पुणे की सहायता से सन् 1999 में हिन्दी भाषा शिक्षण हेतु 'लीला' नामक एक वेबसाईट तैयार की है, जो हिन्दी भाषा स्वयं शिक्षक पैकेज्स की श्रृंखला में उपयोगी कड़ी मानी जाती हैं। यह पैकेज निम्नांकित नामों से विकसित किया गया है -

1 लीला प्रबोध

2 लीला प्रवीण

3 लीला प्राज्ञ

'लीला' से तात्पर्य है खेल। यह पैकज यद्यपि विभिन्न कार्यालयों में हिन्दी भाषा अधिगम हेतु तैयार किया गया है, किन्तु त्रिभाषा सूत्र के सन्दर्भ में अहिन्दी भाषी प्रदेशों में हिन्दी भाषा सीखने के लिए एक रुचिकर माध्यम है। इसका उद्देश्य खेल-खेल में हिन्दी सिखाना है।

'लीला की विशेषता'

इस पैकेज में मल्टीमीडिया पर आधारित भाषा शिक्षण की नवीनतम तकनीक का प्रयोग किया जाता है।

इसमें शैक्षिक दृष्टि से नियंत्रित व अनुस्तरित हिन्दी पाठों का प्रदर्शन किया जाता है।

इसमें छात्र अपनी गति के अनुसार हिन्दी भाषा सीखते हैं ।

यह अध्यापन सम्बन्धी चर्याओं जैसे- अभ्यास, मूल्यांकन, व्याकरणिक बिन्दुओं की व्याख्या, उच्चारण, वाचन आदि कार्य करवा सकता है ।

कम्प्यूटर माध्यम से भाषा सीखने की प्रक्रिया में छात्र की कम्प्यूटर के साथ सतत् सम्पर्क व सहभागिता रहती है और वह अनुरंजन के साथ भाषा सीख सकता हैं ।

लीला और हिन्दी-भाषायी दक्षता

'लीला' वेबसाईट पर तैयार हिन्दी भाषा के पैकेज से श्रवण, भाषण, पठन लेखन व व्याकरण सम्बन्धी दक्षताओं का विकास किया जाता है, जिससे अहिन्दी भाषी तथा हिन्दी भाषी सभी क्षेत्रों के विद्यार्थी लाभान्वित हो सकते हैं ।

उच्चारण

लीली प्रबोध, लीला प्रवीण व लीला प्राज्ञ पर हिन्दी भाषा की ध्वनियों, शब्दों और वाक्यों का अनुतानसहित उच्चारण किया जाता है । उच्चारण का अभ्यास करने के लिये रिकॉर्ड और कम्पेयर की सुविधा भी उपलब्ध हैं जिससे छात्र शब्दों और वाक्यों का स्वयं उच्चारण कर अपनी आवाज को रिकॉर्ड कर सकता है और पैकेज में दिए गए मानक उच्चारण से उसकी तुलना कर सकता है ।

शब्द संरचना सामर्थ्य

पैकेज में एक डिजिटल शब्दकोश भी है जिससे सीखने वाला हिन्दी- शब्दों के अर्थ, व्याकरण व उनके उच्चारण तत्काल पर्दे पर देख व सुन सकता है । यह सुविधा किसी भी पाठ से प्राप्त की जा सकती है । सामान्य शब्दावली और शासकीय/ विभागीय शब्दावली भी उच्चारण सहित उपलब्ध है ।

पठन अवबोध

प्रत्येक पाठ के साथ उसका वीडियो चलचित्र पर्दे पर प्रदर्शित होता है । वीडियो द्वारा बोले गए अंश, पाठ में स्वत: ही अलग रंग से अंकित हो जाते हैं, जिससे पठन प्रक्रिया रोचक,

प्रवाहपूर्ण आगे बढ़ती रहती है । संकल्पनाओं को समझने के लिए उनके बिम्बचित्र भी आवश्यकतानुसार साथ दिए जाते हैं । पाठ के अन्त में अवबोध पर प्रश्न पूछे जाते है ।

लेखन

इसमें देवनागरी लिपि के अक्षरों का ज्ञान कराया जाता हैं । अक्षर ज्ञान कराते हुए ट्रेसर प्रत्येक अक्षर को पर्दे पर लिखता जाता है । किसी अक्षर के साथ उससे आरम्भ होने वाले सम्बन्धित चित्र भी प्रदर्शित किए जाते हैं । इसे देखकर अधिगमकर्त्ता हिन्दी भाषा के अक्षरों को सही तरीके से लिखना सीख सकता है ।

मूल्यांकन

इस पैकेज में हिन्दी भाषा अधिगम पर प्राप्त अंक सहित स्वमूल्यांकन करने की भी सुविधा उपलब्ध है । छात्र अगले पाठ में तभी प्रवेश कर सकता है जब वह पाठ के अन्त में दिए गए मूल्यांकन परीक्षण में उत्तीर्ण होता है ।

6.8.3 हिन्दी के अन्य कार्यक्रम

इसके अतिरिक्त एक कम्प्यूटर कम्पनी ने अंग्रेजी भाषा के माध्यम से दस दिन में हिन्दी सिखाने के लिए 'आओ हिन्दी पढ़े' शीर्षक से एक कार्यक्रम तैयार किया है । इसके द्वारा संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण आदि सिखाने के साथ यह पैकेज अनुवाद भी प्रस्तुत करता हैं ।

6.8.4 ई- मेल (Electronic Mail)

ई- मेल सूचना सम्प्रेषण का एक अत्यधिक प्रचलित और सस्ता माध्यम है । वर्तमान समय में पत्र लेखन के स्थान पर ई- मेल ने अपना आधिपत्य स्थापित कर लिया है । इस प्रणाली में नेटवर्क के द्वारा एक कम्प्यूटर को दूसरे कम्प्यूटर से जोड़कर तत्काल सूचना को सम्प्रेषित किया जाता है ।

ई- मेल का महत्त्व व्यवसाय एवं औद्योगिक क्षेत्रों में सर्वाधिक हैं । शिक्षा के क्षेत्र में शैक्षिक प्रकरणों पर परस्पर सूचनाएँ, कार्यक्रम आदि प्रेषित किए जाते हैं । विभिन्न आयोजनों, अधिवेशन, संगोष्ठी तथा कार्यशालाओं में आमंत्रित करने हेतु आजकल ई- मेल से ही सूचनाएँ प्रेषित की जाती हैं । इसी प्रकार भाषा सम्बन्धी समस्याओं के समाधान हेतु विद्यार्थी विशेषज्ञों से ई- मेल द्वारा तत्काल सम्पर्क कर सकते हैं । इससे पुस्तकालयों में अन्वेषण के समय की भी बचत होती है ।

हिन्दी में ई- मेल का आरम्भ

हिन्दी में ई- मेल का शुभारम्भ इन्दौर में 'नई दुनिया' द्वारा किया गया है । सॉफ्टवेयर कम्पनी सु. वि. इन्फोर्मेशन सिस्टम इन्दौर ने 6 फरवरी 1999 को 'हिन्दी' देवनागरी में प्रथम निःशुल्क ई- मेल (इलेक्ट्रोनिक- पत्र) सेवा प्रारम्भ की । इससे कम्प्यूटर पर देवनागरी के लिए मुक्त द्वार खुल गया है । हिन्दी भाषा के प्रभावी प्रयोग में इस सदी का यह एक क्रांतिकारी कदम प्रमाणित हुआ है ।

6.8.5 हिन्दी सर्च इंन्जन का आरम्भ

ई- मेल की प्रक्रिया के पश्चात् इसी क्रम में इन्दौर नई दुनिया द्वारा 23 फरवरी 2000 को पहले हिन्दी सर्च इन्जन 'वेब दुनिया डॉटकॉम' में 'वेब दुनिया खोज' का लोकार्पण

किया गया । जिसके माध्यम से कोई भी व्यक्ति विभिन्न वर्गों के अन्तर्गत हिन्दी में दी गई सूचनाओं और विषयों से सम्बन्धित सामग्री को खोज सकता है । इस वेब साइट से बहुआयामी सेवाएँ भी दी जा रही हैं ।

कम्प्यूटर पर यदि की- बोर्ड का एक ले- आउट स्थिर हो जाए तो प्रौद्योगिकी से हिन्दी अधिगम व शिक्षण की भी अनन्त सामग्री उपलब्ध करवाई जा सकती है । इसके माध्यम से समाचार, संस्कृति, मनोरंजन व व्यवसाय सम्बन्धी कार्यक्रम हिन्दी भाषा द्वारा उपलब्ध करवाए जाते है । इस सर्च इन्जन से हिन्दी के अध्यापकों के लिए अपने शिक्षण को अपेक्षाकृत अधिक प्रासंगिक, सामयिक व प्रभावी बनाने के लिए उपयोगी अवसर प्राप्त हो सकते है ।

6.8.6 जिस्ट शैल (Gist shell)

यह एक सॉफ्टवेयर समाधान है जो एम. एस. डॉस अनुप्रयोग पर आधारित पाठ्यसामग्री की प्रविष्टि, भंडारण, प्रदर्शन तथा भारतीय भाषाओं और अंग्रेजी के साथ- साथ मुद्रण को सम्भव बनाता है ।

इसमें भाषाओं के आँकड़े, पी. सी. इस्की में भरे जाते हैं । उन्हें साथ के साथ वर्णानुक्रम में रखा जा सकता है । हम किसी भी प्रकार की फेर बदल किए बिना भी जिस्ट शैल को पारम्परिक अनुप्रयोगों के साथ प्रयोग कर सकते हैं । एक बार जिस्ट शैल सॉफ्टवेयर में लग जाने पर कोई भी व्यक्ति अपनी पसन्द की भाषा में कार्य कर सकता है । इसमें निम्नानुसार सुविधाएँ हैं:-

संसाधन पैकेज

1 देवनागरी सी- बेसिक कंपाइलर
2 द्विभाषिक डाट बेस प्रबन्धन प्रणाली- देवबेस
3 आई. बी. एम. (डाटा) हिन्दी पीसी. डॉस.:-
द्विभाषी ऑपरेटिंग सिस्टम हिन्दी में पी. सी. डॉस बनाया है ।
4 लीप ऑफिस
5 अक्षर विंडोज
6 लीला हिन्दी प्रबोध
7 अनुवादक- अंग्रेजी के मूल पाठ को हिन्दी में अनुवादित करने और हिन्दी व्याकरण के मूलभूत नियमों का परिपालन करने में सक्षम है ।

संस्कृत वाक्यों के अर्थगत विश्लेषण के लिए 'शब्दबोध' और पाणिनि व्याकरण- 'देशिका' पैकेज बनाए गए हैं ।

6.8.7 टेलिकोन्फ्रेंसिंग- सम्प्रेषण दक्षता

शिक्षा में टेलिकोन्फ्रेंसिंग एक सशक्त माध्यम के रूप में प्रयुक्त किया जा रहा है । यह एक ऐसा अमुद्रित माध्यम है जिसमें तीन-चार या इससे भी अधिक व्यक्ति अलग- अलग स्थानों से किसी विषय-वस्तु पर चर्चा या वार्तालाप कर सकते हैं । यह माध्यम एक उच्च गुणात्मक प्रकार का श्रव्य और दृश्य माध्यम है जो इसमें भाग लेने चालों के मध्य विचारों व

सूचनाओं का तुरन्त आदान- प्रदान करता है । यह द्विपक्षीय प्रसारण सम्प्रेषण सुविधा प्रदान करता है ।

टेलिकोन्फ्रेंसिंग के निम्नलिखित तीन रूप होते हैं-

1 श्रव्य टेलिकोन्फ्रेंसिंग

2 दृश्य टेलिकोन्फ्रेंसिंग

3 कम्प्यूटर टेलिकोन्फ्रेंसिंग

प्रथम रूप में केवल श्रवण आधारित चर्चा की जाती है । द्वितीय में श्रव्य के साथ चर्चा में भाग लेने वाले व्यक्तियों को भी दिखाया जाता है । किसी भी घटना पर समाचार वक्ता तथा सम्बन्धित स्थल पर जो भी संवाददाता है वह और इसके साथ ही घटना से सम्बन्धित व्यक्ति तीनों के परस्पर वार्तालाप को दूरदर्शन पर देखा जा सकता है ।

हिन्दी में प्रदर्शित इस प्रकार के कार्यक्रमों से विद्यार्थियों को हिन्दी भाषा की सम्प्रेषण दक्षता को विकास करने के अवसर प्राप्त हो सकते हैं ।

टेलिकोन्फ्रेंसिंग के तात्कालिक लाभ निम्नलिखित हैं :-

(1) विशेषज्ञों द्वारा प्रयुक्त हिन्दी भाषा सम्प्रेषण से छात्र भाषा की शुद्धता, स्पष्टता, उपयुक्तता और प्रवाहिता से परिचित होते हैं । किसी विषय वस्तु या घटना पर किस प्रकार वार्तालाप या संवाद किए जाते हैं इसकी दक्षता विकसित होती है ।

(2) इस प्रक्रिया को किसी कक्षा के साथ भी सम्पन्न किया जा सकता है । इससे छात्रों को तत्काल विशेषज्ञों द्वारा प्रतिपुष्टि प्रदान की जा सकती है ।

(3) भाषा शिक्षण में इसका अधिकतम प्रयोग किया जा सकता है, क्योंकि श्रवण के साथ उपयुक्त भाव भंगिमा भी दिखाई देती है । साथ ही किसी विषय वस्तु को भी प्रदर्शित करके विचार सम्प्रेषण किया जा सकता है ।

(4) इसका उपयोग उस समय और अधिक बढ़ जाता है जब इसमें छात्र या शिक्षार्थी दूर-दूर फैले हुए हों । ऐसे में एक साथ सबको विशेषज्ञों द्वारा प्रशिक्षित किया जा सकता है । विद्यार्थियों के लिए भाषा शिक्षण व अधिगम में दृश्य व श्रव्य माध्यम के रूप में टेलिकोन्फ्रेंसिंग सम्प्रेषण दक्षता का एक सर्वाधिक नवीन और रुचिकर माध्यम है ।

6.8.8 इलेक्ट्रोनिक पुस्तकें

(अ) इलेक्ट्रोनिक पुस्तकों से तात्पर्य है कि कम्प्यूटर पर इन्टरनेट द्वारा विभिन्न विषयों की पुस्तकों की उपलब्धता, मूल्य निर्धारण, मूल्य- प्रदान, और डाउनलोड द्वारा पुस्तकीय समस्त विषय वस्तु ग्रहण ।

ताड़पत्रों और भोजपत्रों पर मुद्रित अक्षरों की पुस्तकों की यात्रा रंगीन और चमकदार पत्रों से होती हुई कम्प्यूटर तक पहुँचकर इलेक्ट्रोनिक पुस्तकों में परिवर्तित हो चुकी है । अब पुस्तकें इलेक्ट्रोनिक प्रिंटिंग में होगी, जिन्हें विद्यार्थी अपने कम्प्यूटर पर सम्बन्धित वेब साइट पर पढ़ सकेंगे ।

इलेक्ट्रोनिक बुकस्टोर खुलने पर पुस्तकें खरीदने और पढ़ने की समस्त परम्परा शीघ्र ही परिवर्तित हो रही है । इस प्रकार की सुविधा से कोई भी विद्यार्थी सम्बन्धित वेबसाइट पर जाकर कोई भी पुस्तक खरीदकर उसे डाउनलोड कर सकता है । इसमें कोई भी पुस्तक आऊट

ऑव प्रिन्ट नहीं होती है । हिन्दी भाषा में भी शीघ्र ही इस प्रकार की सुविधा उपलब्ध होने की सम्भावनाएँ हैं।

ई - यूनिवर्सिटी

(ब) किसी विश्वविद्यालय के विभिन्न संकायों तथा देश-विदेश के विभिन्न विश्वविद्यालयों से इन्टरनेट पर सूचनाओं को डाउनलोड किया जाता है । जो ज्ञान एक अध्यापक के द्वारा दिया जाता है, वह ज्ञान उसी प्रकार, उसी रूप में इस प्रक्रिया में सुना और देखा जा सकता है । इसके अतिरिक्त किसी भी विश्वविद्यालय के विभिन्न क्रिया- कलाप देखे व सुने जा सकते हैं:- जैसे विश्वविद्यालयों में होने वाले अधिवेशन, संगोष्ठी, कार्यशालाएं, परिसंवाद एवं परिचर्चा आदि वीडियो कोन्फ्रेंसिंग के माध्यम से देखे व सुने जा सकते हैं ।

भाषा अधिगम में इस प्रकार के कार्यक्रम विद्यार्थियों को बहुभाषा अधिगम के अवसर प्रदान करते हैं । इनसे श्रवण व मौखिक अभिव्यक्ति कौशल विकास में सहायता मिलती है ।

6.9 सूचना और सम्प्रेषण प्रौद्योगिकी (ICT) तथा भाषा शिक्षण

सूचना और सम्प्रेषण तकनीकी (Information and Communication Technology) ने वर्तमान सदी में ज्ञान को सार्वजनिक करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है । संक्षिप्त नाम आई. सी. टी. (ICT) मुख्य रूप से संगणना एवं सम्प्रेषण की वे सुविधाएँ और विशेषताएँ हैं जिनका उपयोग सीखने में, शिक्षण में तथा शिक्षा सम्बन्धी अन्य क्रियाकलापों में किया जाता है । इस प्रौद्योगिकी ने सूचनाओं के सम्प्रेषण को एक स्थान से दूसरे स्थान पर शीघ्रताशीघ्र पहुँचाने में नई तकनीकों को जन्म दिया है ।

"सूचना प्रौद्योगिकी" (Information Technology) को स्पष्ट करते हुए कम्प्यूटर विशेषज्ञ डॉ. ओम विकास ने लिखा हैं- "सूचना प्रौद्योगिकी का आरम्भ इलेक्ट्रोनिक्स पर आधारित संग्रह और संसाधन के लिए कम्प्यूटर और संचरण में लिए संचार साधनों के मेल से हुआ । इसमें सूचना संग्रहण और आदान- प्रदान की प्रविधियाँ भी समाहित हैं।" इस प्रकार सूचना प्रौद्योगिकी से तात्पर्य है :-

(1) कम्प्यूटर प्रौद्योगिकी
(2) कम्यूनिकेशन प्रौद्योगिकी
(3) कोन्टेन्ट प्रविधि
(4) कंज्यूमर इलेक्ट्रोनिक्स

6.9.1 इनसेट (INSAT) (Indian National Sateltie)

(अ) इनसेट श्रृंखला का पहला उपग्रह INSAT-1 । अमेरिका केपकेनाबरल से 10 अप्रैल व 1982 को अन्तरिक्ष में स्थापित किया गया । इसके द्वारा दूरदर्शन कार्यक्रमों को सर्वत्र पहुँचाया जाता है । भारत में अभी तक शैक्षिक कार्यक्रमों के प्रसारण में एन.सी.ई.आर.टी तथा यू.जी.सी. की सक्रिय भूमिका रही है । पिछले वर्ष 2005-06 में एजूसेट पूर्णरूप से शैक्षिक कार्यक्रमों को प्रसारित कर रहा है ।

अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर अमेरिका में निर्मित 'थिंक एबाउट' (Think About) कार्यक्रम बनाया गया है जो 10-12 वर्ष के बालकों को भाषा, सामाजिक और गणित सिखाता है । कनाडा का 'यूरेका' कार्यक्रम कक्षा 7 व 8 के बच्चों के लिए भौतिक विज्ञान का शिक्षण करता है ।

अमेरिका का फ्री स्टाइल थ्तमम 'जलसमद्ध बालकों को सामाजिक समस्याओं से अवगत कराता है । ब्रिटेन द्वारा निर्मित 'सीन' (Scene) प्राय: सभी विषयों के साथ आधुनिक भाषाओं पर भी प्रसारण करता है ।

वर्तमान में एजूसेट का आरम्भ केवल शैक्षिक कार्यक्रमों के प्रसारण हेतु किया गया है । इससे शिक्षाजगत को आधिकाधिक लाभ पहुँचाया जा सकेगा । दूरदर्शन से सम्बद्ध एजूसेट का लाभ न केवल शिक्षण संस्थाओं अपितु व्यक्तिगत रूप से भी मिल सकता है ।

(ब) एजूसेट (Educational Satltite)

एजूसेट (EDUSAT) शिक्षा के लिए भारत का पहला सेटेलाइट है । इसका प्रथम प्रसारण 20 सितम्बर 2004 में श्री हरिकोटा में सतीश धवन अन्तरिक्ष केन्द्र से किया गया । यह उपग्रह मुख्य रूप से भारत में दूरस्थ शिक्षा पर आधारित परस्पर अन्त: क्रिया से सम्बन्धित है । राष्ट्रीय विकास में अन्तरिक्ष तकनीक का भारत का यह एक सशक्त प्रयास है । पूर्ण रूप से शैक्षिक अभिकरणों पर आघारित इस उपग्रह से शिक्षा के क्षेत्र में विशेषज्ञों और विद्यार्थियों के मध्य सीधे संवाद किए जा सकते हैं । इससे न केवल ज्ञानार्जन होता हैं अपितु सम्प्रेषण कौशल का विकास भी होता है । वर्तमान में विभिन्न शिक्षा संस्थानों में इससे लाभान्वित होने के प्रयास किए जा रहे हैं ।

6.9.2 बहु विधमाध्यम (Multimediaa):-

मल्टीमीडिया में सूचनाओं, विषयवस्तु और सम्प्रेषण के कई प्रकार सम्मिलित किए जाते हैं । पाठ्यवस्तु, ओडियो ग्राफिक्स, एनिमेशन, वीडियो और इन्टरेक्टिविटी को मिलाकर मल्टीमीडिया को बनाया जाता है । इसमें इन्टरेक्टिविटी की सबसे महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है । मल्टीमीडिया का इस समय, प्रिन्ट, टीवी फिल्म, विज्ञापन, इन्टरनेट, बिजनेस, प्रेजेन्टेशन, सॉफ्टवेयर, इन्टरफेक्स, वीडियो, गेमिंग और शिक्षा के क्षेत्र में उपयोग किया जा रहा हैं । प्राय: सभी माध्यमों में इसके तीव्र गति से होने वाले प्रयोग को देखते हुए इस क्षेत्र में विद्यार्थियों के लिये केरियर की सभावनाएं भी बढ़ गई हैं ।

बहु विधमाध्यम की विशेषता-

- यह एक रचनात्मकता का क्षेत्र है ।
- इसमें कल्पनाओं को साकार करने की कुशलता प्रकट की जाती है ।
- इस क्षेत्र में कार्य करने के लिए व्यक्ति को पुर्ण स्वतन्त्रता दी जाती है ।
- इस कार्य में। बिषयवस्तु को बहु विध तरीकों से प्रस्तुत करने का कौशल दिखाना होता है।

भाषा शिक्षण में मल्टीमीडिया मौखिक और लिखित अभिव्यिक्ति की दक्षताओं का विकास करने में सहायक हो सकता है । यह क्षेत्र पूर्णत: सृजनात्मकता से सम्बद्ध है । इस

दृष्टि से विद्यार्थी सृजनात्मक लेखन, नए विचार, काल्पनिक कथाएँ, नए संवाद आदि पक्षों की कुशलता को विकसित कर सकते हैं ।

6.10 सारांश

संचार माध्यम आज ज्ञान, मनोरंजन, सन्देश शिक्षा, समाचार- सूचनाएँ विज्ञापन, आदि के प्रमुख साधन हैं । शिक्षण के क्षेत्र में इनकी महत्वपूर्ण भूमिका है- इनके द्वारा भाषा के प्रत्येक क्षेत्र में कौशल का विकास बहुआयामी प्रकार से सम्पन्न हो सकता है । प्रस्तुत पाठ में संचार माध्यम के सम्प्रत्यय, शिक्षण- अधिगम में इनके प्रयोग तथा हिन्दी शिक्षण व अधिगम में इनकी उपयोगिता के सम्बन्ध में आवश्यक विषय वस्तु के अपेक्षित ज्ञान पर पर्याप्त प्रकाश डाला गया है । हिन्दी के अध्ययापकों, विद्यार्थियों की भाषिक योग्यता विशेषत: सम्प्रेषणीय दक्षता विकसित करने के लिए इन माध्यमों का उपयोग कर सकते हैं । वैसे भी विद्यार्थियों के बहु भाषार्जन में संचार माध्यम महत्त्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह कर रहे हैं ।

6.11 अभ्यास प्रश्न

1 भाषा शिक्षण में विभिन्न माध्यमों का उपयोग क्यों किया जाना चाहिए?
2 हिन्दी शिक्षण हेतु विकसित किसी माध्यम का उल्लेख कीजिए ।
3 इन्टरनेट क्या है? भाषा शिक्षण में इसकी क्या उपयोगिता हैं?
4 टेलिकोन्फ्रेन्सिंग किस प्रकार का माध्यम है, तथा इसके द्वारा भाषा के किन कौशलों का विकास किया जा सकता ।
5 एक परम्परागत तथा एक अत्याधुनिक माध्यम में अन्तर बताइये तथा भाषा अधिगम व शिक्षण में उनकी उपयोगिता समझाइये ।

6.12 अध्ययन हेतु पुस्तकें

1 डेल. एडगर (1987), अध्यापन में श्रव्य-दृश्य साधन अनुवादक माथुर, डॉ. पील्स चण्डीगढ़: वैज्ञानिक तथा तकनीक शब्दावली आयोग (मानव संसाधन विकास मंत्रालय भारत सरकार) हरियाणा साहित्य अकादमी ।
2 Kunt Graeme (1969), Blackboard to comuter a guide to educational aids landon : world Lock Educational Preinyed buy Cox and Wy man ;Ltd-Kondon Falengan Reading-
3 ओझा,डी,डी, सत्यप्रकाश, (2001), दूर संचार एवं सूचना प्रौद्योगिकी, दिल्ली: ज्ञानगंगा 205 सी चावड़ी बाजार पृ. 70,133
4 Rawat Dr-S-C-Essentials of Education Technology, Meerut : R Lall Book Dept Neer Govt- Inter College, P- 500-538
5 शर्मा, आर, ए.चतुर्वेदी डी. शिखा (1989), दूरवर्ती शिक्षा, मेरठ: सर्या पब्लिकेशन गवर्नमेन्ट कॉलेज के पास पृ. 203- 259

6 सिंह, ओम प्रकाश (1993) संचार माध्यमों का प्रभाव नई दिल्ली 110015: बी. के तनेजा क्लासिकल पब्लिशिंग कम्पनी, 28, शॉपिंग सेन्टर, करमपुर ।

7 उपाध्याय, प्रो. राजेश्रवर एवं पाण्डेय डॉ. सरला (2001) शैक्षिक तकनालॉजी के आयाम, वाराणसी: विश्वविद्यालय प्रकाशन चोक

8 W.W.W. Ansuerr. Com- worlds Greatest encyclodic tionalmanacapedia

9 ओम जोशी डॉ.: "भारत में भाषा प्रौद्योगिकी का विकास", राजभाषा भारती, जनवरी 2000 पृ. 234

इकाई - 7

नियोजन - सत्रीय, इकाई एवं दैनिक पाठ योजना

Planning, Sessional, Unit and Daily Lesson

इकाई की रूपरेखा

7.0 भूमिका तथा उद्देश्य

7.1 नियोजन की अवधारणा

7.2 सत्रीय नियोजन का संप्रत्यय एवं प्रारूप

7.2.1 सूक्ष्म शिक्षण

7.3 इकाई का संप्रत्यय एवं स्वरूप

7.3.1 इकाई संरचना के आधार

7.3.2 इकाई पाठ योजना की आवश्यकता

7.3.3 इकाई पाठ योजना का स्वरूप

7.3.4 इकाई पाठ योजना का प्रादर्श

7.3.5 अभ्यास प्रश्न

7.4 दैनिक पाठ योजना की आवश्यकता

7.4.1 दैनिक पाठ योजना के पाठ रूप

7.4.2 पाठ रूपों के सोपान

7.4.3 दैनिक पाठ योजना का प्रादर्श

7.5 सारांश

7.6 अभ्यासार्थ प्रश्न

7.7 अध्ययन हेतु पुस्तकें

7.0 भूमिका तथा उद्देश्य

न्यूनतम समयावधि एवं श्रम से अधिकतम प्राप्ति के लिए नियोजन का विशेष महत्त्व है। हिन्दी अध्यापक को सत्रारंभ में कक्षा में जाने से पूर्व नियोजन की आवश्यकता रहती है । इसी के माध्यम से वह पाठ्यक्रम की आवश्यकता व उपलब्ध विद्यालयी साधनों के आधार पर विद्यार्थियों के भाषागत कौशलों का विकास करने की योजना का निर्माण करता है । इस इकाई का अध्ययन करने पर आप निम्नांकित उपलब्धियाँ अर्जित कर सकेंगे-

1 नियोजन किसे कहते हैं? सफल सत्रीय नियोजन का संप्रत्यय और स्वरूप क्या है?

2 इकाई किसे कहते हैं, इकाई पाठ योजना क्या है, उसका महत्त्व क्या है? साथ ही आप इकाई पाठ योजना का निर्माण करना भी सीख सकेंगे ।

3 दैनिक पाठ योजना की क्या आवश्यकता है? हिन्दी में दैनिक पाठ योजनाओं के प्रकार और उनके स्वरूप समझने के साथ ही आप इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् दैनिक पाठ योजना का निर्माण करने का कौशल विकसित कर सकेंगे ।

4 इकाई पाठ योजना व दैनिक पाठ योजना के उद्देश्य तथा प्रारूपों में अंतर कर सकेंगे ।

7.1 नियोजन की अवधारणा

नियोजन का अर्थ- नियोजन को अंग्रेजी में प्लानिंग च्संददपदहद्ध कहते हैं । जब हम किसी कार्य को सुव्यवस्थित रूप से करना चाहते हैं, तो पहले उसकी योजना बना लेते हैं । हम क्या चाहते हैं, अर्थात् हमारा उद्देश्य क्या है? उद्देश्य की पूर्ति के लिए क्या कार्य प्रक्रिया अपनानी होगी? इसके लिए किन साधन-सुविधाओं की आवश्यकता रहेगी? कार्य समाप्ति के पश्चात् उद्देश्य प्राप्त हुए अथवा नहीं? इन सब बिन्दुओं पर विचार कर जो क्रमबद्ध एवं व्यवस्थित रूपरेखा हमारे मस्तिष्क में बनती है, उसे योजना कहते हैं । इस रूपरेखा को समयांतर में स्मृति-लोप से सुरक्षित करने के लिए किसी पत्र पर इसका एक लिखित रूप विकसित कर लेते हैं । इसे उस कार्य की योजना कहा जाता है ।

हिन्दी भाषा के कक्षाध्यापन के समय शिक्षक अपने विद्‌यार्थियों के भाषा-सम्बन्धी कतिपय व्यवहारगत परिवर्तन हेतु प्रयास करता है- अपनी शिक्षण-प्रक्रिया को सुचारु व सुव्यवस्थित रूप से क्रियान्वित करने के लिए शिक्षक को अपने प्राप्तव्य उद्देश्यों का निर्धारण योजनाबद्ध रूप से कर लेना चाहिए ।

7.2 सत्रीय नियोजन का संप्रत्यय एवं प्रारूप

हिन्दी शिक्षक को किसी कक्षा में सत्र भर का पाठ्‌यक्रम दे दिया जाता है और उससे अपेक्षा की जाती है कि वह उस पाठ्‌यक्रम के द्‌वारा छात्रों के हिन्दी ज्ञान का स्तरानुरूप अधिक से अधिक विकास करे । वह किस पुस्तक व पाठ से अध्यापन प्रारंभ करे? एक पाठ का अध्यापन कितने दिनों में करे? कितने कालांश भाषा की विविध विधाओं यथा व्याकरण, रचना, गद्‌य-पद्‌य, नाटक आदि को दे? इन समस्त प्रश्नों के उत्तर सत्रीय नियोजन में निहित हैं । इसके लिए वह सर्वप्रथम शैक्षिक पंचाग का अध्ययन कर सत्र पर्यन्त में हिन्दी शिक्षण के लिए प्रतिमास उपलब्ध कालांशों की गणना कर सम्पूर्ण पाठ्‌यक्रम को इकाइयों में विभक्त कर प्रत्येक इकाई के लिए अपेक्षित कालांशों का निर्धारण करता है । वह संतुलन की दृष्टि से प्रत्येक इकाई के अन्त में दिए जाने वाले गृहकार्य का भी निर्धारण कर लेता है । इसे हम किसी कक्षा के हिन्दी शिक्षण की सत्रीय योजना, वार्षिक योजना अथवा पाठ्‌यक्रम का मासिक विभाजन भी कह सकते हैं ।

अध्यापन की सत्रीय योजना - सत्र

कक्षा व वर्ग. ... . विषय. .... प्रश्न पत्र ....

माह	अध्यापन इकाई तथा उप इकाई	उद्धेश्य एवं व्यवहार अपेक्षित परिवर्तन	अपेक्षित कालांश संख्या	सहायक सामग्री	संदर्भ पुस्तकें
1	2	3	4	5	6

7.2.1 सूक्ष्म शिक्षण

शिक्षक महाविद्यालयों में दैनिक पाठों के अभ्यास से पूर्व सफल शिक्षण हेतु शिक्षण के विभिन्न कौशलों का अभ्यास कराया जाता है । यह शिक्षा के क्षेत्र में नया प्रयोग है । सन् 1961 में स्टेनफोर्ड विश्वविद्यालय में एक छात्र की शोध निष्कर्षो से इसका प्रारंभ हुआ। इसमें सामान्य शिक्षण को विभिन्न कौशलों में विभक्त कर दिया जाता है । जैसे- प्रस्तावना, वाचन, काठिन्य निवारण, प्रश्नोत्तर, व्याख्या, श्यामपट्ट कार्य आदि । यह अपेक्षा की जाती है कि यदि शिक्षक इन कौशलों में दक्ष हो जाता है तो वह प्रभावी शिक्षण कर सकेगा । इसमें योजना बनाकर 8-10 छात्रों (प्रशिक्षणार्थियों) की कक्षा में शिक्षक एक कौशल का 5-10 मिनट के लिए अभ्यास करता है । अध्यापन के पश्चात् परिवीक्षक व अन्य साथी शिक्षकों द्वारा उसके अध्यापन के संबंध में सुझाव के रूप में प्रतिपुष्टि दी जाती है । तदनुसार वह सुधार करते हुए योजना का पुन: निर्माण करता है और पुन: 5-10 मिनट के लिए अध्यापन करता है । पुन: उसे पूर्ववत् प्रतिपुष्टि मिलती है । प्रतिपुष्टि के लिए अवलोकन प्रपत्र होता है, जिसमें उस कौशल से संबंधित घटक ब्वउचवदमदजेद्ध दिए होते हैं । इस प्रकार वह एक-एक कर सभी वांछित कौशलों में दक्षता प्राप्त कर लेता है ।

सूक्ष्म शिक्षण पाठ योजना का प्रारूप

दिनांक .... कक्षा... .... विषय .... प्रकरण. .... समय ....

वस्तु संकलन	अध्यापक क्रिया	छात्र क्रिया	घटक संख्या

7.3 इकाई का संप्रत्यय एवं स्वरूप

गेस्टाल्ट मनोवैज्ञानिकों के अनुसार हम किसी वस्तु को सर्वप्रथम संपूर्ण रूप में देखते हैं। तत्पश्चात हमारा ध्यान उसके एक-एक अंग पर जाता है । इकाई योजना निर्माण में भी यही सिद्धान्त कार्य करता है । इकाई (Unit) स्वयं में पूर्ण होती है । उसके अपने नियम होते हैं । उसके अंग भी परस्पर सम्बद्ध होते हैं । एक इकाई अपनी भिन्न प्रकृति के कारण दूसरी इकाई से स्पष्टत: अलग होती है । उदाहरणत: हिन्दी विषय के संदर्भ में हम एक पाठ को एक इकाई मान सकते हैं, क्योंकि प्रत्येक पाठ स्वंय में पूर्ण है और अन्य पाठों से पृथक अस्तित्व रखता है।

7.3.1 इकाई संरचना के आधार

अब हम यह देखे कि सम्पूर्ण पाठ्यक्रम का इकाईवार विभाजन कैसे किया जाए? इकाई निर्माण या संरचना के आधार क्या हों? प्रसिद्ध शिक्षाशास्त्री कैसवेल और कैम्पबेल महोदय ने इकाई संरचना के निम्नांकित आधार निश्चित किए हैं

1 विषयवस्तु - इसे आधार मानने वाले विषय वस्तु को अधिक महत्त्व देते हैं । इसके भी तीन प्रकार हैं - (क) प्रकरण के आधार पर, (ख) सूत्र, विषय अथवा सिद्धांत के आधार पर, तथा (ग) वातावरण के आधार पर

2 अनुभव-बालकों के अनुभवों की समानता, रुचियाँ, प्रयोजन अथवा उनकी आवश्यकताओं को आधार बनाकर भी इकाइयों की संरचना की जाती है । जैसे-किसी प्रयोजन के लिए पत्र, प्रार्थना पत्र, निबन्ध आदि लिखना ।

3 विधाएँ-साहित्य की विधाओं की भी इकाई संरचना का आधार बनाया जा सकता है । जैसे - कुछ कहानियों की एक इकाई, इसी प्रकार कुछ समान भाव की कविताओं की एक इकाई आदि ।

इकाई संरचना की दृष्टि से देखा जाए तो हिन्दी पाठ्य पुस्तक का प्रत्येक पाठ स्वयं में स्वतंत्र होता हैं । उसका अपना केन्द्र होता हैं और वह इकाई की शर्तों को पूरी करता है । अत: प्रत्येक पाठ को एक पृथक् इकाई मानना अधिक उपर्युक्त एवं व्यावहारिक रहेगा ।

7.3.2 इकाई पाठ योजना की आवश्यकता

राजस्थान राज्य शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण संस्थान, उदयपुर ने कक्षा में शिक्षण से पूर्व उसकी योजना बना लेने को अति आवश्यक बताया है । उसके अनुसार "इकाई पाठ योजना" सम्पूर्ण शिक्षण प्रक्रिया का एक स्पष्ट चित्र है जिसमे पाठ्य इकाई से संबद्ध उद्देश्य एवं बालक में संदर्शनीय अपेक्षित योग्यताओं के निश्चय के साथ-साथ उन्हीं के अनुकूल वस्तू शिक्षण प्रक्रिया और मूल्यांकन को नियोजित किया जाता है । इकाई योजना का निर्माण करने से निहित उद्देश्यों, कठिन शब्दों, विषय वस्तु मूल्यांकन आदि पर विस्तार से विचार कर लेने का अवसर मिल जाता है, जिससे उसे दैनिक पाठ योजना बनाने में सरलता रहती है । एक बार इकाई योजना बना लेने व तदनुसार दैनिक पाठ योजना बना कर पाठ प्रस्तुत करने से शिक्षक के अध्यापन कौशल व आत्मविश्वास की अपेक्षाकृत अधिक वृद्धि होती है ।

7.3.3 इकाई पाठ योजना का स्वरूप

सम्पूर्ण इकाई निर्माण से पूर्व संपूर्ण पाठ का भली भांति अध्ययन कर लेना चाहिए । यह भी देखना चाहिए कि इस इकाई को कितने दैनिक पाठों में पढ़ाना उपयुक्त रहेगा । इकाई पाठ योजना बनाते समय सर्वप्रथम इकाई का परिचय लिखना चाहिए ।

(1) तदुपरान्त इस इकाई पाठ से पूर्व उद्देश्यों और अपेक्षित व्यवहारगत परिवर्तन पर विचार करना चाहिए । इस इकाई पाठ द्‌वारा किस-किस उद्देश्य की पूर्ति हो सकेगी और उन उद्देश्यों के अनुरूप छात्रों में क्या-क्या अपेक्षित व्यवहारगत परिवर्तन हो सकेंगे?

(2) किन उद्देश्यों की पूर्ति विषय वस्तु से होगी? अत: वस्तु संकलन के कालम में भाषा तत्त्व, तथ्य, घटनाएँ विचार आदि लिखना चाहिए ।

(3) अब यह विचार करें कि निर्धारित उद्देश्यों की पूर्ति के लिए अध्यापक और छात्र क्या क्रियाएँ करेंगे । अध्यापक द्वारा दिए गए निर्देश और तदनुसार छात्रों के क्रिया कलाप अध्यापक क्रियाएँ व छात्र क्रियाएँ कालम बनाकर लिखेंगे ।

(4) प्रभावी अध्यापन हेतु कुछ सहायक सामग्री की भी आवश्यकता रहती है । जैसे- कक्षा में दैनिक उपयोग की वस्तुएँ पुस्तक, चॉक, डस्टर, आदि तथा विशिष्ट सहायक सामग्री जैसे - चित्र, चार्ट, प्रतिरूप आदि । इनका उल्लेख भी 'सहायक सामग्री' के कालम में कर लेना चाहिए ।

(5) संपूर्ण इकाई का अध्यापन करने के पश्चात् निर्धारित उद्देश्य पूर्ण हुए अथवा नहीं- इसका मूल्यांकन करना भी आवश्यक है । यह दो प्रकार का होता है- पाठांतर्गत मूल्यांकन और पाठोपरांत मूल्यांकन । 'पाठांतर्गत मूल्यांकन' में पाठ के अध्यापन मध्य ही ऐसे प्रश्न पूछने चाहिए, जिनसे यह ज्ञात हो सके कि छात्र पाठ समझ रहे है । पाठ पढ़ाने के पश्चात् मूल्यांकन के उद्देश्य से ही चार - पाँच प्रश्न करने चाहिए और यथावश्यक गह कार्य देना चाहिए । इन्हे 'पाठोपरांत मूल्यांकन' में लिख लेना चाहिए ।

इस प्रकार किसी इकाई पाठ पर विस्तार से विचार कर योजना बना लेने से दैनिक पाठ योजना बनाने में सुविधा रहती हैं । इकाई पाठ योजना का एक नमूना यहाँ प्रस्तुत हैं-

3.3.4 इकाई पाठ योजना का प्रादर्श

इकाई – पाठ – योजना

इकाई परिचय__________________________________

कक्षा – IX विषय – हिन्दी इकाई का शीर्षक – भक्तवीर : गुरु गोविंद सिंह उप इकाइयाँ

4 पाठ रूप- गहन अध्ययननिष्ट पाठ

उद्धेश्य एवं व्यवहारगत परिवर्तन	वस्तु संकलन	व्यवहारगत परिवर्तन		सहायक सामग्री	मूल्यांकन	
		अध्यापक क्रियाएँ	छात्र क्रियाएँ		पाठांर्गत	पाठोपरांत
1	2	3	4	5	6	7
संज्ञानात्मक उद्धेश्य	भाषा तत्व-	आदर्श क्रियाएँ				
1 भाषा तत्व का ज्ञान- छात्र 'वस्तु संकलन के कालम मे दिए गए शब्दो का शुद्ध उच्चारण एवं वर्तनी जान सकेंगे	(क) उच्चारण एवं वर्तनी भगवदर्पित औदार्य, किल्विष प्रादुर्भाव, अकृत्रिम मूर्तिमान (ख) शब्दार्थ - कालातीत भगवदर्पित, अकुतोमय निस्सारता कायाकल्प, रथचक्र, औदार्य आध्यात्मिक अंकुठ, विध्वंस,	अध्यापक प्रस्तावना एवं उद्धेश्य कथन के पश्चात शुद्ध उच्चारण व स्पष्ता के साथ विराम चिन्हो का ध्यान रखते हुए वाचन करेगा । अनुकरण वाचन- अध्यापक छात्रो को अनुकरण वाचन का	छात्र ध्यानपूर्वक सुनेगे । छात्र निर्देशानुसार वाचन करेंगे व शुद्ध उच्चारण का अभ्यास करेंगे । छात्र उत्तर देंगे । छात्र प्रयुक्त युक्तियों के आधार पर कठिन शब्दो के अर्थ निकालने को	क्षोपयोगी सामग्री - पाठ्यपुस्तक, चाक, डस्टर बोर्ड आदि	1 अध्यापक अनुकरण वाचन के पश्चात प्रमुख विचारों संबंधी बोध प्रश्न करेगा 2 विचार विश्लेषण के समय भी	1 भगवदर्पित शब्द का अर्थ होगा- (क) भगवान की भक्ति (ख) भगवान का प्रसाद (ग) भगवान को अर्पण (घ) भगवान की पुजा 2 किस शब्द की

	अम्लान, शोहदे दीप्त, उच्छेद किल्विष प्रादुर्भाव (ग) मुहावरे - सिर हथेली पर रखना, लोहा लेना|	निर्देश देगा और छात्रो के अशुद्ध उच्चारण को शुद्ध करेगा ।	प्रयास करेंगे । छात्र चिंतन पूर्वक समझने का प्रयास करेंगे		छात्रो के उत्तरो से, उनकी उपलब्धि का मूल्यांकन करेगा ।	वर्तनी अशुद्ध है- (क) औदार्य (ख) अध्यात्मिक (ग) किल्विष (घ) दीप्त 3 गुरु गोविंद सिंह के पास ऐसी कौनसी संपत्ति थी जो सम्राटों के पास भी नही थी । 4 उनके शिष्यों का कायाकल्प किस प्रकार हुआ?
2 विषयवस्तु ज्ञान 3 सुनकर व पढ़कर अर्थग्रहण	2 विषय वस्तु - गुरु गोविंद सिंह मे पवित्र चरित्र अडिग उत्साह, उदारता, साहस, मनोबल, दीन दुखियो की सहायता, अत्याचार का प्रतिरोध आदि 'वीर' के उपयुक्त अनेक गुण थे । वे परमात्मा मे	बोध प्रश्न- अध्यापक छात्रों की बोध गम्यता की जाँच के लिए प्रश्न करेगा कठिन्य निवारण - अध्यापक विविध युक्तियों का प्रयोग करते हुए कठिन शब्दों के अर्थ छात्रों से निकलवाएगा ।	छात्र यथोचित उत्तर देंगे छात्र उसे अपनी उत्तरपुस्तिका मे लिखेंगे ।			5 वह घटना बताईए जिसमे गुरुजी का हृदय 'वज्र से भी कठोर होना' सिद्ध होता है । 6 गुरु गोविंद सिंह ईश्वर के किस रूप में आरधना करते हैं ।

	अखंड विश्वास रखते थे । उनकी वीरता अन्याय और अत्याचार के विरुद्ध उत्साह से जूझने मे प्रकट होती है । गुरु गोविद सिंह सच्चे कर्मयोगी थे । उनके संपर्क मे आनेवाली प्रत्येक व्यक्ति मे अदभूतशक्ति आ गयी थी। वे वज्र से भी कठोर और फूल से भी कोमल थे । उनका निराकार, रुपहीन नित्य शक्ति मे विश्वास था । गुरुजी का प्रादुर्भाव ही साधुओं की रक्षा और दुष्ट दमन के लिए हुआ था ।	विचार विश्लेषण - अध्यापक प्रश्नोत्तर एवं व्याकरण दवारा पाठ्यांश के विचारो को स्पष्ट करेगा मूल्यांकन- अध्यापक उद्धेश्य प्राप्ति की जाँच करेगा । गृह कार्य- अंत ने अध्यापक गृह कार्य देगा				7 गुरु गोविंद के संपर्क मे आने से व्यक्ति में क्या परिवर्तन होते है? गुरु गोविंद सिंह के शिष्यों के संदर्भ मे स्पष्ट कीजिए ।

7.4 दैनिक पाठ योजना की आवश्यकता

इकाई पाठ योजना के पश्चात् प्रतिदिन के प्रभावी शिक्षण के लिए दैनिक पाठ योजना का निर्माण आवश्यक है । इससे इकाई पाठ में निर्धारित उद्देश्यों में से किन-किन उद्देश्यों की पूर्ति हो सकेगी, कितनी पाठ्य वस्तु एक कालांश में ली जानी चाहिए, उस पाठ्यवस्तु के शिक्षण में किन-किन विधियों को अपनाना चाहिए आदि बातों की स्पष्टता हो सकेगी । साथ ही सहायक सामग्री का निर्धारण और शिक्षक व छात्र क्रियाओं का स्पष्टीकरण भी दैनिक पाठ योजना बनाते समय हो जाता है । इसी में शिक्षक पाठ सामग्री के पश्चात् किए जाने वाले मूल्यांकन का भी उल्लेख करता है, जिससे छात्रों की उपलब्धियों का पता लग जाता है । और अंत में गृहकार्य के उल्लेख से योजनाबद्ध गृहकार्य देने में सुविधा रहती है । इस प्रकार दैनिक पाठ योजना निर्माण से प्रभावी शिक्षण में सहयोग मिलता है ।

7.4.1 दैनिक पाठ योजना के पाठरूप

हिन्दी साहित्य की विधाओं में भेद और उद्देश्यों की विविधता के कारण पाठ प्रस्तुतीकरण में भी अंतर आता है । अध्यापन की दृष्टि से प्रमुख पाठरूप यहाँ स्पष्ट किए जा रहे हैं-

गद्य शिक्षण-

(1) कहानी कथन पाठ- इस प्रकार के पाठ में पुस्तक की आवश्यकता नहीं रहती । अध्यापक कहानी की मूल संवेदनाओं, पात्रों की चारित्रिक विशेषताओं आदि को ध्यान में रखते हुए अपनी भाषा में कहानी कहता हैं । छात्र कहानी सुनने का आनन्द लेते हैं । अध्यापक बीच-बीच में कल्पनोत्प्रेरक प्रश्न भी करता है, जिससे छात्र सक्रिय रहने के साथ ही मौलिक चिंतन व तर्क-वितर्क, भी करते हैं, तथा अपने शब्दों में कल्पना के आधार पर कहानी का विकास करते हैं ।

ऐसे पाठ में शिक्षक को कहानी में निहित सद्वृत्ति पर विशेष ध्यान केन्द्रित करने का अवसर मिलता है ।

(2) गहन अध्ययननिष्ठ पाठ- इस प्रकार के पाठ में शिक्षक पाठ के प्रत्येक अंश का छात्रों को गहनता से अध्ययन कराता है । वह सर्वप्रथम स्वयं पाठ्यांश का आरोह-अवरोह एवं स्वराघात-बालाघात के साथ आदर्शवाचन करता है । फिर छात्रों से अनुकरण वाचन करा काठिन्य निवारण करता है । कठिन शब्दों का अर्थ स्पष्ट करते समय वह संधि, समास, प्रत्यय, उपसर्ग आदि युक्तियों के प्रयोग के साथ अनौपचारिक रूप से व्याकरण का शिक्षण भी करता है । ऐसा करने से छात्र स्वयं कठिन शब्दों के अर्थ खोजने में समर्थ हो जाते हैं । तत्पश्चात् निर्धारित पाठ्यांश में आए विचारों को प्रश्नोत्तर एवं व्याख्या द्वारा स्पष्ट करता है ।

(3) द्रुतवाचन पाठ- हिन्दी के पाठ्यक्रम में कुछ पुस्तकें द्रुत पठन के लिए होती हैं । इनका उद्देश्य कम से कम समय और सहायता से छात्रों को अधिकाधिक वस्तु पढ़ने व समझने का अभ्यास देना होता है । अत: ऐसे पाठ के प्रारम्भ में छात्रों का ध्यान

केन्द्रित करने के दृष्टिकोण से शिक्षक कतिपय प्रश्न श्यामपट्ट पर लिख देता है । छात्रों को पाठ के प्रमुख बिन्दु जानने की जिज्ञासा पैदा कर मौन पठन का निर्देश देता है तथा पाठ के अंत में प्रश्नों के द्वारा छात्रों के बाह्य ज्ञान का विश्लेषण एवं मूल्यांकन करता है । इस पाठरूप में आवश्यक प्रश्नों के माध्यम से विद्यार्थियों की अभिवृत्ति, कथन शैली, पारस्परिक विचार-प्रदर्शन प्रवृत्ति के विकास हेतु उपयोगी अवसर प्राप्त होते हैं ।

(4) अभिनय पाठ- एकांकी अथवा नाटक के अन्त में अभिनय पाठ लिया जा सकता है । इस पाठ का मूल उद्देश्य छात्रों को अभिनय द्वारा पाठ्य एकांकी अथवा नाटक की रसानुभूति करवाना होता है । यह पाठ गहन अध्ययन निष्ठ अथवा द्रुत वाचन पाठ के पश्चात् लेना चाहिए । इस पाठ के एक दिन पूर्व छात्रों को पात्र वितरण कर देना चाहिए । फिर दूसरे दिन पाठ की प्रस्तावना कर बिना वेश-भूषा अथवा अतिरिक्त तैयारी के, उसी प्रकार अभिनय करवाना चाहिए जैसे रंग मंच पर किया जाता हैं । अंत में भावानुभूति व मूल्यांकन के लिए पाँच-सात प्रश्न करने चाहिए ।

पद्य शिक्षण

कविता का प्रमुख उद्देश्य रसानुभूति है । कविता शिक्षण की सफलता तभी है, जब छात्रों को रसानुभूति हो । अत: कविता पाठ को रस पाठ भी कहते हैं । किन्तु कविता में आए कठिन शब्द अथवा भावों को समझे बिना रस सिद्धि नहीं होती । अत: कठिन कविता होने पर शब्दों के अर्थ स्पष्ट करने व कठिन भावों के सरलीकरण के लिए पहले बोध पाठ लेते हैं, फिर रस पाठ।

(1) बोध पाठ- इस पाठ का मूल उद्देश्य रस सिद्धि न होकर कविता में आए कठिन शब्दों व संप्रत्ययों को सरल करना होता है । अत: आदर्श वाचन व अनुकरण वाचन के पश्चात् शिक्षक छात्रों को कठिन शब्दों के अर्थ व संप्रत्ययों को समझाता है । इससे कविता बोधगम्य हो जाती है और छात्र कविता का रस लेने योग्य हो जाते हैं ।

(2) रस पाठ- कविता का अध्यापन न होकर रसस्वादन होता है । यदि कविता में बहुत कम कठिन शब्द हों तो बोध पाठ लेने की आवश्यकता नहीं रहती सीधा रस पाठ लेना चाहिए। रस पाठ में आदर्श वाचन एवं अनुकरण वाचन के पश्चात् काठिन्य निवारण कर (यदि बोध पाठ न लिया हो तो) प्रश्नोत्तर एवं व्याख्या द्वारा भाव विश्लेषण करना चाहिए। यहाँ केवल सरल सतही प्रश्न न कर भावों की गहराई में भी जाना चाहिए तभी छात्र रसानुभूति कर सकेंगे । कविता का वाचन कवियों की तरह ही आरोह-अवरोह एवं अंग संचालन, भाव-भंगिमा के साथ करना चाहिए । इस पाठ से पूर्व बोध पाठ में शिक्षक द्वारा कविता के कठिन शब्दों व सम्प्रत्ययों को स्पष्ट कर दिया जाता है, इससे छात्रों को कविता की रसानुभूति करने में बाधा नहीं हाती ।

व्याकरण शिक्षण

व्याकरण की शिक्षा दो प्रकार से देते हैं- प्रासंगिक एवं औपचारिक । गहन अध्ययन-निष्ठ पाठ में कठिन शब्दों के अर्थ स्पष्ट करते समय प्रासंगिक रूप से छात्रों के व्याकरण ज्ञान

की वृद्धि की जाती है। किन्तु व्याकरण का व्यवस्थित ज्ञान देने के उद्देश्य से औपचारिक व्याकरण पाठ लिया जाता है।

औपचारिक व्याकरण पाठ- इस पाठ का उद्देश्य छात्रों को व्याकरण के विभिन्न संप्रत्ययों (संज्ञा, सर्वनाम, संधि समास, प्रत्यय, उपसर्ग, विराम चिह्न आदि) को स्पष्ट करना होता है। यह संप्रत्यय एक इकाई होती है और उसके प्रकारों को दैनिक पाठों में पढ़ाया जाता है। औपचारिक व्याकरण पाठ में प्रस्तावना व उद्देश्य कथन के पश्चात् सर्वप्रथम श्याम पट्ट या लपेटफलक उदाहरणों की प्रस्तुति करते हैं । फिर उनका विश्लेषण कर संश्लेषण व नियमीकरण करते हैं। तत्पश्चात् उस नियम की अन्य उदाहरणों द्वारा पुष्टि करते हैं । इसी को अध्यापन की आगमन विधि कहते हैं । उदाहरण यदि छात्रों के दैनिक जीवन एवं अनुभवों पर आधारित होंगे तो पाठ अधिक रोचक बन जाएगा ।

रचना शिक्षण

रचना पाठ- अभिव्यक्ति कौशल भाषा शिक्षण का महत्त्वपूर्ण उद्देश्य है । रचना पाठ में इसकी सबसे अधिक प्राप्ति होती है । निबंध, पत्र, प्रार्थना पत्र, कहानी लेखन आदि रचना पाठ के रूप में पढ़ाए जाते है । इस पाठ में छात्रों को उत्पेरित कर प्रश्नोत्तर द्वारा विषय वस्तु की चर्चा की जाती है । क्रम बद्धता का विशेष ध्यान रखते हुए अध्यापक प्रमुख बिन्दुओं को श्याम पट्ट पर लिखता चलता है । चर्चा में छात्रों को मौखिक अभिव्यक्ति के अधिकाधिक अवसर दिए जाते हैं । तत्पश्चात् छात्रों को कक्षा में ही बिन्दु वार लिखने के लिए कहा जाता हैं । समयाभाव के कारण कभी-कभी कुछ लिखने पर ही छात्रों को लिखने से रोककर मूल्यांकन के रूप में कतिपय छात्रों के लिखित अंश को कक्षा में सुना जाता है । अंत में शेष बिन्दुओं को घर से लिख लाने को कहा जाता हैं ।

7.4.2 पाठ रूपों में सोपान

जैसा कि आपने अब तक देखा, साहित्य की विविध विधाओं एवं व्याकरण, रचना आदि के कारण दैनिक पाठ योजनाओं को भी भिन्न-भिन्न पाठ रूपों में तैयार करना पड़ता है । इसमें से हम यहाँ बहु प्रचलित एवं आवश्यक चार प्रकार के पाठ रूपों को स्पष्ट कर रहे हैं ।

(क) गहन अध्ययन निष्ठ गद्य पाठ तथा (ख) रस पाठ

1. सामान्य सूचनाएँ- विद्यालय का नाम, कक्षा, दिनांक, कालांश, विषय, प्रकरण, पाठ रूप आदि ।
2. विशिष्ट उद्देश्य- पाठ के लिये निर्धारित ज्ञान, अर्थ/भाव ग्रहण, अभिव्यक्ति, सद्वृत्तियों का विकास, साहित्य में रुचि आदि ।
3. पूर्व ज्ञान- प्रत्येक नया ज्ञान छात्रों के पूर्व अनुभवों पर आश्रित होता है ।
4. सहायक सामग्री ।
5. प्रस्तावना- चयनित गद्यांश या पद्यांश के भाव-विषय को प्रस्तावित करने वाले अनुकूल प्रश्न-तीन या चार ।
6. उद्देश्य कथन- अध्ययन किए जाने वाले प्रकरण का उल्लेख ।
7. प्रस्तुतीकरण-

(1) आदर्श वाचन- शिक्षक के द्वारा (पद्य पाठ में दो बार) ।

(2) अनुकरण वाचन- छात्रों के द्वारा, साथ ही शिक्षक द्वारा छात्रों के अशुद्ध उच्चारण का संशोधन व अभ्यास ।

(3) बोध प्रश्न-छात्रों की सक्रियता व बोधगम्यता की जाँच के लिए तीन-चार प्रश्न ।

(4) काठिन्य निवारण- गद्य पाठ में कठिन शब्दों का विभिन्न युक्तियों के द्वारा छात्रों से अर्थ निकलवाया जाता है । पद्य पाठ में कठिन शब्दों का शिक्षक के द्वारा ही अर्थ स्पष्ट कर दिया है ।

(5) विचार विश्लेषण- पद्य पाठ में भाव विश्लेषण-प्रश्नोत्तर एवं व्याख्या द्वारा विचार/भाव विश्लेषण । गद्य पाठों में समीक्षात्मक व विश्लेषणात्मक प्रश्न अधिक होते है ।

(6) पुनरावृत्ति/मौन पठन- व छात्रों द्वारा मौन पठन एवं शिक्षक द्वारा अवलोकन ।
2 पद्य पाठ में मौन पठन के स्थान पर 'सस्वर वाचन' ।

(7) मूल्यांकन-(पाठान्तर्गत) पाँच- छह प्रश्नों द्वारा मूल्यांकन । इसमें कम से कम एक प्रश्न भाषा तत्त्व से सम्बन्धित अवश्य होता है ।

(8) गृह कार्य-(पाठोपरांत) पढ़े गए अंश पर प्रश्न । (प्रतिदिन गृह कार्य देना आवश्यक नहीं, किन्तु इकाई की समाप्ति पर आवश्यक) ।

(ग) औपचारिक व्याकरण पाठ

1 सामान्य सूचनाएँ- पाठ रूप (क) और (ख) की तरह

2 विशिष्ट उद्देश्य- उपर्युक्त

3 पूर्व ज्ञान- उपर्युक्त

4 सहायक सामग्री- आवश्यकतानुसार

5 प्रस्तावना- चयनित विषय को प्रस्तावित करने में सक्षम प्रश्न -

6 उद्देश्य कथन- व्याकरण के पढ़ाए जाने वाले संप्रत्यय की जानकारी ।

7 प्रस्तुतीकरण-

1) उदाहरणों की प्रस्तुति- पढ़ाए जाने वाले संप्रत्यय के उदाहरणों को श्याम पट्ट पर लिखना

2) उदाहरणों का विश्लेषण- उदाहरणों में आई बातें स्पष्ट करना ।

3) उदाहरणों का संश्लेषण एवं नियमीकरण- सभी उदाहरणों में सामान्य मिलने वाली विशेषता को खोजकर नियम निकालना ।

4) पुष्टीकरण- नियम की उपयुक्तता की अन्य उदाहरणों द्वारा पुष्टि

8 मूल्यांकन- चार- पाँच प्रश्न परिभाषा, उदाहरण आदि से संबद्ध ।

9 गृहकार्य- (पाठोपरांत)

(घ) रचना पाठ

1 सामान्य सूचनाएँ- पाठ रूप (क) और (ख) की तरह

2 विशिष्ट उद्देश्य- उपर्युक्त

3 पूर्व ज्ञान- उपर्युक्त

4 सहायक सामग्री- आवश्यकतानुसार, विषयानुकूल

5 प्रस्तावना- चार या पाँच प्रश्न, विषय से सम्बद्ध

6 उद्देश्य कथन- रचना के शीर्षक का उल्लेख

7 प्रस्तुतीकरण-

मौखिक कार्य- जिस विषय पर रचना की जानी है, उस पर प्रश्नोत्तर द्वारा विस्तृत तथा बिन्दुवार चर्चा । छात्रों को मौखिक अभिव्यक्ति का अधिकाधिक अवसर देना तथा प्रमुख बिन्दुओं को क्रमवार शिक्षक द्वारा श्याम पट्ट पर तथा छात्रों द्वारा अपनी उत्तरपुस्तिकाओं में लिखते जाना ।

लिखित कार्य-रचना के सभी बिन्दुओं पर चर्चा के पश्चात् शिक्षक द्वारा छात्रों को लिखने का निर्देश देना तथा उनके लेखन का अवलोकन करना ।

8 मूल्यांकन- कालांश के अंतिम पाँच- सात मिनट में कतिपय छात्रों के लेखन का वाचन तथा उस पर टिप्पणी ।

9 गृह कार्य-शेष बिन्दुओं पर घर से लिखकर लाना । प्रस्तुत विषय से संबन्धित अन्य रचनाएँ पढ़ना ।

7.4.3 दैनिक पाठ योजना का प्रादर्श

विद्यालय.. दिनांक.................................

कक्षा IX वर्ग................. कालांश...............................

विषय : हिन्दी.......................... पाठ्य प्रकरण........................ भक्तवीर: गुरु गोविन्द सिंह

विशिष्ट उद्देश्य- पाठ की समाप्ति पर छात्रों में निम्नलिखित व्यवहारगत परिवर्तन अपेक्षित है-

संज्ञानात्मक उद्देश्य

1 भाषा तत्त्वों का ज्ञान- छात्र निम्नलिखित शब्दों के अर्थ पहचान सकेंगे और उन्हें स्मरण रख सकेंगे

क) उपसर्ग- अकुंट, अकूतोमय, निस्सारता

ख) प्रत्यय- औदार्य

ग) संधि- भगवदर्पित

घ) शब्दार्थ- प्रतिरोध, कतवार

ङ) उच्चारण एवं वर्तनी- भगवदर्पित औदार्य, मूर्तिमान, सर्वाधिक

2 विषय वस्तु का ज्ञान- छात्र जान सकेंगे कि-गुरू गोविन्द सिंह में पवित्र चरित्र, अडिग उत्साह, उदारता, साहस, मनोबल, दीन दुखियों की सहायता, अत्याचार का प्रतिशोध आदि 'वीर' के उपयुक्त अनेक गुण थे । वे परमात्मा में अखंड विश्वास रखते थे । वे मानते थे कि वीर कभी धीरज नहीं खोता और भयभीत नहीं होता ।

3 सुनकर और पढ़कर अर्थग्रहण- छात्र गुरू गोविन्द सिंह के गुणों को समझ सकेंगे । और 'वीर' शब्द का अर्थ आत्मसात् कर सकेंगे ।

कौशलात्मक उद्देश्य

1 मौखिक अभिव्यक्ति-

क) छात्र उचित शब्दों का चयन कर सकेंगे ।

ख) वे व्याकरण सम्मत भाषा का प्रयोग कर सकेंगे ।

ग) वे अभीष्ट सामग्री प्रस्तुत कर सकेंगे ।

2 वाचन कौशल- छात्र आरोह - अवरोह, शुद्ध उच्चारण तथा विराम चिह्नों का ध्यान रखते हुए वाचन कर सकेंगे ।

भावात्मक उद्देश्य

1 सद्वृत्ति का विकास- छात्र गुरू गोविन्द सिंह के समान उच्च चरित्रवान, साहसी और ईश्वर में अटूट विश्वास रखने वाले बन सकेंगे ।

2 साहित्य में रुचि का विकास- छात्र गुरू गोविन्द सिंह जैसे महापुरूषों के जीवन चरित्र पढ़ने में रुचि ले सकेंगे ।

सहायक सामग्री- (क) अशाब्दिक- कक्षोपयोगी सामग्री तथा लपेट फलक पर मूल्यांकन प्रश्न

(ख) शाब्दिक- अकुंठ तथा अकूतोमय- अमर, अपूर्ण, अपार

निस्सारता- निष्कपट, निश्चिन्त, निस्साहय

औदार्य- कौमार्य, सौन्दर्य, सौजन्य

भगवदर्पित- भगवद्गीता, भगवद्कृपा, भवदीय आदि

पूर्व ज्ञान- छात्र सिक्ख धर्म तथा उसके अंतिम गुरू गोविन्द सिंह के विषय में सामान्य जानकारी रखते हैं ।

प्रस्तावना- अध्यापक पूर्व जान पर आधारित प्रश्न करेगा तथा छात्रों से पूरे वाक्य में उत्तर स्वीकार करेगा-

1 भारत में कौन- कौन से धर्म प्रचलित हैं?

(हिन्दू मुस्तिम, सिक्ख, ईसाई आदि)

2 सिक्ख धर्म के प्रवर्तक कौन थे?

(गुरु नानक)

3 सिक्ख धर्म का प्रमुख एवं आदरणीय ग्रंथ कौनसा है?

(गुरु ग्रंथ साहब)

4 सिक्खों की प्रमुख पहचान क्या है?

(केश, कृपाण, कड़ा आदि)

5 सिक्ख धर्म के अंतिम गुरू कौन थे?

(गुरू गोविन्द सिंह)

उद्देश्य कथन- सिक्ख धर्म के अंतिम गुरु गोविन्द सिंह बड़े चरित्रवान, साहसी, वीर और निराकार ईश्वर के उपासक थे । आज हम हजारी प्रसाद द्विवेदी द्वारा लिखित निबंध 'भक्तवीर: गुरु गोविन्द सिंह' का अध्ययन करेंगे, जिसमें उनके जीवन की विशेषताओं का वर्णन किया गया हैं।

प्रस्तुतीकरण-

पाठ एक ही अन्विति में पढ़ाया जाएगा ।

उद्देश्य संकेत	**अध्ययन अध्यापन संस्थितियाँ**		**श्यामपट्ट कार्य**
	अध्यापक क्रिया	**छात्र क्रिया**	
1	2	3	4
सुनकर अर्थ ग्रहण	आदर्श वाचन- अध्यापक आरोह अवरोह,शुद्ध उच्चारण, विराम चिह्नों आदि का ध्यान रखते हुए आदर्श वाचन प्रस्तुत करेगा ।	छात्र ध्यानपूर्वक सुनेंगे और अर्थग्रहण करेंगे ।	-
शुद्ध वाचन का अभ्यास, विषय वस्तु का ज्ञान एवं पढ़कर अर्थग्रहन विषयवस्तु का केन्द्रीय भाव ग्रहण	अनुकरणवाचन- अध्यापक छात्रों को अनुकरण वाचन का निर्देश देगा तथा छात्रों की उच्चारण संबंधी अशुद्धियों को शुद्ध कर अभ्यास कराएगा । बोध प्रश्न-अध्यापक छात्रों से केन्द्रीय भाव ग्रहण हेतु प्रश्न करेगा- 1 लेखक के अनुसार 'वीर' किसे कहेंगे? 2 गुरू गोविन्द सिंह ने किससे लोहा लिया। 3 गुरू गोविन्द सिंह किसे वीर मानते थे? काठिन्य-निवारण	छात्र निर्देशानुसार अध्यापक के वाचन के अनुरूप वाचन का प्रयास करेंगे । तथा शुद्ध उच्चारण का अभ्यास करेंगे । छात्र उचित उत्तर देंगे- 1 जिसका जीवन पवित्र हो अच्छा चरित्र हो और जिसमें साहस, उदारता, मनोबल आदि गुण हों । 2 अत्याचारी शासकों से । 3 जो परमात्मा पर अटूट विश्वास रखता हो,	अशुद्धि संशोधन एवं वर्तनी विश्लेषण

		भयभीत न हों और कायर न बने	
भाषा तत्वों का ज्ञान	अध्यापक युक्तियों का प्रयोग कर छात्रों से कठिन शब्दों के अर्थ निकलवाएगा ।	छात्र युक्ति के प्रयोग के अर्थ निकालने का प्रयोग करेंगे ।	अध्यापक शब्द, अर्थ एवं संधि, उपसर्ग तथा प्रत्यय को श्याम पट्ट पर लिखेगा ।
शब्द	**अर्थ**	**युक्ति**	**प्रयोग**
अकुण्ठ	कुंठित नही होना, मंद नही होना	उपसर्ग	आ+कुण्ठ, जैसे- अमर, अपूर्व, अपर
अकूतोमय	जिसका अनुमान नही लगाया जा सके	उपसर्ग एवं प्रत्यय	अ +कूत+मय, जैसे- तेजोमय, महिमामय, सुखमय
औदार्य	उदारता	प्रतत्य	उदार + य,जैसे- कौमार्य, सौन्दर्य
प्रतिरोध	विरोध करना, सामना करना	वाक्य प्रयोग	ग्रामीणो द्वारा प्रतिरोध करने पर लुटर भाग खड़े हुए
भगवदर्पित	भगवान को अर्पित करना	संधि	भगवत + अर्पित जैसे -भागवदगीता, भागवदकृपा भवदीय
निस्सारता	सारहीन होना	उपसर्ग व प्रतत्य	नि:+सार+ता जैसे- निस्सहाय,निष्कपट, निश्चित
विषय वस्तु का ज्ञान	अध्यापक विश्लेषण- अध्यापक प्रश्ननोत्तर एवं व्याख्या द्वारा गदयांश मे आए विचारो को स्पष्ट करेगा ।	छात्र प्रश्नो के उचित उत्तर देंगे और ध्यानपूर्वक सुनेगे	
अर्थ ग्रहण तथा सद्वृत्ति का विकास	1 गुरु गोविन्द सिंह का नाम लेते ही भारतीयों को कैसा अनुभव होता हैं 2 लेखक ने वीर किसे	1 अपूर्व गौरव और उल्लास का । 2 जिसमें अडिग	

	कहा है? 3 गुरु गोविन्द सिंह में कौन- कौन से गुण थे? गुरू गोविन्द सिंह में वीरोचित गुण थे । उनकी याद हममें गौरव का संचार करती हैं । 4 उनके स्मरण से हम अपने के कृतार्थ क्यों मानते हैं? 5. शासन अत्याचारी था 6 उनके पास कौन सी अदभूत शक्ति थी? 7 लेखक ने इस शक्ति को अदभूत संपत्ति क्यों कहा?	उत्साह, साहस, उदारता तथा मनोबल हो वह अत्याचार का विरोध करे और दीन दुःखियों की सहायता करे । 3 उनका चरित्र पवित्र था, उनमें अडिग उत्साह, साहस, मनोबल आदि गुण थे । छात्र ध्यानपूर्वक सुनकर समझेंगे । 4 गुरू गोविन्द सिंह महान् थे । उनके जीवन से हम बहुत कुछ सीख सकते हैं । 6 परमात्मा पर अटूट विश्वास और समर्पण । 7 वीर, साहसी, व शक्तिशाली होते हुए भी उनका परमात्मा में अटूट विश्वास होना अदभूत था । छात्र ध्यानपूर्वक सुनेंगे व समझेंगे ।	
अध्यापक कथन-	अध्यापक कथन- गुरु गोविंद सिंह का लक्ष्य लड़ना न होते हुए भी उन्होंने अत्याचारी	अपने शरीर को	

	शासन से लोहा लिया ।उन्होंने अपने को परमात्मा के लिए समर्पित कर दिया था ।		
	8 गुरू गोविन्द सिंह किसे नाशवान मानते थें? 9 इसे निस्सार कौन मानता था 10 कौन डरता रहता है? 11 गुरू गोविन्द सिंह के विचार से 'वीर' कौन हैं? जो ईश्वर में अटूट विश्वास रखता है, जिसमें विवेक हो, जो भय और कायरता से दूर रहता हो, उस ज्ञानी को: ही गुरु गोविन्द सिंह वीर मानते थे । 12 गुरा गोविन्द सिंह के गुणों को जानकर तुम्हें क्या प्रेरणा मिलती है?	जिसे ज्ञान प्राप्त हो गया । जो सारहीन को सार मानता है । जो परमात्मा मे अखंड विश्वास रखता है तथा धैर्य रखता है, भयभीत नही होता , कायरता को कचर की तरह दूर कर देता है । छात्र ध्यानपूर्वक सुनेंगे । हमे भी गुरु गोविंद सिंह के गुणो को ग्रहण करना चाहिए हमे भी गुरु गोविंद सिंह के गुणो को आत्मसात करते हुए जीवन यापन करना चाहिए	
विषयवस्तु का ज्ञान पढ़कर अर्थग्रहण, सदवृत्ती व साहित्य मे रुचि का विकास	पुनरावृत्ति/मौनपठन- अध्यापक छात्रों को मौनपठन को निर्देश देगा तथा उनके पठन का अवलोकन करेगा।	छात्र निर्देशानुसार पाठ को समझते हुए मौन पठन करेंगे	

मूल्यांकन- (पाठान्तर्गत)

1 भगवदर्पित' शब्द का अर्थ होगा-

(क) भगवान की भक्ति (ख) भगवान का प्रसाद

(ग) भगवान को अर्पण (घ) भगवान की पूजा

2 गुरु गोविन्द सिंह के पास कौनसी अदभूत् सम्पत्ति थी, जो सम्राट के पास भी नहीं थी?

(परमात्मा में अटूट विश्वास)

3 लेखक ने 'वीर' किसको कहा है?

(पवित्र चरित्र वाले, उत्साही, साहसी, उदार, मनोबल आदि गुण वाले व्यक्ति को)

4 गुरू गोविन्द सिंह के गुणों का वर्णन कीजिए ।

(उपर्युक्त के अतिरिक्त परमात्मा में अटूट विश्वास तथा संसार को अन्तिम मानना)

गृह कार्य- (पाठोपरांत) निम्नांकित वाक्य की व्याख्या कीजिए-

"जिसे ज्ञान का दीपक मिल गया है वह हाथ पर रखे आंवले के फल के समान, इसकी निस्सारता को समझ जाता है।"

7.5 सारांश

इस इकाई से आपने जाना कि सुव्यवस्थित कार्य के लिए नियोजन आवश्यक है । हिन्दी पाठ्यक्रम को नियोजित रूप से अध्यापन करने के लिए सर्वप्रथम पाठ्यक्रम का सत्रीय नियोजन अर्थात् वार्षिक व मासिक विभाजन करना चाहिए । तदुपरांत इकाई पाठ योजना बना लेनी चाहिए। इससे उद्देश्य एवं अपेक्षित परिवर्तन, अध्यापक के कार्य छात्रों के कार्य, मूल्यांकन में स्पष्टता आ जाती हैं ।

तत्पश्चात् अध्यापन से पूर्व इकाई पाठ योजना के आधार पर प्रतिदिन की दैनिक पाठ योजना बनानी चाहिए । इसमें उद्देश्यों को विस्तार से लिखना चाहिए । उद्देश्य स्पष्टीकरण के पश्चात् पूर्व ज्ञान व सहायक सामग्री का उल्लेख कर अध्यापक कक्षा में प्रस्तावना कैसे करेगा, कैसे प्रश्नोत्तर अथवा व्याख्या करेगा तथा मूल्यांकन करेगा आदि को विस्तार से लिखना चाहिए।

7.6 अभ्यासार्थ प्रश्न

1 सत्रीय नियोजन किसे कहते हैं? हिन्दी शिक्षण में इसकी आवश्यकता को समझाइये ।

2 इकाई पाठ योजना का संप्रत्यय स्पष्ट करते हुए उसका प्रारूप लिखिए ।

3 हिन्दी में दैनिक पाठ योजना के चार प्रमुख पाठ रूपों को विवेचन कीजिए ।

4 कक्षा 8 की पाठ्य पुस्तक में से किसी कविता के रस पाठ की योजना बनाइये ।

परिशिष्ट भक्तवीर गुरु गोविन्द सिंह - लेखक - हजारी प्रसाद दिवेदी

गुरू गोविन्द सिंह का नाम लेते ही, आज का भारतीय एक अपूर्व गौरव और उल्लास का अनुभव करने लगता है । 'वीर' शब्द के अन्दर जितनी भी गरिमा, परम्परा क्रम से, हमारे चित्त में संचित है वह साकार हो उठती है । पवित्र चरित्र, अडिग उत्साह, अकुण्ठ साहस,

अकृत्रिम औदार्य, अकुतोमय मनोबल, दीन दुखियों का निश्चित सहाय, अत्याचार का असंदिग्ध प्रतिरोध, विद्या और तपस्या का नियत संरक्षण और मनोबल का अक्षय भंडार ही 'वीर' है । गुरु गोविन्दसिंह इन सब गुणों के मूर्तिमान रुप थे । कोई आश्चर्य नहीं कि उनके स्मरण मात्र से आज हम अपने को कृतार्थ मानते हैं । अपने युग के सर्वाधिक शक्तिशाली शासन के अत्याचारों के विरूद्ध उन्होंने लोहा लिया था । किस बात पर? उनके पास कोई संगठित सैन्य शक्ति नहीं थी, शिक्षित सेना नायक नहीं थे । युद्ध करना उनके जीवन का लक्ष्य नहीं था । परन्तु एक ऐसी अदभूत सम्पत्ति उनके पास थी, जो किसी शक्तिशाली सम्राट के पास नहीं होती । परमात्मा पर अखंड विश्वास, पूर्ण रूप से भगवदर्पित जीवन । यह शरीर अनित्य है । इसके लिए चिन्ता करते रहना मूर्खता है । जिसे ज्ञान का दीपक मिल गया है, वह हाथ पर रखे आँवले के फल के समान, इसकी निस्सारता को समझ जाता है । और वह डरता रहता है, जो सार समझता है । गुरु गोविन्द सिंह उस ज्ञानी को ही वीर मानते हैं जो परमात्मा पर अखंड विश्वास रखता है जो नित्य तत्त्व को अनित्य-तत्त्व से पृथक् करने का विवेक रखता है ।

इकाई - 8

हिन्दी शिक्षण में मापन एवं मूल्यांकन

Student Assessments with Specific Illustrations, Diagnosis, Remedial Teaching Development of Question Paper

इकाई की रूपरेखा

8.0 भूमिका तथा उद्देश्य

8.1 मूल्यांकन से अभिप्राय और विशेषताएँ

8.2 मूल्यांकन की प्रक्रिया

8.3 मापन

8.4 मापन और मूल्यांकन में अंतर

8.5 अच्छे मूल्यांकन की विशेषताएँ

8.6 अभ्यासार्थ प्रश्न

8.7 मूल्यांकन के उपकरण एवं प्रविधियाँ

8.8 हिन्दी भाषायी मूल्यांकन

8.9 नील पत्र

8.10 विषय-वस्तु आधारित प्रश्नों का निर्माण

8.11 उत्तर तालिका निर्माण

8.12 खुली पुस्तक परीक्षा

8.13 प्रश्न बैंक

8.14 अभ्यासार्थ प्रश्न

8.15 हिन्दी विषयक निदानात्मक परीक्षण और उपचारात्मक शिक्षण

8.16 सारांश

8.17 अभ्यासार्थ प्रश्न

8.18 अध्ययन हेतु संदर्भ पुस्तक-सूची

8.0 भूमिका तथा उद्देश्य

हिन्दी भाषा शिक्षण का निर्धारित पाठ्यक्रम और उसका अनुगमन विद्यार्थियों के अधिगम में किस रूप में प्रतिफलित हुआ है- भाषा शिक्षण के इस महत्त्वपूर्ण पक्ष को शैक्षिक मूल्यांकन के द्वारा ज्ञात किया जाता है ।

शैक्षिक मूल्यांकन वस्तुत: शैक्षिक उद्देश्यों की प्राप्ति के संदर्भ में विद्यार्थियों की प्रगति का आकलन है । शिक्षण के उद्देश्य, शिक्षण-प्रक्रिया और मूल्यांकन - ये शिक्षण के तीन प्रमुख पहलू हैं शिक्षण के अंतर्गत और शिक्षण के पश्चात् विद्यार्थियों में पूर्व निर्धारित शिक्षणोद्देश्यों की प्राप्ति किस सीमा तक हुई है? उनमें व्यवहारगत परिवर्तन कितना हुआ है और शिक्षण प्रक्रिया उनके अनुरूप है या नहीं, यह ज्ञात करने के लिए मूल्यांकन एक सशक्त आधार प्रस्तुत करता है। मूल्यांकन के इसी स्वरूप से संबंधित बिंदुओं पर आधारित इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात् आप निम्नलिखित उपलब्धियाँ अर्जित कर सकेंगे:

- मूल्यांकन के विविध संप्रत्ययों को भली भाँति स्पष्ट कर सकेंगे ।
- शैक्षिक उद्देश्यों और मूल्यांकन प्रक्रम के मध्य सम्बन्ध ज्ञात कर अच्छे मूल्यांकन की विशेषताएँ ज्ञात कर सकेंगे ।
- मापन और मूल्यांकन के अन्तर को स्पष्ट कर सकेंगे ।
- मूल्यांकन की विविध विधियों और प्रविधियों का प्रत्यभिज्ञान एवं प्रत्यास्मरण कर सकेंगे।
- मूल्यांकन हेतु नील पत्र (ब्लु प्रिंट) निर्मित करने की प्रक्रिया समझ कर उसके आधार पर प्रश्न पत्र का निर्माण कर सकेंगे ।
- विषय-वस्तु आधारित विभिन्न प्रकार के प्रश्नों का निर्माण कर सकेंगे ।
- 'खुली पुस्तक परीक्षा' तथा 'प्रश्न बैंक' की संकल्पना से परिचित होंगे ।
- निदानात्मक परीक्षण और उपचारात्मक शिक्षण का महत्त्व समझ कर उनके उपयोग का स्वरूप निर्धारित कर सकेंगे ।

शिक्षण के निर्धारित उद्देश्यों के अनुसार विद्यार्थियों की शैक्षिक प्रगति की सीमा ज्ञात करने के लिए विविध प्रविधियाँ, मापन अथवा मूल्यांकन के अन्तर्गत क्रियान्वित की जाती हैं लेकिन मापन और मूल्यांकन में गहरा अन्तर हैं (अग्रांकित पृष्ठों पर इसे स्पष्ट किया जाएगा)।

8.1 मूल्यांकन से अभिप्राय और विशेषताएँ

मूल्यांकन का कार्य शिक्षा के उद्देश्यों की प्राप्ति को ज्ञात करना है अत: मूल्यांकन उद्देश्यनिष्ठ होता है, अर्थात् विषय वस्तु के ज्ञान की अपेक्षा इसमें यह ज्ञात किया जाता है कि उद्देश्यों की प्राप्ति किस सीमा तक हुई है? शिक्षण के उद्देश्यों को अनेक व्यवहारगत परिवर्तनों में व्यक्त किया जाता है, अत: मूल्यांकन के मानदण्ड व्यवहारगत परिवर्तन ही होते हैं ।

मूल्यांकन वह प्रणाली है जिसके द्वारा पूर्वनिर्धारित उद्देश्यों, ध्येयों और लक्ष्यों की प्राप्ति की मात्रा निर्धारित की जाती है। मूल्यांकन की कतिपय परिभाषाएँ इस दिशा में विशेष उल्लेखनीय हैं-

वेस्ले (Wesley) के अनुसार "मूल्यांकन शिक्षा प्रक्रिया का वह अंग है जिसके द्वारा इस बात की जाँच की जाती है कि एक निश्चित समय में शिक्षा के उद्देश्यों की पूर्ति किस सीमा

तक हुई है? बालक के व्यवहार में कहीं तक अंतर आया है और शिक्षक ने इस दिशा में कितना सहयोग किया है?"

डांडेकर (Dandekar) ने मूल्यांकन की परिभाषा इस प्रकार दी है- "मूल्यांकन हमें यह बताता है कि विद्यार्थियों ने किन-किन शैक्षिक उद्देश्यों को किस सीमा तक प्राप्त किया है" राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद् (NCERT) ने मूल्यांकन को परिभाषित करते हुए लिखा है- "मूल्यांकन एक प्रक्रिया है जिसके द्वारा यह ज्ञात किया जाता है कि शिक्षणोद्देश्य किस सीमा तक प्राप्त किया गया है, कक्षा-कक्ष में प्रदत्त अधिगम अनुभव कितने प्रभावशाली सिद्ध हुए हैं और शिक्षण के उद्देश्य कहाँ तक पूर्ण किए गए हैं।"

राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1986 में भी स्पष्ट किया गया है कि "विद्यार्थी की संप्राप्ति का मूल्यांकन, अधिगम तथा शिक्षण प्रक्रिया का अभिन्न अंग है । श्रेष्ठ शिक्षा नीति के अंतर्गत परीक्षाओं का उपयोग शिक्षण के गुणात्मक विकास के लिए होना चाहिए।"

मूल्यांकन का स्पष्ट और विशद् अर्थबोध करने के मन्तव्य से उसकी कतिपय विशेषताओं को निम्नलिखित रूप से प्रस्तुत किया जा रहा है-

1 मूल्यांकन शिक्षा का एक अभिन्न अंग है।
2 यह एक सुव्यवस्थित प्रक्रिया है।
3 यह एक निर्णयात्मक प्रक्रिया है।
4 इसका शैक्षिक उद्देश्यों की प्राप्ति सीमा से घनिष्ठ संबंध होता है।
5 इससे शिक्षण को उद्देश्य केन्द्रित बनाना संभव होता है।
6 मूल्यांकन एक निरंतर प्रवाहमान प्रक्रिया है।
7 इसका क्षेत्र अत्यंत व्यापक है। यह बालक के सर्वांगीण विकास के सभी पहलुओं (शारीरिक, संज्ञानात्मक, मनोक्रियात्मक, भावात्मक आदि) से संबंधित जानकारी उपलब्ध कराता है ।
8 इसके द्वारा व्यवहार का तुलनात्मक अध्ययन किया जाता है ।
9 इसके द्वारा अनुभवों और व्यवहारगत परिवर्तनों-संबंधी निर्णय किए जाते हैं ।

इस प्रकार मूल्यांकन का क्षेत्र बहुत विस्तृत होता है। यह न केवल विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि का मापन करता है, अपितु शिक्षण के उद्देश्यों की स्पष्टता के लिए, शिक्षण की विधि या प्रविधि की जाँच के लिए, पाठ्यक्रम की अभिष्टता ज्ञात करने के लिए, शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया में सुधार के लिए और निर्देशन संबंधी आधार सामग्री ज्ञात करने के लिए भी उपादेय है ।

मूल्यांकन में हिन्दी शिक्षण के सभी उद्देश्यों का समावेश किया जाता है। यह मापन अथवा परीक्षा से कहीं अधिक व्यापक सम्प्रत्यय है जिसके माध्यम से विद्यार्थियों के व्यक्तित्व में होने वाले भाषायी व्यवहार-परिवर्तनों का आकलन होता है । मूल्यांकन और शिक्षण एक दूसरे के पूरक हैं अध्यापक शिक्षण के साथ-साथ भी मूल्यांकन करता है जो पाठान्तर्गत मूल्यांकन कहा जाता है । पाठ की समाप्ति पर अध्यापक विद्यार्थियों के द्वारा निर्धारित उद्देश्यों के

अनुरूप विषयवस्तु की ग्रहण-सीमा ज्ञात करने के लिए मूल्यांकन करता है, जिसे पाठान्त मूल्यांकन कहते हैं । इसी प्रकार एक इकाई की समाप्ति पर इकाई-मूल्यांकन, सत्र-समाप्ति पर किया जाने वाला मूल्यांकन, सत्रान्त मूल्यांकन तथा एक वर्ष के उपरान्त सम्पन्न होने वाला मूल्यांकन वार्षिक मूल्यांकन कहलाता है । मूल्यांकन, इस प्रकार एक सतत प्रक्रिया है । इसके परिणामस्वरूप एक विद्यार्थी अपनी प्रगति-सीमा ज्ञात कर अपने अध्ययन में सुधार कर सकता है तथा अध्यापक भी अपने अध्यापन में आवश्यकतानुसार संशोधन अथवा परिवर्तन कर सकता है ।

8.2 मूल्यांकन की प्रक्रिया

मूल्यांकन एक जटिल प्रक्रिया है, जिसके तीन महत्वपूर्ण बिन्दु हैं- उद्देश्य, अधिगम-अनुभव (शिक्षण और उसके साधन, पाठ्यक्रम, पाठ्यपुस्तक, शिक्षण विधियाँ आदि) और मूल्यांकन के उपकरण। इन तीनों बिन्दुओं में पारस्परिक निर्भरता का संबंध है ।

निम्नांकित त्रिकोण से इन तीनों बिन्दुओं की पारस्परिक निर्भरता की स्थिति स्पष्ट होती है-

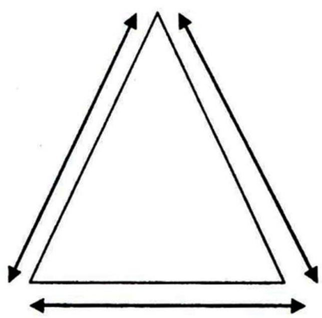

8.3 मापन (Measuremant)

अनेक बार 'मूल्यांकन' के स्थान पर 'मापन' शब्द प्रयुक्त कर लिया जाता है, परन्तु इन दोनों में बहुत भिन्नता है । मापन किसी वस्तु का मात्र परिमाणात्मक चित्र प्रस्तुत करता है, जबकि मूल्यांकन मापन के साथ-साथ उसका गुणात्मक चित्र भी प्रस्तुत करता है । संक्षेप में हम मापन को अंकात्मक और मूल्यांकन को गुणात्मक कह सकते हैं । यह कहा जा सकता है कि बिना मूल्यांकन के मापन अपूर्ण है । राइटस्टोन के अनुसार मापन में वस्तु के केवल एक पक्ष पर ध्यान दिया जाता है, जबकि मूल्यांकन संपूर्ण परिवेश के संदर्भ में स्थिति का अभिज्ञान कराता है।

8.4 मापन और मूल्यांकन में अंतर

अर्थशास्त्र में जो अंतर कीमत और मूल्य में होता है, बहुत कुछ यही अंतर शिक्षा के क्षेत्र में मापन और मूल्यांकन में है।

निम्नलिखित सारिणी इस अंतर की स्पष्टता प्रदर्शित करती है- मूल्यांकन.

मापन		मूल्यांकन
1	मापन का क्षेत्र सीमित है इसमें व्यक्तित्व के कुछ ही आयामों की परीक्षा संभव होती है	मूल्यांकन का क्षेत्र व्यापक होता है इसमें विद्यार्थी के व्यक्तित्व के सभी पहलुओं का परीक्षण होता है
2	मापन के द्वारा तुलनात्मक अध्ययन नही होता	मूल्यांकन द्वारा तुलनात्मक अध्ययन किया जा सकता है।
3	मापन एक साधन (Means) मात्र है, स्वयं में साध्य (End) नहीं	मूल्यांकन अपने आप मे एक साध्य है।
4	मापन किसी विद्यार्थी के संबंध में धारणा व्यक्त नहीं करता	मूल्यांकन के आधार पर किसी विद्यार्थी के संबंध में स्पष्ट धारणा बनाई जा सकती है
5	मापन का कार्य साक्ष्यों को एकत्र करना मात्र है ।	मूल्यांकन का कार्य साक्ष्यों का विश्लेषण कर निष्कर्ष निकालना हैं मूल्यांकन उद्देश्य केन्द्रित होता है ।
6	मापन विषय-वस्तु केन्द्रित होता है ।	मूल्यांकन उद्देश्य केन्द्रित होता है ।
7	मापन में अपेक्षाकृत कम समय और श्रम की आवश्यकता होती है ।	मूल्यांकन में अधिक समय और श्रम अपेक्षित है।
8	मापन वस्तु का परिमाणात्मक या अंकात्मक स्वरूप प्रदर्शित करता है ।	मूल्यांकन मे परिमाणात्मक और गुणात्मक दोनों प्रकार का विश्लेषण किया जाता है ।
9	मापन में स्थिति विशेष का ही ज्ञान होता है यह समग्र वातावरण से पृथक् रहता है।	मूल्यांकन सम्पूर्ण वातावरण के संदर्भ में स्थिति का ज्ञान कराता है ।
10	मापन किसी भी समय किया जा सकता है।	मूल्यांकन एक सतत् सम्पन्न होने वाली प्रक्रिया है ।
11	मापन के आधार पर सार्थकता के साथ भविष्यवाणी नहीं की जा सकती ।	मूल्यांकन में सार्थकता के साथ भविष्यवाणी की जा सकती ।

8.5 अच्छे मूल्यांकन की विशेषताएँ

1 विश्वसनीयता- इस गुण के कारण मूल्यांकन सदैव परिस्थिति, समय और स्थान निरपेक्ष होता है । किसी एक मूल्यांकन उपकरण को बार-बार प्रयुक्त करने पर भी परिणामों में कोई अन्तर नहीं आता ।

2 वैधता- जिस बात की जाँच करनी हैं, उसी की जाँच करना वैधता कहलाता है । मूल्यांकन उपकरण ऐसा होना चाहिए जो निर्धारित बात की ही जाँच करे, उससे हटकर किसी अन्य की नहीं ।

3 व्यापकता- अधिगम ज्ञान के अधिकाधिक पक्षों को समाहित करना मूल्यांकन की व्यापकता को दर्शाता है । अतएव मूल्यांकन के अन्तर्गत व्यक्तित्व के सभी पहलुओं की जाँच होनी चाहिए । राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1986 में मूल्यांकन के इस लक्षण पर बहुत बल प्रदान किया गया है।

4 वस्तुनिष्ठता- अलग-अलग व्यक्तियों के द्वारा अलग-अलग समय पर देखे जाने पर भी उत्तरों और अंकन-स्थिति में भिन्नता न आना वस्तुनिष्ठता है । वस्तुनिष्ठता के गुण के कारण किसी वस्तु या स्थिति का मूल्यांकन कोई भी व्यक्ति करे, परिणाम सदैव समान रहते हैं । इस प्रकार एक अच्छा मूल्यांकन वस्तु पर आधारित होता है, उसमें व्यक्तिगत धारणाओं या व्यक्तिनिष्ठता का कोई स्थान नहीं होता ।

5 विभेदकारिता- अच्छे मूल्यांकन की एक विशेषता विभेदकारिता की होती है इस विशेषता के कारण मूल्यांकन से उत्तम, औसत और औसत से कम योग्यता वाले विद्यार्थियों को अलग-अलग किया जा सकता है।

6 निरंतरता- मापन के विपरीत मूल्यांकन एक ऐसी प्रक्रिया है जो निरंतर चलती रहती है राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1966 में मूल्यांकन की इस विशेषता पर बहुत बल दिया गया है।

7 व्यावहारिकता- मूल्यांकन की विधा और उपकरण ऐसे हों जो समय, शक्ति, श्रम, व्यय, व्यवस्था आदि की दृष्टि से ग्राह्य, सुगम और सुलभ हों । मूल्यांकन के इस गुण के कारण ही इसकी सहज और व्यवस्थित प्रयुक्ति संभव होती है ।

8.6 अभ्यासार्थ-प्रश्न

1 मूल्यांकन संबंधी त्रिकोण के बिन्दुओं की विवेचना करते हुए तीनों का पारस्परिक संबंध व्यक्त करने वाला रेखाचित्र बनाइए ।

2 मूल्यांकन और मापन के मूलभूत अन्तर का उल्लेख कीजिए ।

3 मूल्यांकन का अर्थबोध स्पष्ट करने वाली विशेषताओं पर प्रकाश डालिए ।

8.7 मूल्यांकन के उपकरण और प्रविधियाँ

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि मूल्यांकन अनेक उद्देश्यों से किया जाता है । उद्देश्यों के अनुसार मूल्यांकन के उपकरणों में परिवर्तन हो जाता है । मूल्यांकन के लिए अनेक उपकरण प्रयुक्त किए जाते हैं । सुविधा की दृष्टि से उन्हें निम्नांकित चार भागों में विभक्त किया जा सकता है-

1 परीक्षण उपकरण

2 स्वयं आलेख उपकरण

3 अवलोकनात्मक उपकरण

4 प्रक्षेपी उपकरण

1 **परीक्षण उपकरण** - ये उपकरण परीक्षण के रूप में होते हैं । परीक्षण द्वारा व्यक्ति के एक निश्चित समय के व्यवहार का अध्ययन किया जाता है । ये परीक्षण व्यक्ति की रुचि, अभिरुचि, अभिवृत्ति, उपलब्धि व्यक्तित्व आदि के मूल्यांकन हेतु प्रयुक्त किए जाते हैं । ये परीक्षण मौखिक, लिखित अथवा प्रयोगात्मक रूप में हो सकते है । ये वस्तुनिष्ठ, निबंधात्मक, शिक्षक द्वारा निर्मित, साधारण या प्रमाणीकृत हो सकते हैं । ये परीक्षण निम्नलिखित माध्यमों से दिए जा सकते हैं-

1. लिखित परीक्षा के माध्यम से
2. मौखिक परीक्षा के माध्यम से
3. प्रयोगात्मक परीक्षा के माध्यम से
4. निष्पादन के माध्यम से
5. व्यक्ति द्वारा निर्मित कृतियों के माध्यम से ।

2 **स्वयं आलेख उपकरण** - प्रत्येक व्यक्ति स्वयं के संबंध में अनेक सूचनाएँ रखता है । वह अपने संबंध में क्या सोचता है? कैसे सोचता है? कब प्रसन्न होता है? कौनसी बात और वस्तु उसे पीड़ा पहुँचाती है? आदि पक्षों पर व्यक्ति से मूल्यांकन के लिए प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप से सूचनाएँ एकत्र की जाती हैं । ये सूचनाएँ निम्नांकित उपकरणों को प्रयुक्त कर एकत्र की जा सकती हैं-

1 प्रश्नावली   2. आत्मकथा   3. व्यक्तिगत डायरी
4. वार्ता   5. प्रत्यक्ष प्रश्न   6. साक्षात्कार अनुसूची

3 **अवलोकनात्मक उपकरण** - व्यक्ति के संबंध में अवलोकन और अनुभवों के आधार पर सूचनाएँ एकत्र की जा सकती है अवलोकन और अनुभवों का यह संकलन वैज्ञानिक विधियों पर आधारित होना चाहिए । अवलोकन प्रविधि के लिए विभिन्न प्रकार के उपकरण प्रयुक्त किए जाते है । इन उपकरणों की प्रयुक्ति और प्राप्त दत्तों (आंकडों) की व्याख्या करने में सावधानी अपेक्षित है । इन उपकरणों में निम्नांकित प्रमुख हैं-

1 घटना वृत्त अभिलेख   2. चैक लिस्ट
3. रेटिंग स्केल   4. समाजमिति तकनीक
5. पहचानो कौन (?) (Guess who? technique)

4 **प्रक्षेपी उपकरण** - इन उपकरणों के माध्यम से व्यक्ति के व्यक्तिगत-सामाजिक समायोजन संबंधी पक्षों का मूल्यांकन किया जाता है । इनमें व्यक्ति अपनी भावनाओं का प्रक्षेपण करता है और उन प्रक्षेपणों का मूल्यांकन निश्चित नियमों और सिद्धांतों के माध्यम से किया जाता है । निम्नलिखित प्रक्षेपी उपकरण अधिक प्रचलन में हैं-

1 स्याही के धबों का प्रत्यक्षीकरण   2. वाक्य पूर्ति
3. गुड़िया खेल   4. चित्रों की व्याख्या

8.8 हिन्दी भाषायी मूल्यांकन

हिन्दी विषयक मूल्यांकन में श्रवण, वाचन, शब्द भण्डार-विकास, वाक्य विन्यास, भाषा प्रयोग आदि के संदर्भ में ज्ञान, अर्थग्रहण, अभिव्यक्ति, अभिवृत्ति, श्लाघा और मौलिकता परक उद्देश्यों की प्रधानता रहती है। निम्नलिखित विवरण से इन उद्देश्यों की स्पष्टता समझी जा सकती हैं-

हिन्दी शिक्षण संबंधी उद्देश्य और विवरण

क्रम	उद्धेश्य	विवरण
1.	ज्ञान	भाषा तत्वों और विषय-वस्तु संबंधी सामग्री।
2.	अर्थग्रहण	विश्लेषण, संश्लेषण , कार्यकरण संबंध त्रुटिया पकड़ना, तुलना करना ,अंतर करना उदाहरण देना, संबंध बताना वर्गिकरण करना संक्षिप्तीकरण, विस्तृतीकरण
3.	अभिव्यक्ती	भावों और विचारों को मौखिक अथवा लिखित रूप से प्रकट करना, वर्तनी, विराम चिन्ह, वाक्य-रचना, रचना, कथन, उत्तर देना, शीर्षक देना आदि ।
4	अभिवृत्ति	जीवन मूल्य, प्रेरणा, शिक्षा आदि ।
5.	श्लाघा	भावपूर्ण स्थलों की पहचान एवं श्लाघा (प्रशंसा)
6.	मौलिकता	नवीन उदभावनाएँ व्यक्त करना, कल्पनाशीलता का परिचय देना, रचना, कथन, सर्जनातमक लेखन आदि।

8.9 नील पत्र (ब्लूप्रिंट)

कक्षा शिक्षण में भाषा और अन्य विषयों के संदर्भ में विद्यार्थियों के द्वारा प्राप्त किए गए अधिगम-ज्ञान का लिखित मूल्यांकन करने हेतु प्रश्न-पत्र का निर्माण किया जाता है, जिसे उपलब्धि परीक्षण पत्र कहा जाता है । प्रश्न-पत्र को उद्देश्यों प्रकरणों और प्रश्नों के प्रकार की दृष्टि से युक्तिसंगत अंकभारयुक्त बनाना आवश्यक है । एतदर्थ, प्रश्न-पत्र बनाने से पहले उद्देश्यों विषयवस्तु और प्रश्नों के प्रकार के अनुसार अंकभार निर्धारित किए जाते हैं । इस समस्त सूचनाओं को सम्मिलित करते हुए पूरे प्रश्न-पत्र की विस्तृत रूपरेखा तैयार की जाती है । इस रूपरेखा को नील पत्र (ब्लूप्रिंट) कहते हैं ।

नीलपत्र निर्मित कर लेने से प्रश्न-पत्र निर्माण का कार्य सरल और सहज हो जाता है इससे यह भलीभाँति ज्ञात हो जाता है कि किस प्रकरण में से किस उद्देश्य के किस प्रकार के प्रश्न निर्मित करने हैं और उनका कितना अंकभार होगा?

यहाँ उद्देश्यों विषयवस्तु और प्रश्न प्रकारों संबंधी अंकभार स्पष्ट करते हुए नील पत्र का एक नमूना दिया जा रहा हैं-

प्रश्न-पत्र का आरूप (Format)

कक्षा- IX **विषय-हिन्दी** **पूर्णांक-100**

उद्देश्यानुसार अंकभार-

उद्देश्य	अंकभार	प्रतिशत अंकभार
ज्ञान	32	32
अर्थग्रहण	30	30
अभिव्यक्ति	16	16
अभिवृत्ति	06	06
श्लाघा	08	08
मौलिकता	08	08
योग	**100**	**100**

विषय-वस्तु के अनुसार अंकभार-

विषय-वस्तु (प्रकरण)	अंकभार	प्रतिशत अंकभार
गद्य	40	40
पद्य	30	30
व्याकरण	10	10
श्रचना	20	20
योग	**100**	**100**

प्रश्न प्रकारानुसार अंकभार-

प्रश्न प्रकार	प्रति प्रश्न अंक	प्रश्नों की संख्या	अंकभार	प्रतिशत अंकभार
वस्तुनिष्ठ	02	14	28	28
लघूत्तर	04	08	32	32
निबंधात्मक	08	05	40	40
योग	**14**	**27**	**100**	**100**

8.10 विषय-वस्तु आधारित प्रश्नों का निर्माण

प्रश्न रूप

उक्त विवरण से स्पष्ट है कि प्रश्न-पत्र में प्रमुखत: तीन प्रकार के प्रश्न- वस्तुनिष्ठ, लघूत्तर और निबंधात्मक सम्मिलित किए जाते हैं । इन तीनों प्रकार के प्रश्नों-संबंधी विवरण और उनके उदाहरण निम्नानुसार हैं-

(1) वस्तुनिष्ठ प्रश्न

इस प्रकार के प्रश्नों के उत्तर निश्चित होते हैं और इनके अंकन में वैयक्तिकता अथवा व्यक्तिनिष्ठता का कोई स्थान नहीं होता । इस कारण इन प्रश्नों की विश्वसनीयता सर्वाधिक होती है वस्तुनिष्ठ प्रश्न कई प्रकार के होते हैं, उनमें से कतिपय निम्नानुसार हैं-

1. बहु विकल्पात्मक प्रश्न

ये प्रश्न कथन के रूप में पूछे जाते हैं । प्रश्न के साथ कथन से संबंधित चार या पाँच विकल्प दिए जाते हैं । विद्यार्थी को सही विकल्प का चयन कर उसका क्रमाक्षर प्रश्न के अंत में दिए गए रिक्त कोष्ठक में अंकित करना होता है । विकल्प निर्धारित करने का कार्य बहुत कठिन होता हैं, क्योंकि अपेक्षा यह होती है कि बिना ठोस ज्ञान के विद्यार्थी मात्र अनुमान से सही विकल्प का चुनाव न कर सके । इस प्रकार के प्रश्नों का उपयोग ज्ञानात्मक उद्देश्य के प्रत्यभिज्ञान (पहचान) या प्रत्यास्मरण के लिए भी किया जाता है और अर्थग्रहण की योग्यता को जाँचने के लिए भी । उदाहरणार्थ-

प्रश्न -

सही शब्द रूप है-

(अ) अनुग्रहित । (आ) अनुग्हित ( )

(इ) अनुगृहीत (ई) अनुग्रहीत ( )

प्रश्न - प्रकृति का कोमल चितेरा कवि है-

(अ) जयशंकर प्रसाद (आ) सुमित्रानंदन पंत ( )

(इ) रामनरेश त्रिपाठी (ई) सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' ( )

2 सत्यासत्य अथवा हाँ / नहीं उत्तर वाले प्रश्न-

इन प्रश्नों/कथनों के उत्तर सत्य/असत्य अथवा हाँ/नहीं के रूप में देने होते हैं । इनमें सही उत्तर पर सही का निशान (✓) लगाना होता है ।

उदाहरणार्थ -

* तुलसीदास की उपासना माधुर्यभाव की थी । सत्य/असत्य
* 'राम चरित मानस' की भाषा ब्रज हैं हा/नहीं
* सूरदास की भक्ति सख्य भाव की थी । हाँ/नहीं

3. मिलान पद के प्रश्न

इस प्रकार के प्रश्न के दो स्तंभ होते हैं । उनमें से एक स्तंभ को स्थिर या नियंत्रित रखा जाता है और दूसरे को खुला या मुक्त । दोनों में क्रम भंग रखा जाता है । परीक्षार्थियों को स्थिर स्तंभ के शब्द के सामने उसके जोड़ीदार या मिलान वाले शब्द या अंश का क्रमाक्षर लिखना होता है। मिलान पद वाले प्रश्न अर्थग्रहण क्षमता विकास के साथ-साथ प्रत्यास्मरण के लिए भी प्रयुक्त हो सकते हैं । उदाहरणार्थ -

* नीचे पहले स्तंभ में कवियों के नाम और दूसरे स्तंभ के कोष्ठकों में क्रमाक्षर के आगे कृतियों के नाम बिना क्रम के दिए गए हैं। कवि के नाम के आगे निर्धारित रिक्त स्थान में उनकी कृति का सही क्रमाक्षर लिखिए-

क्रम	कवि का नाम	रिक्त स्थान	क्रमाक्षर	कृति का नाम
1.	रामधारी सिंह 'दिनकर'	....	(क)	साकेत
2.	अयोध्यासिंह उपाध्याय	....	(ख)	मधुशाला
3.	जयशंकर प्रसाद	....	(ग)	कुरुक्षेत्र
4.	मैथिलीशरण गुप्त	....	(घ)	प्रिय प्रवास
5.	हरिवंशराय बच्चन	....	(ङ)	कामायनी

4. वर्गीकरण या विभेदीकरण पद-

इस प्रकार के वस्तुनिष्ठ प्रश्न में समान वर्ग के नामों के साथ विजातीय नाम मिला दिया जाता है । परीक्षार्थी को इस विजातीय नाम को रेखांकित करना होता है । इस प्रकार के प्रश्नों का प्रयोजन प्रत्यास्मरण और पहचान क्षमता के परीक्षण का होता हैं । उदाहरणार्थ

* निम्नलिखित शब्दों में से भिन्न शब्द को रेखांकित कीजिए-

  कुशल, निष्णात, प्रवीण, चारुता

इस प्रकार के प्रश्नों का एक अन्य रूप भी होता है, जिसमें कथन देकर सामने के कोष्ठक में उनसे संबंधित नाम या शब्द लिखवाए जाते हैं- यथा

* नीचे कुछ कथन दिए गए है ये कथन कबीर, सूर या तुलसी से संबंधित हैं । जो कथन जिस कवि से संबंधित हो उसके सामने के रिक्त कोष्ठक में उसका नाम लिखिए-

क्रम	कथन	रिक्त कोष्ठक
1.	वे निर्गुण के उपासक थे ।	( )
2.	उन्होने मात्र ब्रजभाषा में काव्य रचना की	( )
3.	वे श्रृंगार और वात्सल्य के कुशल चितेरे थे ।	( )
4.	उनका ब्रज और अवधि पर समान अधिकार था ।	( )
5.	उन्होंने मूर्तिपूजा और कर्मकाण्ड का घोर विरोध किया ।	( )
6.	उनकी बातें सुनने में कड़वी लगती थीं ।	( )
7.	उनकी उपासना सख्य भाव की थी ।	( )
8.	उनकी भाषा सधुक्कड़ी अर्थात खिचड़ी थी ।	( )

5. रिक्त स्थान की पूर्ति वाले प्रश्न-

इन प्रश्नों को, कथन के रूप में, रिक्त रथान देते हुए लिखते हैं । कथन के अंत में कोष्ठक में रिक्त स्थान की पूर्ति से संबंधित दो या तीन शब्द अंकित होते हैं । विद्यार्थी को इन शब्दों में से सही शब्द का चयन कर रिक्त स्थान में लिखना होता है यथा - उन्होंने मात्र ब्रजभाषा में काव्य रचना की

* नीचे दिए गए रिक्त स्थानों में उपयुक्त शब्द का चयन कर लिखिए-
* तुलसी के मुख्य आराध्यदेव .... थे ।

  (राम, कृष्ण, शिव, हनुमान)
* 'रामचरित मानस' की भाषा. .... हैं

  (ब्रज, भोजपुरी, अवधी)

(2) लघूत्तर प्रश्न

नाम के अनुरूप ये प्रश्न ऐसे होते हैं जिनके उत्तर छोटे होते हैं । इनके उत्तरों की सीमा सामान्यत: छोटी कक्षाओं में 15 से 20 शब्दों तक तथा बड़ी कक्षाओं में 50 से 60 शब्दों तक होती है । उत्तर सीमित शब्दों में होने से प्रश्न-पत्र में इस प्रकार के प्रश्नों की संख्या बढ़ाई जा सकती है । प्रश्नों की संख्या बढ़ने से मूल्यांकन में व्यापकत्व आ जाता है और प्रश्न-पत्र में पाठ्यक्रम के अधिक भाग को समाविष्ट करने के अवसर मिल जाते हैं । इस प्रकार के प्रश्न अर्थग्रहण उद्देश्य के अंतर्गत कारण, परिणाम, तुलना, विश्लेषण, संश्लेषण, सारांश, शीर्षक-लेखन आदि के लिए भी बनते हैं और प्रत्यास्मरण की जाँच के लिए भी । उदाहरणार्थ-

* 'दशानन' शब्द का समास विग्रह कीजिए और समास का प्रकार बताते हुए स्पष्ट कीजिए कि इसमें किस प्रकार के शब्द रूपों से मिल कर क्या परिवर्तन हुआ है?
* 'साहित्य की महत्ता' पाठ में लेखक ने साहित्य की क्या परिभाषा दी है? स्पष्टत: लिखिए।
* 'पंच परमेश्वर' कहानी में झगडू साहू के द्वारा अलगू चौधरी पर मुकदमा दायर करने के दो कारण लिखिए ।

(3) निबंधात्मक प्रश्न

इस प्रकार के प्रश्नों की उत्तर सीमा अधिक होती है । यह छोटी कक्षाओं में 50 से 60 शब्दों तक तो बड़ी कक्षाओं में 300 से 400 शब्दों तक होती है । हिन्दी विषय में निबंधात्मक प्रश्नों के दो स्तर होते हैं-

(1) विस्तृत उत्तर वाले प्रत्यास्मरण, अर्थग्रहण और मौलिकता उद्देश्ययुका निबंधात्मक प्रश्न, और

(2) अभिव्यक्ति और मौलिकता के उद्देश्य वाले प्रश्न, जिनमें निबंध, पत्रादि आते हैं ।

उदाहरणार्थ-

* 'गौतमी' शीर्षक कविता के अनुसार गौतमी को किस बात का दुःख था, उसे गौतम ने किस प्रकार दूर किया? (उत्तर सीमा-100 शब्द)
* निम्नलिखित में से किसी एक विषय पर लगभग 300 शब्दों का निबंध लिखिए-
  (अ) यदि मैं प्रधानमंत्री होता!
  (आ) सुनामी त्रासदी
  (इ) सूर-सूर तुलसी शशि

8.11 उत्तर तालिका निर्माण

उक्त विवेचन में विषयवस्तु आधारित विभिन्न प्रकार के प्रश्नों को सोदाहरण स्पष्ट किया गया है । इन प्रश्नों को नील पत्र के अनुसार निर्मित कर क्रमानुसार लिख कर प्रश्न-पत्र तैयार किया जाता है । प्रश्न पत्र पूरी तरह बन जाने पर उसकी उत्तर तालिका का निर्माण किया जाता है। उत्तर तालिका में प्रश्नवार उत्तर एवं उनके उत्तर अथवा उत्तर संकेत के साथ निर्धारित अंकों का उल्लेख किया जाता है । उत्तर तालिका निम्नांकित प्रारूप में तैयार की जाती है-

उत्तर तालिका

कक्षा IX **विषय - हिन्दी** **समय - 3 घंटे** **पूर्णाक - 100**

प्रश्न क्रमांक	**अपेक्षित उत्तर**	**उत्तर संकेत**	**निर्धारित अंक**

8.12 खुली पुस्तक परीक्षा

किसी-किसी विद्यालय में एक नवाचारयुक्त परीक्षा प्रणाली भी प्रयुक्त की जाने लगी है, जिसमें परीक्षाकाल में विद्यार्थियों द्वारा पुस्तकों के उपयोग की छूट होती है । इस प्रकार की परीक्षा के अंतर्गत विद्यार्थियों को प्रश्न-पत्र और उत्तर पुस्तिका देकर निश्चित समय के लिए पुस्तक/पुस्तकों को प्रयुक्त करने की सुविधा प्रदान की जाती है । विद्यार्थी पुस्तक/पुस्तकों में से प्रश्नों के उत्तर ढूँढ कर उत्तरपुस्तिका में लिखते हैं ।

इस प्रकार की परीक्षा प्रणाली से विद्यार्थियों में स्वाध्याय और अधिकाधिक अध्ययनशील होने की प्रवृत्ति के विकास की अधिक संभावना होती है । अतएव इस प्रकार की परीक्षा प्रणाली उपयोगिता की दृष्टि से सुविधापूर्ण और श्रेष्ठ है ।

8.13 प्रश्न बैंक

परीक्षा के क्षेत्र में एक प्रयोग प्रश्न-बैंक का है । प्रश्न बैंक प्रश्नों का एक संकलन होता है, जिसमें विषय विशेष से संबंधित प्रश्न बड़ी संख्या में दिए जाते हैं । प्रश्न बैंक में विद्यार्थियों के लिए विषयवस्तु और प्रश्न प्रकार की दृष्टि से अनेक प्रश्न समाहित किए जाते हैं । इससे उन्हें विषय-वस्तु से संबंधित अंशों को भली-भाँति समझने की वांछित सुविधा और सहायता प्राप्त हो जाती है ।

8.14 अभ्यासार्थ प्रश्न

1 मूल्यांकन के उपकरण और प्रविधियों का स्पष्टोल्लेख कीजिए ।

2 नील पत्र में किन-किन सूचनाओं को सम्मिलित किया जाता है? उल्लेख कीजिए ।

3 निम्नलिखित पर टिप्पणी लिखिए

(क) खुली पुस्तक परीक्षा

(ख) प्रश्न बैंक

8.15 हिन्दी विषयक निदानात्मक परीक्षण और उपचारात्मक शिक्षण

'निदान' और 'उपचार' दोनों शब्द शिक्षा के क्षेत्र में चिकित्सा विज्ञान से आए हैं रोगी के आने पर चिकित्सक सबसे पहले रोगी के लक्षणों और अन्य उपकरणों की सहायता से यह ज्ञात करने का प्रयत्न करता है कि रोग क्या है? रोग का पता लगाने की यह प्रक्रिया निदान कहलाती है भली-भाँति रोग का निदान हो जाने पर ही उसके इलाज या उपचार की व्यवस्था करना संभव होता है ।

शिक्षा के क्षेत्र में भी शिक्षक विद्यार्थियों की विषयगत कमियों और कठिनाइयों को ज्ञात करने के लिए निदान करता है । यह निदान करने की प्रक्रिया ही निदानात्मक परीक्षण कहलाती है। निदानात्मक परीक्षण से ज्ञात होने वाली कमियों और कठिनाइयों को दूर करने के लिए की जाने वाली समुचित शिक्षण व्यवस्था को उपचारात्मक शिक्षण कहते हैं ।

निदान और उपचार ये दोनों कार्य शिक्षण प्रक्रिया के अभिन्न पहलू हैं अत: शिक्षण में दोनों साथ-साथ चलते हैं । ये दोनों एक दूसरे के पूरक एवं सहायक हैं । ये एक दूसरे के बिना अर्थहीन और प्रभावशून्य होते हैं । यदि विद्यार्थियों की न्यूनताओं के क्षेत्र, प्रकार और कारणों को सम्यक् रूपेण ज्ञात कर लिया जाय और तदनुरूप अपेक्षित उपचार या उन्हें दूर करने के समुचित उपाय न किए जाएं तो निदान करने तक का सारा श्रम, व्यय, समय और प्रयास निरर्थक होगा । इसी प्रकार यदि प्रारंभ में कमी या कठिनाई का विधिवत निदान न किया जाय तो उपचार का कोई ठोस आधार ही नहीं बनेगा ।

8.15.1 निदानात्मक परीक्षण एवं उपचारात्मक शिक्षण की आवश्यकता महत्त्व और आयोजन

निदानात्मक परीक्षण की आवश्यकता और इसका महत्त्व निम्नलिखित बिन्दुओं से स्पष्ट होता हैं-

1 निदान द्वारा विद्यार्थियों की सीखने की कमियों, कठिनाइयों और उनके कारणों को ज्ञात किया जाता है । यथा- वाचन की कठिनाई, उच्चारण की कठिनाई, लेखन की कठिनाई, वर्तनी की कठिनाई, शब्द प्रयोग की कठिनाई, व्याकरण सम्मत भाषा प्रयोग की कठिनाई, अनुच्छेद योजना की कठिनाई, विराम चिह्नों के समुचित प्रयोग की कठिनाई, शब्द कोश के उपयोग की कठिनाई आदि।

2 निदानात्मक परीक्षण से इन कठिनाइयों की विशद् और सूक्ष्म जानकारी मिलती है । साथ ही कठिनाइयों के कारण भी ज्ञात होते हैं, जिससे उन्हें दूर करने हेतु उपचारात्मक शिक्षण का आयोजन करना संभव होता है ।

3 इन कठिनाइयों का सूक्ष्मता से विश्लेषण किया जाता है और एक-एक बिन्दु पर कठिनाई का विवरण तैयार किया जाता है ।

4 इसके आधार पर भाषा की संरचना के सांचे तैयार किए जाते हैं, जिन्हें इस क्रम में जमाया जाता है कि विद्यार्थी की कठिनाई के स्तर और बिन्दु का पता लगाया जा सके। इन सांचों को समेकित रूप से नैदानिक परीक्षण पत्र कहा जाता है ।

5 कठिनाई के क्षेत्र, बिन्दु और स्तर का निदान हो जाने पर अभ्यासों के शिक्षण की योजना बनाई जाती है । इस योजना के क्रियान्वयन को उपचारात्मक शिक्षण कहते हैं इससे कठिनाइयों और उनके कारणों को दूर किया जाता है।

6 निदान और उपचार की प्रयुक्ति से शिक्षण प्रक्रिया की प्रभावशीलता बढ़ती है और विद्यार्थियों को उनकी योग्यता और सामर्थ्य के अनुसार प्रगति करने के अवसर मिलते हैं।

7 इनसे मन्दगति से पढ़ने वाले विद्यार्थियों की हीनभावना दूर होती है तथा उनके व्यक्तित्त्व का समुचित विकास संभव होता है। परिणामत: पिछड़ जाने के कारण विद्यार्थियों की बीच में ही पढ़ाई छोड़ने की स्थिति नहीं बनती और शैक्षिक अपव्यय भी नहीं होता।

8.15.2 निदानात्मक परीक्षण और उपचारात्मक शिक्षण के उद्देश्य

भाषा शिक्षण में निदानात्मक परीक्षण और उपचारात्मक शिक्षण के निम्नांकित उद्देश्य हैं-

1 विद्यार्थियों के भाषा संबंधी पिछड़ेपन के क्षेत्र, प्रकार और कारण ज्ञात कर उन कारणों को दूर करते हु ए विद्याथियों को स्तरानुकूल बनाना ।

2 विद्यार्थियों की भाषा संबंधी कुशलताओं में द्रुतगति से विकास करना ।

3 उनके सबल क्षेत्रों की पहचान कर उन्हें स्तरीय उच्चता प्राप्त करने में सहयोग करना ।

हिन्दी में निदानात्मक परिक्षण एवं उपचारात्मक शिक्षण के उपयुक्त क्षेत्र-

हिन्दी शिक्षण में निदान और उपचार कार्य के क्षेत्र निम्नलिखित हो सकते हैं- वाचन, उच्चारण, लेखन, वर्तनी, व्याकरण सम्मत भाषा प्रयोग, वाक्य रचना, अनुच्छेद-योजना, रचना कार्य, विराम चिह्नों का यथोचित प्रयोग आदि । इनके अतिरिक्त मौखिक अभिव्यक्ति और लिखित अभिव्यक्ति में प्रभावशीलता और प्राणीण्य लाने के लिए भी इनका उपयोग किया जा सकता है ।

नैदानिक परीक्षण पत्र तैयार करने की प्रक्रिया-

नैदानिक परीक्षण उपलब्धि परीक्षण से भिन्न है । उपलब्धि परीक्षण में जहाँ यह ज्ञात करते है कि विद्यार्थी को विषय वस्तु का कौनसा अंश कितना आता है, वहाँ नैदानिक परीक्षण से यह ज्ञात करने का प्रयास किया जाता है कि विद्यार्थी को किसी प्रकरण विशेष के किसी अंश में क्या नहीं आता है और क्यों नहीं आता है? यह ज्ञात करने हेतु सुविधा और आवश्यकतानुसार विविध प्रकार के उपकरणों का प्रयोग भी किया जाता हैं इन परीक्षणों में वस्तुनिष्ठ और लघूत्तर प्रश्न ही सम्मिलित किए जाते हैं इनमें विषय-वस्तु और उद्देश्यों का

विस्तार भी कम होता हैं एक शिक्षण बिन्दु से संबंधित अनेक उद्देश्यों और एक उद्देश्य से संबंधित अनेक शिक्षण बिन्दुओं पर निदानात्मक परीक्षण पत्र तैयार किए जा सकते हैं अधिक विस्तार और सूक्ष्मता की अपेक्षा होने से संपूर्ण विषय अथवा पाठ से संबंधित निदान एक प्रश्न-पत्र से संभव नहीं होता ।

8.15.3 नैदानिक परीक्षण पत्र तैयार. करने के सोपान

1 नैदानिक परीक्षण पत्र तैयार करने के लिए सर्वप्रथम विषय वस्तु का विश्लेषण किया जाता है । इसके अंतर्गत किसी विषय की इकाई की विषय वस्तु को छोटे-छोंटे बिन्दुओं उपबिन्दुओं में विभक्त कर उन्हे सीखने के सूत्र 'सरल से कठिन, की ओर' के अनुसार क्रम में रख लिया जोता है ।

2 प्रत्येक शिक्षण उपबिन्दु पर 3 से 7 तक छोटे-छोटे वस्तुनिष्ठ या लघूत्तर प्रश्न बनाए जाते हैं ।

3 इस प्रकार एक ही शिक्षण बिन्दु के उपबिन्दुओं पर बने छोटे-छोटे प्रश्नों को क्रम देते हुए प्रश्न-पत्र के रूप में एकत्र कर लिया जाता है । यही नैदानिक परीक्षण पत्र होता है।

8.15.4 उपचारात्मक शिक्षण

नैदानिक परीक्षण पत्र बन जाने पर उससे संबंधित विद्यार्थियों पर प्रशासित कर विद्यार्थी वार कमियों और कठिनाइयों का विवरण ज्ञात कर लिया जाता है । तदुपरांत उपचारात्मक उपक्रम प्रारंभ होता है।

प्रत्येक विद्यार्थी के कमजोरी के क्षेत्र एवं त्रुटियों के प्रकार भिन्न होने से उपचारात्मक शिक्षण सामूहिक नहीं होकर वैयक्तिक स्तर पर होता है । हाँ, समान क्षेत्र और समान त्रुटियाँ होने पर विद्यार्थियों के समूह अवश्य बनाए जा सकते हैं। उपचारात्मक शिक्षण करते समय निम्नलिखित बिन्दुओं को दृष्टिगत रखना चाहिए-

1 भाषा की दृष्टि से विद्यार्थी जहाँ हैं, वहीं से उपचारात्मक शिक्षण प्रारंभ करना चाहिए ।

2 विद्यार्थी को समय-समय पर उसकी प्रगति से अवगत कराते रहना चाहिए, इससे उसे पुनर्बलन प्राप्त होगा और उसकी सीखने की गति में वृद्धि होगी ।

3 विद्यार्थी को दिए गए अभ्यासों से यदि वांछित उद्देश्यों की प्राप्ति दृष्टिगोचर नहीं हो तो अभ्यास में यथावश्यक परिवर्तन कर लेना चाहिए ।

4 अभ्यास कार्य के समय छात्र को निरंतर प्रोत्साहित करते रहना चाहिए।

5 उपचार कार्य में विद्यार्थी रुचि लें, एतदर्थ अभ्यास कार्यों में विविधता का समावेश करना चाहिए।

6 उपचारात्मक कार्य की अभ्यास मालाओं को नैदानिक परीक्षण से ज्ञात हुई त्रुटियों या न्यूनताओं पर ही आधारित करना चाहिए । निदान और उपचार में पूरा समन्वय बनाए रखना चाहिए।

8.15.5 उपचारात्मक कार्य के स्वरूप

1 व्यक्तिगत शिक्षण करना।

2 अतिरिक्त गहकार्य देना।

3 अतिरिक्त कक्षा कार्य देना।

4 अधिक संख्या में विद्यार्थी हों तो विशेष कक्षा-शिक्षण का आयोजन करना ।

उपचारात्मक शिक्षण के प्रभाव और परिणाम को जाँचने के लिए निदानात्मक परीक्षण पत्र के समान दूसरा परीक्षण पत्र तैयार कर प्रशासित करना चाहिए जिससे कि यह ज्ञात हो सके कि विद्यार्थी ने किस क्षेत्र में किस सीमा तक प्रगति की है और अभी कौनसे ऐसे क्षेत्र बच गए हैं जिनमें प्रगति अपेक्षानुरूप नहीं हुई। इन क्षेत्रों को दृष्टिगत रखते हुए अभ्यास कार्य में यथोचित परिवर्तन करके अभ्यास दिया जाना चाहिए।

आवश्यकतानुसार अभ्यास कार्य को अभिनय, वाद-विवाद, अंत्याक्षरी जैसी पाठ्य सहगामी प्रवृत्तियों के साथ समन्वित करते हुए अपेक्षाकृत अधिक रुचिपूर्ण और प्रभावी बनाया जाना उपयुक्त होगा।

8.16 सारांश

मूल्यांकन हमारी शिक्षण प्रक्रिया का अपरिहार्य अंग है । विद्यार्थी, शिक्षक और शिक्षण संस्था के प्रति धारणा निर्धारण का मुख्य आधार मूल्यांकन ही होता है ।

मूल्यांकन का संबंध शिक्षण के उद्देश्यों और व्यवहारगत परिवर्तनों के साथ पाठ्यक्रम और अधिगम-अनुभवों से भी होता है। मापन और मूल्यांकन में एक बड़ा अंतर यह है कि मापन में वस्तु के केवल एक पक्ष पर ही ध्यान दिया जाता है, जबकि मूल्यांकन संपूर्ण परिवेश के संदर्भ में स्थिति का विस्तृत जान कराता है । मूल्यांकन एक सुव्यवस्थित और निर्णयात्मक प्रक्रिया है । सतत् और व्यापक मूल्यांकन को संपूर्ण शिक्षण प्रक्रिया के एक आवश्यक और अविभाज्य अंग के रूप में प्रयुक्त करते रहना चाहिए।

एक अच्छा मूल्यांकन, विश्वसनीय, वैध, व्यापक, वस्तुनिष्ठ, विभेदकारी, निरंतर और व्यावहारिक होता।

हिन्दी के मूल्यांकन हेतु बनाए जाने वाले प्रश्न-पत्रों में ज्ञान, अर्थग्रहण, अभिव्यक्ति, अभिवृत्ति, श्लाघा और मौलिकता जैसे उद्देश्यों से संबंधित प्रश्न सम्मिलित किए जाते है । ये प्रश्न-पत्र गद्य, पद्य, व्याकरण और रचना संबंधी विषय-वस्तु से सम्बद्ध होते हैं। प्रश्न-पत्र के प्रश्न वस्तुनिष्ठ, लघूत्तर और निबंधात्मक होते हैं

प्रश्न-पत्र का निर्माण करने से पहले शैक्षिक उद्देश्यों, विषयवस्तु और प्रश्न प्रकारानुसार अंकभार निर्धारित किया जाता है । इसके उपरांत उक्त तीनों प्रकार की सूचनाओं को सम्मिलित करते हुए प्रश्न-पत्र की विस्तृत रूपरेखा बनाई जाती है, जिसे नील पत्र (ब्लूप्रिंट) कहते हैं । नील पत्र प्रश्न-पत्र का निर्माण करने के लिए आधार का कार्य करता है ।

कक्षा शिक्षण के समय भाषायी कौशलों के विकास की दृष्टि से जो विद्यार्थी अपने सहपाठियों से बहुत पिछड़ जाते हैं, उनकी कमजोरी के क्षेत्रों और स्तर को ज्ञात करने के लिए निदानात्मक परीक्षण किया जाता है । कमजोरी का निदान हो जाने पर उसे दूर करने के लिए जो उपक्रम किया जाता है, वह उपचारात्मक शिक्षण कहलाता है । शिक्षण प्रक्रिया में निदानात्मक परीक्षण और उपचारात्मक शिक्षण का विद्यार्थियों की कमजोरी दूर करने की दृष्टि से अप्रतिम स्थान होता है।

8.17 अभ्यासार्थ-प्रश्न

1 मूल्यांकन से क्या तात्पर्य हैं? हिन्दी संबंधी अच्छे मूल्यांकन की विशेषताओं का उल्लेख कीजिए।

2 मापन और मूल्यांकन का अंतर स्पष्ट कीजिए ।

3 नील पत्र किसे कहते हैं? नील पत्र का एक नमूना दीजिए ।

4 विद्यार्थियों की भाषा संबंधी कमजोरियों और कठिनाइयों को दूर करने के लिए आप क्या प्रयत्न करेंगे? प्रकाश डालिए ।

5 "उद्देश्यों के अनुसार मूल्यांकन के उपकरण परिवर्तित हो जाते हैं" सोदाहरण विवेचना कीजिए।

8.18 अध्ययन हेतु संदर्भ पुस्तकें सूची

1. तिवारी, पुरूषोत्तम लाल : हिन्दी शिक्षण, जयपुर: राजस्थान ग्रंथ अकादमी, 1992
2. पाण्डेय, रामशकल: हिन्दी शिक्षण, आगरा : विनोद पुस्तक मन्दिर, 1999
3. भार्गव, महेश : आधुनिक मनोवैज्ञानिक परीक्षण एवं मापन, आगरा, भार्गव बुक हाउस, 1982
4. शर्मा, बी. एन. : हिन्दी शिक्षण, आगरा साहित्य प्रकाशन, 1997
5. सिंह, निरंजन कुमार : माध्यमिक विद्यालयों में हिन्दी शिक्षण, जयपुर राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी, 1990

इकाई - 9

हिन्दी में अनुदेशनात्मक शिक्षण सामग्री का विकास एवं हिन्दी की पाठ्य-पुस्तक निर्माण एवं मूल्यांकन

(Development of Instructional Materials in the Subject, Text Book, Its Preparation and Evaluation)

इकाई की रूपरेखा

9.0 भूमिका एवं उद्देश्य
9.1 अभिक्रमित अनुदेशन तथा अनुदेशनात्मक सामग्री का पूर्व नियोजन
9.2 अनुदेशनात्मक सामग्री की आवश्यकता
9.3 अनुदेशनात्मक सामग्री के प्रमुख अंग
9.4 अनुदेशनात्मक सामग्री का महत्व
9.5 अनुदेशनात्मक शिक्षण सामग्री
9.6 अभ्यासार्थ-प्रश्न
9.7 अनुदेशनात्मक शिक्षण सामग्री का विस्तार
9.8 भाषा की पाठयपुस्तक - (हिन्दी)
    9.8.1 पाठ्यपुस्तक की आवश्यकता एवं उपयोगिता
    9.8.2 मातृभाषा की पाठ्यपुस्तक रचना के सिद्धान्त अभ्यास पुस्तिका की उपयोगिता
9.9 अभ्यास पुस्तिका की विशेषताएँ
9.10 पठन कौशल विकास हेतु अनुदेशनात्मक पाठ्य सामग्री
    9.10.1 अतिरिक्त पठनीय पुस्तकों की आवश्यकता
9.11 हिन्दी भाषा कक्ष एवं पत्र-पत्रिकाएँ
9.12 सारांश
9.13 अभ्यासार्थ - प्रश्न
9.14 अध्ययन हेतु - संदर्भ पुस्तक-सूची

9.0 भूमिका एवं उद्देश्य

वर्तमान युग में 'अध्यापक शिक्षा' को एक आजीविका के क्षेत्र के रूप में देखा जाता है । प्रत्येक आजीविका के क्षेत्र में व्यावसायिक कुशलता को अपरिहार्य माना जाता है । इस

कुशलता की प्राप्ति के लिए यह आवश्यक है कि निर्दिष्ट दक्षता क्षेत्र में व्यक्ति अवश्य ही निष्णात हो । इसके अतिरिक्त आधुनिक शिक्षण-अधिगम सामग्री निर्मित करने के क्षेत्र में भी अध्यापक/अध्यापिका का दक्ष होना आवश्यक माना गया है । आधुनिक अनेकानेक शिक्षण - अधिगम सामग्रियाँ शैक्षिक तथा अनुदेशनात्मक तकनीकी कौशल तथा पद्धतियों पर आधारित होते हैं । फलत: अध्यापक शिक्षा के क्षेत्र में शैक्षिक तकनीकी को समावेशित करना आज की अपरिहार्य आवश्यकता बन चुकी है । इतना ही नहीं शिक्षण-पूर्व-अभ्यास के लिए भी जिन सूक्ष्म-शिक्षण और लघु शिक्षण तकनीकों का प्रयोग किया जाता है । वे सभी शैक्षणिक तकनीकी की ही देन हैं । इस इकाई के द्वारा अनुदेशनात्मक शिक्षण सामग्री के विभिन्न आयामों के विषय में आपके अवबोध स्पष्ट हो सकेंगे:-

उद्देश्य

(1) अध्यापक को वैयक्तिक रूप से अनुदेशन प्रदान करने की तकनीक अभिक्रमित अनुदेशन के सन्दर्भ में विशिष्ट ज्ञान प्राप्त होगा ।

(2) विषय-वस्तु का चयन कर पाठ्य पुस्तक के निर्माण के विषय में आवश्यक ज्ञान प्राप्त करेगा ।

(3) अनुदेशन प्रक्रिया सुव्यवस्थित तथा नियोजित रूप से सम्पन्न करने में कुशल हो सकेगा।

(4) अनुदेशनात्मक सामग्री का चयन कर विषय-वस्तु का सतत मूल्यांकन की अभिक्रमित अनुदेशन योग्यता विकसित कर सकेगा ।

9.1 अनुदेशन की परिभाषा

अनुदेशन एक ऐसी प्रविधि है जिसमें शिक्षक की आवश्यकता नहीं होती है । इसमें व्यक्तिगत या कम्प्यूटरसहाय या विद्यार्थी केन्द्रित अनुदेशन के रूप में सीखने के लिए अवसर दिया जाता है । इसमें विद्यार्थी तत्पर होकर अपनी गति एवं क्षमताओं के अनुसार सीखता है और अपनी ज्ञान प्राप्ति का भी बोध करता है । इसे व्यवहार-परिवर्तन की प्रक्रिया मानते है ।

“अनुदेशन प्राणवान अनुदेशनात्मक प्रक्रिया को, स्व अधिगम अथवा स्वअनुदेशन में परिवर्तन करने की वह तकनीक है जिसमें विषय-वस्तु को विभिन्न आयामों में विभाजित किया जाता है इन्हें पढ़कर अनुक्रिया करनी होती हैं और उन्हें ठीक कर अनुक्रिया की प्रतिपुष्टि करनी होती है ।"

9.1 अनुदेशनात्मक सामग्री का पूर्व नियोजन

विद्यार्थियों की अधिगम योग्यता का अधिकाधिक विकास करने के लिए निर्धारित विषय वस्तु को विभिन्न आयामों में विभाजित करके प्रस्तुत किया जाना “अनुदेशनात्मक सामग्री का पूर्व नियोजन" कहलाता है।

विषय-वस्तु के उद्देश्यों का निर्धारण अध्यापन से पूर्वकर लिया जाता है । अध्यापन के पश्चात् उनके व्यवहारगत परिवर्तनों को हम प्राप्त करना चाहते हैं । अध्यापन में अध्यापक सक्रिय अनुक्रिया करता है तो विद्यार्थी अच्छी तरह से सीख लेता है । विषय-वस्तु के प्रत्येक

आयाम के प्रति अध्यापकों के सक्रिय रहने के लिए बाध्य किया जाना चाहिए । उसे सरल से कठिन तथा ज्ञात से अज्ञात की ओर चलने में कठिनाई न हो, इसके लिए हर आयाम पर अनुदेशनात्मक सामग्री का पूर्व नियोजन किया जाता है । अध्यापक को शिक्षण के परिणामों को ज्ञात करने के लिए उसे प्रतिपुष्टि देना चाहिए ताकि सीखने की दशा में अच्छे परिणाम प्राप्त हो सकें है ।

अभिक्रमित अनुदेशन - बीसवीं शताब्दी में "अनुदेशन" के साथ "अभिक्रमित अनुदेशन" और "अभिक्रमित अध्ययन" जैसे शब्द भी शिक्षा-जगत में प्रचुरता से प्रयुक्त होंने लगे । यद्यपि "अभिक्रमित अनुदेशन" शिक्षण जगत के लिए कोई नवीन शैक्षिक प्रयोग नहीं है क्योंकि पञ्चतन्त्र की कहानियाँ अथवा अष्टध्यायी के सूत्रों में इस प्रकार के प्रमाण उपलब्ध हैं कि विद्यार्थी की नवीन ज्ञान ग्रहण की जिज्ञासा बराबर प्रबल होती जाती है, तथापि आधुनिक समय में इस दिशा में प्रथमत: कार्य सन् 1920 में सिडनी के एल. प्रेसी (Sidney L Pressy) ने किया । उसी ने सर्वप्रथम शैक्षिक दृष्टि से कमजोर विद्यार्थियों के लिए ऐसी मशीनों का विकास किया, जिनका प्रयोग शिक्षण एवं परीक्षण दोनों में ही किया जा सके - तदनन्तर बी. एफ. स्किनर (B.F. Skinner) ने 1954 में अधिगम के इस विज्ञान पर अनेक महत्त्वपूर्ण शोध किए । भारत में अभिक्रमित अनुदेशन का प्रारम्भ सन् 1963 में सेनट्रल इन्स्टीट्यूट इलाहाबाद ने किया तदनन्तर 1965 से राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद, दिल्ली तथा एडवान्स स्टडीज केन्द्र बडौदा के शैक्षिक प्रकोष्ठ अनवरत रूप से इस दिशा में कार्य कर रहे हैं- भारत के विभिन्न विश्वविद्यालयों के शिक्षा-संकाय में भी इस दिशा में महत्त्वपूर्ण कार्य सम्पन्न हुए हैं । इस सम्बन्ध में यह भी ज्ञात होना चाहिए कि "अभिक्रमित अनुदेशन" तथा "अभिक्रमित अध्ययन" अन्योन्याश्रित होते हुए भी एक ही सम्प्रत्यय को परिभाषित नहीं करते । "अभिक्रमित अनुदेशन" के अन्तर्गत "अनुदेशन" ्प्देजतनबजपवदेद्ध पर विशेष बल प्रदान किया जाता है और अभिक्रमित अध्ययन में अधिगम अर्थात् स्मतदपदहद्ध पर- अत: इन दोनों में पर्याप्त अन्तर है । प्रस्तुत इकाई में "अभिक्रमित अनुदेशन" के उन मूल सिद्धान्तों का ही उल्लेख किया जाएगा, जिन पर अनुदेशन सामग्री आधारित होनी चाहिए ।

ये सिद्धान्त निम्नलिखित हैं -

(1) लघु पदों का सिद्धान्त- इस सिद्धान्त के अनुसार समस्त पाठ्यवस्तु को छोटे-छोटे पदो में विभक्त कर दिया जाता है जिससे विद्यार्थी उसे सरलता से समझ सके- प्रत्येक लघुपद को एक ढाँचा, थ्तउमद्ध कहते है ।

(2) पुष्टि का सिद्धान्त- विद्यार्थी जब प्रथम ढाँचे के प्रश्नों का उत्तर देता है तब उसके द्वारा प्रदत्त उत्तर के शुद्ध अथवा अशुद्ध होने का ज्ञान अगले ढाँचे में तत्काल ही ज्ञात हो जाती है और विद्यार्थी अपने शुद्ध उत्तरों के आधार पर स्वत: ही आगे बढ़ता जाता है ।

(3) आशु उत्तर का सिद्धान्त- विद्यार्थी को अपने प्रश्नों का उत्तर स्वत: ही प्राप्त होता रहता है उसके बाहय तथा आन्तरिक दोनों ही प्रकार के व्यवहार इसमें ज्ञात होते रहते हैं ।

(4) स्वगति का सिद्धान्त- प्रत्येक विद्यार्थी अपनी क्षमता, योग्यता और गति के अनुसार ही आगे बढ़ता है । इस प्रकार व्यक्तिगत अन्तर के सिद्धान्त का पूर्णतया पालन होता रहता है।

(5) मूल्यांकन का सिद्धान्त- मूल्यांकन इस प्रक्रिया के अन्तर्गत सतत रूप से सम्पन्न होता रहता है।

अभिक्रमित अनुदेशन में विद्यार्थी स्वत: क्रियाशील रहता है, अध्यापक का कोई भय नहीं- इससे विद्यार्थियों की एकाग्रता की शक्ति का भी विकास होता है अत: यह विधि अन्य शिक्षण विद्यियों की अपेक्षा अधिक प्रभावी है।

9.2 अनुदेशनात्मक सामग्री की आवश्यकता

अध्यापक के क्षेत्र में अधिगम अधिगम को प्रभावकारी बनाने के लिए सार्थक प्रयास शिक्षण सामग्री के माध्यम से ही किया जा सकता है जिससे कि शैक्षिक उद्देश्यों की अधिकतम उपलब्धि सम्भव हो सके । शिक्षण प्रक्रिया में (1) विषय-वस्तु या पाठ्यक्रम, (2) उसे हस्तांतरित करने के लिए प्रयुक्त सम्प्रेषण प्रणाली और (3) अधिगम प्रतिफल तीन महत्वपूर्ण आयाम हैं । अनुदेशनात्मक सामग्री के माध्यम से इन तीनों ही क्षेत्रों में सुधार करते हुए प्रक्रिया को प्रभावकारी स्वरूप प्रदान करने के प्रयास किये जाते हैं। "अनुदेशनात्मक सामग्री" वस्तुत: वह शैक्षिक तकनीकी संबंधी क्षेत्र हैं जिसमें हिन्दी, सामाजिक विज्ञान तथा अन्य विषय-वस्तु की शिक्षण प्रक्रिया को प्रभावकारी उद्देश्य केन्द्रित, व्यावहारिक और नियंत्रण योग्य बनाने के लिए प्रयास किया जाता है।"

9.3 अनुदेशात्मक शिक्षण सामग्री के प्रमुख अंग

परिवर्तन प्रकृति का शाश्वत नियम है । हर क्षेत्र में पग-पग पर परिवर्तन हो रहे हैं परिणामत: गत्यात्मकता में वृद्धि हुई है । शिक्षा और अधिगम के क्षेत्र में तकनीकी के प्रवेश से परिवर्तनों का क्षेत्र निरन्तर वृद्धिगत है । विकासोन्मुखी शिक्षण के लिए अनुदेशात्मक शिक्षण तकनीकी का प्रयोग किया जा रहा है । इसके निम्नांकित प्रमुख अंग हैं-

1 पाठ्य क्रम
2 पाठ्य वस्तु
3 पाठ्य-वस्तु विश्लेषण
4 पाठ्य-वस्तु के उद्देश्य निर्धारण के अनुसार- सामग्री
5 शिक्षण विधि एवं-शिक्षण-व्यूह रचना
6 शिक्षण का नेतृत्वीकरण- प्रतिमान, पुनर्बलन, अन्तक्रिया का निर्धारण ।

9.4 अनुदेशात्मक सामग्री का महत्व

सुनियोजित आवश्यक शैक्षिक-सामग्री का अध्यापन के क्षेत्र में अत्यधिक महत्व है । प्रशिक्षण के क्षेत्र में भी इस सामग्री ने नवीन युग का सूत्रपात किया है । प्रयोगात्मक ज्ञान और खोज को इस सामग्री के माध्यम से, अध्यापक शिक्षा में प्रयोग करना आज संभव हो गया है । अनुदेशन के द्वारा शिक्षण-अधिगम की प्रक्रिया में अपेक्षित सुधार करते हुए इसे आज एक प्रणाली का स्वरूप प्रदान किया जा रहा है ।

वस्तुत: दक्षताधारित और प्रतिबद्धता उन्मुख "अध्यापक शिक्षा" कार्यक्रमों में आजीविकागत निष्पादन को महत्व दिया जाता है । इस प्रक्रिया को सफल बनाने के लिए शैक्षिक अनुदेशन तकनीकों का प्रयोग करना एक अनिवार्यता है । शिक्षण के क्षेत्र में भी अधिगम कर्त्ताओं की बढ़ती हुई संख्या और उसी अनुपात में दक्ष एवं कुशल अध्यापक, अध्यापिकाओं के अभाव को देखते हुए शैक्षिक अनुदेशनात्मक सामग्री का प्रयोग करना अपरिहार्य हो गया है । विद्यार्थियों के ज्ञानात्मक पक्ष के साथ-साथ भावात्मक और क्रियात्मक पक्षों में विकास को समतुल्य महत्त्व प्रदान करने के लिए शैक्षिक अनुदेशनात्मक सामग्री की आवश्यकता आज सर्वजन स्वीकृत है । वैयक्तिक विभिन्नता को ध्यान में रखकर कक्षा-कक्ष शिक्षण-अधिगम के लिए भी यह एक वरदान रूप है ।

9.5 अनुदेशनात्मक शिक्षण प्रणाली

प्रभावशाली, दक्ष, कुशल, प्रतिबद्ध और दायित्वपूर्ण अध्यापक शिक्षा की तैयारी की दशा में अनुदेशनात्मक शिक्षण तकनीकी एवं सामग्री अत्यधिक सार्थक और महत्वपूर्ण है । शिक्षण सहायक सामग्री- अन्तर्गत ध्वनि विस्तार से लेकर रेडियो, टेलीविजन, टेपरिकोर्डर, फिल्म प्राजेक्टर, स्लाइड तथा ओवर हैड प्रोजेक्टर आदि भी शैक्षिक तकनीक के कठोर माध्यम के साधन हैं, जिनका प्रयोग सर्वत्र कक्षागत-शिक्षण से लेकर शैक्षिक दूरदर्शन, प्रौढ़शिक्षा और साक्षरता कार्यक्रम दूरस्थ शिक्षा, सैटेलाइट फॉर इन्सट्रकशनल टेलीविजन एक्सपेरिमेंट (साइट) (SITE) आदि का औपचारिक तथा अनौपचारिक शिक्षा के दोनों क्षेत्रों में किया जा रहा है । अनुदेशनात्मक शिक्षण सामग्री को कक्षाध्यापन का उपागम बनाने की दृष्टि से विशेषता निम्नलिखित तीन रूपों में विश्लेषित कर सकते हैं-

9.5.1 व्यक्तिनिष्ठ अनुदेशन प्रणाली

व्यक्तिनिष्ठ अनुदेशन प्रणाली से अर्थ एक ऐसी प्रणाली से लिया जाता है जिसमें व्यक्ति को आधार मान कर कार्य किए जाते हैं । शिक्षा में यह प्रणाली अन्य प्रकार के शिक्षण की अपेक्षा वैयक्तिक शिक्षण पर अधिक आग्रह करती है । इस प्रकार की अनुदेशनात्मक प्रणाली में शिक्षण को विद्यार्थी की वैयक्तिक रुचि, एवं आवश्यकता के अनुसार नियोजित किया जाता है । इस प्रणाली के द्वारा एक ऐसी कार्य पद्धति का विकास किया जाता है, जो केवल तथ्यात्मक सामग्री के स्मरण रखने में ही प्रभावी नहीं होती अपितु प्रत्ययों की कार्यात्मक अवधारणा का विकास करते हुए विद्यार्थियों को अधिक अध्ययनशील बनने के लिए उत्पेरित करने हेतु प्रभावी भूमिका का निर्वाह करती है । इस प्रणाली के अन्तर्गत अध्यापक ऐसी

स्थितियों की व्यवस्था करता है जिनमें विद्यार्थी को सोचने-विचारने के लिए पर्याप्त उत्प्रेरणा प्राप्त होती है ।

इस शैक्षिक प्रक्रिया का प्रथम उद्देश्य विद्यार्थी तथा अध्यापक में अपेक्षाकृत अधिक अच्छे वैयक्तिक सामाजिक सम्बन्ध स्थापित करना है । इसी कारण इस प्रणाली में अध्यापक विद्यार्थी में परस्पर अधिकाधिक अनुक्रिया होती है और अध्यापन अधिगम की समस्याओं का वैयक्तिक स्तर पर ही निवारण कर दिया जाता है।

व्यक्तिनिष्ठ अनुदेशन प्रणाली का दूसरा मुख्य उद्देश्य अधिगम के लिए निरन्तर पुनर्बलन प्रदान करना है जिसका पारम्परित शिक्षा प्रणाली में प्राय: अभाव रहता है ।

इस प्रणाली का एक उद्देश्य अध्यापक के लिए भी सतत प्रोत्साहन में वृद्धि करना है जिससे कि वह अपने शैक्षिक कार्यक्रमों एवं अध्यापन तकनीकों में विद्यार्थी हित की दृष्टि से आवश्यक और सारभूत परिवर्तन कर सकने में सफल हो सके । एक अध्यापक अपने शैक्षिक कार्यों के लिए भिन्न-भिन्न तकनीकों का प्रयोग कर सकता है । विद्यार्थी की उपलब्धियों का मूल्यांकन इस प्रणाली में पूर्व निश्चित मानदण्डों पर अथवा समय की एक निश्चित मात्रा में पाठ्य सामग्री पर विद्यार्थी द्वारा स्वामित्व पर आधारित होता है । अपने वास्तविक रूप में यह प्रणाली विद्यार्थी के लिखित कार्य पर अधिक बल प्रदान करती है । यह प्रणाली की सर्वाधिक महत्वपूर्ण विशेषता यह है कि विद्यार्थी अपने विषय-ज्ञान की पृष्ठभूमि तथा उत्प्रेरणा के आधार पर अपनी ही गति, क्षमता एवं योग्यता के अनुसार सीखता रहता है । भाषिक योग्यता विकास की दृष्टि से यह प्रणाली सर्वोत्तम है क्योंकि इसी में अध्यापक व विद्यार्थी के मध्य प्रत्यक्षत: संपर्क समाविष्ट है ।

9.5.2 कम्प्यूटर सहाय अनुदेशन प्रणाली

आधुनिक समय में 'इलेक्ट्रोनिक्स क्रांति' का शिक्षा में सबसे बड़ा योगदान कम्प्यूटर का है। आज शिक्षा के हर क्षेत्र में कम्प्यूटर शिक्षा का प्रयोग हो रहा है । विश्व के विकसित देशों में कम्प्यूटरसहाय अनुदेशन प्रणाली एक प्रभावी एवं उपयोगी साधन के रूप में स्वीकृत है । यह प्रणाली औपचारिक तथा अनौपचारिक दोनों प्रकार की शिक्षा के लिए सभी विषयों में तथा सभी स्तरों पर उपयोग सिद्ध है । कम्प्यूटरसहाय अनुदेशन प्रणाली का अध्यापक प्रशिक्षण में प्रयोग अनिवार्य हो गया है ।

शिक्षण में इसके अनेक प्रकार से प्रोग्राम बनाए जाते हैं । प्रोग्राम से सम्बन्धित सूचनाओं के अनुसार मशीन पर चित्र बनाया जा सकता है और उसी यांत्रिक रूप से आकृति भी तैयार की जाती है । यथा शिक्षा में फूल, पत्ती तथा अन्य चहरे व शारीरिक संस्था बनाए जाते हैं । उनकी डिजाइन बनाकर शिक्षण प्रदान किया जाता है । अनुकरण विधि द्वारा शिक्षण प्रक्रिया एक सरल माध्यम है। अध्यापक द्वारा कराये जाने वाले कक्षाध्यापन का यह अभ्यास सम्पूरक का कार्य करता है। पूर्व में ही अध्यापक प्रकरणों को क्रमबद्ध लगा देता है तथा कम्प्यूटर के द्वारा विद्यार्थी को तत्काल ही पोषण प्राप्त हो जाता है । कार्यकारी अनुदेशीय प्रोग्राम, अध्ययन सम्बन्धी क्रमबद्ध पदों का ज्ञान विस्तृत एवं व्यवस्थित रूप से प्रदान करता है । इस प्रणाली का कुछ ठोस मान्यताओं पर विकास किया गया है । जिससे इसे शिक्षा एवं प्रशिक्षण के विभिन्न स्तरों एवं विषयों का शिक्षण करने में सहायता प्राप्त होती है ।

9.5.3 विद्यार्थी - केन्द्रित अनुदेशन प्रणाली

क्रमबद्ध अधिगम विद्यार्थी की वैयक्तिक आवश्यकताओं की पूर्ति प्राय: नहीं करता है क्योंकि जब विद्यार्थी उत्पेरित न हो कक्षा में अध्यापन के समय भिन्न- भिन्न प्रकार के प्रश्न पूछने पर विद्यार्थी उत्साहित न हो तब तक अध्यापक अपने कार्य में सफल नहीं हो सकता । विद्यार्थी केन्द्रित अनुदेशन प्रणाली में विद्यार्थी की रुचि "क्यों" में न रह कर "कैसे" में रहती है । विद्यार्थी पूछे गए प्रश्नों का उत्तर भी तत्परता से देता है । विद्यार्थी केन्द्रित अनुदेशन प्रणाली में विद्यार्थी सरल से जटिल की ओर बढ़ता है । अध्यापक तथा विद्यार्थी में पारस्परिक सम्मान बढ़ता है और संवेगात्मक वातावरण की रचना होती है । विद्यार्थी को अपने उद्देश्यों में सफलता मिले, इस आशय से अध्यापक उनकी आवश्यकताओं, रूचियों को सावधानी से अध्ययन करता है। इस में ज्ञात से अज्ञात की ओर बढ़ने में सहायता मिलती है । विद्यार्थी केन्द्रित अनुदेशन प्रणाली को अधिगम के लिए बहुत परिश्रम करना पड़ता है ताकि विद्यार्थी अपने उद्देश्यों के अनुरूप अपेक्षित व्यवहारगत परिवर्तन प्राप्त कर सके ।

9.6 अभ्यासार्थ प्रश्न

1 शिक्षण में अनुदेशनात्मक सामग्री का निर्धारण किन-किन उद्देश्यों से किया जाता है? प्रकाश डालिए ।

2 अनुदेशनात्मक सामग्री के पूर्व नियोजन की आवश्यकता क्यों है? अपने विचार व्यक्त कीजिए ।

3 अनुदेशनात्मक सामग्री से क्या तात्पर्य है? यह शिक्षण सहायक सामग्री से किस प्रकार भिन्न है? विचार व्यक्त कीजिए ।

9.7 अनुदेशनात्मक शिक्षण सामग्री का विस्तार

शिक्षण में विद्यार्थियों के अपेक्षित व्यवहार के अनुरूप परिवर्तन के लिए विभिन्न शिक्षण सामग्रियों या प्रविधियों को व्यवहृत किया जाता है, जिससे कि अधिकतम गुणवत्ता के वृद्धि संभव हो सके । इस दिशा में अपेक्षित उपलब्धि को सुनिश्चित करने के लिए अनुशानात्मक शिक्षण सामग्री के विस्तार की विशेष चर्चा निम्नांकित बिन्दुओं के आधार पर करेंगे-

1.	पाठ्यक्रम	2.	पाठ्य-पुस्तक
3.	मूल्यांकन पद्धति	4.	अभ्यास-पुस्तिका
5	अतिरिक्त सहायक पुस्तकें	6.	भाषा कक्ष (संदर्भ कक्ष)

9.7.1 पाठ्यक्रम

शिक्षण को प्रभावपूर्ण बनाने के लिए एवं उद्देश्यों के अपेक्षित व्यवहारगत परिवर्तन प्राप्ति के लिए यह परम आवश्यक अनुदेशनात्मक शिक्षण उपागम है । इसके अन्तर्गत समस्त शैक्षिक एवं सह शैक्षिक कार्यों का समावेश रहता है ।

(I) भूमिका एवं आवश्यकता

शिक्षा के औपचारिक एवं अनौपचारिक स्वरूप में प्रत्येक स्तर के लिए निर्धारित उद्देश्यों की सम्प्राप्ति के लिए उपयुक्त पाठ्यक्रम का होना अति आवश्यक है । प्रत्येक स्तर पर पाठ्यक्रम पृथक होता है, जिससे कि इसी के आधार पर कक्षागत क्रमायोजन किया जाता है । पाठ्यक्रम में ज्ञान के नित्य नवीन समावेशों की आवश्यकता को किसी भी स्तर पर स्वीकार किया जा सकता है, क्योंकि नये प्रयोग और नवाचारिक प्रयत्नों के कारण ज्ञान के क्षेत्र में निरंतर वृद्धि हो रही है । अत: शिक्षा के प्रत्येक स्तर पर पाठ्यक्रम में परिवर्तन उनके स्तर के आधार पर किया जाना अपेक्षित है ।

(II) पाठ्यक्रम निर्माण की सैद्धांतिक पृष्ठभूमि एवं उद्देश्य और प्रारूप

पाठ्यक्रम निर्माण की सैद्धांतिक पृष्ठभूमि एवं उद्देश्यों के निर्धारण करने में शिक्षाविदों के अनुभव, शिक्षण कार्यों, प्रयोगों तथा उन प्रयोगों के निष्कर्ष को प्रधानता दी जाती है ।

पाठ्यक्रम निर्माण की सैद्धांतिक पृष्ठभूमि के निम्नलिखित आधार महत्वपूर्ण हैं -

1.	शिक्षा का दर्शन	2.	मनोवैज्ञानिक आवश्यकताएँ
3.	पाठ्य-वस्तु	4.	शिक्षण-विधियाँ
5.	शाला संगठन एवं प्रशासन	6.	सामुदायिक संबंध
7.	नवीन शोध एवं नवाचार	8.	राष्ट्रीय लक्ष्य
9.	स्वास्थ्य एवं सृजनात्मकता	10	मूल्यांकन पद्धति आदि ।

उदाहरण स्वरूप माध्यमिक स्तरीय-अध्यापक शिक्षण पाठ्यक्रम को प्रस्तुत करना उपयोगी रहेगा :-

माध्यमिक स्तर को अध्यापकीय तैयारी के लिए प्राय: एक वर्षीय बी.एड. या समकक्ष उपाधि के लिए निर्दिष्ट पाठ्यक्रम में सैद्धांतिक एवं व्यावहारिक तथा विधियां, प्रविधियाँ और नवाचार; प्रायोगिक कार्य निर्धारित हैं । निम्नांकित उद्देश्यों पर आधारित है :-

उद्देश्य :

1 राष्ट्रीय शिक्षा नीति एवं राष्ट्र के संविधान को दृष्टिगत रखते हुए राज्य के प्रशिक्षित किए जाने वाले शिक्षक प्रशिक्षण के लिए पाठ्यक्रम का निर्माण करना ।

2 पाठ्यक्रम के द्वारा शिक्षकों को शिक्षा के दार्शनिक, मनोवैज्ञानिक, वैज्ञानिक और समाज विज्ञान के पहलुओं का सैद्धांतिक एवं व्यावहारिक ज्ञान प्रदान किया जाएगा ।

3 प्रशिक्षणार्थी पाठ्यक्रम के आधार पर नव अपेक्षाओं, नवाचारों, शिक्षण विधाओं, शैक्षिक प्रौधोगिकी, शिक्षा क्षेत्र की नवीन अवधारणाओं, बालकेन्द्रित शिक्षा व्यवस्था क्रिया आधारित शिक्षा, शिक्षण सहायक सामग्री की महत्ता आदि का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे ।

4 प्रशिक्षणार्थी पाठ्य-सामग्री की सैद्धांतिक एवं प्रायोगिक आवश्यकताओं के आधार पर सृजनात्मक कार्य कर सकेंगे ।

5 प्रशिक्षणार्थी विभिन्न विषय-वस्तु से संबंधित शैक्षिक एवं सह-शैक्षिक गतिविधियों से संबंधित विभिन्न पक्षों से परिचित हो सकेंगे जिससे कि अपने विद्यालय में इन प्रवृतियों का कुशलता एवं दक्षता पूर्वक आयोजन कर सकें ।

6 कला-शिक्षा, स्वास्थ्य एवं शारीरिक शिक्षा तथा कार्यानुभव-विषय-वस्तु का अभ्यास करते हुए शिक्षण में दक्षता उत्पन्न करने की दृष्टि से कक्षा-अध्यापन संबंधी विभिन्न स्थितियों का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे ।

पाठ्यक्रम का प्रारूप

पाठ्यक्रम के प्रारूप का निर्माण भावी अध्यापक व अध्यापिकाओं को सामाजिक और राष्ट्रीय मर्यादाओं से परिचित कराने के लिए अधिक व्यावहारिक रूप में तैयार किया जाता है । इसमें सैद्धांतिक, वैकल्पिक एवं शिक्षण-अभ्यास, प्रायोगिक कार्य तथा पाठ्यक्रम हस्तांतरण पर विशेष ध्यान दिया जाता है ।

(क) सैद्धांतिक- इसके अन्तर्गत उभरता हुआ भारतीय समाज, भारत में माध्यमिक शिक्षा प्रस्थिति, समस्याएँ एवं चुनौतियाँ, अध्यापन-अधिगम, मनौविज्ञान निर्देशन तथा परामर्श आकलन मूल्यांकन और सुधारात्मक शिक्षण, पाठ्यक्रम का प्रारूप और विकास, विद्यालय-प्रबंधन तुलनात्मक शिक्षा तथा क्रियात्मक अनुसंधान आदि का अध्ययन समाविष्ट है ।

(ख) वैकल्पिक पाठ्यक्रम- विद्यार्थियों को अपनी रुचि एवं अपनी अनुकूलता को दृष्टिगत रखते हुए निम्नांकित में से दो वैकल्पिक विषयों का चयन करना पड़ता है - (1) पूर्व-विद्यालय शिक्षा, (2) प्रारम्भिक शिक्षा, शैक्षिक तकनीकी व्यावसायिक शिक्षा, प्रौढ़ शिक्षा, अनौपचारिक शिक्षा, दूररथ शिक्षा, पर्यावरण शिक्षा, संगणकीय शिक्षा, स्वास्थ्य तथा शारीरिक शिक्षा, शिक्षा का इतिहास तथा शैक्षिक समस्या, जनसंख्या शिक्षा आदि का अध्ययन ।

(ग) शिक्षण अभ्यास- शिक्षण शास्त्रीय विश्लेषण शिक्षक-प्रशिक्षार्थियों के द्वारा दो विद्यालयीय शिक्षण विषयों के संदर्भ में विद्यालयों में शिक्षण-अभ्यास एवं आदर्श प्रतिमान एवं पाठों का अवलोकन ।

(घ) प्रायोगिक कार्य- इंटर्नशिप और विद्यालय अनुभव, सामुदायिक कार्यक्रम संबंधित क्षेत्रीय कार्य, सृजनात्मक और व्यक्तित्व विकास कार्यक्रम, कार्य शिक्षा, सत्रीय प्रायोगिक कार्य, शारीरिक शिक्षा, खेलकूद, अन्य विद्यालयीय क्रिया-कलाप, विद्यालय-प्रबंधन विद्यालयीय साज-सज्जा, सौंदर्यानुभूति, विकासात्मक कार्यक्रम, राष्ट्रीय एवं राज्य स्तरीय क्रियाकलाप, क्रियात्मक अनुसंधान अध्ययन आदि। इस प्रारूप का निर्माण भावी अध्यापक, अध्यापिकाओं को सामाजिक और राष्ट्रीय मर्यादाओं से परिचित करने के लिए व्यावहारिक रूप में किया गया है। पाठ्यक्रमानुसार कार्यात्मक-व्यूहरचनाओं के प्रयोग में दक्ष वास्तविक परिस्थितियों में योग्यतापूर्वक शिक्षण कार्य कर सकते हैं ।

(ङ) पाठ्यक्रम-हस्तांतरण- अध्यापक शिक्षकों के द्वारा बहुधा प्रयुक्त होने वाली व्याख्यान विधि के स्थान पर अतःक्रियात्मक शिक्षण, सहयोगात्मक-शिक्षण-अधिगम, स्व-अनुसंधान उपागम आदि को अधिक महत्व दिए जाने पर जोर पाठ्यक्रम हस्तांतरण हेतु दिया गया है । अधिगम प्रतिफल के सतत्-मूल्यांकन का पूर्ण प्रावधान रखा गया है ।

9.8 मातृभाषा की पाठ्य-पुस्तक (हिन्दी)

कक्षा-शिक्षण के प्रयोग के लिए महत्व पूर्ण साधन के रूप में, एक निश्चित शैक्षिक स्तर प्रयुक्त करने के लिए निश्चित विषय पर व्यवरिथत ढंग से लिखी हुई पुस्तक ही "पाठ्य-पुस्तक" कही जाती है । यद्यपि पाठ्य-पुस्तकें बालकों की शिक्षा की दृष्टि से सबसे महत्वपूर्ण एवं सर्वोपयोगी साधन है, विशेषत: भारत के लिए जहाँ अनेक माता-पिता अपने बालकों के पाठ्य-पुस्तक के अतिरिक्त एक भी दूसरी पुस्तक खरीदने में असमर्थ हैं, तथापि पाठ्य-पुस्तक केवल साधन है, साध्य नहीं ।

पाठ्य-पुस्तक सामान्य पुस्तकों से भिन्न होती है । पाठ्य-विषय, शैक्षणिक उद्देश्य एवं कक्षा-शिक्षण की दृष्टि से उपयुक्त सामग्री का चयन और क्रमायोजन करते हुए जिस पुस्तक की रचना की जाती है, उसे पाठ्य-पुस्तक कहते हैं । शिक्षा प्रदान करने की परम्परागत प्रणाली पाठ्य-पुरस्तकों पर ही आधारित रही है। इसी कारण पाठ्य-पुस्तक की आवश्यकता एवं उपयोगिता आधुनिक समय में भी ज्ञान के अन्य साधनों की अपेक्षा कहीं अधिक है ।

9.8.1 पाठ्य-पुस्तक की आवश्यकता एवं उपयोगिता

आधुनिक शिक्षा व्यवस्था में पाठ्य-पुस्तकों का महत्व निरंतर वृद्धिगत है क्योंकि ज्ञान की अनेक शाखाएँ एवं प्रशाखाएँ के विकास के साथ-साथ आज ज्ञान-संचरन भी विशिष्ट होता जा रहा है । इसके कतिपय कारण निम्नलिखित है :-

(क) किसी विषय की पाठ्य-पुस्तक कक्षा-शिक्षण के लिए आधार का काम करती है पाठ्य-पुस्तक द्वारा विषय का समग्र रूप स्पष्टत: समझ में आ जाता है ।

(ख) पाठ्य-पुस्तक के आधार पर शिक्षक को संपूर्ण सत्र के लिए पाठ्य-सामग्री को विभिन्न इकाइयों एवं पाठों में विभाजित करने तथा पाठ्य-सामग्री को व्यवस्थित रूप में प्रस्तुत करने में सहायता मिलती है ।

(ग) पाठ्य-पुस्तक शिक्षक एवं शिक्षार्थी दोनों के लिए प्रतिदिन की कार्य प्रगति सचेतक का कार्य करती है । दोनों उस विषय के सीमा क्षेत्र एवं विस्तार से अवगत रहते हैं । वे इस बात से परिचित रहते हैं कि उन्होंने पाठ्य-विषय का कितना अंश समाप्त कर लिया है, कितना अंश शेष है और इस आधार पर वे शिक्षण-प्रक्रिया एवं योजना में आवश्यक परिवर्तन, सुधार एवं प्रयत्न कर सकते हैं ।

(घ) पाठ्य- पुस्तक द्वारा बालकों को स्वाध्याय के लिए प्रोत्साहन मिलता है । उन्हें पाठ्य-विषय संबंधी आवश्यक सामग्री एक स्थान पर एकत्र प्राप्त होती है । विषय-सामग्री की आवृति के लिए पाठ्य-पुस्तक और भी उपयोगी सिद्ध होती है और वे उसे अध्ययन द्वारा भली-भाँति आत्मसात कर सकते हैं ।

(ङ) सामुहिक शिक्षण व्यवस्था में पाठ्य-पुस्तक बहुत ही आवश्यक शैक्षणिक उपकरण है । भाषा और साहित्य जैसे विषय में इसके अभाव में काम सिद्धि नहीं हो सकती है क्योंकि पाठ्य-पुस्तक के आधार पर ही किसी साहित्यकार एवं उसकी कृतियों का परिचय पूरी कक्षा को एक साथ प्रदान कर दिया जाता है ।

वैयक्तिक शिक्षण में भी जैसे डाल्टन योजना में जहाँ बालक पृथक्-पृथक् व्यक्तिगत रूप से अध्ययन एवं कार्य करते हैं, पाठ्य-पुस्तक एक आधार एवं सहायक शिक्षक का काम करती है ।

(च) हमारे देश में आधुनिक परीक्षा पद्धित का स्वरूप-विधान अभी भी पाठ्य-पुस्तक केन्द्रित है। वस्तुत: पाठ्य-पुस्तक को विद्यार्थियों के ज्ञानार्जन का आधार मानकर ही परीक्षा ली जाती है।

9.8.2 मातृभाषा की पाठ्य-पुस्तक रचना के सिद्धांत

पाठ्य-पुस्तक की रचना एक सामान्य पुस्तक की रचना से भिन्न होती है क्योंकि पाठ्य-पुस्तक का एक निश्चित प्रयोजन निश्चित पाठकों के लिए होता है । अत: लेखक मातृभाषा की पाठ्य-पुस्तक तैयार करते समय अनेक बातों पर विचार करता है, जिन्हें हम निम्नलिखित तीन श्रेणियों में विभिक्त कर सकते हैं

(क) पाठ्य-पुस्तक के विविध पक्ष

(ख) पाठ्य-पुस्तक रचना के सोपान

(ग) पाठ्य-पुस्तक रचना के उपादान

(क) पाठ्य-पुस्तक के विविध पक्ष

पाठ्य-पुस्तक के पाठ संकलित हो या लिखे जाँय अथवा दोनों प्रकार के हो, उनका अनुपात निश्चित करना होता है । विषय-सामग्री का चयन भी उन्हीं अनुपातों में ही होता है । इस प्रकार पाठ्य-पुस्तक की रचना के दो पक्ष होंगे-

(I) विषय सामग्री अथवा अध्ययनात्मक पक्ष

इसके अंतर्गत सम्पूर्ण पाठ्य-सामग्री, अभ्यास और प्रश्न, चित्र, पुस्तक के प्रारंभ में प्रस्तावना या प्राक्कथन; शिक्षकों विद्यार्थियों, के प्रतिकथन, सुझाव या निर्देशन, पुस्तक के अतं में शब्द-कोष, पारिभाषिक शब्द, अंतर्कथाएँ, व्याख्या, टिप्पणी आदि आवश्यक अध्ययन सामग्री सम्मिलित की जाएगी।

(II) रूपात्मक पक्ष

इसके अंतर्गत पुस्तक का आकार-प्रकार है- मुद्रण, टाइप, कागज, जिल्द आदि बातें आती हैं, पाठ्य-पुस्तक रचयिता का इस पक्ष से वही तक संबंध है जहाँ तक इसका प्रभाव अध्ययनात्मक पक्ष पर पड़ता है । अध्ययनात्मक पक्ष में विषय सामग्री का सबसे अधिक महत्व है ।

(ख) पाठ्य-पुस्तक रचना के सोपान

मातृभाषा की विषय सामग्री इतनी व्यापक होती है कि उसकी पाठ्य-पुस्तक में सभी प्रकार की सामग्री का समावेश करना संभव नहीं अत: पाठ्य-पुस्तक लेखक को विचार करना पड़ता है कि क्या और कितनी सामग्री वांछित है अर्थात सामग्री के चयन का प्रश्न सबसे प्रथम आता है, तत्पश्चात् उसका स्तरीकरण एवं प्रस्तुतीकरण पर विचार किया जाता है । वस्तुत: पाठ्य-पुस्तक का निर्माण विषय सामग्री के चयन स्तरीकरण एवं प्रस्तुतीकरण की कला है । चयन एवं स्तरीकरण का संबंध विषय सामग्री से ही है, पर प्रस्तुतीकरण का संबंध एक ओर अध्ययनात्मक पक्ष, पाठ, अभ्यास, चित्र, प्रस्तावना, शब्द-कोष, व्याख्या, टिप्पणी, संदर्भ आदि और दूसरी ओर रचनात्मक पक्ष पुस्तक के आकार-प्रकार, मुखपृष्ठ, मुद्रण, कागज, जिल्द आदि से भी होता है । चयन और स्तरीकरण के बाद ही प्रस्तुतीकरण का प्रश्न आता है । पाठ्य-पुस्तक की रचना में इन तीनों सोपानों का समन्वय होना आवश्यक है- इस दिशा में निम्नलिखित रेखाचित्र उपयोगी रहेगा-

मातृभाषा की पाठ्य पुस्तक के विभिन्न पक्ष एवं तदंतर्गत विचारणीय सामग्री

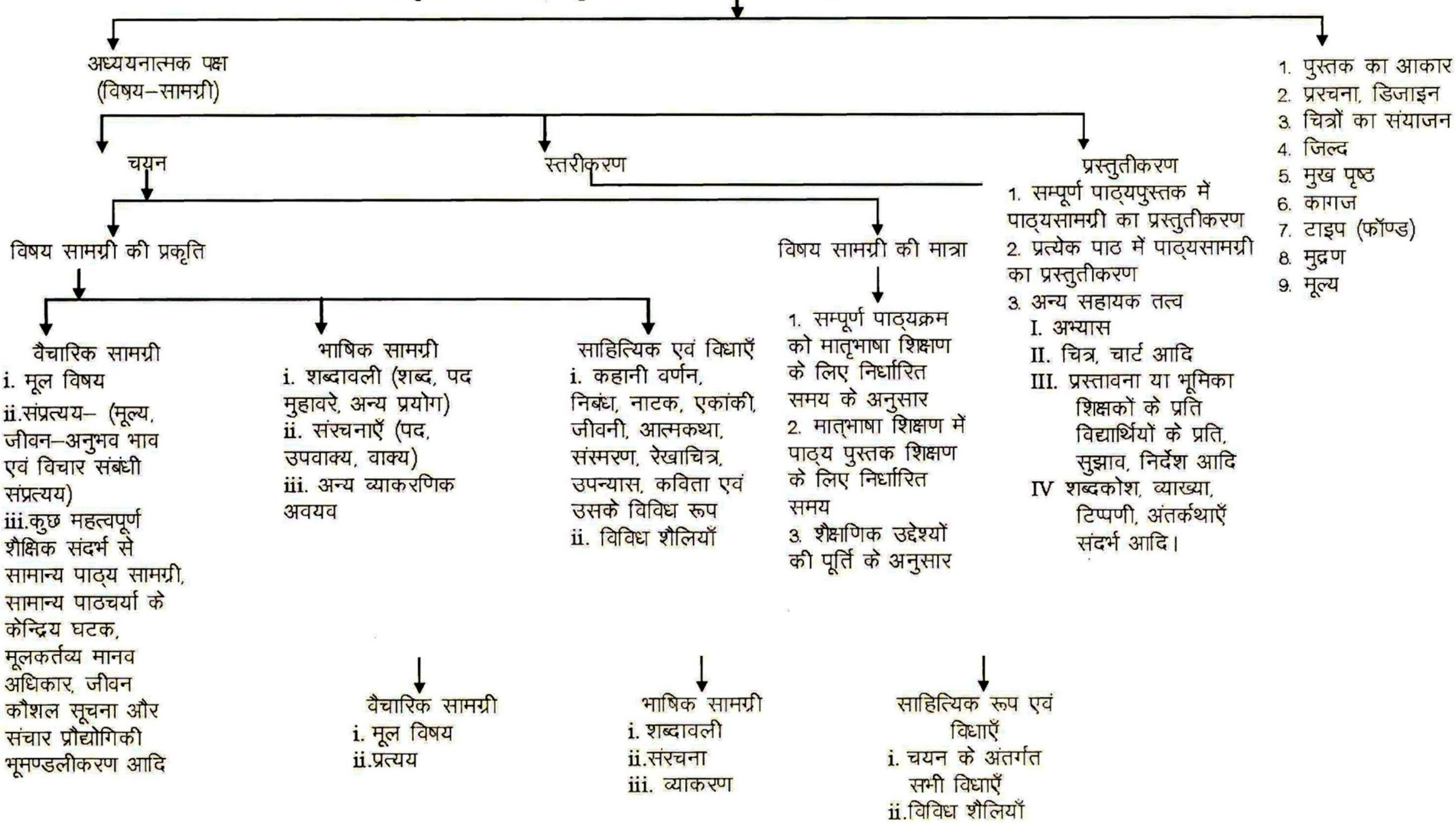

(ग) पाठ्य-पुस्तक रचना के उपादान

मातृभाषा और साहित्य शिक्षण की दृष्टि से पाठ्य सामग्री चयन संबंधी अनेक आधार है शिक्षा एक सतत विकासशील प्रक्रिया है जिसका संबंध जीवन मूल्यों से जुड़ा हुआ है । विषय वस्तु स्वस्थ एवं वांछित अभिवृतियों के विकास में सहायक एवं प्रेरणादायक हो, इसी दृष्टि से पाठ्य-पुस्तक रचना में निम्नांकित उपादानों का ध्यान रखना पड़ता है -

(i) मातृभाषा की विषय सामग्री - इसके अंतर्गत विषय सामग्री की प्रकृति और विषय सामग्री की मात्रा दोनों ही तथ्य विचारणीय होते हैं । विषय सामग्री के अंतर्गत वैचारिक विषय सामग्री, भाषिक विषय सामग्री और साहित्यिक रूप, विधाएँ ध्यातव्य हैं । विषय सामग्री की मात्रा के अंतर्गत, संपूर्ण कार्यभार एवं विभिन्न कठिनाई स्तर की दृष्टि से विषय सामग्री पर विचार करना पड़ता है ।

(ii) मातृभाषा के शैक्षणिक उद्देश्य - मातृभाषा पाठ्य-पुस्तक के सामान्य उद्देश्य हैं- विषय सामग्री का ज्ञान, सुनकर समझने की योग्यता, पढ़कर समझने की योग्यता, मौखिक अभिव्यक्ति, लिखित अमिव्यक्ति, मे मौलिकता, साहित्यिक रसानुभूति, अनुवाद, साहित्य में रुचि वांछित अभिवृत्तियाँ । (नोट मातृभाषा के शैक्षणिक उद्देश्यों का विस्तृत वर्णन इकाई संख्या 2 के अंतर्गत किया गया है ।)

(iii) राष्ट्रीय एवं संवैधानिक लक्ष्य - राष्ट्रीय एकता, अखण्डता, जनतांत्रिक समाजवाद, धर्मनिरपेक्षता, साम्प्रदायिक एकता आदि लक्ष्यों का पाठ्यक्रम एवं पाठ्य-पुस्तक रचना में विशेष ध्यान रखा जाता है ।

(iv) शिक्षण-युक्ति - विशेषत: प्राथमिक एवं उच्च प्राथमिक कक्षाओं के लिए मातृभाषा की पाठ्य-पुस्तक के अन्तर्गत शिक्षण पद्धतियाँ, यथा वर्ण पद्धति, शब्द पद्धति, वाक्य पद्धति आदि और अन्य भाषिक कौशलों से संबंधित शिक्षण पद्धतियों पर विशेष विचार करना पड़ता है ।

(v) मातृभाषा का शिक्षक - पाठ्य-पुस्तक शिक्षण की सफलता मुख्यत: शिक्षक पर निर्भर है । अत: शिक्षक की योग्यता, प्रशिक्षण अनुभव, साधन-सम्पन्नता आदि का ध्यान रखना आवश्यक है । (इकाई सं. 11 (ग्याहर) के अन्तर्गत भी इसका विवेचन किया गया है।)

(vi) अन्य विषयों की पाठ्य चर्या एवं पाठ्य-पुस्तकें - मातृभाषा की पाठ्य-पुस्तक में अन्य विषयों से सम्बन्धित पाठ भी होते हैं । अत: अन्य विषयों की पाठ्यचर्या एवं पाठ्य-पुस्तकों में वैचारिक एवं भाषिक सामग्री के अवलोकन किया जाता है- इससे मातृभाषा की पाठ्य-पुस्तक में अनावश्यक आवृति नहीं होती।

9.8.3 पाठ्य-पुस्तक के पक्ष

अध्ययन पक्ष एवं विषय सामग्री का सबसे अधिक महत्त्व है उसी पर अन्य बातें भी निर्भर करती हैं । विषय सामग्री के अंतर्गत विभिन्न पक्ष, लक्षण एवं विचारणीय सामग्री के साथ ही पाठ्य-पुस्तक के दो पक्ष है ।

(1) अध्ययनात्मक पक्ष और (2) बाह्य पक्ष-

(i) अध्ययनात्मक पक्ष - अध्ययनात्मक पक्ष का संबंध मातृभाषा की विषय सामग्री से है जिसमें विषय सामग्री का चयन, स्तरीकरण एवं प्रस्तुतीकरण क्रिया विधि निहित है । चयन के अंतर्गत विषय-सामग्री की प्रकृति और विषय सामग्री की मात्रा दोनों ही विचारणीय हैं ।

(ii) प्रस्तुतीकरण में अध्ययन दृष्टि से विविध पाठ, अध्याय, अभ्यास, चित्र, प्रस्तावना, शब्द कोश, व्याख्या, संदर्भ आदि ।

(iii) बाह्य पक्ष की दृष्टि से पुस्तक के आकार-प्रकार, रचना, जिल्द, मुखपृष्ठ, कागज, मुद्रण आदि का विचार किया जाता है ।

9.9 अभ्यास-पुस्तिका की उपयोगिता

पाठ्य-पुस्तक आधारित प्रश्नों के मौखिक, लिखित. एवं क्रियात्मक उत्तरों की दृष्टि से अभ्यास कार्य की पुष्टि के लिए तथा लिखित उत्तर एवं पाठ्य-सामग्री, शैक्षणिक उद्देश्य एवं शिक्षण-युक्ति आदि के आधार पर ही अभ्यास पुस्तिका के अभ्यासों की रचना की जाती है । इन्हीं आधारों के अनुसार अभ्यास पुस्तिकाओं के अभ्यासों में प्रश्नों के प्रकार निर्धारित होते हैं । लघुत्तरात्मक, निबंधनात्मक प्रश्न अधिक उपयोगी सिद्ध होते हैं । विद्यार्थी की वर्तनीगत अशुद्धियों के सुधार के लिए उपचारात्मक अभ्यासों का भी समावेश किया जाता है । व्याकरणिक ज्ञान, प्रत्यास्ममरण, तुलना, निष्कर्ष, सारांश, प्रेरणा आदि अभ्यासों का भी समावेश किया जाता है जिससे कि भाषा शिक्षण के उद्देश्यों की पूर्ति हो सके ।

9.9.1 अभ्यास पुस्तिका की विशेषताएँ

शैक्षणिक उद्देश्यों, पठन सामग्री शिक्षण युक्तियों आदि की पुष्टि के लिए अभ्यास पुस्तिका की निम्नांकित विशेषताएँ हैं:-

1 विभिन्न कक्षाओं के विद्यार्थियों के मानसिक स्तर एवं बौद्धिक विकास या लक्ष्य या उद्देश्यों को दृष्टिगत रखकर ही विविध प्रकार की अभ्यास पुस्तिकाएँ तैयार की जाती हैं

2 अभ्यास पुस्तिकाओं में विभिन्न कक्षाओं की पाठ्य-पुस्तकों में प्रस्तावित या पाठ्यक्रम में प्रस्तावित मानक वर्तनी से परिचय, अकारादिक्रम से वर्ण-लेखन, स्वर, व्यजन, पंचम वर्णों का शुद्ध प्रयोग, संयुक्ताक्षरों का उचित ज्ञान एवं प्रयोग, शब्दार्थ, पर्यायवाची और विलोम, शब्द लेखन, उपसर्ग और प्रत्यय युक्त शब्द निर्माण, संज्ञा, सर्वनाम, क्रिया, विशेषण, अव्यय, आदि शब्दों, लिंग, वचन, काल के बहु उपयोगी अभ्यास, तुकांत शब्दों का अभ्यास, मुहावरे, लोकोक्तियों का अर्थ सहित वाक्य, प्रयोग के अतिरिक्त पाठ्य-पुस्तक के पाठ के प्रत्यास्मरण के लिए प्रश्नोत्तर, रिक्त स्थानों की पूर्ति उचित शब्द-चयन आदि का समावेश होता है ।

3 उसके माध्यम से रचनात्मक अभिव्यक्तियों और खेल-खेल, पहेलियाँ, वैचारिक सामग्री, सामान्य ज्ञान में वृद्धि, वाक्य पूर्ति, कविता या कहानी लेखन, अनुच्छेद, पत्र अथवा

डायरी लेखन, चित्र-वर्णन, कलात्मक प्रतिभा व अभिरुचि का विकास तथा स्वस्थ्य मनोरंजन करने का भरपूर प्रयास किया जाता है ।

4 पशु-पक्षियों, व्यावसायिक व्यक्तियों आदि के चित्र देखकर उन्हें पहचानना और उनके विषय में कुछ लिखना, पशु-पक्षियों की ध्वनियों की जानकारी प्राप्त करना, मौसम से सम्बन्धित वस्तुओं को पहचानना और उनकी उचित जानकारी, बिन्दुओं को मिलाकर चित्र पूरे करना, रंग भरना तथा कागज की नाव एवं अन्य आदि विभिन्न कला स्तर की सामग्री अभ्यास-पुस्तिका में प्रमुखता से सम्मिलित की जाती है । इससे विद्यार्थियों की सौंदर्यप्रियता के विकास हेतु विविध अवसर प्राप्त होते है ।

5 विभिन्न स्तर की पाठ्य-पुस्तकों या पाठ्यक्रम पर आधारित विभिन्न पाठों का गहन अध्ययन करके, पाठ पर आधारित प्रश्नोत्तर एवं तात्पर्य स्पष्टीकरण के द्वारा पाठों को प्रत्यास्मरण कराया जाता है ।

6 शब्द-ज्ञान में शब्दार्थ (शब्द कोश अभिवृद्धि) पर्यायवाची, विलोम, एकार्थक अनेकार्थक, समोच्चारण शब्दों के अभ्यास, तदभव, तत्सम, देशी, विदेशी शब्दों का चयन तथा लेखन, उपसर्ग, प्रत्यय युक्त शब्द निर्माण, वाक्य पूर्ति आदि के उपयुक्त ज्ञान हेतु अभ्यास-पुस्तिका में विशेष अभ्यास कराये जाते हैं ।

7 भाषा-ज्ञान के अंतर्गत संधि, संधि विच्छेद, समास, समास-विग्रह, संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण, क्रिया काल तथा अविकारी शब्दों के भेद सहित सोदाहरण ज्ञान तथा उनका प्रयोग, लिंग, वचन, कारक, की सम्यक् जानकारी एवं प्रयोग विराम चिह्नों का उचित प्रयोग मुहावरे, लोकोक्तियों एवं युक्तियों के प्रयोग हेतु अभ्यास का निर्माण किया जाता है ।

9.10 पठन कौशल विकास हेतु अनुदेशनात्मक पाठ्य-सामग्री

विद्यार्थियों के पठन कौशल के विकास हेतु पाठ्य-पुस्तक के अतिरिक्त अन्य पुस्तकें भी होती हैं । स्तर के अनुसार उन पुस्तकों के द्वारा विद्यार्थियों को साहित्य की विविध विधाओं से परिचित कराया जाता है । अतिरिक्त पठनीय पुस्तकें निम्नलिखित किसी भी विधा की हो सकती हैं ।

1 कहानियाँ, उपन्यास, लघुकथा, सम्पादकीय

2 संवाद, एकांकी और नाटक, रिपोर्ताज, रेडियो रूपक

3 जीवनी, आत्मकथा, रेखाचित्र, संस्मरण, डायरी, भेंटवार्ता

4 निबंध - ललित, ऐतिहासिक

5 कविता

9.10.1 अतिरिक्त पठनीय पुस्तकों की आवश्यकता एवं (सहायक पुस्तकें) उपयोगिता

पठन की क्षमता, साहित्य की विविध विधाओं में रुचि के विकास हेतु ज्ञानार्जन की, दृष्टि से सहायक पुस्तक की आवश्यकता प्रत्येक स्तर पर रहती है । बौद्धिक एवं भावात्मक

विकास हेतु भी सहायक पुस्तकों का अध्ययन करना उपयोगी है । इन पुस्तकों की हर स्तर पर निम्नलिखित रूप से उपयोगिता है

(1) पठन रुचि के विस्तार के लिए केवल पाठ्य पुस्तक पर्याप्त नहीं है इसके लिए अन्यान्य साहित्यिक रचनाएँ एवं विविध विधाओं की पुस्तकें पढ़ने के लिए विद्यार्थियों को प्रोत्साहित और अभिप्रेरित करना चाहिए ।

(2) प्रकृति-प्रेम, सौंदर्य-बोध, पर्यावरण सजगता, वर्षा जल संचयन, स्वास्थ्य के प्रति जागरूकता, आधुनिक तकनीकी, शिक्षा संबंधी जानकारी आदि के विषय में विद्यार्थियों को पर्याप्त ज्ञान प्राप्त होता है ।

(3) अन्यान्य गद्य-पद्य की अन्यान्य पुस्तकों के पठन से विद्यार्थी स्वयं अपनी सृजनात्मकता का विकास कर सकते हैं ।

(4) पठन में रुचि उत्पन्न होकर समय का सदुपयोग कर सकेंगे ।

(5) जीवन के विविध क्षेत्रों से संबंधित पाठ्य सामग्री से विभिन्न राष्ट्रों की संस्कृति, उत्सव, खेल, मेला, प्रदर्शनी आदि का ज्ञान प्राप्त कर सकते है ।

(6) वाचन अभ्यास एवं वाणी परिष्कार एवं उच्चारण आदि में सुधार एवं उन्नति के लिए भी सहायक पुस्तकों का नियमित अध्ययन बहुत ही उपयोगी सिद्ध होता है ।

9.11 हिन्दी भाषा-कक्ष एवं पत्र-पत्रिकाएँ

प्रत्येक विद्यालय में हिन्दी भाषा कक्ष का स्थापना अवश्य होनी चाहिए । इसमें हिन्दी भाषा के प्रसिद्ध साहित्यकारों की मूल रचनाएँ, अन्य भारतीय भाषा के साहित्य के हिन्दी अनुवाद आदि के साथ-साथ नये साहित्यकारों, लेखकों और कवियों की रचनाएँ रखी जाएँ जिससे नवीन एवं प्राचीन साहित्य की प्रवृतियों से अध्यापक, अध्यापिकाएँ एवं विद्यार्थी अवगत हो सकें ।

हिन्दी भाषा-कक्ष- अच्छे विद्यालयों में प्रत्येक विषय के अलग-अलग कक्ष होते हैं । उस कक्ष में उस विषय के अनुकूल साज-सज्जा, पुस्तकें, चार्ट, चित्र, मॉडल, पत्र-पत्रिकाएँ व्यवस्थित होती हैं, इससे उस विषय का उचित शैक्षणिक वातावरण निर्माण में सहायता प्राप्त होती है । इसी दृष्टि भाषा कक्ष भी हर विद्यालय में होना चाहिए । (इकाई सं. 12 के अन्तर्गत इस सम्बन्ध में पर्याप्त प्रकाश डाला गया है।)

9.12 सारांश

इस इकाई के अध्ययन से हिन्दी भाषा में अनुदेशनात्मक शिक्षण सामग्री की तथा उसके उपयोग के सम्बन्ध में आपको पर्याप्त ज्ञान प्राप्त हुआ होगा?

अध्यापन में प्रतिपुष्टि तथा पुनर्बलन प्रदान करने तथा कक्षा में गत्यात्मक प्रवृत्तियों के विकास करने के लिए यह ज्ञान उपयोगी रहेगा । आधुनिक समय में अध्यापकों का व्यावसायिक रूप से कुशल होना अत्यावश्यक है- अनुदेशनात्मक सामग्री विस्तार के अन्तर्गत पाठ्य-पुस्तक निर्माण, संदर्भ पठन-सामग्री संचय आदि का भी यथाविधि उल्लेख किया गया है।

9.13 अभ्यासार्थ प्रश्न

1. अनुदेशनात्मक सामग्री के चयन में किन-किन बातों को ध्यान में रखना आवश्यक है ।

2. मातृभाषा (हिन्दी) की पाठ्य पुस्तक में विषय सामग्री के स्तरीकरण के क्या आधार और लक्षण होते हैं? सोदाहरण उत्तर दीजिए ।
3. अभ्यास-पुस्तिका के महत्व एवं उपयोगिता पर प्रकाश डालिए ।
4. अनुदेशनात्मक शिक्षण सामग्री को अध्यापक केन्द्रित न बनाकर 'अधिगम केन्द्रित' बनाने के लिए आप क्या उपाय कर सकते हैं? अपने विचार सोदाहरण प्रस्तुत कीजिए ।
5. 'पठन कौशल विकास' में अनुदेशनात्मक शिक्षण सामग्री कहीं तक सहायक है? सोदाहरण उत्तर की पुष्टि कीजिए।

9.14 अध्ययन हेतु संदर्भ-पुस्तक सूची

1. शर्मा. आर.ए. (डॉ.) – 'शिक्षा तकनीकी' लायल बुक डिपो, मेरठ यू.पी. 2005
2. भट्टाचार्य. जी.सी (डॉ.) – 'अध्यापक शिक्षा' विनोद-पुस्तक मन्दिर, आगरा, यू.पी.2006
3. बाघेला. एच. एस. (डॉ.) – 'भाषा शिक्षक हेतु आधारित शिक्षण' पुनित प्रकाशन, जयपुर - 1997
4. शर्मा. श्रीमती राजकुमारी – 'हिन्दी शिक्षण' राधा प्रकाशन-आगरा, यू.पी. 2008
5. सिंह. निरंजन कुमार – 'माध्यमिक विद्यालयों में हिन्दी शिक्षण' राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी जयपुर, 2002
6. पाण्डेय. रामशकल (डॉ.) – 'नूतन हिन्दी शिक्षण' विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा, यू.पी. 2004
7. वर्मा. रामपाल सिंह – शिक्षा में नवचिन्तन' विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा, यू.पी. 1996

इकाई–10

हिन्दी-पाठ्य-वस्तु संदर्भित शिक्षण सामग्री, पूर्वायोजन व मूल्यांकन

(Content Specific Teaching Aids, Its Preparation and Evaluation)

इकाई की रूपरेखा

10.0 भूमिका एवं उद्देश्य
10.1 शिक्षण सहायक सामग्री क्या है?
10.2 शिक्षण सहायक सामग्री की आवश्यकता
10.3 दृश्य-श्रव्य शिक्षण सहायक सामग्री का महत्त्व
10.4 अभ्यासार्थ-प्रश्न
10.5 दृश्य शिक्षण सहायक सामग्री का विवेचन
    10.5.1 दृश्य शिक्षण सहायक सामग्री
    10.5.2 श्रव्य शिक्षण सहायक सामग्री
    10.5.3 दृश्य-श्रव्य शिक्षण सहायक सामग्री का वर्गीकरण
    10.5.4 प्राकृतिक साधन
    10.5.5 मानव निर्मित सामान्य सहायक सामग्री (कक्षोपकरण)
    10.5.6 विद्युत संचालित श्रव्य साधन (यांत्रिक)
    10.5.7 विद्युत संचालित दृश्य साधन (यांत्रिक)
    10.5.8 विद्युत संचालित श्रव्य-दृश्य साधन (यांत्रिक)
10.6 दृश्य-श्रव्य शिक्षण सहायक सामग्री का भाषा-शिक्षण में उपयोग
10.7 सारांश
10.8 अभ्यासार्थ-प्रश्न
10.9 अध्ययन हेतु संदर्भ पुस्तकें

10.0 भूमिका एवं उद्देश्य

शिक्षण-प्रक्रिया को सरल, सजीव, सुग्राह्य एवं प्रभावपूर्ण बनाने के लिए यह नितांत आवश्यक है कि नवीन पाठ्य-वस्तु का ज्ञान, भाव एवं विचार इस तरह प्रस्तुत किए जाए कि उसका स्वरूप प्रत्यक्ष, स्पष्ट एवं मूर्त हो उठें । इस दिशा में संदर्भित शैक्षिक उपकरण आवश्यक हैं । संदर्भगत शिक्षण सामग्री के प्रयोग से निर्धारित विषय-वस्तु को क्रियात्मक एवं व्यावहारिक

बनाने में सुविधा रहती है । किसी संकल्पना अथवा शब्द, पद-बंध आदि के अर्थ सुनिश्चित रूप से अधिक स्पष्ट करने में यह संदर्भित सामग्री शिक्षण में सहायक सिद्ध होती है । इस इकाई की समाप्ति पर आप संदर्भगत शिक्षण सहायक सामग्री के पूर्वायोजन तथा मूल्यांकन के संबंध में निम्नलिखित ज्ञान अर्जित कर सकेंगे-

1 विषय-वस्तु संदर्भगत शिक्षण सहायक सामग्री की पूर्वायसोजन निर्माण कर सकेंगे ।
2 विषय-वस्तु से सम्बन्धित शिक्षण सहायक सामग्री का वर्गीकरण कर सकेंगे ।
3 दृश्य-श्रव्य सामग्री कौन-कौनसी है? यह समझ सकेंगे ।
4 अध्यापक दृश्य-श्रव्य सामग्री में अंन्तर कर सकेंगे ।
5 भाषा-शिक्षण में दृश्य-श्रव्य उपकरणों के प्रभावी प्रयोग के संबंध में आवश्यक ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे ।
6 विषय-वस्तुगत सामग्री का पाठानुरूप मूल्यांकन कर सकेंगे ।

10.1 शिक्षण सहायक सामग्री क्या है?

विद्यार्थी के अधिगम में ज्ञानेन्द्रियाँ स्वयं के अनुभव द्वारा किसी भी वस्तु या क्रिया का मानसिक चित्र बनाती हैं और इस मानसिक चित्र के आधार पर ही तत्संबंधी प्रत्यय बनते हैं, अत: शिक्षण के समय ज्ञान के प्रत्यक्षीकरण एवं उसे मूर्तरूप प्रदान करने के लिए पाठ्य-वस्तु के साथ ऐसी सहायक सामग्री की आवश्यकता होती है, जिसके माध्यम से विद्यार्थी के लिए विषय-वस्तु के भाव एवं विचारों का अथवा क्रिया बिम्ब ग्रहण सरलता से संभव हो सके ।

वर्तमान समय में शिक्षा विद्यार्थी केन्द्रित है । इसका प्रमुख दृश्य विद्यार्थी के व्यक्तिव का पूर्ण विकास करना है । इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए विद्यार्थी की योग्यता, मनोवृति, रुचि, अभिरुचि आदि को ध्यान में रखकर शिक्षण में विभिन्न उपायों, साधनों, उपकरणों आदि का प्रयोग करना अपेक्षित है, जिससे कि पाठ्य-वस्तु आकर्षक व बोधगम्य रूप से प्रस्तुत हो सके ।

10.2 शिक्षण सहायक सामग्री की आवश्यकता

पाठ्य-वस्तु के सम्यक् अधिगम के लिए शिक्षण परिस्थितियां प्रभावशाली मानी जाती है। शिक्षा में ज्ञानेन्द्रियों का उपयोग करना चाहिए। शिक्षण में सहायक सामग्री विद्यार्थियों और पाठ्य-वस्तु के मध्य अंतःक्रिया कहलाती है। जब शिक्षक पाठ्य-वस्तु को स्पष्ट करने के लिए विवरण प्रस्तुत करता है, विद्यार्थी विवरण को ध्यानपूर्वक सुनता है । इस अंतःक्रिया के माध्यम श्रवणेन्द्रियाँ हैं । किन्तु जब शिक्षक उस विवरण को किसी दृश्य उपकरण के द्वारा प्रस्तुत करता है तब श्रवेणन्द्रियों के साथ-साथ दृश्येन्द्रियाँ भी अधिगम हेतु अधिक सक्रिय रहती है । अत: यह कहा जा सकता है कि पहली क्रिया की तुलना में दूसरी क्रिया अपेक्षाकृत अधिक बोधगम्य एवं ग्राहय होती है । विद्यार्थी जब स्वयं रेखाचित्र, मॉडल अथवा मानचित्र बनाते हैं, उस समय उपर्युक्त दोनों क्रियाओं की तुलना में अधिक ज्ञानेन्द्रियाँ सक्रिय होती हैं । अत: अंतिम परिस्थिति सबसे अधिक सार्थक सिद्ध होती है ।

शिक्षण सहायक सामग्री की कतिपय विशेषताएँ निम्नलिखित हैं :-

1 अमूर्त को मूर्त रूप देना ।

2 निरीक्षण शक्ति का विकास करना ।
3 पाठ्य-वस्तु की ओर ध्यानकेन्द्रित करना ।
4 पाठ्य-वस्तु को अपेक्षाकृत अधिक स्पष्ट, सरल तथा बोधगम्य बनाना ।
5 रुचियों, अभिरुचियों को प्रभावित करना ।
6 पाठ्य-वस्तु के अध्ययन में रुचि उत्पन्न करना ।
7 विद्यार्थियों को तथ्यात्मक सूचनाओं को रोचक ढंग से प्रदान करना ।
8 विद्यार्थियों को अधिक क्रियाशील बनाना ।
9 तीव्र एवं मंद बुद्धि विद्यार्थियों को योग्यतानुसार अधिगम हेतु अवसर प्रदान करना ।
10 विद्यार्थियों के शिक्षण-अधिगम दोनों में सामंजस्य स्थापित करना ।

10.3 दृश्य-श्रव्य शिक्षण सहायक सामग्री का महत्त्व

ज्ञान को व्यवस्थित ढंग से सम्प्रेषण करने के लिए तथा उसका सदुपयोग करने के लिए सहायक सामग्री की व्यवस्था की जाती है । शिक्षण-व्यवस्था में ज्ञान की संरचना के आधार पर विभिन्न प्रकार की शिक्षण सहायक सामग्री की पूर्वायोजना की जाती है । पाठ्य-वस्तु के अधिगम में शिक्षण सहायक सामग्री का विशेष महत्व है । इसकी सहायता से ज्ञान के संचरण में विशेष सहायता मिलती है । सीखना या अधिगम का स्तर शिक्षण सहायक सामग्री की उपयुक्तता पर निर्भर करता है । दृश्य-श्रव्य सामग्री अध्यापन को अधिक सशक्त व सार्थक बनाती है । शिक्षण सहायक साम्रगी संरचित ज्ञान को पुष्ट करने में संदर्भ को समझने में, शब्दों के अर्थ समझने में, प्रत्येक पाठ्य-वस्तु को बोधगम्य करने में महत्वपूर्ण है । यह सामग्री विशेषत: कम बुद्धिलब्धि वाले विद्यार्थियों को अधिगम कराने में बहुत सहायक है ।

शिक्षाविदों का कथन है कि अधिगम अर्जित करने की दृष्टि से प्रत्यक्ष एवं मूर्त अनुभव अत्यधिक होते हैं । लेकिन प्रत्यक्ष से अप्रत्यक्ष की ओर, और मूर्त से अमूर्त की ओर विकास करने के लिए अधिगम अर्जित करने में विद्यार्थियों को विशेष प्रयास करना पड़ता है ।

दृश्य-श्रव्य सामग्री के उपयोग से शिक्षक और विद्यार्थी के मध्य अत्यन्त प्रभावशाली अंतःक्रिया होती हैं । जिससे कि कक्षा-कक्ष में अधिगम हेतु अपेक्षाकृत अधिक प्रभावी वातावरण प्रशस्त होता है और अधिगम अत्यन्त बोधगम्य हो जाता है । उदाहरणार्थ जब शिक्षक किसी वैचारिक सामग्री को स्पष्ट करने के लिए विवरण प्रस्तुत करता है, उस समय विद्यार्थी उस विवरण को ध्यानपूर्वक सुनते हैं, इसमें केवल श्रवणेन्द्रियाँ प्रयुक्त होती है । लेकिन जब अध्यापक उस विवरण को किसी दृश्य उपकरण के द्वारा प्रस्तुत करता है, तब श्रवणेन्द्रियों के साथ-साथ दृश्येन्द्रियाँ भी सक्रिय रहती हैं । अत: विद्यार्थियों के लिए वह विवरण अपेक्षाकृत अधिक ग्राह्य हो जाता है ।

शिक्षाविद् एडगर डेल ने कक्षा-कक्ष की इस परिस्थिति में विद्यार्थियों के अधिगम-वृद्धि हेतु कतिपय निम्नांकित तथ्य शंकुरूप में प्रस्तुत किए है ।

1 शब्दचित्र
2 दृश्य चित्र

3 स्थिर चित्र रेडियो प्रसारण

4 चल चित्र

5 प्रदर्शन

6 भ्रमण

7 प्रदर्शन

8 नाट्य,अनुभव

9 प्रतिस्थापित अनुभव

10 प्रत्यक्ष प्रयोजनशील अनुभव

इस अनुभव के शंकु के आधार प्रत्यक्ष एवं प्रयोजनशील अनुभव जैसे-जैसे आधार से शंकु के शीर्ष की ओर बढ़ते हैं विद्यार्थी की समझने की प्रक्रिया बढ़ती हैं । विद्यार्थियों की इन्द्रियों को प्रशिक्षित करने और पाठ के विकास, दोनों के लिए इन साधनों का प्रयोग किया जाता हैं । सभी शिक्षण प्रणालियों में दृश्य-श्रव्य साधनों के प्रयोग पर बल दिया जाता है ।

10.4 अभ्यासार्थ प्रश्न

1 भाषा-शिक्षण में शिक्षण सहायक सामग्री की पूर्वायोजन के उद्देश्य स्पष्ट कीजिए ।

2 भाषा-शिक्षण में दृश्य-श्रव्य शिक्षण सहायक सामग्री का क्या महत्त्व है?

3 अधिगम सहायक सामग्री से क्या तात्पर्य है? भाषा के शिक्षण में इसकी उपयोगिता पर प्रकाश डालिए ।

10.5 दृश्य-शिक्षण सहायक सामग्री का विवेचन

10.5.1 दृश्य-श्रव्य शिक्षण सहायक सामग्री

दृश्य शिक्षण सहायक सामग्री का अधिगम में प्रयोग करने से दृश्य-इन्द्रियों को अधिक क्रियाशील रखा जाता है । इनके उदाहरण हैं- चित्र, पट्ट, रेखा चित्र, मानचित्र, चार्ट, प्रतिमान आदि। पाठ्य-वस्तु के अधिगम को अत्यधिक प्रभावशील और बोधगम्य बनाने में इनका प्रयोग आवश्यक है । दृश्य सामग्री श्रव्य सामग्री की अपेक्षा अधिक उपयोगी एवं सार्थक होती है ।

10.5.2 श्रव्य-शिक्षण सहायक सामग्री

इस प्रकार शिक्षण सामग्री के प्रयोग में श्रव्य-इन्द्रियाँ अधिक क्रियाशील रहतीं हैं । व्याकरण में श्रव्य-इन्द्रियाँ क्रियाशील रहती हैं । यदि पाठ्य वस्तु को ग्रामोफोन अथवा रेडियो द्वारा प्रस्तुत किया जाता है तब विद्यार्थी अधिक तत्परता से सीखता है । इस प्रकार की सामग्री का प्रयोग ज्ञानात्मक एवं भावात्मक उद्देश्यों की प्राप्ति सुविधा से हो सकती है । इसके अन्तर्गत निम्नांकित सामग्री को रख सकते हैं - रेडियो, ग्रामोफोन, टेपरिकार्डर, लैंग्वेज लैब आदि ।

10.5.3 दृश्य-श्रव्य शिक्षण सहायक सामग्री का वर्गीकरण

शिक्षण में सहायक सामग्री के प्रयोग से दृश्य-श्रव्य दोनों इन्द्रियाँ अधिक क्रियाशील रहती हैं क्योंकि इसमें श्रव्य के साथ-साथ प्रत्यक्षीकरण भी आवश्यक होता है और दोनों इन्द्रियों

के क्रियाशील होने से प्रत्यक्षीकरण अधिक स्पष्ट हो जाता है जिससे प्रत्यक्ष अधिगम में सहायता मिलती है । ज्ञान एवं अनुभव के लिए चक्षु एवं श्रव्य प्रमुख ज्ञानेन्द्रियाँ हैं ।

इन्हीं कारणों से महान् शिक्षाशास्त्रियों यथा-रूसों, पेस्टालाजी आदि ने साक्षात एवं प्रत्यक्ष आधार पर अध्यापन की प्रणाली का प्रतिपादन किया । इसमें कोई संदेह नहीं कि विद्यार्थी मौखिक कथन की अपेक्षा क्रिया तथा प्रत्यक्ष वस्तु की ओर अधिक आकृष्ट होते हैं । शिक्षण में सहायक सामग्री के प्रयोग से पाठ क्रियात्मकरोचक व बोधगम्य बन जाता है । कक्षा का वातावरण सजीव और आकर्षक ही नहीं हो जाता अपितु मनोरंजन एवं सुखद परिस्थितियों में विद्यार्थी के लिए सीखना भी सरल हो जाता हैं । दृश्य-श्रव्य साधनों का वर्गीकरण निम्नांकित सारणी में प्रस्तुत किया गया हैं-

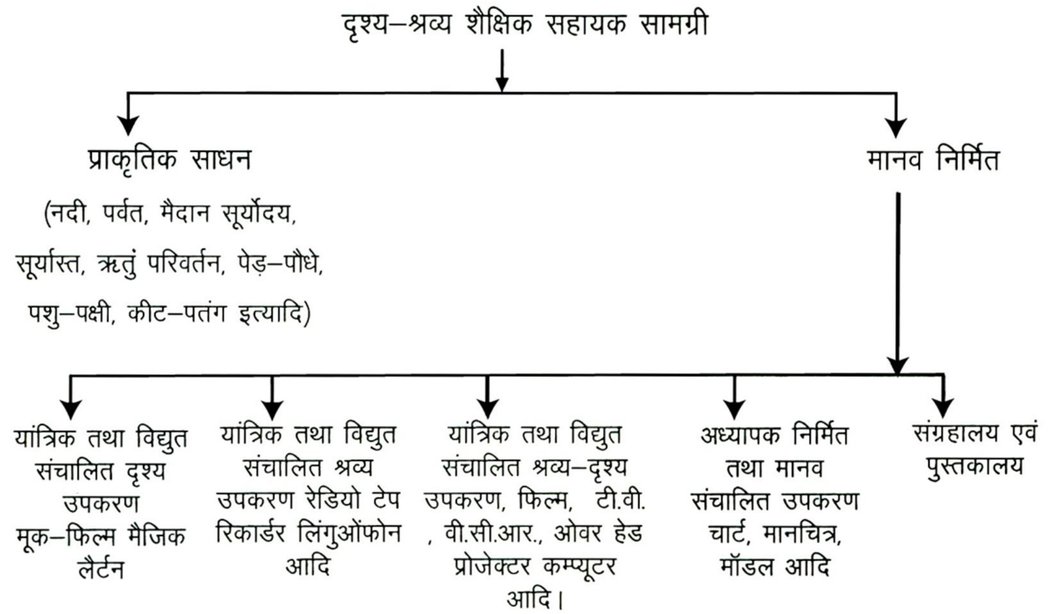

10.5.4 प्राकृतिक साधन

भारतीय संस्कृति प्रकृति में परमेश्वर का रूप आरोपित करके उसे पूजनीय समझती रही है और यह भावना अनाधार नहीं हैं । प्रकृति ही वस्तुत: बालक की प्रथम पाठशाला है । कतिपय भाषा वैज्ञानिकों के अनुसार प्रकृति में व्याप्त ध्वनियों से ही भाषा निःसृत हुई है । हो सकता है इस मान्यता में अतिशयोक्ति हो लेकिन यह निर्विवाद सत्य है कि प्रकृति के निरंतर अवलोकन से बालक में अनेक प्रारम्भिक सम्प्रत्ययों का एवं जिज्ञासावृति का उदभव एवं विकास होता है । नदी, निर्झर, सूर्य, चाँद, सितारे आदि उसके अनुभवों का आदि स्त्रोत बनते हैं । सृजनात्मक अभिव्यक्ति के विकास हेतु प्रकृति मनुष्य की आदि प्रेरणा स्त्रोत रही है । हिन्दी शिक्षक को प्रकृति प्रदत साधनों का प्रचुर उपयोग करना चाहिए । प्रकृति प्रदत्त साधनों का प्रचुर वर्णन युक्त काव्य और साहित्य के प्रति विद्यार्थियों की अनुभूति स्तर के विकास के लिए प्रकृति सान्निध्य, प्रकृति के साथ तादात्म्य स्थापन सर्वाधिक प्रभावी आधार है ।

10.5.5 मानव निर्मित सामान्य सहायक सामग्री कक्षोपकरण

कक्षा शिक्षण में सहायक सामग्री का उपयोग किया जाता है यथा (1) श्याम पट्ट (2) नमदा पट्ट (3) चुम्बकीय पट्ट (4) चार्ट-चित्र (5) भित्ति पत्रिका (8) मॉडल-अनुकृति (7) सारिणी (8) मानचित्र आदि ।

(i) श्याम पट्ट

श्याम पट्ट सर्वसुलभ कक्षा उपयोगी उपकरण कहा जाता है । श्याम पट्ट का प्रयोग शिक्षण का अभिन्न अंग है । विषय वस्तु की सम्यक व्याख्या के लिए श्याम पट्ट अनिवार्य है । जिस अध्यापक का श्याम पट्ट पर साधिकार लेखन है वह उतना ही अधिक सफल अध्यापक होता है । भाषा शिक्षण में सबसे अधिक प्रयोग श्याम पट्ट का होता है । भाषा के पाठों में शब्दार्थ, व्याख्या, एवं प्रयोग, शब्द रचना के उदाहरण, वर्तनी आदि बताते समय श्याम पट्ट पर उनका उल्लेख आवश्यक हो जाता है । इससे पाठ अधिक स्पष्ट और बोधगम्य हो जाता है । बिना श्याम पट्ट के अध्यापन अपूर्ण है । यदि भाषा का अध्यापक रेखा-चित्र खीचने में कुशल है तो किसी भी अन्य वस्तु प्रतिमूर्ति, चित्र, मानचित्र, चार्ट आदि की आवश्यकता नहीं, इन सब की पूर्ति श्याम पट्ट की सहायता से कर सकता है ।

श्याम पट्ट की उपयोगिता

(1) भाषा शिक्षण में श्याम पट्ट पर शब्द लिखे जाते हैं । व्याकरण के नियम लिखे जाते हैं और उनका स्पष्टीकरण किया जाता है । पक्कों के सारांश लिखे जाते हैं, और रचना शिक्षण करते समय यथा विषय की रूपरेखा तैयार कर लिखी जाती है । शब्दों की वर्तनी, उनकी संरचना, उनका विश्लेषण, पाठ सार, सूक्तियाँ, भाषातत्व विचार बिन्दु शब्द पर निबंध लिखने हेतु इसका उपयोग किया जाता है ।

(2) इसके प्रयोग से बालक की नेत्रेन्द्रियाँ सक्रिय हो जाती हैं । जिससे बालक का ज्ञान सुदृढ़ और स्थायी होता है । श्रव्य एवं निरीक्षण दोनों प्रक्रिया के योग से अवधान में एकाग्रता और प्रगाढ़ता आ जाती है।

(3) श्याम पट्ट पर पाठ के महत्वपूर्ण अशों, तथ्यों, शब्दार्थो आदि के उल्लेख से बालकों का ज्ञान अपने आप उसकी ओर आ.ष्ट हो जाता है और मानसिक बिम्ब बन जाता है ।

(4) पाठ-सारांश एवं पुनरावृत्ति, मूल्यांकन-प्रश्न की दृष्टि से श्याम पट्ट एक अपरिहार्य साधन है ।

(5) श्याम पट्ट सहज ही सुलभ तथा स्वल्प व्ययसाध्य शैक्षिक उपकरण है ।

सावधानियाँ

1 इस पर चॉक से लिखते समय वर्णोशब्दों को सुडौल,स्पष्ट,वर्णो से वर्ण के बीच की दूरी, शब्दों पर शिरोरेखा आदि का विशेष ध्यान रखना चाहिए ।

2 रंगीन चॉक का उपयोग उचित तरीके से करना चाहिए ।

3 वर्तनी की संरचना की दृष्टि से लेखन शुद्ध होना चाहिए ।

4 स्पष्ट तथा क्रमबद्ध रूप से लेखन कार्य करना चाहिए ।

5 श्याम पट्ट पर लिखते समय सभी बालकों पर सामयिक रूप से दृष्टिपात करते रहना चाहिए ।

(ii) नमदापट्ट या फलैनल बोर्ड

यह एक प्रकार का बोर्ड या तख्ता होता हैं, जिस पर खुरदरा एवं रंगीन कपड़ा (फिनालोन) या खद्दर कपड़ा लगा होता हैं । इस बोर्ड पर शिक्षक गत्ते, कपड़े पर अन्य प्रकार की बनाई आकृतियाँ, चित्र, शब्द चित्र, शब्द उदाहरण, वार्तालाप कहानी, रचना अभ्यास आदि के चित्र, चिपका सकते हैं। इस बोर्ड का भाषा शिक्षण में बहु त उपयोग होने लगा है। इसका सबसे बड़ा लाभ यह है कि शिक्षक चित्र आदि शीघ्रता से चिपका या हटा सकता है। बालकों की सृजनात्मक अभिव्यक्ति विकास हेतु इस साधन का उपयोग आसानी से किया जा सकता है।

(iii) चुम्बकीय पट्ट

लोहे अथवा टिन प्लेट को चुम्बकीय प्लेट बनाया जाता है । इसे दूसरी तरफ से रंगकर श्याम पट्ट की तरह भी प्रयुक्त किया जा सकता है । इसका प्रयोग विभिन्न अधिगम संस्थितियों में किया जा सकता है ।

(iv) चार्ट -चित्र

1 चार्ट- इसमें चित्रों और तथ्यों का समन्वय बालकों के समक्ष दर्शनात्मक रूप से प्रस्तुत किया जाता है। अधिगम में सुगमता प्रदान करने हेतु कवियों, महान् नायकों, प्रसिद्ध घटनाओं आदि के विषय में क्रमबद्धता और तार्किक ढंग से चित्रों के द्वारा इन्हें अधिक साकार बनाया जा सकता हैं । चार्ट अनेक प्रकार के होते हैं, विषय- वस्तु के अनुसार शैक्षिक चार्ट (क) तालिका चार्ट (ख) व्याकरण चार्ट (ग) शब्दावली चार्ट (घ) कहानी चार्ट (ङ) दृष्टांत चार्ट (च) अन्यवर्गीकरण चार्ट आदि । इनके प्रयोग से विषय-वस्तु को अधिक बोधगम्य बनाया जा सकता है । व्याकरण संबंधी यथा संधि-चार्ट, समास-चार्ट आदि का विद्यालय में प्रमुखता से उपयोग किया जाता है ।

(v) चित्र

अधिगम में चित्रों के सामयिक प्रयोग से पाठ में रोचकता और स्पष्टता आती है । विद्यार्थी-वर्ग को उपयोगी चित्रों के संकलन में आनन्द भी आता है । पौराणिक कहानियों के अधिगम में चित्रों का प्रयोग उपयोगी सिद्ध होता है । चित्र रचना में बालक विशेष रुचि रखते हैं । जीवनी के पाठों में महापुरूषों के चित्र प्रेरणा सिद्ध होते हैं । अध्यापन के समय ऐतिहासिक चित्र, किले भवन, युद्ध सिक्के आदि कलात्मक वस्तुओं के चित्र, प्राकृतिक दृश्यों के चित्र, वैज्ञानिकों के चित्र एवं वैज्ञानिक यंत्रों के चित्र आदि, यथा प्रसंग प्रयुक्त होने से विषय- वस्तु अपेक्षाकृत अधिक रोचक और सुग्राह्य हो जाती है ।

चित्र विद्यार्थी की कल्पना शक्ति का विकास करता हैं । शाब्दिक वर्णन की अपेक्षा चित्रात्मक वर्णन विद्यार्थी के मस्तिष्क को अधिक प्रभावित करता है । इससे विषय वस्तु की अधिगम संस्थितियाँ अधिक प्रभावी होती हैं । कक्षागत शिक्षण में उपयुक्त, शुद्ध एवं स्पष्ट चित्रों का ही प्रयोग वांछित है । चित्र ऐसे हो जिनमें अज्ञात या नवीन अनुभव की सामग्री समझने के

लिए कुछ ज्ञान सामग्री अथवा पृष्ठ भूमि भी रहे । इससे चित्रों की व्याख्या तथ्य तथा अभीष्ट निष्कर्ष प्राप्त करने में विद्यार्थियों को सुविधा हो जाती है ।

चित्रों का विश्लेषण बालकों के द्वारा कराना चाहिए । चित्रों के प्रयोग में विद्यार्थियों का अधिकाधिक सहयोग लेने से विषय-वस्तु के प्रति वे अधिक आकर्षित रहते हैं ।

चित्रों तथा क्रमिक चित्रमाला का प्रयोग कड़े गत्ते पर चिपकाकर करना सबसे सरल होता है । परन्तु छोटे चित्रों की स्लाइड बनाकर ओवर हेड प्रोजेक्टर, एपिडायस्कोप या चित्र दर्शक यंत्र की सहायता से पर्दे या दीवार पर प्रदर्शित करना चाहिए । ये चित्र एकरंगी, बहुरंगी या रेखांकित हो सकते हैं । चित्र आकर्षक, अर्थपूर्ण तथा क्रिया-द्योतक होने पर अधिक प्रभावी होते हैं ।

(vi) भित्ति-पत्रिका

यह बालकों की सृजनात्मक अभिव्यक्ति के साथ-साथ वैचारिक अभिव्यक्ति की भी प्रमुख शैक्षिक सहायक सामग्री है । विद्यार्थियों के कौशल के विकास में भित्ति-पत्रिका की प्रमुख भूमिका है । इसमें विद्यार्थियों की स्वरचित सरल और बोध गम्य और आवश्यक सामग्री चित्रमय समाविष्ट हो सकती है । यह चित्रमय होने से आकर्षित होती है, क्योंकि इसमें विद्यार्थियों की स्वयं की भूमिका होती है । यह वातावरण एवं विषय देकर भी बनायी जाती है। यथा-विद्यालय में आयोजित की जाने वाली जयन्तियाँ एवं विषय 'ताजमहल' शीर्षक लेकर एक भित्ति पत्रिका का निर्माण करा सकते हैं ।

(vii) मॉडल-अनुकृति

यह किसी भी वस्तु का वह प्रतिनिध्यात्मक रूप होता है जिसमें लम्बाई, चौडाई, ऊँचाई, मोटाई और गोलाकार, बेलनाकार, आदि आकृति के मॉडल या प्रतिमान बनाए जा सकते हैं । यह किसी वस्तु का वह प्रतिमान रूप जिसमें विद्यार्थी छू सके, टटोल सके, और उलट-पुलट कर देख सके तथा अपनी पिज्ञासा और कोतूहल को शांत कर नया अनुभव प्राप्त कर सकें । यह मॉडल या अनुकृति कहलाती है । इसे विद्यार्थी स्वनिर्मित कर सकता है या बाजार से निर्मित की जा सकती है । रचना शिक्षण एवं प्रस्तावना के लिए यह बहुत उपयोगी शिक्षण सहायक सामग्री सिद्ध होती है।

(viii) सारिणी

भाषा में व्याकरण के विविध पक्षों या शब्दों, शब्द भेद, उपसर्ग, प्रत्यय, कालभेद, संज्ञा, संधि शब्द, आदि को स्पष्ट करते समय इसका प्रयोग किया जाता है । उच्च प्राथमिक कक्षाओं में इसका प्रयोग करना आरम्भ कर देना चाहिए, जिससे कि विद्यार्थियों के शब्द-भण्डार की अभिवृद्धि हो सके ।

(ix) मानचित्र-ग्लोब

(1) अप्रत्यक्ष सूचनाओं के स्वरूप को मूर्त बनाने किसी क्षेत्र की लम्बाई, चौड़ाई, आकार, प्रकार स्थिति का सम्यक् परिज्ञान कराने व विश्व के देशों, प्रांतों, विविध राज्यों की स्थितियों का संश्लिष्ट परिचय देने के लिए हिन्दी शिक्षण में मानचित्रों की उपयोगिता महत्वपूर्ण हैं । भाषा साहित्य के विषयों में कभी-कभी प्रसंगवश स्थान, देश, नदियाँ, जलवायु पर्वतमालाओं

की स्थिति का संकेत करने के लिए मानचित्र की सहायता ली जा सकती है । ऐतिहासिक पाठों में राज्यों की सीमा, महाराजाओं के युद्ध, उनका साम्राज्य विस्तार आदि को स्पष्ट रूप से बताया जा सकता है । आजकल विद्यालयों में आधुनिक ढंग से निर्मित मानचित्र रखे जाते हैं । (2) ग्लोब-पृथ्वी को ग्लोब रूप देकर ऐसी अनेक बातों का स्पष्टीकरण सरल रहता है जो समतल मानचित्र पर कठिन होता हैं । पृथ्वी के ग्लोब से उसके धरातल की अनेक बातें स्वत: स्पष्ट हो जाती हैं ।

10.5.6 विद्युत संचालित श्रव्य साधन (यांत्रिक)- में निम्नांकित यांत्रिक साधनों का अध्ययन करेंगे।

(i) भाषा-प्रयोगशाला (लैग्वेज लैब)

(ii) रेडियो-ट्रांजिस्टर

(iii) टेपरिकार्डर, रेकार्डप्लेयर, लिंगुआफोन आदि ।

(i) भाषा-प्रयोगशाला (लैग्वेज-लैब)-

आज के इलेक्ट्रोनिक्स युग में भाषा अधिगम में इसका उपयोग विभिन्न रूपों में अनिवार्य-सा प्रतीत होने लगा है । भाषा-प्रयोगशाला (लैग्वेज लैब) भाषा-शिक्षण के क्षेत्र में इलेक्ट्रोनिक्स की उपयोगिता का एक महत्वपूर्ण अंश है । भाषा-प्रयोगशाला वस्तुत: भाषा अधिगम के क्षेत्र में अन्य दृश्य-श्रव्य उपकरणों की भाँति एक सहायक मात्र है न कि अध्यापक या शिक्षक का प्रतिस्थापन ।

भाषा प्रयोगशाला वस्तुत: एक विशेष प्रकार बड़ा कक्ष होता है । जिसमें अध्यापक और विद्यार्थियों के लिए अलग-अलग आसन-व्यवस्था होती है । अध्यापक अपने निश्चित स्थान से ही प्रत्येक विद्यार्थी के बूथ से यांत्रिक रूप से सम्पर्क स्थापित करता रहता है और उसका उच्चारण अथवा वाक्य विन्यास संबंधी अशुद्धियों का निवारण करता रहता हैं इस व्यवस्था में सभी विद्यार्थियों को व्यक्तिगत रूप से अभ्यास अथवा अध्ययन करते रहने की पूर्ण सुविधा रहती है । भाषा प्रयोगशाला एक अत्यधिक व्ययसाध्य साधन है जो सभी विद्यालयों में उपलब्ध नहीं है । लेकिन लिंग्वाफोन, रिकार्ड-प्लेयर प्राय: सभी उच्च माध्यमिक विद्यालयों में सुलभ हैं । इनसे भी वही कार्य सम्पन्न किया जा सकता है जो कि भाषा प्रयोगशाला के माध्यम से सम्पन्न होता है, शुद्ध उच्चारण, वाक्य-संरचना, शब्दों का सम्यक् प्रयोग, शुद्धवाचन के रिकार्ड आज उपलब्ध है जिनका उपयोग भाषा शिक्षण में सुविधापूर्वक किया जा सकता है । बालक भाषा की ध्वनि एवं संरचना का शुद्ध टेप के माध्यम से सुनकर दूसरे टेप पर दोहराता जाता हैं वह स्वयं ही अपनी और टेप की शुद्ध ध्वनि की तुलना कर अपने उच्चारण को शुद्ध करने का प्रयत्न करता रहता है । इस प्रकार वह विविध संरचनाओं का अभ्यास स्वयं एवं शिक्षक की सहायता से कर सकता है । (भाषा - प्रयोगशाला पर इकाई सं. 12 के अन्तर्गत यथेष्ट अध्ययन सामग्री उपलब्ध है ।)

रेडियो-ट्रांजिस्टर

विद्यार्थियों की सम्पूर्ण शिक्षा में रेडियो का अपना स्थान है । यह मनोरंजन का लोकप्रिय साधन है । वर्तमान समय में घर-घर, ग्राम-ग्राम और नगर-नगर के मुहल्ले-मुहल्ले में रेडियो और ट्रांजिस्टर उपलब्ध है । प्रत्येक प्राथमिक से लेकर उच्च माध्यमिक के सभी विद्यालयों में रेडियो या ट्रांजिस्टर उपलब्ध है । आकशवाणी के प्राय: सभी केन्द्रों से विभिन्न कार्यक्रम प्रसारित होते हैं। सामान्य शिक्षा और भाषा शिक्षा दोनों में प्रसारित होते हैं । वे रोचक और ज्ञानवर्धक होते हैं, जिससे श्रोताओं को सर्वमान्य भाषा ज्ञान होता है । उनका उच्चारण शुद्ध होता है और उनमें अपने विचारों को मौखिक रूप में अभिव्यक्ति करने की शक्ति का विकास होता है ।

टेपरिकॉर्डर

यह एक नया आविष्कार है । इसमें किसी भी स्थान पर कोई भी ध्वनि भरी जा सकती है और उसे पुन: सुना जा सकता है । अध्यापक अपने शुद्ध उच्चारण की ध्वनि भरी जाती है और विद्यार्थियों को पुन: ध्वनि सुनाई जाती है ताकि उनके उच्चारण दोषों को शुद्ध कर सकते है । ध्वनि में आरोह-अवरोह को भी ठीक कर सकते हैं । विद्यार्थी खेल ही खेल में अपनी भाषा में सुधार कर सकता है ।

लिंग्वोफोन

ग्रामोफोन की ही भांति लिंग्वोफोन में रेकार्डस से काम लेते हैं । इसे सुनकर बालक उसका अनुसरण करते हैं और भाषा संबंधी अभ्यास करते है । उच्चारण शिक्षण, पढ़ने या बोलने के शिक्षण में इसका उपयोग किया जाता है । यह एक व्यय साध्य यंत्र है और हमारे देश में सभी विद्यालयों में इसका प्रयोग अभी संभव नहीं हु आ है ।

10.5.7 विद्युत संचालित दृश्य साधन (यांत्रिक)

यांत्रिक दृश्य साधन के अंतर्गत निम्नांकित उपकरणों का उपयोग किया जाता है यथा, फिल्मस्ट्रिप्स स्लाइड, प्रोजेक्टर-फिल्म प्रदर्शन, मूक फिल्म, एपिडायस्कोप-स्लाइड प्रदर्शन ।

फिल्मस्ट्रिप्स-स्लाइड

व्याकरण के शिक्षण के लिए फिल्मस्ट्रिप्स या स्लाइड बनाकर प्रोजेक्टर के माध्यम से कक्षा के सम्मुख दिखाए जाते हैं । इसमें विविध दृश्यों, स्थान, भावनात्मक चित्र आदि की स्लाइड बनाते हैं वे बड़े आकार में प्रोजेक्टर की सहायता से कक्षा सम्मुख दिखाए जाते हैं ।

मूक फिल्म

चल चित्र का पहला रूप मूक चित्र ही था । मूक चित्रों में क्रिया तो पूरी दिखाई जाती है, लेकिन उनमें ध्वनि नहीं होती । मूक चित्र, चित्र विस्तार यंत्र और चित्र-दर्शक दोनों की अपेक्षा अधिक उपयोगी होते हैं । इसके ध्वनि की पूर्ति अध्यापक और विद्यार्थी करते हैं इससे उनकी दृश्य के साथ मौखिक एवं लिखित अभिव्यक्ति दोनों का विकास होना स्वाभाविक ही है।

चलचित्र-फिल्म-प्रदर्शन

वर्तमान युग में मूक-चित्रों (मूक-फिल्म) के स्थान पर ध्वनि युक्त चित्रों का प्रचलन है। चल-चित्रों का प्रयोग रसानुभूति वाले पाठों, साहित्य कथात्मक पाठ, नाटक पाठ आदि पाठों में

बहुत ही प्रभाव पूर्ण ढंग से किया जा सकता है, और विद्यार्थियों की सौंदर्य बोधात्मक शक्ति विकसित की जा सकती है । महापुरुषों की जीवन गाथा अथवा अन्य सामाजिक कार्यों पर आधारित कथा, नाटक, चल-चित्र द्वारा दिखाए जा सकते हैं । तत्पश्चात् उन दृश्यों पर प्रश्नों के माध्यम से विद्यार्थियों का मौखिक व लिखित अभिव्यक्ति का विकास किया जा सकता है ।

ओवरहेड-प्रोजेक्टर यार एपिडाय स्कोप-स्लाइड प्रदर्शन

फिल्मों का प्रदर्शन प्रोजेक्टर द्वारा किया जा सकता है जबकि ओवर हेड प्रोजक्टर के माध्यम से स्लाइड प्रदर्शन की जाती है । ओवर हेड प्रोजक्टर भाषा शिक्षण का एक प्रभावी साधन है। ओवर हेड प्रोजेक्टर में अध्यापक द्वारा लिखी शिक्षण सामग्री को पारदर्शी शीट, स्लाइड पर शब्द, व्याकरण-प्रकरण, शब्दार्थ, विलोम, प्रत्यय, उपसर्ग, संधि, समास, पर्यायवाची, दृष्टान्त आदि का आवश्यकतानुसार अध्यापन कराया जा सकता है । क्योंकि विस्तृत प्रकाश रश्मियों पर्दे पर स्पष्ट दिखाई देती है । इस से शिक्षण में रुचि बढ़ जाती हैं इसलिए आजकल विद्यालयों में ओवर हेड प्रोजेक्टर का चलन बढ़ता जा रहा है । अध्यापक को इसके प्रदर्शन का तरीका मालूम होना चाहिए जिससे कि वह अपने उद्देश्यों के अनुरूप इसको संचालित कर सके। इसके लिए पूर्व में विस्तृत योजना तैयार कर लेनी चाहिए।

10.5.8 विद्युत संचालित श्रव्य-दृश्य साधन (यांत्रिक)-

इसके अंतर्गत निम्नांकित उपकरण- टेलीविजन, कैसेट रिकार्डर, कम्प्यूटर आदि है :-

टेलीविजन

टेलीविजन श्रव्य और दृश्य दोनों साधन होने के कारण अधिक उपयोगी है । इसके माध्यम से हम वास्तविक क्रिया होते हुए देखतें हैं और उसके संबंध में सुनते भी हैं । इसमें विद्यार्थी की आँख और कान दोनों ज्ञानेन्द्रियाँ क्रियाशील रहती हैं । चल-चित्र के सभी गुण इस यंत्र में पाए जाते हैं । राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद् नई-दिल्ली द्वारा राष्ट्रीय स्तर पर शैक्षणिक अधिगम कार्यक्रम प्रतिदिन प्रसारित होते हैं । टेलीविजन की सुविधा लगभग सभी विद्यालयों में हो गई है यदि कोई भाषा अध्यापक भाषा-अधिगम संस्थितिया बनाकर भेज सकते हैं तो वह भी प्रसारित की जा सकती है । यह भाषा कौशलों की क्षमता में वृद्धि की दृष्टि से बहुत ही उपयोगी साधन है ।

वीडियो (कैसेट रेकार्ड)

यह एक व्यय साध्य किन्तु पर्याप्त शैक्षणिक अधिगम उपकरण है । इस उपकरण या साधन का उपयोग विद्यालयों में बहुत ही कम है । भाषा-शिक्षण की विविध विधाओं पर पाठ योजना आदि बनाकर इसके माध्यम से शिक्षण किया जा सकता है ।

कम्प्यूटर

इलेक्ट्रोनिक्स युग ने शिक्षा के क्षेत्र में जिससे एक अपूर्व क्रांति ला दी है वह साधन है "कम्प्यूटर" । इसके द्वारा शिक्षा के प्रचार-प्रसार तथा ज्ञान और कौशल की वृद्धि में बड़ा योगदान है । यह भाषा-शिक्षण में बहुत ही उपयोगी साधन है। इससे दूरस्थ देशों की विस्तृत जानकारी पल में ही उपलब्ध हो जाती है । यह साधन आज के विद्यालय-पाठ्यक्रमों का

महत्वपूर्ण साधन बन गया है । हर सूचना एवं शैक्षिक आयाम इससे जुड़ हुए हैं । इसका उपयोग सम्पूर्ण भारत के विद्यालयों में किया जा रहा है ।

10.6 दृश्य-श्रव्य शिक्षण सहायक सामग्री का भाषा शिक्षण में उपयोग

भाषा सिखाने में हम तीनों ज्ञानेन्द्रियों का उपयोग करते हैं - श्रवण-नेत्र तथा जीव्हा । इन इन्द्रियों का उपयोग हम भाषायी ध्वनियों को सुनने, पढ़ने तथा बोलने में करते हैं । भाषायी संप्रत्यय का निर्माण केवल शाब्दिक ज्ञान से नहीं होता परन्तु जीवन के विविध अनुभव जैसे जन-संसर्ग, वस्तु दर्शन, घटनाओं की अनुभूति, विविध प्रकार की क्रियाएं, अनुक्रियाएं एवं प्रतिक्रियाएं इन सम्प्रत्ययों के बनाने तथा उनका आत्मीकरण करने में सहायक होती हैं । दृश्य-श्रव्य उपकरण अनेक अननुभूत, अज्ञात तथा दुर्बोध-सम्प्रत्ययों का बोध कराने, अनुभूतियों को गहन बनाने एवं भाषा शिक्षण को आनन्ददायक तथा बोधगम्य बनाने में महती भूमिका का निर्वाह करते हैं । कक्षा-शिक्षण में श्रव्य-दृश्य शैक्षिक सहायक समाग्री एवं उपकरणों का प्रसंगानुसार उपयोग करना अध्यापक की अपने व्यवसाय के प्रति प्रतिबद्धता का स्वाभाविक परिचायक है । आधुनिक समय में विद्यार्थियों की भाषिक-सम्प्रेषणीयता में वृद्धि की दृष्टि से भी अध्यापन में सहायक सामग्री का उपयोग करते रहना अध्यापक का अपरिहार्य उत्तदायित्व है ।

10.7 सारांश

इस इकाई के द्वारा आपको हिन्दी के प्रभावी शिक्षण हेतु प्रयोग में ली जाने वाली सहायक सामग्रियों के संबंध में आवश्यक ज्ञान प्राप्त हुआ। भाषा शिक्षण को अपेक्षाकृत अधिक ग्राह्य, बोधगम्य व सारगर्भित बनाने के लिए अब विद्यालयों में अनेक प्रकार की दृश्य-श्रव्य सहायक सामग्री का उपयोग किया जा रहा है । किसी भी शिक्षण-सामग्री के उपयोग का एक निश्चित प्रयोजन होना चाहिए । सहायक सामग्री के रूप में प्रयुक्त अनेक उपकरण अध्यापक स्वयं भी निर्मित कर सकता है । विद्यार्थियों में भी अपेक्षाकृत अधिक सक्रियता व सृजनशीलता का विकास करने के लिए उपकरण निर्माण में उनको सहभागी बना सकता है । अन्यान्य यांत्रिक साधनों के भली-भाँति उपयोग हेतु अब अध्यापक को भी सामयिक रूप से तकनीकी प्रशिक्षण प्राप्त करना चाहिए । इससे उनकी व्यावसायिक कुशलता की वृद्धि ही नहीं होगी अपितु विद्यार्थियों की ज्ञान पिपासा तृप्त करने के लिए उचित उपकरण भी समय पर उपलब्ध हो सकेंगे। विद्यार्थी की योग्यता और विषंय-वस्तु के अनुसार, उपयुक्त शिक्षण सहायक सामग्री का चयन करना चाहिए । शिक्षण सामग्री विषय-वस्तु के लिए साधन है, साध्य नहीं है। यह शिक्षक का स्थान नहीं ले सकती है । इसकी सहायता से शिक्षक अपनी शिक्षण-कला में निरंतर परिष्कार, दक्षता एवं प्रवीणता प्राप्त कर सकता है ।

10.8 अभ्यासार्थ-प्रश्न

1 दृश्य-श्रव्य सामग्री का क्या अर्थ है? हिन्दी शिक्षण में इसका प्रयोग किस प्रकार करेंगे?

2 हिन्दी शिक्षण में सहायक सामग्री का महत्व एवं उपयोगिता पर विचार व्यक्त कीजिए ।

3 हिन्दी शिक्षण में सहायक सामग्री का अर्थ एवं प्रयोजन स्पष्ट करते हुए उनके प्रकारों की विवेचना कीजिए ।

4 "श्याम पट्ट अध्यापक का सर्वोत्तम मित्र है।" इस कथन की सार्थकता सिद्ध करते हुए भाषा शिक्षण में श्याम पट्ट के प्रयोग पर प्रकाश डालिए ।

5 हिन्दी में कक्षा 9 में "बिहारी के दोहे या कबीर के नैतिक दोहे" प्रकरण को पढ़ाने के लिए आप किन-किन सहायक सामग्री का शिक्षण के समय उपयोग करेंगे? विवरण प्रस्तुत कीजिए ।

10.9 अध्ययन हेतु संदर्भ पुस्तकें

1. लाल रमन बिहारी – "हिन्दी शिक्षण" रस्तोगी पब्लिकेशन, शिवाजी रोड, मेरठ
2. शर्मा. आर. के, शर्मा आर. डी. नागौरी अम्बा लाल – "हिन्दी भाषा शिक्षण एवं साहित्य शिक्षण" राजस्थान प्रकाशन, जयपुर
3. श्रीवास्तव राजेन्द्र प्रसाद – "हिन्दी शिक्षण" नई दिल्ली, अमर कॉलोनी
4. चक्रवर्ती सुजीत-(अनुवादक) पांडेय गंगारत्न – “भारत में दृश्य-श्रव्य शिक्षा"15 सी मदन पाल लेन, कलकत्ता
5. शर्मा बैजनाथ डॉ. – "अच्छी पाठ योजना" साहित्य-प्रकाशन, आगरा
6. सिंह निरंजन कुमार – "हिन्दी शिक्षण"(माध्यमिक-विद्यालयों में) राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी, जयपुर
7. शर्मा बी. एन. (डॉ) – "हिन्दी शिक्षण" साहित्य-प्रकाशन, आगरा

इकाई 11

हिन्दी शिक्षक के गुण, समस्याएँ व समाधान

Qualities of a Good Teacher, Problems and Solution

इकाई की रूपरेखा

11.0 भूमिका व उद्देश्य

11.1 शिक्षक के गुण

11.2 शिक्षक के सामान्य गुण

11.3 शिक्षक के विशिष्ट गुण

11.4 हिन्दी-शिक्षक व उसके गुण

11.5 अभ्यासार्थ प्रश्न

11.6 हिन्दी शिक्षक की समस्याएँ

11.7 हिन्दी शिक्षक की समस्याओं का समाधान

11.8 सारांश

11.9 स्वमूल्यांकन हेतु अभ्यास प्रश्न

11.0 संदर्भ व अध्ययन हेतु पुस्तकें

11.0 भूमिका एवं उद्देश्य

पारम्परिक समाजों में शिक्षा देने वाला अध्यापक ज्ञान प्रदायक की भूमिका में होता था । लेकिन विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में अतिशय तीव्रगामी प्रगति से प्रभावित आधुनिक प्रगतिशील समय में अध्यापक के उत्तरदायित्व अपेक्षाकृत कहीं अधिक व्यापक हो गए हैं । मूलत: विद्यार्थी केन्द्रित शिक्षा की अवधारणा के कारण आज अध्यापक की प्रतिबद्धताएँ पहले की अपेक्षा अधिक विस्तृत हो गई है। आज अध्यापक विद्यार्थियों को पाठ्य सामग्री पढ़ाने वाला ही नहीं अपितु मार्गदर्शक के रूप में उनकी सामाजीकरण प्रक्रिया में भी सक्रिय योग प्रदान करता है । अध्यापक का बौद्धिक तथा व्यावसायिक रूप से समृद्ध होना आज की शिक्षा की अनिवार्य माँग है ।

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात् आप निम्नलिखित पक्षों के सम्बन्ध में विशिष्ट ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे-

1 शिक्षक के गुणों को ज्ञात कर सकेंगे ।

2 हिन्दी शिक्षक के विशिष्ट गुणों का अभिज्ञान प्राप्त कर सकेंगे ।

3 हिन्दी शिक्षक की विविध समस्याओं से परिचित हो सकेंगे ।

4 हिन्दी शिक्षक की समस्याओं के विविध कारण ज्ञात कर सकेंगे ।

5 हिन्दी शिक्षक की समस्याओं के समाधान की प्रक्रिया का प्रत्यभिज्ञान कर सकेंगे ।

11.1 शिक्षक के गुण

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् की राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा (2005) में कहा गया है कि "शिक्षक की शिक्षा को विद्यालयी व्यवस्था की उभरती माँगों के प्रति अधिक संवेदनशील होना चाहिए। शिक्षक-शिक्षा को वर्तमान में ऐसे शिक्षकों को तैयार करना चाहिए जो निम्नलिखित रूप में अपनी भूमिका निभाए ।

उनको (शिक्षकों को) उत्साहकवर्धक, सहयोगी और मानवीय होना चाहिए जिससे विद्यार्थी अपनी संभावनाओं का पूर्ण विकास कर जिम्मेदार नागरिक के रूप में अपनी भूमिका निभाए ।

वे ऐसे व्यक्तियों के समूह का सदस्य बनें, जो लगातार सामाजिक और विद्यार्थियों की व्यक्तिगत आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर पाठ्यचर्या सुधार में सजगता से लगे हों" ।

प्रो.हुमायूँ कबीर के अनुसार "शिक्षा के पुनरूत्थान में शिक्षक का केन्द्रवर्त्ती स्थान है, उसकी शैक्षिक दक्षता के विकास पर ही शिक्षा की पुर्नरचना की सफलता निर्भर करती है । अच्छे शिक्षकों के अभाव में अच्छी प्रणाली भी असफल होगी लेकिन अच्छे शिक्षकों के रहने पर प्रणाली की त्रुटियाँ भी दूर हो जाएगी"। वस्तुत: भौतिक संसाधनों, सहायक उपकरणों व शिक्षा के अन्य स्रोतों का सार्थक उपयोग शिक्षक की गुणवत्ता व प्रतिबद्धता से ही सम्भव होता है ।

अनेक शिक्षा-शास्त्रियों ने अध्यापक के गुणों पर विस्तार से अध्ययन किया है, जिनमें फिन्ले (Finley) एवं हार्ड (Hurd) के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं । इनके अनुसार अध्यापक के गुणों को दो भागों में विभक्त किया जाना चाहिए-

1 सामान्य गुण (General Abilities)

2 विशिष्ट (Specific Abilities)

11.2 प्रथमत: अध्यापक के सामान्य गुणों का उल्लेख निम्नलिखित रूप में किया जा रहा है-

1 स्वस्थ व्यक्तित्व (Healthy Personality)

निरोगी काया बौद्धिक सजगता की प्रथम आवश्यकता है अत: शिक्षक का शारीरिक रूप से स्वस्थ होना सर्वाधिक महत्वपूर्ण है । स्वस्थ व्यक्ति से तात्पर्य एक ऐसे व्यक्तित्व से है जो शारीरिक, मानसिक एवं भावात्मक दृष्टि से समायोजित हो । अध्यापक का व्यक्तित्व विद्यार्थियों को प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष दोनों ही रूप से प्रभावित करता है अत: उसका स्वस्थ होना विद्यार्थी के लिए सदैव प्रेरणादायी है ।

2 आत्मविश्वास (Self-Confidence)

विद्यार्थियों को प्रभावित करने में सक्षम अध्यापक का आत्मविश्वासी होना आवश्यक है। अच्छे अध्यापक अपने विद्यार्थियों पर विश्वास करते हैं । विश्वास का यह पारस्परिक आदान-प्रदान आत्मविश्वास के बल पर ही संभव है अत: अध्यापक में आत्मबल का उत्साह होना आवश्यक है ।

3 निष्पक्ष दृष्टिकोण (Impartial Attitude)

अध्यापक का जनतांत्रिक मूल्यों में विश्वास होना चाहिए । उसे अपने विद्यालय व दैनिक व्यवहार में धर्म, जाति, लिंग एवं विद्यार्थियों से पूर्वाग्रहों के आधार पर व्यवहार नहीं करना चाहिए । सभी विद्यार्थियों के साथ संवेदनायुक्त निष्पक्ष व्यवहार करना उसके प्रभावी अध्यापन की प्रथम आवश्यकता है।

4 स्पष्टवादिता (Frankness)

स्पष्टवादी होना अध्यापक के संतुलित विकास का परिचायक है उसे अपने व्यवसाय के प्रति ईमानदारी का प्रदर्शन करते हुए विद्यार्थियों के समक्ष प्रत्येक परिस्थिति में सच्चाई से प्रस्तुत होना चाहिए।

5 सहानुभूतिपूर्ण व्यवहार (Sympathetic Behaviour)

व्यवहार में संवेदनशीलता, सहिष्णुता, सहभागिता और सहयोग-सहानुभूति का समावेश होना सफल नेतृत्व की आधारशिला है । एक अध्यापक को अपने सहयोगियों, अधिकारियों और सामान्य जन के साथ सौम्य व गरिमापूर्ण व्यवहार होना चाहिए । अध्यापक का गरिमापूर्ण व मित्रवत व्यवहार विद्यार्थियों के लिए सदैव प्रेरणादायी सिद्ध होता है ।

6 नेतृत्व का गुण (Ability to lead and be studious)

अध्यापक को कक्षा में, विद्यालय में, समाज में सदैव नेतृत्व की भूमिका का ही निर्वाह करना होता है । स्वयं नेतृत्व करने के साथ-साथ उसे विद्यार्थी में भी नेतृत्व-गुण विकसित करने होते हैं अत: एक अध्यापक में कुशल नेतृत्व के गुण होना सदैव अपेक्षित है ।

अध्यापक स्वयं को विद्यार्थी मानकर चलेगा तो वह अच्छा अध्यापक बन सकेगा । उसे अपने विषय के प्रति अधिक से अधिक ज्ञान प्राप्त करने के लिए स्वत: प्रेरित होना चाहिए । निरंतर स्वाध्याय से ही वह अपने विषय का प्रभावी अध्यापन कर सकता है ।

11.3 विशिष्ट गुण (Specific Abilities)

अध्यापक का उपर्युक्त सामान्य गुणों के साथ-साथ कतिपय विशिष्ट गुणों से भी विभूषित होना आवश्यक है, जो निम्नलिखित हैं-

1 प्रयोग करने का गुण (Ability to perform experiment)

सफल व सार्थक अध्यापन कौशल विकसित करने के लिए एक अध्यापक में प्रयोग करने का गुण होना आवश्यक है । उसे अपने विषय की विषयवस्तु के शिक्षण में विभिन्न प्रयोग करते रहना चाहिए । प्रयोग करने का गुण ही उसे निरंतर अध्ययन व सृजन करने के लिए प्रेरित करता है । प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में सम्पन्न नित्य नूतन आविष्कारों ने शिक्षकों के प्रयोगधर्मी स्वरूप को विशेष महत्त्व प्रदान किया है ।

2 वैज्ञानिक अभिवृत्ति-विकास (Scientific Attitude)

शिक्षा का यह एक महत्वपूर्ण उद्देश्य है कि विद्यार्थियों में वैज्ञानिक दृष्टिकोण विकसित हो और यह तभी संभव हो सकता है जबकि अध्यापक में स्वयं वैज्ञानिक अभिवृत्ति होगी । विद्यार्थियों में प्रारम्भ से ही मिथ्या और भ्रामक धारणाओं के विकास पर अंकुश लगाना आवश्यक है ।

3 आधुनिक शिक्षण विधियों का ज्ञान (Knowledge of different Modern Methods of teaching(

आधुनिक सूचना और प्रौद्योगिकी के अतिशय निरंतर विकास से मानव समाज के सभी पक्षों में बहुत शीघ्रता से परिवर्तन हो रहे है। शिक्षा का क्षेत्र भी इन परिवर्तनों से प्रभावित हुआ है। आज शिक्षा जगत् में अनेक शिक्षण विधियों का प्रयोग किया जा रहा है । इन सभी का ज्ञान अध्यापक को होना आवश्यक है । नवीन शिक्षण विधियों के प्रयोग से ही वह अपने अध्यापन को अपेक्षाकृत अधिक सार्थक, सहज, सरल व प्रभावी बना सकता है । विद्यार्थियों की अधिगम क्षमता के विकास हेतु यह आवश्यक है कि अध्यापन-विधियों में विविधता का प्रयोग किया जाए ।

4 मूल्यांकन प्रणाली का ज्ञान (Knowledge of Evaluation procedure)

राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा (2005) में कहा गया है कि "जब तक परीक्षाएँ बच्चे की पाठ्यपुस्तकीय ज्ञान को याद करने की क्षमताओं का परीक्षण करती रहेंगी, तब तक पाठ्यचर्या को अधिगम की तरफ मोड़ने के सभी प्रयास विफल होते रहेंगे । इस दृष्टि से यह आवश्यक है कि मूल्यांकन बहुपक्षीय हो तथा वह विद्यार्थी के लिए सीखने में सहयोगी हो । यह तभी संभव हो सकता है जब शिक्षक को मूल्यांकन की विविध प्रणालियों का ज्ञान हो ।

5 शिक्षा मनोविज्ञान का ज्ञान (Knowledge of Educational psychology)

अध्यापक को विद्यार्थी के विकास, रुचि, वातावरण, बुद्धि, आवश्यकता, आकांक्षा आदि सभी का भली-भाँति ज्ञान होना चाहिए । उसे अधिगम की प्रकृति, सिद्धान्त आदि की जानकारी होनी चाहिए और यह तभी संभव होगा जब वह शिक्षा मनोविज्ञान का गहन अध्ययन करेगा । अध्यापक एवं विद्यार्थी दोनों के हित में शिक्षा मनोविज्ञान का ज्ञान अत्यन्त आवश्यक है ।

11.4 हिन्दी-शिक्षक व उसके गुण

हिन्दी के शिक्षक से उन सभी गुणों की अपेक्षा की जाती है जो एक सामान्य शिक्षक के लिए आवश्यक है । उन गुणों का अध्ययन आप पहले अनुच्छेदों में कर चुके हैं । सामान्य शिक्षक के गुणों के अतिरिक्त भाषा एवं साहित्य का अध्यापन करने वाले शिक्षकों से कुछ अन्य विशिष्ट गुणों की अपेक्षा की जाती है क्योंकि भाषा ही वह माध्यम है जिसके द्वारा बालक व व्यस्क स्वयं को अभिव्यक्त एवं संप्रेषित करता है । भाषा और साहित्य, सामाजिक और सांस्कृतिक सरोकार हैं। यह मानव की अभिव्यक्ति और संप्रेषण का सबसे सशक्त माध्यम है। संप्रेषण के अतिरिक्त भाषा की अन्य अनेक महत्वपूर्ण भूमिकाएँ हैं ।

भाषा के संस्कार बालक में विद्यालय आने से बहुत पहले विकसित होने लग जाते हैं । शिशु के व्यक्तित्व और उसकी क्षमताओं के विकास को आकर देने में भाषा एक विशेष भूमिका का निर्वाह करती है। एक सूक्ष्म किन्तु सुदृढ़ शक्ति की तरह भाषा संसार के प्रत्येक बच्चे के दृष्टिकोण, उसकी रुचियों, क्षमताओं, यहाँ तक कि मूल्यों और मनोवृतियों को भी आकार देती है । भाषा अपनी भूमिका चीजों से जुड़ने, सोचने और अनुभव करने में भी निभाती है । भाषा के इन सभी पक्षों और भूमिकाओं के कारण भाषा अध्यापक का उत्तरदायित्व बढ़ जाता है । अत: भाषा के शिक्षक से कुछ विशेष गुणों की अपेक्षा किया जाना स्वाभाविक है । हिन्दी शिक्षक के

संदर्भ में तो यह बात और भी प्रभावी ढंग से लागू होती है, क्योंकि हिन्दी भारत के एक बड़े भू-भाग के लोगों की मातृभाषा तो है ही साथ ही इसे राष्ट्रभाषा व राजभाषा का गौरव भी प्राप्त है, अत: इसके प्रचार-प्रसार व गौरव को बढ़ाने का उत्तरदायित्व भी हिन्दी शिक्षकों का ही है । हिन्दी की अपनी एक गोरवशाली सुदीर्घ, सांस्कृतिक, राष्ट्रीय एवं सामाजिक परम्परा रही है । अध्यापन के माध्यम से प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष रूप से विद्यार्थियों में भाषागत गौरव को पल्लवित, पुष्पित व विकसित करने का उत्तरदायित्व का निर्वहन भाषा शिक्षक ही कर सकता है । अग्रांकित पृष्ठों में हिन्दी अध्यापकों के विशिष्ट गुणों का विवेचन किया जा रहा है-

1 हिन्दी भाषा, लिपि व साहित्य का ज्ञान

हिन्दी के अध्यापक को हिन्दी भाषा, उसकी लिपि (देवनागरी) व साहित्य का विधिवत् ज्ञान होना अनिवार्य व आवश्यक है । उसे हिन्दी के उद्भव, विकास व विविध रूपों की जानकारी होनी चाहिए । उसे देवनागरी के लिपि-चिह्नों का ही नहीं अपितु हिन्दी भाषा की विभिन्न ध्वनियों का पूर्ण ज्ञान होना चाहिए । हिन्दी साहित्य की विभिन्न विधाओं की प्रकृति, उनके प्रतिनिधि रचनाकार व रचनाओं की जानकारी ठीक प्रकार से होनी चाहिए । हिन्दी अध्यापक के लिए आवश्यक है कि वह हिन्दी साहित्य के आविर्भाव से लेकर आधुनिक काल तक की सभी प्रवृतियों के साथ वर्तमान साहित्य की दशा एवं दिशा की गहरी समझ रखता हो । इसके साथ ही उसमें साहित्य के विभिन्न पक्षों के विश्लेषण करने की क्षमता भी होनी चाहिए ।

2 भाषायी कौशलों की समझ

"भाषा शिक्षण का उद्देश्य पाठ्यपुस्तक की पढ़ाई नहीं, भाषा से जुड़े कौशलों का विकास है। किसी भाषा शिक्षक को भाषा के कौशलों का ज्ञान भली-भाँति होना चाहिए । बोलना, सुनना, पढ़ना और लिखना भाषा के आधारभूत कौशल हैं । हिन्दी के अध्यापक को इन कौशलों के विकास हेतु बहुआयामी प्रयत्न करने चाहिए जिससे कि वह अपने विद्यार्थियों में भाषा कौशलों के सम्यक् विकास करने के लिए सार्थक प्रयास करने में सफलता प्राप्त कर सके ।

3 विषय सामग्री के समायोजन एवं विश्लेषण की योग्यता

विषय सामग्री समायोजन एवं विश्लेषण की योग्यता के अभाव में किसी भी विषय के शिक्षण को प्रभावी नहीं बनाया जा सकता । हिन्दी शिक्षक में विषय सामग्री के समायोजन एवं विश्लेषण की योग्यता होना आवश्यक है । किस विषय वस्तु में, कौनसे भाषा तत्वों का विश्लेषण, किस स्थान में भली प्रकार से होगा, यह निर्णयात्मक क्षमता होनी चाहिए ।

4 भाषा शिक्षण विधियों का ज्ञान

हिन्दी अध्यापक को भाषा की विविध शिक्षण विधियों का गहन ज्ञान होना आवश्यक है। उसे प्राचीन व नवीन सभी शिक्षण विधियों की जानकारी होनी चाहिए । (शिक्षक विधियों तथा पद्धतियों का विस्तृत विवेचन इकाई सं. 5 में किया गया है)

5 पाठ्यसहगामी क्रियाओं का आयोजन संचालन एवं क्रियान्वयन में दक्षता

सभी विद्यालयों में अनेकानेक पाठ्यसहगामी क्रियाओं की आयोजना की जाती है; जिनके संचालन व क्रियान्वयन का उत्तरदायित्व प्राय: हिन्दी शिक्षक का ही होता है । विद्यार्थियों के अभिव्यक्ति विकास हेतु पाठ्यसहगामी क्रियाएँ ही सर्वोतम उपयोगी माध्यम है ।

इन क्रियाओं के द्‌वारा विद्‌यार्थियों में हिन्दी भाषा एवं साहित्य के प्रति रुचि एवं दायित्व की भावना का भी संचार किया जा सकता है । हिन्दी शिक्षण की दृष्टि से हिन्दी साहित्य की विभिन्न विधाओं का लेखन, अन्ताक्षरी, काव्यपाठ, काव्यगोष्ठी, नाटक मंचन, भित्ति पत्रिका प्रकाशन, विद्‌यालय पत्रिका प्रकाशन, विविध दिवस व जयन्तियाँ आदि अनेक गतिविधियाँ विद्‌यालय में नियमित संचालित करने में भाषा-अध्यापक का सिद्धहस्त होना आवश्यक है ।

6 शिक्षण सहायक सामग्री के उपयोग में कुशलता

हिन्दी अध्यापक को सहायक सामग्री के चयन एवं उपयोग में कुशल होना चाहिए । उसे भाषा शिक्षण में प्रयुक्त की जाने वाली विभिन्न श्रव्य-दृश्य सामग्री का ज्ञान होना चाहिए जिससे कि वह निश्चित कर सके कि किस विषय-वस्तु में, किस स्थान पर, किस प्रकार, कौनसी सामग्री प्रयुक्त करनी है । उच्चारण अथवा वर्तनी दोष निवारणार्थ उन्नत तकनीकी उपकरणों के उपयोग में उसे कुशल होना चाहिए ।

7 सृजनशील व्यक्तित्व

सृजनशील शिक्षक अपने विद्‌यार्थियों के लिए प्रेरणा का स्रोत बन जाता है। हिन्दी शिक्षक का व्यक्तित्व सृजनशील होना चाहिए। साहित्य सृजन के जितने भी आयाम हैं, अध्यापक को उन सबसे परिचित होना चाहिए और सृजन के प्रत्येक अवसर का लाभ उठाते हुए स्वयं को व्यक्त कर अपनी भूमिका का निर्वहन करना चाहिए।

8 संदर्भ सामग्री का ज्ञान व अध्ययनशीलता

शिक्षक का अध्ययनशील होना न केवल उसके शिक्षण को प्रभावी बनाता है अपितु विद्‌यार्थी के लिए भी प्रेरणास्पद सिद्ध होता है। हिन्दी अध्यापक में अध्ययनशीलता गुण होना आवश्यक है। हिन्दी अध्यापक को साहित्य की विभिन्न विधाओं की पुस्तकों का अध्ययन करना चाहिए। साथ ही शिक्षा शास्त्र के विभिन्न ग्रंथों, विभिन्न साहित्यिक पत्र-पत्रिकाओं का अध्ययन भी करते रहना चाहिए। शब्दार्थकोश, मुहावराकोश लोकोक्तिकोश पर्यायवाची शब्दकोश, व्याकरण, काव्यशास्त्र, साहित्यकोश, भाषाविज्ञान के साथ अन्य संदर्भ साहित्य का गम्भीर ज्ञान हिन्दी अध्यापक को होना चाहिए, जिससे कि वह संदर्भ सामग्री का सार्थक उपयोग करते हुए विद्‌यार्थियों की सृजनात्मक प्रवृत्ति का भी विकास कर सके।

9 प्रभावी सम्प्रेषण एवं कुशलवक्ता

शिक्षण की सफलता सार्थक एवं प्रभावी सम्प्रेषण पर निर्भर है। अत: हिन्दी शिक्षक का सम्प्रेषण प्रभावी होना चाहिए। भाषा अध्यापक होने के कारण हिन्दी शिक्षक को कुशलवक्ता भी होना चाहिए। उसके भाषण में उच्चारण की त्रुटियाँ नहीं होनी चाहिए तथा स्वराघात तथा बलाघात आदि स्पष्ट होने चाहिए। शिष्ट विचार-विमर्श करने की योग्यता, शिष्ट परिहास-योग्यता तथा अपने सहयोगियों तथा विद्‌यार्थियों के साथ स्नेहशील व्यवहार हिन्दी अध्यापक के विशिष्ट गुण हैं।

हिन्दी के सफल, सार्थक व प्रभावी अध्यापन के लिए भाषा के एक अध्यापक में उपर्युक्त सभी गुणों का समन्वित रूप विद्‌यमान होना चाहिए । सामान्यत: कक्षा अध्यापन अथवा पाठ्‌यसहगामी प्रवृत्तियों के संचालन व क्रियान्वयन में एक अध्यापक की अध्ययनशीलता,

प्रभावी सम्प्रेषणीयता, संदर्भ सामग्री के उपयोग की कुशलता, मूल्यांकन की विविध प्रविधियों के प्रयोग की दक्षता अथवा भाषागत अभिवृत्ति का प्रकाशन आदि अनेक गुण अनायास ही परिलक्षित हो जाते हैं । अत: एक सजग, सक्रिय एवं संवेदनशील अध्यापक को भाषा अध्यापन की सार्थक भूमिका के निर्वहन हेतु उपर्युक्त सभी गुणों को आत्मसात करने का सतत् प्रयास करना चाहिए ।

11.5 अभ्यासार्थ प्रश्न

1 भाषायी कौशलों का सम्यक् ज्ञान हिन्दी अध्यापक के लिए आवश्यक है। क्यों? स्पष्ट कीजिए।
2 अध्यापक की हिन्दी भाषा एवं साहित्य में अभिरुचि होना विद्यार्थियों के लिए प्रेरणादायी है। कैसे? अपने विचार व्यक्त कीजिए।
3 हिन्दी अध्यापक के विशिष्ट गुणों पर प्रकाश डालिए।

11.6 हिन्दी शिक्षक की समस्याएँ

प्रत्येक भाषा की अपनी सांस्कृतिक, सामाजिक और संवैधानिक स्थिति होती है, उसी के अनुरूप उसकी शैक्षिक स्थिति और समस्याएँ होती हैं। हिन्दी भाषा का उत्तर भारत में मातृभाषा के रूप में अध्यापन होता है तो दक्षिणी भारत में द्वितीय भाषा के रूप में।

हिन्दी शिक्षक को हिन्दी भाषा का अध्यापन करते समय अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ता है। इन समस्याओं का विवेचन निम्नलिखित है-

1 उद्देश्य प्राप्ति में बाधाएँ

सामान्यत: जनसाधारण भाषा को सम्प्रेषण का साधन मानने के इतने अधिक अभ्यस्त हो चुके हैं कि सोचने, अनुभव करने और वस्तुओं के जुड़ने के साधन के रूप में भाषा की उपयोगिता प्राय:, विस्मरण कर जाते हैं। भाषा संसार के प्रत्येक बालक को उसका दृष्टिकोण, उसकी रुचियों, क्षमताओं यहाँ तक कि मूल्यों और मनोवृत्तियों को भी आकार देती है। भाषा शिक्षक का उद्देश्य केवल पाठ्यपुस्तक का अध्यापन नहीं, विद्यार्थी में भाषिक कौशलों का सम्यक् विकास करना है। सुनना, बोलना, पढ़ना व लिखना भाषा के आधारभूत कौशल हैं, इन्हीं के अनुरूप हिन्दी शिक्षण के कौशल निर्धारित होते हैं । लेकिन बहुधा 'सुनना' और 'बोलना' क्षमता विद्यालयों में उपेक्षित रह जाती है। परिणामत: हिन्दी के इन दो उद्देश्यों की प्राप्ति विद्यालयों में प्राय: नहीं हो पाती ।

2 हिन्दी भाषा एवं साहित्य के प्रति अभिरुचि का अभाव

हिन्दी अध्यापकों के सामने आज यह समस्या है कि सामान्य जनसमुदाय में हिन्दी के प्रति अभिरुचि का अभाव है। अप्रभावी शिक्षण के कारण विद्यार्थियों के लिये भी हिन्दी की कक्षाएँ उबाऊ और महत्त्वहीन प्रतीत होती हैं। उच्च प्राथमिक या माध्यमिक स्तर पर विद्यालयों में हिन्दी अध्यापक का न होना चिन्ता का बिन्दु नहीं होता। अभिभावकों अथवा विद्यार्थियों का विशेष ध्यान प्राय: विज्ञान-वाणिज्य जैसे विषयों पर ही केन्द्रित रहने के कारण हिन्दी के प्रति

उनमें विशेष अभिरुचि का भी विकास नहीं होता। यह स्थिति हिन्दी के अध्यापक के लिये एक विषम समस्या है जिसका निवारण यथासम्भव शीघ्र होना चाहिए।

3 हिन्दी शिक्षण व स्थानीयता, मानकता एवं खुलापन

शिक्षण को प्रभावोत्पादक बनाने के लिए स्थानीयता का समावेश आवश्यक है। भाषा शिक्षण को यदि स्थानीयता से नहीं जोड़ा जाता है तो वह बच्चों के लिए वस्तुओं व संसार को समझने में अधिक सार्थक नहीं होती। हिन्दी शिक्षण के अर्थ में यह बात अत्यधिक महत्वपूर्ण है। हिन्दी शिक्षक के समक्ष यह समस्या विशेषत: ग्रामीण व आदिवासी क्षेत्रों में आती है। वहाँ बच्चों की मातृभाषा कोई स्थानीय बोली होती है जो हिन्दी की बोलियों में तो सम्मिलित की जाती है लेकिन मानक हिन्दी और उस बोली में गहरा अन्तर होता है। कक्षा में पढ़ाई जा रही हिन्दी और उसके घर की बोली का यह अन्तर बच्चे की अधिगम प्रक्रिया के विकास में अवरोध का कार्य करता है। अनेक अध्यापक परिष्कृत भाषा का आदर्श रखते हुए पुस्तकीय भाषा का प्रयोग करते है। इसका एक पक्ष यह भी होता है कि मानकता के चलते स्थानीयता की अवहेलना होती है। किसी भी भाषा की जीवन्तता और क्षेत्र विस्तार के लिए यह आवश्यक है कि वह विकास की दृष्टि व खुलेपन से संचालित हो। शिक्षकों की रूढ़िवादी सोच परिवर्तन की किसी भी चेतना को संदेह से देखती है जबकि परिवर्तन को विवेक की तुला पर तोलकर देखना चाहिए। हिन्दी शिक्षण में स्थानीय भाषा को किस सीमा तक महत्त्व प्रदान किया जाए? स्थानीय बोली व मानक भाषा के अध्यापन में किस प्रकार सामञ्जस्य किया जाए? आदि प्रश्न अभी तक अनुत्तरित ही है।

4 अच्छी पाठ्यपुस्तकों का अभाव

हिन्दी शिक्षक की एक अन्य समस्या यह है कि ऐसी पाठ्यपुस्तकों का सर्वथा अभाव है जो विद्यार्थियों के लिए सोच, समझ और संवाद की संभावनाओं का विकास करे। कोई भी पाठ्यपुस्तक विद्यार्थी को उसके परिवेश से सम्पूर्ण रूप से जोड़ने में सक्षम नहीं। विद्यार्थियों के लिए सन्दर्भ पुस्तकों की व्यवस्था का भी प्राय: अभाव है।

5 व्याकरण की जटिलता

व्याकरण ज्ञान निश्चित ही भाषा शिक्षण का अविभाज्य अंग है। कुछ अध्यापक व्याकरण के गहन अध्ययन के इतने प्रबल पक्षधर होते हैं कि वे व्याकरण ज्ञान को ही भाषा की कसौटी मान लेते है। परिणामत: व्याकरण विद्यार्थियों के लिए एक नितान्त नीरस और जटिल विषय बन जाता है। इससे विद्यार्थी की भाषा की अभिव्यक्ति, स्वाभाविकता और सृजनशीलता नष्ट हो जाती है।

6 वर्तनी व लेखन सम्बन्धी त्रुटियों की समस्या

शुद्ध लिखना एक कला है। शुद्ध लिखने का उतना ही महत्व हैं जितना कि शुद्ध बोलने का। हिन्दी भाषा में वर्तनी व लेखन की अनेक अशुद्धियाँ होती हैं। विद्यार्थियों की वर्तनी, लेखन सम्बन्धी त्रुटियाँ होना हिन्दी शिक्षकों के लिए एक विषम समस्या है।

7 वाचन व उच्चारण सम्बन्धी समस्या

शुद्ध उच्चारण भाषा का सौन्दर्य है। विद्वत् समाज में प्राय: उस व्यक्ति को विशेष सम्मान मिलता है, जिसका उच्चारण शुद्ध हो। शुद्ध उच्चारण शिष्टता और ज्ञान का लक्षण है।

शुद्ध उच्चारण से भाषा में शिष्टता और प्रात्र्जलता बनी रहती है। आज वाचन एवं उच्चारण में विद्यार्थी अनेक अशुद्धियाँ करते हैं। हिन्दी अध्यापक के लिए वाचन एवं उच्चारण की अशुद्धियाँ एक विषम समस्या है।

8 शिक्षण विधियों से संबंधित समस्या

आज भी विद्यालयों में हिन्दी शिक्षण के समय कहानियों, कविताओं, नाटकों के आदर्शवाचन व अनुकरण वाचन के पश्चात् प्रश्नोत्तर से पाठ्यक्रम पूरा कर लिया जाता है । व्याकरण के शिक्षण के समय भी अध्यापक 'आगमन निगमन' के अतिरिक्त कोई अन्य विधि काम में नहीं लेते। अध्यापक प्राय: शिक्षण विधियों को ही साध्य मान लेते हैं जबकि वे साधन हैं।

9 भाषा शिक्षण में प्रयुक्त सहायक उपकरणों का अभाव

वर्तनी, वाचन-गति अथवा उच्चारण की अशुद्धियों के निवारण हेतु सहायक सामग्री के रूप में अनेक उपकरणों का उपयोग किया जा सकता है जैसे रेडियो, टेपरिकॉर्डर, टेलीविजन, लिंग्वाफोन आदि। इन उपकरणों की सहायता से भाषा शिक्षण प्रभावी व सार्थक बनाया जा सकता है। लेकिन अधिकांश विद्यालयों में इन उपकरणों का अभाव है।

10 कक्षा आकार एवं-विद्यार्थी संख्या की समस्या

आज शिक्षा के प्रसार के कारण कक्षाओं: का आकार बहुत बड़ा हो गया है। भाषा शिक्षा का उद्देश्य भाषायी कौशलों का विकास करना होता है, इसके लिए विद्यार्थी पर व्यक्तिगत ध्यान देना आवश्यक होता है। कक्षा में विद्यार्थियों की संख्या अधिक होने के कारण हिन्दी के अध्यापक के लिए विद्यार्थियों की भाषायी कौशलों से संबधित व्यक्तिगत कठिनाइयों पर ध्यान देना संभव नहीं हो पाता।

11.7 हिन्दी शिक्षक की समस्याओं का समाधान

विगत परिच्छेदों में हिन्दी शिक्षकों की समस्याओं पर प्रकाश डाला गया था। इन समस्याओं के संभावित समाधानों के प्रति भी अध्यापक का जागरूक रहना आवश्यक है। निम्नांकित अनुच्छेदों में इसी पर विचार व्यक्त किए जाएंगे-

1) उद्देश्य प्राप्ति में बाधाओं का समाधान

भाषा केवल सम्प्रेषण का ही साधन नहीं है। वह सम्प्रेषण के साथ-साथ मनुष्य को सोचने, अनुभव करने और वस्तुओं से जोड़ने का कार्य भी करती है। भाषा विद्यार्थी के दृष्टिकोण, रुचियों, क्षमताओं, मूल्यों व मनोवृत्तियों का विकास करती है। भाषा शिक्षण का उद्देश्य उपर्युक्त सभी संदर्भों में भाषायी कौशलों का विकास करना है। अध्यापक को भाषा शिक्षण के उद्देश्यों को केवल ज्ञान-वर्धन तक सीमित न रखकर श्लाघात्मक, अभिवृत्ति विकास के उद्देश्यों को भी समाहित करते हुए अध्यापन करना चाहिए । उद्देश्य निर्धारण में इसका स्मरण रखना चाहिए कि हिन्दी शिक्षण केवल भाषा ही नहीं, वह साहित्यिक अभिरुचि विकास का माध्यम भी है । अगर अध्यापक उपर्युक्त सभी संदर्भों के प्रति सजग रह कर भाषा शिक्षण करता है तो निश्चित रूप से उद्देश्य-प्राप्ति की बाधाएँ समाप्त होंगी ।

2) हिन्दी भाषा एवं साहित्य के प्रति अभिरुचि के अभाव की समस्या का समाधान

हिन्दी भाषा एवं साहित्य के प्रति अभिरुचि विकसित करने के लिए हिन्दी अध्यापकों को केवल पाठ्यक्रम पूरा करने का दृष्टिकोण त्यागकर हिन्दी भाषा एवं साहित्य की कक्षाओं को रोचक बनाना होगा। अध्यापन करते समय विभिन्न उपयुक्त तथा आकर्षक सहायक शिक्षण सामग्री का उपयोग करना होगा। विद्यार्थियों को स्वाभिव्यक्ति के विविध अवसर प्रदान करना इस दिशा में सर्वाधिक सार्थक कदम है। हिन्दी के अध्यापकों को चाहिए कि वे विद्यार्थियों की स्वाभिव्यक्ति विकास के लिए विविध पाठ्यसहगामी सांस्कृतिक-साहित्यिक कार्यक्रमों का आयोजन नियमित रूप से करें यथा-काव्य गोष्ठी, कवि-दरबार, साहित्यिक आशु-भाषण, प्रतियोगिताएँ, अन्ताक्षरी विद्यालय पत्रिका, भित्ति पत्रिका प्रकाशन आदि । अध्यापक की स्वाध्याय प्रवृत्ति विद्यार्थियों को भाषा एवं साहित्य के अध्ययन के लिए प्रेरित करती है । उपर्युक्त सभी प्रयासों से विद्यार्थियों में हिन्दी भाषा एवं साहित्य के प्रति अभिरुचि विकसित की जा सकती है । इस दिशा में स्वयं अध्यापक की अपनी भाषा व साहित्य के प्रति अनन्यभाव से तादात्म्य-स्थापन विद्यार्थियों के लिए महत्वपूर्ण प्रेरक सिद्ध होता है ।

3) हिन्दी शिक्षण व स्थानीयता, मानकता एवं खुलापन की समस्या का समाधान

अध्यापकों का यह दृष्टिकोण कि विद्यार्थी के घर और परिवेश की भाषा मानक भाषा की पढ़ाई में बाधक होती हे, उचित नहीं है। वस्तुस्थिति इस मान्यता के विपरीत है । स्थानीय भाषा के बोले गए पारम्परिक रूपों के सृजनशील सम्मिश्रण से ही मानक भाषा जीवन्त बनती है । हिन्दी शिक्षकों को यह सदैव स्मरण रखना चाहिए कि स्थानीयता व आंचलिकता भाषा को समृद्ध और आत्मीय बनाती है । आंचलित बोलियों के शब्दों और विन्यास के प्रयोग से विद्यार्थियों की सृजनशीलता अधिक विकसित होती है और भाषा तथा साहित्य के प्रति उनका रुझान बढ़ता है । हिन्दी अध्यापक की भाषा सहज और सरल होनी चाहिए । भाषा को अनावश्यक रूप से दुरूह नहीं बनाना चाहिए । पाठ्यपुस्तकों में भी जटिल व अप्रचलित शब्दों का अधिक प्रयोग नहीं होना चाहिए । अगर ऐसे शब्दों का प्रयोग पाठ्यपुस्तक में है तो अध्यापक को उनका अर्थ सरल भाषा में स्पष्ट कर देना चाहिए । हिन्दी के अध्यापकों को अपनी पाठ्यपुस्तकों की पाठ्य सामग्री के प्रति भी सचेत रहने की आवश्यकता है । उसे पाठ्यपुस्तकों की पाठ्य सामग्री का भाषा शिक्षण के व्यापक संदर्भों में विश्लेषण करते हुए विद्यार्थियों के परिवेश को आवश्यक महत्त्व प्रदान करना चाहिए । हिन्दी के अध्यापकों को अपनी पाठ्य पुस्तकों की पाठ्य सामग्री पर भी सामयिक विचार विमर्श करते रहना चाहिए ।

4) अच्छी पाठ्य पुस्तकों के अभाव की समस्या का समाधान

शिक्षा के विविध स्तरों पर भाषायी दक्षताओं, विद्यार्थी की सोच, समझ और संवाद की संभावनाओं को दृष्टिगत रखते हुए, मूल्यों व व्यापक संदर्भों में परिवेश तथा जीवन से जोड़ने वाली पाठ्य पुस्तकों का निर्माण, हिन्दी शिक्षण की प्रथम आवश्यकता हैं। एन.सी.ई.आर.टी. और एस.आई.ई.आर.टी. जैसी संस्थाओ को इस दिशा में महत्त्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह करना चाहिए। पाठ्यपुस्तकों व पाठ्यक्रम की संरचना पर व्यापक स्तर पर शिक्षाविदों, अध्यापकों, समाज सेविओं, नीति-निर्धारकों, राजनेताओं व अभिभावकों में विचार विमर्श होना चाहिए। इसके साथ यह भी व्यवस्था होनी चाहिए कि हिन्दी अध्यापक केवल पाठ्यपुस्तकों पर ही निर्भर न रहे

उसके विकल्प के रूप में पूरक पुस्तकों का भी उपयोग कर सके। शिक्षा व्यवस्था में भी इसकी सुविधा होनी चाहिए कि पाठ्यपुस्तकों का विकल्प चुनने की स्वतन्त्रता शिक्षक व विद्यार्थियों को हो।

5) व्याकरण की जटिलता की समस्या का समाधान

व्याकरण निश्चित रूप से भाषा को अनुशासित व व्यवस्थित करता है लेकिन केवल व्याकरण ही ज्ञान की कसौटी नहीं है। हिन्दी-अध्यापकों को व्याकरण की जटिलता में नहीं उलझना चाहिए। व्याकरण के आधारभूत ज्ञान के पश्चात् हिन्दी-शिक्षकों को व्यावहारिक रूप से व्याकरण का ज्ञान प्रदान करना चाहिए जिससे कि व्याकरण का अध्ययन विद्यार्थियों को कठिन प्रतीत न हो।

6) वर्तनी व लेखन सम्बन्धी त्रुटियों की समस्या का समाधान

वर्तनी व लेखन की त्रुटियाँ व्यक्तिगत व सामान्य दोनों ही तरह की हो सकती हैं। वर्तनी च लेखन की त्रुटियों के कारणों को जानकर, तत्पश्चात् उनको दूर करने का प्रयास करना चाहिए। इसके लिए निदानात्मक एवं उपचारात्मक शिक्षण का आयोजन अत्यन्त प्रभावी एवं सार्थक सिद्ध होता है।

7) वाचन व उच्चारण सम्बन्धी समस्या का समाधान

वाचन व उच्चारण सम्बन्धी समस्याओं के अनेक कारण हो सकते हैं, जैसे व्यक्तिगत शारीरिक कारण, मनोवैज्ञानिक कारण, स्थानीयता का प्रभाव, आदत या स्वभाव, अज्ञानता, अनाभ्यास आदि। सर्वप्रथम शिक्षकों को इन कारणों को जानना चाहिए। वाचन एवं उच्चारण सम्बन्धी दोषों का निवारण करने के लिए निदानात्मक एवं उपचारात्मक शिक्षण इस समस्या के समाधान में हिन्दी भाषा शिक्षक के लिए एक वरदान है ।

8) शिक्षण विधियों से संबंधित समस्या का समाधान

शिक्षण विधियाँ साधन हैं, साध्य नहीं, सुविधानुसार साध्य के लिए साधन को परिवर्तित करना सार्थक होता है । हिन्दी शिक्षकों को अपने शिक्षण को आकर्षक बनाने के लिए सदैव तत्पर रहना चाहिए। भाषा शिक्षण के उद्देश्यों व विद्या प्रकृति को दृष्टिगत रखते हुए उसे शिक्षण विधियाँ अपनानी चाहिए। शिक्षण के समय निम्नलिखित सुझावों पर ध्यान देना लाभप्रद रहेगा।

(1) अध्यापन में गत्यात्मक प्रवृत्तियों पर विशेष ध्यान प्रदान किया जाए ।

(2) अध्यापन करते समय भी पारस्परिक सम्वाद का वातावरण निर्मित करने को महत्त्व दिया जाए।

(3) "साहित्य का अध्ययन विद्यार्थियों की सृजनात्मकता-वृद्धि के लिए आवश्यक हैं" अत: कक्षा की पाठ्यपुस्तकों के अध्यापन के साथ-साथ पुस्तकालय की पुस्तकों के सम्बन्ध में भी विद्यार्थियों को प्रसंगानुसार सूचित करने की व्यवस्था की जाए जिससे कि वे उनका समय-समय पर स्वंय अध्ययन कर सकें।

(4) विद्यार्थियों को अनुभवों के द्वारा सीखने की प्रक्रिया में सहायक रहने वाली शिक्षण विद्यियों का उपयोग किया जाए।

(5) नाटकों व एकांकियों के अध्यापन में अभिनय-प्रणाली का विशेष प्रयोग किया जाए।

(6) प्राथमिक कक्षाओं में कभी-कभी पाठ की एक विधा को दूसरी विधा में परिवर्तित करके पढ़ाने का प्रयास किया जाए।

9) भाषा शिक्षण में प्रयुक्त सहायक उपकरणों की समस्या का समाधान

हिन्दी भाषा शिक्षण पर्याप्त सहायक उपकरणों के अभाव में रोचक व सार्थक नहीं बनाया जा सकता। विद्यालय में हिन्दी शिक्षण में उपयोगी सभी श्रव्य-दृश्य उपकरणों की समुचित व्यवस्था होनी चाहिए। लेकिन सभी उपकरणों का सुलभ होना ही पर्याप्त नहीं अपितु उनका सार्थक उपयोग भी हिन्दी शिक्षकों को करना चाहिए। इसके लिए शिक्षकों को उनका प्रयोग करने के लिए प्रशिक्षित होना अत्यन्त आवश्यक है।

10) कक्षा का आकार एवं विद्यार्थी संख्या की समस्या का समाधान

हिन्दी शिक्षण की कक्षाओं का आकार अधिक बड़ा नहीं होना चाहिए। कक्षा में विद्यार्थियों की संख्या अधिक होने पर कक्षा शिक्षण करते समय सभी विद्यार्थियों का छोटे-छोटे समूहों में विभक्त कर कक्षा में संवाद का वातावरण निर्मित किया जा सकता है। सहायक उपकरणों व पुस्तकालय का उपयोग भी इस दृष्टि से सार्थक होता है।

उपर्युक्त सभी प्रयास हिन्दी शिक्षक की विविध समस्याओं के समाधान में उपयोगी सिद्ध हो सकते हैं।

11.8 सारांश

इस पाठ के अन्तर्गत शिक्षक के सामान्य व विशिष्ट गुण, हिन्दी शिक्षक के गुण, उसकी समस्याएँ तथा उन समस्याओं के समाधान स्वरूप विविध कार्यों की विवेचना की गई है। वस्तुत: पारम्परिक समाज की शिक्षा की अपेक्षा वर्तमान प्रगतिशील युग की शिक्षा में शिक्षक के उत्तरदायित्व कहीं अधिक व्यापक हो गए हैं। अब शिक्षक के स्वरूप को ज्ञानवर्द्धक होने के साथ-साथ तकनीकी व व्यावसायिक रूप से भी समृद्ध होना आवश्यक है। आधुनिक भाषा-शिक्षक का व्यक्तित्व बहुआयामी होना आवश्यक है। जिससे कि वह प्रभावी अध्यापन के साथ-साथ आसन्न समस्याओं के समाधान में भी प्रवृत हो सके। भाषा शिक्षकों के समक्ष, कक्षा-आकार, अच्छी पुस्तकों का अभाव, आवश्यक सहायक उपकरणों का अभाव, विद्यार्थियों के उच्चारण-दोष, वर्तनी-दोष आदि अनेक समस्याएँ हैं जिनका समाधान मुख्यत: स्वयं उन्हीं के क्रियाकलापों में अन्तर्निहित है। भाषा-शिक्षक की सजगता व सक्रियता से ही यह संभव है कि वह कक्षा अध्यापन अथवा विविध साहित्यिक-सांस्कृतिक कार्यक्रमों का आयोजन करते समय यह निश्चित करे कि वह किस उद्देश्य की प्राप्ति किस रूप में करना चाहता है। एक अध्ययनशील व कर्त्तव्यनिष्ठ शिक्षक के लिए नवीन विधियों का उपयोग करते हुए शिक्षण करना अथवा सक्रिय रहकर सहायक सामग्री का निर्माण, चयन अथवा प्रयोग करना स्वाभाविक क्रियाएँ हैं- उसके समक्ष कक्षा-आकार तथा विद्यार्थी संख्या की समस्या उत्पन्न ही नहीं होती क्योंकि वह अपने

विविध कार्यों तथा प्रभावी संप्रेषण के द्वारा विद्यार्थियों के अवबोध व अभिव्यक्ति के विकास के साथ-साथ उनकी सृजनात्मक शक्तियों के विकास के लिए भी अनुकूल वातावरण प्रशस्त करने में सक्षम है ।

11.9 अभ्यासार्थ प्रश्न

(1) “प्रयोगधर्मी एवं सम्वेदनशील अध्यापक ही आधुनिक समय में प्रेरणास्रोत है।" कथन की विवेचना कीजिए।

(2) "हिन्दी भाषा के सफल शिक्षण में शिक्षक का प्रभावी सम्प्रेषण प्रमुख भूमिका का निर्वाह करता है" कथन की सत्यता सिद्ध कीजिए।

(3) हिन्दी शिक्षक की प्रमुख समस्याओं पर सोदाहरण प्रकाश डालिए।

(4) भाषा-शिक्षक की वर्तमान समस्याग्रस्त स्थिति के विषय में सुधार के लिए अपने विचार प्रस्तुत कीजिए।

(5) विद्यार्थियों में हिन्दी भाषा व साहित्य के प्रति श्लाघापरक अभिरुचि के विकास के लिए आप भाषा शिक्षक के रूप में क्या-क्या प्रयास करेंगे? विचार व्यक्त कीजिए।

11.10 संदर्भ एवं अध्ययन हेतु पुस्तकें

(अ) संदर्भ

1,4.	राष्ट्रीय पाठ्यचर्चा की रूपरेखा (2005)	:	राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद, पृष्ठ सं. 123,. 83
2.	आधुनिक हिन्दी शिक्षण (2004)	:	डॉ.योगेश कुमार, पृष्ठ 126 ए.पी.एच. पब्लिशिंग कॉरपॉरेशन, नई दिल्ली
3.	प्राथमिक शाला में शिक्षक (1996)	:	गिजुभाई, पृष्ठ-67 मोटीसोरी बाल शिक्षण समिति, राजलदेसर
4.	भाषा शिक्षण (1992)	:	डॉ. रवीन्द्र श्रीवास्तव, पृष्ठ सं. 38 वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली

(ब) अध्ययन हेतु पुस्तकें

1.	हिन्दी शिक्षण पद्धति (1973)	:	डॉ. वैद्य प्रसाद वर्मा, बिहार हिन्दी ग्रंथ अकादमी, पटना
2.	माध्यमिक विद्यालयों में हिन्दी शिक्षण (1982)	:	निरंजन कुमार सिंह, राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी जयपुर
3.	आधुनिक हिन्दी शिक्षण (2004)	:	डॉ. योगेश कुमार, ए.पी.एच. पब्लिशिंग कॉरपॉरेशन नई दिल्ली
4.	हिन्दी शिक्षण (1992)	:	डॉ. सावित्री सिंह, इन्टरनेशनल पब्लिशिंग हाऊस, मेरठ
5.	बच्चे की भाषा और अध्यापक (1996)	:	कृष्ण कुमार, नेशनल बुक ट्रस्ट, इण्डिया

6. भाषा शिक्षण (1992) : डॉ. रवीन्द्र श्रीवास्तव वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली
7. स्कूल की हिन्दी (2001) : कृष्ण कुमार, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली पटना
8. हिन्दी शिक्षण : बी.एन. शर्मा साहित्य प्रकाशन, आगरा

इकाई 12

हिन्दी शिक्षण के विभिन्न संसाधन

Resources, Classroom, Library Laboratory, Museum etc.

इकाई की रूपरेखा

12.0 भूमिका व उद्देश्य

12.1 हिन्दी शिक्षण का कक्षा-कक्ष एवं उसके उपकरण

12.2 हिन्दी शिक्षण-कक्ष की भौतिक सुविधाएँ

12.3 हिन्दी शिक्षण-कक्ष का शैक्षिक परिवेश

- 12.3.1 श्यामपट्ट
- 12.3.2 वास्तविक पदार्थ
- 12.3.3 चित्र
- 12.3.4 चार्ट
- 12.3.5 पोस्टर
- 12.3.6 प्रतिमूर्ति
- 12.3.7 कक्ष-पुस्तकालय
- 12.3.8 यान्त्रिक उपकरण

12.4 हिन्दी एवं विद्यालय का पुस्तकालय

12.5 अभ्यासार्थ प्रश्न

12.6 हिन्दी शिक्षण व भाषा प्रयोगशाला

- 12.6.1 भाषा प्रयोगशाला-स्वरूप
- 12.6.2 हिन्दी शिक्षण में भाषा-प्रयोगशाला

12.7 हिन्दी शिक्षण व संग्रहालय

- 12.7.1 हिन्दी संग्रहालय

12.8 अभ्यासार्थ प्रश्न

12.9 हिन्दी शिक्षण व सामुदायिक वातावरण

- 12.9.1 परिभ्रमण, सरस्वती यात्राएँ

12.10 सारांश

12.11 स्वमूल्याँकन हेतु अभ्यास - प्रश्न

12.12 संदर्भ एवं अध्ययन हेतु पुस्तकें

12.0 भूमिका एवं उद्देश्य

भाषा की उत्पत्ति व विकास समाज में ही सम्भव है। व्यक्ति के समस्त कार्य-कलाप तथा सामाजिक व्यवहार इसी से परिचालित होते हैं। यद्यपि यह (भाषा) सार्थक ध्वनि प्रतीकों की यादृच्छिक व्यवस्था है, तथापि इसके मानसिक (भाव-विचारों का उद्रेक) व भौतिक (वागिन्द्रियाँ व अन्य शारीरिक अवयव) आधार होते है तथा इसका व्यक्ति द्वारा अर्जन किया जाता है। अत: भाषा शिक्षण के अधिकांश उद्देश्य कौशलात्मक होते हैं, जो क्रियात्मक अभ्यास, परिभ्रमण, पठन अथवा सक्रिय निरीक्षण, अवलोकन आदि के द्वारा पूर्ण किए जाते हैं। भाषायी कौशलों का समुचित विकास ही किसी एक व्यक्ति या बालक की सम्प्रेषणीयता का मानदण्ड है । हिन्दी भारत जैसे विशाल भू भाग वाले देश के अधिकांश क्षेत्रवासियों की मातृभाषा के साथ भारत की राजभाषा भी है अत: युगानुकूल आवश्यकता के अनुसार हिन्दी शिक्षण नितान्त पाठ्यपुस्तक आधारित होना अधिक उपयोगी नहीं होगा । शिक्षण के विविध संसाधनों को प्राथमिकता देकर विद्यार्थियों की विचारणा शक्ति के सम्प्रेषण को विकसित करने की दिशा में यथेष्ट अवसर प्रदान करने होंगे ।

इस इकाई के अध्ययनोपरान्त आप निम्नलिखित उपलब्धियाँ अर्जित कर सकेंगे-

1 हिन्दी शिक्षण हेतु प्रयुक्त विभिन्न संसाधनों की आवश्यकता एवं उपादेयता के सम्बन्ध में अपेक्षित ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे ।
2 हिन्दी कक्ष की भौतिक तथा शैक्षिक सामग्री व्यवस्था को समझ सकेंगे ।
3 हिन्दी शिक्षण हेतु पुस्तकालय में संदर्भ सामग्री के अध्ययन का महत्त्व समझ सकेंगे ।
4 हिन्दी भाषा प्रयोगशाला के सम्प्रत्यय व उसके सम्बन्ध में आवश्यक ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे ।
5 हिन्दी शिक्षण में संग्रहालय के महत्त्व का प्रत्यभिज्ञान कर सकेंगे ।
6 हिन्दी शिक्षण में सामुदायिक वातावरण के महत्त्व को ज्ञात कर उसके उपयोग का बोध विकसित कर सकेंगे ।

12.1 हिन्दी शिक्षण का कक्षा-कक्ष एवं उसके उपकरण

सामान्यत: विद्यार्थी लगभग 6 घण्टे विद्यालय में व्यतीत करता है, इन 6 घण्टों में अधिकतर समय वह कक्षा में रहता है। विद्यालय की समय-सारिणी में एक कालांश प्रतिदिन हिन्दी शिक्षण के लिए निर्धारित होता है। अत: भाषा शिक्षक को स्वयं सक्रिय रहते हुए कक्षा-कक्ष को भी आकर्षक, प्रसन्नतायुक्त और गतिविधि केन्द्रित बनाना चाहिए। प्रत्येक कक्षा की व्यक्तिगत और सामाजिक विशेषताएँ होती हैं। कक्षा में विद्यार्थी के, विद्यार्थी-शिक्षक के और शिक्षक-विद्यार्थियों के मध्य अंतःक्रिया होती रहती है। वे परस्पर प्रभावित होते रहते हैं। हर्बर्ट राइट(1951), परकिन्स(1951), गीजल्स(1960), विथल(1967), लैण्डर्स (1967), मिसकल (1967) आदि ने कक्षा के सामाजिक वातावरण पर अधिक बल दिया है।

सामान्यत: विद्यालयों में एक ही कक्षा के कमरे में विभिन्न विषयों का शिक्षण होता है। लेकिन कतिपय विद्यालयों में विषयवार कक्षा-कक्ष भी होते हैं। हिन्दी शिक्षण के कक्ष को निम्नलिखित प्रकार की सुविधायों से युक्त होना चाहिए।

12.2 हिन्दी शिक्षण कक्ष की भौतिक सुविधाएँ

हिन्दी शिक्षण कक्ष का आवश्यक भौतिक सुविधाओं से सम्पन्न होना महत्त्वपूर्ण है। हिन्दी शिक्षण का कमरा बड़ा होना चाहिए, जिसमें प्रकाश के लिए आवश्यक विद्युत व्यवस्था व आकार के अनुरूप पर्याप्त मात्रा में फर्नीचर हो। कमरे में पर्याप्त अलमारियाँ होनी चाहिए जिनमें विद्यार्थियों तथा विभिन्न कक्षाओं का उपयोगी सामान रखा जा सके। कमरा स्वच्छ व दीवारें आकर्षक, रंगीन हों। छोटी कक्षाओं में विद्यार्थियों के लिए पर्याप्त खिलौने होने चाहिए।

12.3 हिन्दी शिक्षण-कक्ष का शैक्षिक परिवेश

हिन्दी शिक्षण के कक्ष को आकर्षक व उपादेय बनाने के लिए हिन्दी के प्राचीन तथा नवीन मूर्द्यन्य लेखकों, साहित्यकारों व कवियों के चित्रों से सुशोभित किया जाता है जिससे कि विद्यार्थी उन साहित्यकारों से भाव तादात्म्य कर स्वयं लेखन कार्य करने के लिए प्रेरित हों। कक्षा में विद्यार्थियों की रचनाओं को प्रकाशित करने के लिए दीवारों पर आकर्षक बोर्ड या सूचना-पट्टों की व्यवस्था भी होनी चाहिए।

हिन्दी के कक्ष में भाषा शिक्षण में सहायक सामग्री की समुचित व्यवस्था होनी चाहिए जिससे कि आवश्यकता पड़ने पर शिक्षक द्वारा उन्हें उपयोग में लाया जा सके। भाषा शिक्षण के लिए आवश्यक सहायक सामग्री का उल्लेख निम्नलिखित है-

12.3.1 श्यामपट्ट - प्रत्येक कक्षा के लिए यह अनिवार्य है । श्यामपट्ट एक सर्व सुलभ साधन है इसलिए इसे शिक्षक का मित्र कहा जाता है । भाषा शिक्षण कक्ष के लिए श्यामपट्ट आवश्यक है क्योंकि इसी पर भाषा का शिक्षक कठिन शब्दों के अर्थ, विभिन्न रचना रूपों की रूपरेखा, व्याकरण के उदाहरण अथवा परिभाषाएँ लिखकर अपने अध्यापन को प्रभावी बना सकता है । श्यामपट्ट का आकार कक्षा-कक्ष के आकार के अनुपात में न बहुत बड़ा न बहुत छोटा होना चाहिए । भाषा शिक्षक का श्यामपट्ट लेख सुन्दर होना आवश्यक है।

12.3.2 वास्तविक पदार्थ - वास्तविक पदार्थ सहायक दृश्य उपकरण हैं। स्थूल वस्तुओं के साक्षात् सम्पर्क में आकर विद्यार्थी निर्धारित विषय वस्तु को अच्छी तरह समझता है और छोटी कक्षाओं के विद्यार्थी सूक्ष्म चिन्तन की ओर अग्रसर होतें है। फूल, फलों आदि तथा दैनिक उपयोग की वस्तुओं की जानकारी वास्तविक पदार्थों से भली प्रकार दी जा सकती है। छोटी कक्षाओं के लिए वास्तविक पदार्थ अधिक उपयोगी सिद्ध होते हैं।

12.3.3 चित्र - पाठ को आकर्षक व रोचक बनाने के लिए हिन्दी शिक्षक को प्रसंगवश साहित्यिक सन्दर्भ वाले दृश्य चित्रों का उपयोग करना चाहिए । चित्रों में वस्तुओं का चित्रण रहता है । इनके माध्यम से कला का प्रदर्शन, मनोरंजन, भावाभिव्यक्ति,

सौन्दर्याभिव्यक्ति, मूल वर्णन, सूचना, ज्ञान, शिक्षा आदि का अप्रत्यक्ष प्रभाव पड़ता है। कक्ष की सजावट के लिए भी चित्रों का उपयोग किया जा सकता है।

12.चार्ट 3.4- चार्ट भी एक साधन है जिसमें तथ्यों और चित्रों का समन्वय होता है । इसमें तार्किक रीति से क्रमबद्धता होती है । लेख की सुन्दरता, सरलता, विश्वसनीयता चार्ट को आर्कषक न सार्थक बनाती है । प्राथमिक कक्षाओं में अक्षरों की बनावट का प्रभावी ज्ञान चार्ट के माध्यम से दिया जा सकता है । हिन्दी साहित्य का इतिहास पढ़ाते समय, विभिन्न कवियों व लेखकों को पढ़ाते समय अथवा व्याकरण शिक्षण में चार्ट का उपयोग प्रभावी रूप से किया जा सकता हैं ।

12. 3.5पोस्टर - पोस्टर एक प्रकार से विज्ञापन चित्र है । यह वह दृश्य है जो अचानक ही दृष्टि को आकर्षित कर देखने वालों का ध्यान अपनी ओर अनायास ही खींच लेता है । शीघ्र संदेश सुना देता है और कार्य की दिशा निश्चित कर देता है । हिन्दी शिक्षण के समय पाठों की प्रस्तावना व विषय-वस्तु स्पष्ट करने के लिए उदाहरण रूप में पोस्टर हिन्दी कक्ष में होने चाहिए। कक्षा-कक्ष में सजावट के लिए भी पोस्टर लगाए जा सकते हैं।

12. 3.6प्रतिमूर्ति - प्रतिमूर्ति भी एक दृश्य उपकरण हैं। यह वास्तविक वस्तु का प्रतिरूप होता है। मिट्टी, कागज की लुग्दी, कागज, लकड़ी, लोहा, ऊन, बाँस, चमड़ा, कपड़ा, बुरादा, प्लास्टिक, थर्माकोल गत्ते आदि से प्रतिरूप बनाया जा सकता है। प्रतिरूप किसी बड़ी वस्तु का छोटा नमूना हो सकता है। जिन वस्तुओं को कक्षा में लाना सरल व संभव नहीं है उनका प्रतिरूप काम में लिया जा सकता है। पशु पक्षियों व विभिन्न वस्तुओं के प्रतिरूप भाषा शिक्षण के कक्ष में होने चाहिए। प्राथमिक कक्षाओं में इनका उपयोग सार्थक है।

12. 3.7हिन्दी-कक्ष पुस्तकालय- हिन्दी कक्ष में एक लघु पुस्तकालय का होना अत्यन्त आवश्यक हैं। इस पुस्तकालय में विभिन्न प्रकार के कोश तथा विद्यार्थियों के लिए उपयोगी संदर्भ पुस्तकें होनी चाहिए। विद्यार्थियों की पठन क्षमता तथा भाषा ज्ञान वृद्धि के लिए भाषा कक्ष पुस्तकालय सार्थक होता है। अध्यापक के निर्देशन में अथवा स्वयं पुस्तकें निकालकर पढ़ने से उनमें स्वाध्याय प्रवृत्ति का ही विकास नहीं होता अपितु उन्हें स्वयं भी सृजनात्मक लेखन के लिए अवसर प्राप्त होता है । हिन्दी शिक्षण के कक्ष की एक अलमारी का उपयोग अत्यावश्यक संदर्भ पुस्तकें रखने के लिए किया जा सकता है । यह कक्ष वस्तुतः निम्नांकित सामग्री से सुसज्जित होना चाहिए-

(1) भाषा सम्बन्धी विविध यान्त्रिक उपकरण, प्रसिद्ध साहित्यकारों के चित्र, उनकी कृतियाँ, साहित्यिक सन्दर्भ वाले दृश्य-चित्र, चार्ट, रेखाचित्र आदि ।

(2) हिन्दी साहित्य के कालक्रमानुसार, कवियों एवं साहित्यकारों की आत्मकथाएँ अथवा जीवन-परिचय, संस्मरण, यात्रा-वृत्तान्त आदि ।

(3) भाषा सम्बन्धी सामग्री यथा, नवरसों के उदाहरण, प्रमुख अलंकार-लेखन उच्चारण अवयव अथवा व्याकरणिक चार्ट आदि ।

(4) विद्यार्थियों की हस्तलिखित पत्रिकाएँ, विद्यालय पत्रिकाएँ, स्वरचित कविता या कहानी संग्रह, वर्णनात्मक निबन्ध आदि भी व्यवस्थित रूप से रखी होनी चाहिए ।

(5) विद्यार्थियों के स्तरानुकूल हिन्दी की पाक्षिक या मासिक पत्रिकाएँ आदि ।

भाषा कक्ष का समस्त शैक्षिक वातावरण विद्यार्थियों के बौद्धिक, मानसिक, भावात्मक, श्लाघात्मक तथा सृजनात्मक अधिव्यक्ति विकास में सम्पूर्णत: सहायक सिद्ध हो सकें- भाषा के अध्यापक को इस दिशा में विशेष प्रयत्न करते रहना चाहिए ।

12.3.8 यान्त्रिक उपकरण- हिन्दी भाषा कक्ष के शैक्षिक परिवेश को अपेक्षा.त अधिक समृद्ध, सार्थक व ग्राह्य बनाने के लिए कतिपय निम्नांकित यान्त्रिक उपकरणों की भी आवश्यकता होती है-

(1) प्रोजेक्टर -(चित्र-प्रदर्शक यंत्र)

प्रोजेक्टर पर विभिन्न प्रकार की स्लाईडें (चित्र पट्टिका) प्रदर्शित की जा सकती हैं । प्रोजेक्टर दो प्रकार के होते हैं-

1. स्लाइड प्रोजेक्टर 2. ओवरहेड प्रोजेक्टर ।

स्लाइड प्रोजेक्टर में केवल स्लाइड पर चित्र प्रदर्शित किए जा सकते हैं जबकि ओवर हेड प्रोजेक्टर पर ट्रास्पेरेन्सी (पारदर्शी पट्टिका) पर विषय-वस्तु भी प्रदर्शित की जा सकती है । व्याकरण व रचना शिक्षण में ओवर हेड प्रोजेक्टर का सार्थक उपयोग किया जा सकता हैं । प्राकृतिक दृश्यों, यात्रावर्णनों उत्सवों, त्योहारों इमारतों व नृत्यों आदि की स्लाइडें भाषा शिक्षण को अपेक्षाकृत अधिक सारगिर्भित बनाती हैं । आज भाषा शिक्षण के कक्ष में प्रोजेक्टर का होना अत्यावश्यक है ।

(2) रेडियो

यह श्रव्य उपकरण सहज सुलभ और बहु उपयोगी उपकरण है । इसे ज्ञान तथा मनोरंजन दोनों रूपों में उपयोग किया जा सकता है । भाषा शिक्षण की दृष्टि से विभिन्न वार्ताएँ, काव्य पाठ, काव्य गोष्ठी, एकांकी, कहानी आदि के लिए उसका उपयोग किया जा सकता है । आजकल विभिन्न आकाशवाणी केन्द्र विद्यालयी कार्यक्रम के अन्तर्गत विभिन्न पाठों का प्रसारण कर रहे हैं जिनका उपयोग करना प्रभावी भाषा शिक्षण के लिए लाभप्रद रहेगा।

(3) टेपरिकॉर्डर-

यह भी श्रव्य उपकरण है जिसके द्वारा वक्तव्य, भाषण, कविता, गीत, कहानी, वार्तालाप, एकांकी, नाटक आदि को पुनः-पुन: सुना जा सकता है । भाषा शिक्षण के अन्तर्गत शुद्ध उच्चारण तथा प्रभावी वाचन क्षमता वृद्धि के लिए इसका उपयोग किया जाता है क्योंकि इसके माध्यम से विद्यार्थियों को वाचनगत स्वराघात व बलाघात का व्यावहारिक ज्ञान प्राप्त होता है । भाषा शिक्षण के कक्ष में टेपरिकॉर्डर के साथ उपयोगी कैसेटों का संकलन भी होना चाहिए

(4) चलचित्र-

चलचित्र मनोरंजन का अत्यन्त लोकप्रिय साधन है । यह एक श्रव्य-दृश्य उपकरण है । साहित्य से संबंधित विभिन्न फिल्मों को इसके माध्यम से कक्ष में प्रदर्शित किया जा सकता है । विभिन्न नाटकों, प्राकृतिक दृश्यों, कहानी तथा उपन्यासों के फिल्मांकन को भी इसके माध्यम से प्रस्तुत किया जा सकता है । भाषा कक्ष में टेलीविजन के साथ डी.वी.डी. व वी. सी डी. की व्यवस्था करके सिनेमा की पूरक व्यवस्था की जा सकती है । भाषा शिक्षण की दृष्टि से उपयोगी डी. वी. डी. व सी. डी. का संकलन भाषा कक्ष में होना आवश्यक है ।

(5) टेलीविजन-

ज्ञान और मनोरंजन दोनों ही दृष्टियों से यह उपयोगी है । आधुनिक समय में इसके माध्यम से विद्यार्थी विभिन्न राष्ट्रीय साहित्यिक कार्यक्रम देख रहे हैं । विभिन्न शैक्षिक कार्यक्रमों का प्रसारण भी टेलीविजन पर किया जा रहा है । भाषा कक्ष में टेलीविजन आवश्यक रूप से होना चाहिए ।

उपर्युक्त सभी दृश्य- श्रव्य साधनों की समुचित व्यवस्था हिन्दी कक्ष को सम्पन्न बनाती है और अध्यापक इन सबके उपयोग से हिन्दी भाषा शिक्षण को अपेक्षाकृत अधिक बोधगम्य एवं प्रभावी बना सकता हैं ।

(इकाई सं. 10 के अन्तर्गत भी आपको उपर्युक्त संसाधनों का प्रसंगानुकूल विवेचन उपलब्ध है)

12.4 हिन्दी शिक्षण एवं विद्यालय का पुस्तकालय

"प्रसिद्ध शिक्षा-दार्शनिक जान ड्यूवी ने पुस्तकालय को विद्यालय के हृदय की संज्ञा प्रदान की है क्योंकि इस केन्द्र में आकर बालक अपनी अनुभूतियों, समस्याओं एवं प्रश्नों के उचित समाधान एवं उत्तर प्राप्त करते हैं।"

विद्यालय का पुस्तकालय विद्यार्थियों के लिए ज्ञान और रुचि का स्रोत होता है । पाठ्यपुस्तकें चाहें कितनी ही अच्छी क्यों न हों वे विद्यार्थी की जिज्ञासा, ज्ञान पिपासा को पूर्ण रूप से तृप्त नहीं कर सकती इसलिए विद्यालय में पुस्तकालय का होना अत्यन्त आवश्यक है ।

यद्यपि सभी विषयों के शिक्षण के लिए पुस्तकालय का महत्त्व है तथापि हिन्दी शिक्षा में पुस्तकालय के अभाव में शिक्षण केवल औपचारिक ही है । हिन्दी शिक्षण विषय वस्तु शिक्षण के अतिरिक्त मूलत: भाषिक कौशल के विकास से सम्बद्ध है- विद्यार्थी को अभिव्यक्ति प्रकाशन के पूर्ण अवसर प्राप्त होने चाहिए और यह इस तथ्य पर निर्भर होता है कि उसे स्वाध्याय के लिए क्या सामग्री उपलब्ध की जाती है । हिन्दी शिक्षण की दृष्टि से प्रत्येक विद्यालय में पुस्तकालय का होना अनिवार्य है । पुस्तकालय में हिन्दी भाषा व साहित्य की विभिन्न पुस्तकें, पत्र-पत्रिकाएँ होनी चाहिए । जो साहित्यिक व भाषायी दृष्टि से उपयोगी हों । हिन्दी शिक्षण की दृष्टि से विद्यालय-पुस्तकालय में सम्मावित पठन-सामग्री का वर्गीकरण निम्नलिखित है-

* विभिन्न प्रकार के कोश: शब्दार्थ कोश, साहित्य कोश, लोकोक्ति कोश, मुहावरा कोश, पर्यायवाची शब्द कोश आदि ।
* हिन्दी व्याकरण व उसकी समस्याओं पर विभिन्न पुस्तकें ।

* हिन्दी साहित्य के इतिहास की विभिन्न विधाओं पर रचित प्राचीन एवं नवीनतम साहित्य की पुस्तकें ।
* लिपि, देवनागरी लिपि, वर्तनी, उच्चारण आदि पर विभिन्न पुस्तकें (भाषा-विज्ञान से सम्बन्धित पुस्तकें)
* बच्चों के लिए बाल साहित्य की पुस्तकें ।
* विभिन्न सामाजिक सरोकारों व सांस्कृतिक सरोकारों को समझने के लिए इन विषयों पर केन्द्रित प्रतिनिधि पुस्तकें ।
* विभिन्न भारतीय व विदेशी भाषाओं के अनूदित साहित्य की पुस्तकें ।
* साहित्य व सामाजिक सरोकारों की साप्ताहिक-पाक्षिक या वार्षिक पत्र-पत्रिकाएँ ।

पुस्तकालय में पुस्तकों का चयन करते समय यह भी ध्यान रखना चाहिए कि भाषा एवं साहित्य का एक सामाजिक एवं सांस्कृतिक सरोकार भी होता है । पुस्तकालय के सदुपयोग के संबंध में राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा (2005) में स्पष्टत: उल्लेख है कि "यह भी संभव हो सकता है कि शिक्षक, पुस्तकालय में कक्षा आयोजित करें, पुस्तकालय के अन्दर कक्षा लाने या पुस्तकालय से पर्याप्त पुस्तकें कक्षा में ले जाने और इसके अलावा, चर्चा करने, किसी शिल्पकार को सुनने या कहानी सुनाने के लिए भी पुस्तकालय का उपयोग किया जा सकता है ।"

विद्यालयों में पुस्तकालय से संलग्न एक वाचनालय भी होना आवश्यक है । बड़े पुस्तकालय कक्ष का एक भाग भी वाचनालय के रूप में काम में लिया जा सकता है । वाचनालय में हिन्दी व अंग्रेजी भाषाओं के प्रमुख दैनिक समाचार पत्र नियमित रूप से उपलब्ध रहने चाहिए । 'रोजगार समाचार' जैसे पत्र भी वाचनालय में आने चाहिए क्योंकि यह बड़ी कक्षाओं के विद्यार्थियों की आवश्यकता है । विद्यार्थियों को वाचनालय व पुस्तकालय में जाने तथा बैठकर पढ़ने का पर्याप्त अवसर व समय दिया जाना चाहिए । पुस्तकालय में पुस्तकालय अध्यक्ष सहित अन्य सहयोगी कर्मियों की आसन व्यवस्था भी होनी चाहिए । उनका व्यवहार शिक्षकों, विद्यार्थियों तथा पाठकों के लिए सदैव संवेदनशील होना चाहिए । पुस्तकालय में पुस्तकों को व्यवस्थित रूप से रखने के लिए लोहे की रेक अथवा अलमारियों की व्यवस्था आवश्यक है ।

12.5 अभ्यास हेतु प्रश्न

1. हिन्दी कक्ष के शैक्षिक परिवेश को समृद्ध करने के संसाधनों की सूची बनाइए ।
2. हिन्दी शिक्षण में पुस्तकालय के महत्त्व पर अपने विचार व्यक्त कीजिए ।
3. हिन्दी एवं साहित्य में रुचि जागृत करने हेतु आप अपने विद्यालय के वाचनालय में पत्र-पत्रिकाएँ मंगवाने हेतु एक सूची बनाइए ।

12.6 हिन्दी शिक्षण व भाषा प्रयोगशाला

भाषा शिक्षण में श्रव्य-दृश्य सामग्री का विशेष महत्त्व है । श्यामपट्ट, चार्ट, चित्र आदि उपलब्ध होने से भाषा कक्ष बालकों को सीखने के लिए वातावरण प्रदान करता है । ग्रामोफोन, टेपरिकॉर्डर, फिल्म प्रोजेक्टर के आविष्कार के साथ ही भाषा शिक्षण को स्वाश्रित (ऑटोमैटिक) बनाने की दिशा में कई कदम उठाए गए हैं । प्रारम्भ में इनके उपयोग के समय शिक्षक व

विद्यार्थी के मध्य सीधा सम्पर्क बना रहता था लेकिन जैसे-जैसे यान्त्रिक उपकरणों में तकनीक सुधार होता गया, वे स्वाश्रित होते गए- आज भाषा प्रयोगशाला भाषा शिक्षण प्रक्रिया की प्रभावशीलता के लिए आवश्यक आधार के रूप में प्रयुक्त की जा रही है ।

विदेशों में भाषा प्रयोगशाला शिक्षण के क्षेत्र में अपना महत्त्वपूर्ण स्थान बना चुकी है । यह शिक्षण योजना की आधुनिकता और प्रतिष्ठा का सूचक बन गई है । हमारे देश में भी कतिपय सम्पन्न विद्यालयों में भाषा प्रयोगशालाएँ स्थापित की गई हैं । हमारे यहाँ भाषा प्रयोगशाला को शिक्षण की एक सहायक सामग्री के रूप में देखा जाता है, विदेशों में सहायक सामग्री के साथ-साथ भाषा प्रयोगशाला को शिक्षण के केन्द्र में रखने वाला दृष्टिकोण भी है । इन दोनों दृष्टियों को क्रमश: 'शिक्षक केन्द्रित अभिविन्यास' और 'प्रयोगशाला केन्द्रित अभिविन्यास' कहा जा सकता है ।

भाषा प्रयोगशाला : परिभाषा

डॉ. रवीन्द्र श्री वास्तव के अनुसार- "भाषा प्रयोगशाला वस्तुत: एक विशेष कक्ष है जो ध्वनि यंत्रों से युक्त होता है और जहाँ अभ्यार्थी भाषा को अभ्यास के सहारे सीखते हैं । अत: एक ऐसे कमरे को भी भाषा प्रयोगशाला की परिभाषा में सम्मिलित किया जा सकता है जिसमें मात्र एक टेपरिकॉर्डर हो, जिसके सहारे शिक्षार्थी अभ्यास करते हों । वस्तुत: यह कक्षा का विस्तार है जहाँ छात्र, कक्षा अध्ययन के अतिरिक्त समय में जाकर टेप किए पाठों का श्रवण और अनुकरण कर भाषा को व्यवहार के स्तर पर सीखते हैं ।"

भाषा प्रयोगशाला के प्रकार-

भाषा प्रयोगशाला के निम्नलिखित प्रकार होते हैं-

(1) श्रव्य (Audio)

(2) दृश्य श्रव्य (Audio-visual)

श्रव्य (Audio)- भाषा में टेपरिकॉर्डर, ग्रामोफोन, भाषा टेप, डिस्क आदि यंत्र होते हैं । इस प्रयोगशाला में केवल श्रवणेन्द्रिय के द्वारा भाषिक कौशल का विकास किया जा सकता है ।

दृश्य-श्रव्य (Audio-visual)-प्रकार की भाषा प्रयोगशाला में सुनने के साथ-साथ फिल्म और स्ट्रिप आधारित मौखिक अभ्यास पर भी बल रहता है ।

12.6.1 भाषा-प्रयोगशाला का स्वरूप

भाषा प्रयोगशाला का अब मानकीकरण किया जा चुका है । इसमें 8 से 32 बूथ सहज रूप में बनाए जा सकते हैं, जिसकी संरचना निम्नलिखित रूप से की जाती है-

श्रवण बूथ- बूथ चार पंक्तियों में चार-चार की संख्या में रखा जाता है ।

प्रत्येक बूथ के लिए सामान्यत: 3×6 फीट का स्थान दिया जाता हैं । इसकी ऊँचाई इतनी रखी जाती है कि 'संचालक केन्द्रक' (कंट्रोल यूनिट) पर बैठे अध्यापक को शिक्षार्थी देख भी सके और उसकी वैयक्तिक स्वतन्त्रता भी बनी रहे । श्रवण बूथ पर कोर्ण फोन, बटन, टेपरिकॉर्डर आदि की व्यवस्था होती है, इनका उपयोग विद्यार्थी अपनी आवश्यकतानुसार करता है । इनका संपर्क संचालन केन्द्रक (कंट्रोल यूनिट) से होता है ।

संचालक केन्द्रक (कंट्रोल यूनिट)- संचालक केन्द्रक वह स्थान होता है जहाँ से अध्यापक शिक्षार्थियों को निर्देश अथवा उनकी समस्या समाधान करता है । संचालक केन्द्रक एक प्लेट फॉर्म पर स्थापित किया जाता है जिसकी ऊँचाई लगभग 20 इंच रखी जाती है । यह ऊँचा इसलिए रखा जाता है कि अध्यापक छात्रों को देख सके ।

अन्य सुविधाएँ

भाषा प्रयोगशाला में तीन अन्य सुविधाएँ भी रखी जाती हैं-

1 उपस्कर (इक्विपमेंट) कक्ष: इसमें सुधार (ठीक) करने के मशीन व औजार आदि रखे जाते हैं ।

2 ध्वन्यंकन (रेकार्डिंग कक्ष): इसमें 'मास्टर टेप' तैयार किए जाते हैं ।यह कक्ष पूर्ण रूप से ध्वनिनिरोधी (साउंडप्रुफ) होता है । इसमें वे सभी यंत्र होते हैं, जिनसे 'टेप' करना संभव होता है।

3 टेप पुस्तकालय- टेप पुस्तकालय में 'मास्टर टेप व छात्रों के अभ्यास से संबंधित टेप रखे जाते हैं ।

सुविधा के लिए 16 बूथ वाली भाषा प्रयोगशाला का चित्र निम्नलिखित रूप से प्रस्तुत किया जा रहा है-

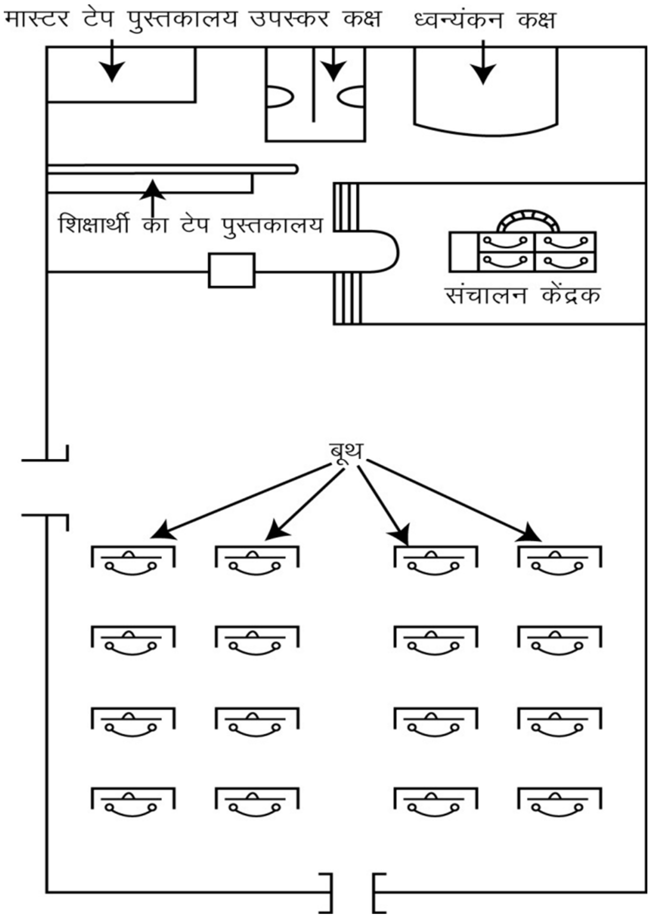

चित्र : 16 बूथ वाली भाषा प्रयोगशाला

12.6.2 हिन्दी शिक्षण में भाषा प्रयोगशाला

हिन्दी शिक्षण कई रूपों में सम्पन्न किया जाता है यथा मातृभाषा, संपर्क भाषा, राष्ट्रभाषा और राजभाषा और विदेशों में विदेशी भाषा के रूप में भाषा-प्रयोगशाला का महत्त्व इन सभी रूपों के शिक्षण के लिए अत्यन्त महत्त्वपूर्ण तथा असंदिग्ध है । यह महत्त्व भाषा शिक्षण की दृष्टि से निम्नलिखित बिन्दुओं से विशेष उल्लेखनीय है

(1) भाषा- प्रयोगशाला के माध्यम से हिन्दी भाषा का मातृभाषा अथवा द्वितीय भाषा के रूप में शिक्षण सामान्य कक्षा कक्ष शिक्षण की अपेक्षा कहीं अधिक प्रभावी ढंग से होता है ।

(2) भाषा- प्रयोगशाला में एक विद्यार्थी आत्मनिर्भर होने के कारण सामान्य कक्षा कक्ष की अपेक्षा कहीं अधिक सक्रिय मनःस्थिति से अध्ययन करता है ।

(3) भाषा प्रयोगशाला के द्वारा विद्यार्थियों के उच्चारण व वाक्य- विन्यास से सम्बन्धित अशुद्धियों का निराकरण सरलता से हो जाता है ।

समाहार रूप से कहा जा सकता है कि भाषा प्रयोगशाला के द्वारा भाषा शिक्षण के क्षेत्र में एक क्रांतिकारी परिवर्तन आया है । भाषायी कौशलों के अधिगम हेतु विद्यार्थियों की गतिशीलता में वृद्धि के साथ-साथ उनमें शुद्धता के प्रति अभिरुचि का भी विकास होता है। द्वितीय भाषा के रूप में हिन्दी सीखने का यह एक सर्वश्रेष्ठ तथा अत्यन्त उपादेय एवं प्रभावी साधन है । हमारे यहाँ अभी बहुत कम विद्यालयों में यह सुविधा अवस्थित है लेकिन भारत जैसे बहुभाषी देश के विद्यालयों में भाषा शिक्षण हेतु यह सुविधा होना एक अनिवार्य आवश्यकता है ।

(4) भाषा प्रयोगशाला में हिन्दी भाषा के विद्यार्थी हिन्दी भाषा की ध्वनि, शब्द तथा वाक्य-संरचना का अभ्यास कर सकते हैं ।

(5) हिन्दी शिक्षक विद्यार्थियों पर व्यक्तिगत ध्यान दे सकता है और उनकी उच्चारणगत अशुद्धियों को वहीं शुद्ध कर सकता है जिससे कि वे अपनी लिखित अभिव्यक्ति स्वयं ही शुद्ध कर सकें ।

(6) भाषा प्रयोगशाला में शिक्षक अपनी अशुद्धियों को भी ठीक कर सकता है ।

(7) हिन्दी भाषा के विभिन्न कौशलों का अभ्यास भाषा प्रयोगशाला में भली प्रकार किया जा सकता है । इस अभ्यास से विद्यार्थियों की भाषिक सम्प्रेषणीयता में निरन्तर वृद्धि होती है ।

(8) हिन्दी भाषा के विद्यार्थी इससे अपनी गति से अभ्यास कर सकते है ।

(9) हिन्दी भाषा में कमजोर विद्यार्थियों पर विशेष ध्यान दिया जा सकता है ।

12.7 हिन्दी शिक्षण व संग्रहालय

"संग्रहालय नगर के जीवन में उसी तरह समझे जाने चाहिए जैसे उद्यान संग्रहालय लोगों को सौंदर्यानुभूति और ऐतिहासिक दृष्टि से सजग रख सकता है जैसे एक खेल उनको शरीर और मन से तन्दुरूस्त रखता है।" संग्रहालय वस्तुत: वह स्थान होता है जहाँ अनेक वस्तुएँ संग्रह करके रखी हुई होती हैं । एडगर डेल ने लिखा है- 'संग्रहालय में वस्तुएँ व सामग्रियाँ होती हैं जो सामान्यत: अपने प्राकृतिक परिवेश से लाकर एकत्र की जाती हैं । एक प्रवीण आयोजना

या संगठन के बिना वे प्रसंगहीन छिटपुट चीजें ही रह जाएँगी । इसलिए उनको सार्थक बनाने के लिए संगठित करके रखना होगा" । संग्रहालय दो प्रकार के हो सकते हैं-

1 समाज या समुदाय द्वारा स्थापित संग्रहालय जैसे हल्दीघाटी स्थित महाराणा प्रताप का संग्रहालय

2 विद्यालय द्वारा स्थापित संग्रहालय-विद्यालय द्वारा स्थापित संग्रहालय के भी दो प्रकार हो सकते हैं-

(अ) सामान्य संग्रहालय- इसमें विद्यालय की पुरानी गतिविधियों, विद्यालय को प्राप्त पुरस्कार व सभी विषयों से सम्बन्धित वस्तुएँ हो सकती हैं ।

(ब) विषय संग्रहालय- जो विशिष्ट विषय से संबंधित हो जैसे भूगोल संग्रहालय, इतिहास संग्रहालय आदि ।

संग्रहालय का शिक्षण में अपना विशिष्ट स्थान व महत्व है । यह स्वयं में एक शिक्षण साधन है। इसकी प्रमुख विशेषताएँ निम्नलिखित हैं-

1 विद्यार्थियों के लिए यह बहुआयामी ज्ञान का एक स्रोत होता है ।

2 संग्रहालय में विद्यार्थियों को समृद्ध ऐन्द्रिक अनुभव प्राप्त होते हैं ।

3 संग्रहालय से विद्यार्थी की स्वाभाविक संग्रह प्रवृति का उद्भव होता है । वह इस प्रवृति का सदुपयोग करना सीखता है ।

4 संग्रहालय ज्ञान वृद्धि के साथ मनोरंजन का साधन भी है ।

5 विद्यार्थियों की अभिव्यक्ति विकास के सर्वोत्तम साधन है ।

6 संग्रहालय विद्यार्थी की निरीक्षण शक्ति का विकास करता है ।

7 संग्रहालय की यात्रा विद्यार्थियों के लिए रोचक, मनोरंजक व विविध प्रकार के शैक्षिक अनुभव प्रदान करने वाली होती है ।

इस दृष्टि से कांकरोली (राजसमन्द, अणुव्रत विश्वभारती) का संग्रहालय भी महत्वपूर्ण है। बहुत से विद्यालयों के बच्चे इसे देखने आते हैं । संग्रहालयों की अपनी सीमाएँ होती हैं । संग्रहालय की यात्रा में निम्नलिखित सावधानियाँ रखनी चाहिए-

1 संग्रहालय की यात्रा से पहले उसकी स्पष्ट योजना बना लेनी चाहिए ।

2 विद्यार्थियों को संग्रहालय के विषय में सामान्य जानकारी प्रदान कर उसी के अनुरूप तैयारी करनी चाहिए ।

3 संग्रहालय यात्रा के समय आवश्यकतानुसार गाइड की मदद भी लेनी चाहिए ।

4 संग्रहालय में प्रवेश करके वहाँ लिखे हुए समस्त निर्देशों का मर्यादापूर्वक पालन करना चाहिए ।

5 संग्रहालय-निरीक्षण के समय विद्यार्थियों को अपने अनुभव लेखबद्ध करते रहना चाहिए।

12.7.1 हिन्दी भाषा में संग्रहालय

सामुदायिक संग्रहालय विद्यार्थियों में भाषायी क्षमता के विकास के लिए अत्यन्त उपयोगी होता है। संग्रहालय में विद्यार्थियों द्वारा किए गए अनुभवों पर विचार विनिमय किया जा सकता है, उनसे निबंध, संवाद, पत्र व प्रतिवेदन लिखवाए जा सकते हैं । विद्यालय

संग्रहालय का भी विशेष महत्व है । इसके द्वारा विद्यार्थियों में निरीक्षण की विविध वस्तुओं को संग्रह करने की, उनकी सुरक्षा-स्वच्छता तथा उनके आधार पर लेखन कार्य करके स्वाभिव्यक्ति विकास हेतु अनेक अवसर प्राप्त होते हैं । जड़ चेतन से तादात्म्य-स्थापन के अनेक अवसर प्राप्त करते हुए विद्यार्थी अपनी सृजनात्मकता का भी विकास कर सकते हैं- हिन्दी के अध्यापक को इस दिशा में विशेष सजग व सक्रिय रह विद्यालय में भाषा-संग्रहालय की स्थापना में विशेष योग देना चाहिए ।

विद्यार्थियों की निरीक्षण तथा सृजनात्मक-शक्तियों के समुचित विकास के लिए भाषा-अध्यापक के द्वारा विद्यालय में हिन्दी संग्रहालय की भी स्थापना की जा सकती है । इस संग्रहालय में वस्तुओं का संग्रह करते समय हिन्दी भाषा की प्रकृति का पूर्ण ध्यान रखना चाहिए। विद्यालय में भाषा संग्रहालय विशेषत: सांस्कृतिक व सामाजिक सरोकारों को पुष्ट करने के लिए स्थापित किया जाता है । इस संग्रहालय में एकत्र की जाने वाली सम्मावित वस्तुएँ निम्नांकित हो सकती हैं-

(1) भारत के विविध राज्यों की भाषा व वेशभूषा के सम्बन्ध में ज्ञान प्रदान करने वाले चित्र अथवा छोटी-छोटी पुस्तिकाएँ ।
(2) लोकगीतों, लोक कथाओं, विशिष्ट लोकोक्तियाँ आदि का संग्रह ।
(3) विभिन्न वाद्य यंत्रों के चित्र, उनका चित्रमय विवरण ।
(4) विभिन्न राज्यों के लोकनृत्यों की मुद्राओं के प्रतिरूप (मॉडल) ।
(5) साहित्यकारों के चित्र (फोटो) ।
(6) पक्षियों के पंखों का संग्रह, विविध प्रकार के पक्षियों के चित्र ।
(7) विभिन्न फूलों, पेड़ों, पौधों, पक्षियों व पशुओं के प्रतिरूप (मॉडल) ।
(8) विभिन्न कथा चित्र, सचित्र कथा वृत्तान्त ।
(9) लोक प्रचलित दैनिक उपयोग की पुरानी वस्तुओं का संग्रह ।
(10) विभिन्न देशों के झण्डे, राष्ट्र गीतों का लेखन ।
(11) विभिन्न डाक टिकिटों का संग्रह ।

12.8 अभ्यासार्थ प्रश्न

(1) हिन्दी शिक्षण में भाषा प्रयोगशाला के उपयोग के पाँच लाभों की सूची बनाइए ।
(2) हिन्दी शिक्षण में संग्रहालय के महत्त्व पर प्रकाश डालिए ।
(3) संग्रहालय कितने प्रकार के होते हैं? उदाहरण सहित स्पष्ट कीजिए ।
(4) हिन्दी शिक्षण की दृष्टि से विद्यालय में संग्रहालय स्थापित करने हेतु वस्तुओं की सूची तैयार कीजिए ।

12.9 हिन्दी शिक्षण व सामुदायिक वातावरण

आधुनिक युग में यह आवश्यक है कि सामाजिक-सांस्कृतिक संसार के अनुभवों को भी पाठ्यक्रम का हिस्सा बनाया जाए । विद्यार्थी स्कूल में आने से पहले अनुभव लेकर आता है ।

उसके ये अनुभव घर, परिवार और समुदाय के अनुभव होते हैं । अध्यापकों को भाषा शिक्षण करते समय बच्चों के समीपस्थ परिवेश को सम्मिलित करना चाहिए ।

बच्चों में चारों भाषायी कौशलों- सुनना, बोलना, पढ़ना तथा लिखने के विकास के लिए स्थानीय रूप से उपलब्ध संसाधनों का उपयोग करना चाहिए । इस दृष्टि से हम हिन्दी शिक्षण में लोकगीत, लोककथाओं, कहानियों, सामुदायिक गायन व रंगमंच आदि को सम्मिलित कर सकते हैं। सुनने के कौशल के लिए हम बच्चों को लोकगीत, लोक कथाएँ, गीत और कहानियाँ सुना सकते हैं । बालकों में अभिनय क्षमता स्वाभाविक रूप से होती है । लोक नाटकों से वे भली भाँति परिचित होते हैं । पाठ्य पुस्तक के नाटकों पर आधारित अभिनय वे गहरी रुचि से कर सकते हैं।

12.9.1 परिभ्रमण / सरस्वती यात्राएँ

भौतिक विज्ञान व तकनीकी के क्षेत्र में अपूर्व प्रगति ने आधुनिक विद्यार्थी के लिए ज्ञान प्राप्ति के अनेक संसाधन प्रस्तुत कर दिए हैं । आज एक विद्यार्थी अपने परिवार, अपनी आवासीय व्यवस्था, प्राकृतिक परिवेश, सामाजिक व्यवहार-क्रम अथवा टेलिविजन पर प्रदर्शित किए गए अनेक कार्यक्रमों से अनेक प्रकार के अनुभव प्राप्त करता है, अनेक जिज्ञासाओं के साथ विद्यालय आता है, और स्वयं को अभिव्यक्त करने की शब्दावली सीखने का प्रयत्न करता है। अध्यापक से अपेक्षा की जाती है कि वह विद्यार्थी के प्राकृतिक, सांस्कृतिक-सामाजिक परिवेश को अपने निर्धारित पाठ्यक्रम का एक महत्त्वपूर्ण भाग समझकर उसके भाषिक कौशल का विकास करे ।

हिन्दी शिक्षण में स्थानीय स्रोतों का चयन करते समय अध्यापक के लिए यह महत्त्वपूर्ण है कि वह संविधान में प्रतिष्ठापित मूल्यों एवं आदर्शों का ध्यान रखे । इस संदर्भ में राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा (2005) में स्पष्ट लिया हैं कि "भाषा एवं सामाजिक विज्ञान की विषय-वस्तु का चयन करते हुए यह महत्त्वपूर्ण है कि संविधान में प्रतिष्ठापित मूल्यों एवं आदर्शों को ध्यान में रखा जाए । कक्षा की गतिविधियों के सम्पादन में स्थानीय संदर्भ को शामिल करने का आशय होगा कि शिक्षक चुनाव करते हुए गम्भीर प्रयत्न करे, जिससे चुनाव शिक्षा शास्त्रीय दृष्टि से कल्पनाशील और नैतिक दृष्टि से सही हों ।"

हिन्दी शिक्षण में प्राथमिक कक्षा के पश्चात् बच्चों को अन्य अनेक सामुदायिक गतिविधियों से जोड़ा जा सकता है, जो विद्यार्थियों में भाषायी और साहित्यिक क्षमताओं के विकास में सहायक होती हैं । उदाहरणार्थ साहित्यिक मण्डली या नाट्य समूह का गठन किया जा सकता है जिसमें विद्यार्थी, अभिभावक, अध्यापक के अतिरिक्त समुदाय के अन्य सदस्य भी हों । इनके द्वारा विद्यार्थियों को किसी कार्यक्रम के आयोजन, रचनात्मक लेखन अथवा अभिनय के सार्थक अवसर प्राप्त होते हैं ।

हिन्दी शिक्षक के लिए यह भी आवश्यक है कि वह विद्यार्थियों में सामुदायिक कार्यों की समझ विकसित करने वाली गतिविधियों का आयोजन करता रहे यथा गाँव के सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्र की यात्रा, डाकघर की यात्रा, पंचायत घर की यात्रा के समय विद्यार्थी वहीं के कर्मियों व अधिकारियों से संवाद कर सकते हैं । उसकी रिपोर्ट लिख सकते हैं । यात्रा के बाद

उस पर विभिन्न समूहों में या कक्षा में चर्चा की जा सकती है । इसके अतिरिक्त इस संदर्भ में विभिन्न प्रकार के दिवस उत्सव आदि पर भी कार्यक्रम आयोजित किए जा सकते हैं । वस्तुत: अध्यापक का दृष्टिकोण पाठ्यपुस्तक आधारित विषय वस्तु- प्रदान करने का ही न होकर विद्यार्थियों में भाषिक विकास हेतु प्रयत्नशील होना चाहिए । आपको एक अध्यापक के रूप में यह भी ध्यान रखना आवश्यक है कि भाषा का सामाजिक और सांस्कृतिक सरोकार होता है, समाज और समुदाय से अलग करके विद्यार्थियों का भाषिक कौशल समृद्ध नहीं किया जा सकता।

12.10 सारांश

इस इकाई-पाठ के द्वारा आपने ज्ञात किया कि विभिन्न संसाधन हिन्दी शिक्षण को अपेक्षाकृत अधिक ग्राह्य, जीवन्त एवं स्वाभाविक बनाते हैं । विद्यार्थियों में भाषायी दक्षताओं के विकास के लिए एक अध्यापक को इनका उपयोग करना चाहिए । विभिन्न संसाधनों का विद्यार्थियों के हित में कितना सार्थक उपयोग होता है यह अध्यापक के प्रशिक्षण, क्षमता और उसकी सृजनशीलता पर निर्भर करता है ।

भाषा एक अर्जित सम्पत्ति है जिसके सामाजिक एवं सास्कृतिक सरोकार होते हैं । भाषा शिक्षण का तात्पर्य भाषायी कौशलों के शिक्षण के साथ-साथ विद्यार्थियों के सांस्कृतिक और सामाजिक संदर्भों के मध्य सकारात्मक सम्बन्ध स्थापित करना है । हिन्दी शिक्षण को समुदाय और संस्कृति से जोड़ना अनिवार्य है। समुदाय और संस्कृति के साथ ज्ञान के अन्य तकनीकी संसाधनों को भी हिन्दी शिक्षण को संयुक्त करना चाहिए ।

12.11 स्व-मूल्यांकन हेतु अभ्यास प्रश्न

(1) हिन्दी कक्ष को शैक्षिक रूप से जीवंत कैसे बनाया जा सकता है? विचार व्यक्त कीजिए।

(2) भाषा प्रयोगशाला की अवधारणा को स्पष्ट करते हुए उसका महत्त्व-सम्पादन कीजिए ।

(3) संग्रहालय का विद्यार्थी की हिन्दी एवं साहित्य की दक्षताओं में क्या योगदान है? प्रकाश डालिए।

(4) "सामुदायिक वातावरण का उपयोग भाषा शिक्षण में विद्यार्थी के लिए अत्यन्त उपयोगी सिद्ध होता है ।" कथन की विवेचना कीजिए ।

(5) हिन्दी शिक्षण के विभिन्न संसाधनों पर प्रकाश डालिए ।

12.12 संदर्भ एवं अध्ययन हेतु पुस्तकें

1.	मित्तल, डॉ. (श्रीमती) संतोष, "शैक्षिक तकनीकी" (2000)	:	पृष्ठ 263 राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी, जयपुर
2.	"राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा" (2005)	:	एन.सी.ई.आर.टी. नई दिल्ली पृष्ठ 105
3,4.	श्रीवास्तव, डॉ. रवीन्द्र, "भाषा शिक्षण" (1992)	:	पृष्ठ 166 वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली

5,6. माथुर, एडगर डेल, अनु. डॉ. पी.एन., : "अध्यापन में श्रव्य-दृश्य साधन" पृष्ठ 37,380 (हिन्दी संस्थान) (1987)

7. "राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा" : एन.सी.ई.आर.टी. नई दिल्ली पृष्ठ 10

अध्ययन हेतु उपयोगी पुस्तकें

1. गंगाराम शर्मा, सुधीर कुमार भारद्वाज, : "हिन्दी भाषा शिक्षण" (2004) एच. पी. भार्गव बुक हाऊस, आगरा

2. पारीक, डॉ. ममता, 'हिन्दी शिक्षण' (2006) : कल्पना पब्लिकेशन, जयपुर

3. सिंह, निरंजन कुमार, : "माध्यमिक विद्यालयों में हिन्दी शिक्षण' (2006) राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी, जयपुर

4. कृष्ण कुमार, "बच्चों की भाषा और अध्यापक" (1996) : नेशनल बुक ट्रस्ट इण्डिया

5. श्रीवास्तव, डॉ. रवीन्द्र, "भाषा शिक्षण' (1992) : वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली

6. माथुर, एडगर डेल अनु. पी. एन., : "अध्यापन में श्रव्य-दृश्य साधन" (अंग्रेजी से अनुदित 1987) वैज्ञानिक व तकनीकी शब्दावली आयोग, हरियाणा साहित्य अकादमी चण्डीगढ़

7. डॉ. योगेश कुमार, "आधुनिक हिन्दी शिक्षण" (2004) : ए. पी. एच. पब्लिशिंग कॉरपोरेशन नई दिल्ली ।

इकाई - 13

हिन्दी शिक्षण में नवाचार तथा उनका भविष्य

(Innovations in the teaching subject and its future)

इकाई की रूपरेखा

13.0 भूमिका तथा उद्देश्य

13.1 नवाचार सम्प्रत्यय, प्रकार व क्षेत्र (अभिधेयार्थ)

13.2 हिन्दी के विविध रूपों का शिक्षण

13.2.1 मातृभाषा के रूप में हिन्दी शिक्षण

13.2.2 द्वितीय भाषा के रूप में हिन्दी शिक्षण

13.2.3 राष्ट्रभाषा के रूप में हिन्दी शिक्षण

13.2.4 राजभाषा हिन्दी शिक्षण

13.2.5 प्रयोजनमूलक हिन्दी शिक्षण

13.3 भाषा शिक्षण में प्रयुक्त विधियों का विकास क्रम

13.4 अभ्यासार्थ प्रश्न

13.5 हिन्दी शिक्षण में नवाचार

13.5.1 अभिनव विधियों का प्रयोग-प्रायोजना

13.5.2 पर्यवेक्षित अध्ययन विधि

13.5.3 अभिक्रमित अनुदेशन

13.5.4 शैक्षिक भ्रमण

13.5.5 शैक्षिक चलचित्र तथा भाषा शिक्षण

13.5.6 भाषा प्रयोगशाला विधि

13.5.7 पी. पी. पी. उपागम

13.5.8 क्रिया आधारित उपागम

13.5.9 शाब्दिक उपागम

13.6 हिन्दी शिक्षण में नवाचार और भविष्य

13.7 सारांश

13.8 अभ्यासार्थ प्रश्न

13.9 अध्ययन हेतु पुस्तक सूची

13.0 भूमिका तथा उद्देश्य

भारत जैसे विशाल भू भाग वाले देश में भाषागत विविधताओं की अवस्थिति होना स्वाभाविक है-इस भाषायी बहु लता ने बहु भाषा-अधिगम और शिक्षण-प्रक्रिया को गहराई से

प्रभावित किया है । आधुनिक समय में कोई भी व्यक्ति इच्छानुसार अनेक भाषाएँ सीख सकता है लेकिन व्यावसायिक दक्षता, प्रभावी सम्प्रेषणीयता तथा सामाजिक-सांस्कृतिक समझ को विकसित करने के लिए एकाधिक भाषा का ज्ञान होना ही पर्याप्त है । राष्ट्रीय शिक्षा नीति के अनुसार भारत के सभी बालक-बालिकाओं के लिए हिन्दी का अध्ययन अनिवार्य है अत: एक दो राज्यों को छोड़कर-त्रिभाषा सूत्र के अन्तर्गत सभी राज्यों के विद्यालयों में हिन्दी का मातृभाषा अथवा द्वितीय भाषा के रूप में अध्ययन सम्पन हो रहा है। द्वितीय भाषा का शिक्षण मातृभाषा शिक्षण से नितान्त भिन्न है अत: भाषा-अधिगम विकास हेतु कतिपय नवाचारों का उपयोग करना आवश्यक रहता है। मातृभाषा शिक्षण में भी नवाचारों का प्रयोग करना उपादेय रहता है।

इस पाठ में हिन्दी शिक्षण में प्रयुक्त नवाचारों के प्रयोग और उनसे विकसित भावी स्थिति के सन्दर्भ में आपके निम्नांकित अवबोध स्पष्ट हो सकेंगे-

(1) शिक्षा में नवाचार के सम्प्रत्यय, प्रकार एवं क्षेत्र के बारे में ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे ।

(2) हिन्दी का विविध रूपों में किए जाने वाले शिक्षण से परिचित हो सकेंगे ।

(3) हिन्दी शिक्षण में हुए नवाचारों से अवगत हो सकेंगे तथा हिन्दी शिक्षण हेतु इन नवाचारों का प्रयोग किस प्रकार किया जाए? इस सम्बन्ध में बोध विकसित करेंगे ।

(4) द्वितीय या विदेशी भाषा के रूप में हिन्दी शिक्षण में नवीन उपागमों के अध्ययन-अध्यापन के चरणों का अनुप्रयोग कर सकेंगे ।

(5) हिन्दी शिक्षण एवं नवाचारों की भावी स्थिति का आकलन कर सकेंगे ।

13.1 नवाचार के अभिधेयार्थ

नवाचार शब्द का सामान्य अर्थ नवीन आचरण अर्थात् प्रचलित परम्परा से हटकर कोई नवीन चिन्तन, कार्य एवं व्यवहार करने से है। किन्तु लोक से हटकर किया गया प्रत्येक कार्य नवाचार की श्रेणी में नहीं आ सकता। नवाचार में सकारात्मक और प्रयोगात्मक दृष्टिकोण होना परमावश्यक है। नवाचार के रूप में होने वाले प्रत्येक प्रयास का उद्देश्य गुणात्मक सुधार से सम्पन्न होना चाहिए । शिक्षा में नवाचार बहुत सोच समझ कर किया जाना चाहिए क्योंकि इसका सम्बन्ध जीवन्त तत्वों से जुड़ा होता है । अत: शिक्षा के क्षेत्र में नवाचार का प्रयोग पूर्ण रूप से वास्तविक परिस्थितियों में उपयोगिता के सन्दर्भ में समालोचानात्मक मूल्यांकन के आधार पर किया जाना चाहिए ।

हमारे देश भारत में शिक्षा के क्षेत्र में प्राय: सभी नवाचारों का प्रवेश पाश्चात्य देशों में होने वाले नित्य नए शोध कार्यो के परिणाम स्वरूप होता रहा है । दूसरों के गुणात्मक दृष्टि से उपयुक्त कार्यों को अपनाना अनुचित नहीं है, किन्तु उन्हें स्वीकार करने से पूर्व अपने देश की विशेष परिस्थितियों, आवश्यकताओं के परिप्रेक्ष्य में गहनता से विचार करना आवश्यक है ।

नवाचार को शास्त्रीय परिभाषा निम्नांकित सम्प्रत्ययों से समझी जा सकती है -

1 किसी नवीन तथ्य द्वारा प्रक्रिया में परिवर्तन करना नवाचार है ।

2 डिपार्टमेन्ट ऑफ ट्रेड एण्ड इन्डस्ट्री, अमेरिका के अनुसार किसी नए विचार का सफलतापूर्वक उपयोग करना नवाचार है।

3 पीटर ड्रकर हेसे बिएन, (2002) के अनुसार श्रेष्ठ निस्पादन हेतु नए आयामों का स्रजन करना ही नवाचार है ।

4 सुधारात्मक प्रक्रिया में नए तथ्य का समावेश करना नवाचार है ।

उपर्युक्त परिभाषाओं से निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि कार्य की उत्कृष्टता, सफलता व परिवर्तनीयता के लिए जो भी नवीन प्रयोग क्रियान्वित किए जाते हैं वे सब नवाचार कहे जा सकते है।

नवाचार के प्रकार एवं क्षेत्र विस्तार

नवाचार यद्‌यपि कई प्रकार से सम्पन्न किए जाते हैं तथापि भाषा शिक्षण के दृष्टिकोण से नवाचारों को निम्नलिखित दो प्रकारों में विभक्त किया जा सकता है:-

(1) नवीन विचारों से परिचित कराना ।

(2) नवीन विचारों का क्रियान्वयन कराना ।

प्रथम प्रकार के अन्तर्गत भाषा शिक्षण की प्रक्रिया, भाषाशैली, तकनीक, भाषा शिक्षण विधि, उपागम आदि में किए जाने वाले नवीन परिवर्तन सम्बन्धी वैचारिक आयामों का समावेश होता है तथा द्‌वितीय प्रकार भाषा शिक्षण प्रक्रिया सम्बन्धी सभी नवीन वैचारिक आयामों के क्रियान्वयन से सम्बन्धित है । इन दोनों ही प्रकारों को भाषा शिक्षण के विभिन्न क्षेत्रों से सम्बन्ध किया जा सकता है- यथा उपागम, विधि-प्रयोग प्रक्रिया, पाठ्‌यक्रम-निर्माण, स्रोत, मूल्यांकन व परीक्षण ।

13.2 हिन्दी के विविध रूपों का शिक्षण

हिन्दी यद्‌यपि भारत की बहुसंख्यक जनता से बोली जाने वाली भाषा है तथापि इसका शिक्षण विविध रूपों में होता रहा है । भारत की भाषायी विविधता इतनी विस्तृत और जटिल है कि प्राय: सभी भाषाओ के शब्दों को समाहित करने वाली हिन्दी आज भी भारत की राष्ट्रभाषा के रूप में प्रचलित-प्रतिष्ठापित नहीं है । यद्‌यपि अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर हिन्दी का प्रचलन लोकप्रिय हो रहा है तथापि भारतीय राज्यों के सन्दर्भ में इसे अनेक रूपों में आवश्यकतानुसार ही स्वीकार किया जा रहा है।

(1) उत्तर भारत के प्राय: सभी राज्यों में हिन्दी का शिक्षण मातृभाषा के रूप में होता है ।

(2) बंगाल तथा दक्षिण भारत के राज्यों में त्रिभाषा सूत्र के अन्तर्गत हिन्दी पढाई जाती है ।

भाषा में वस्तुत: कौशलों की प्रधानता होती है- एक व्यक्ति सामाजिकता का निर्वाह इसी के माध्यम से करता है - इसका अर्जन किया जाता है अत: इसके शिक्षण हेतु अध्यापक वर्ग का विशेष रूप से सजग, सक्रिय, प्रयोगधर्मी स्वरूप अत्यावश्यक है ।

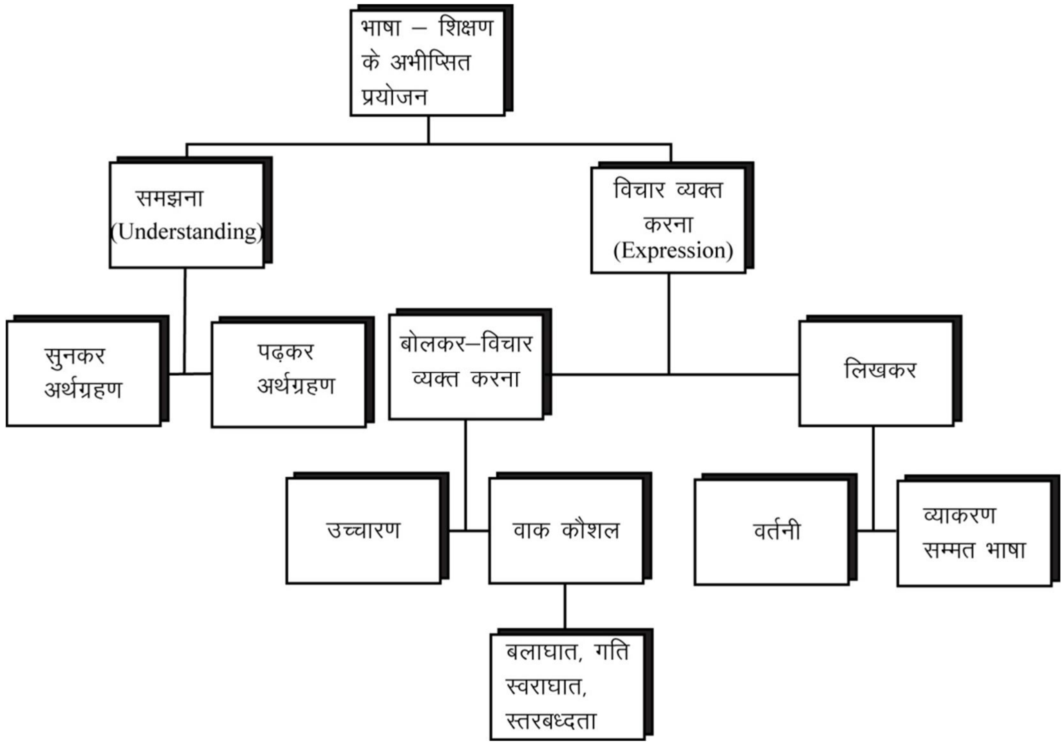

हिन्दी निश्चित ही एक ऐसी जीवन्त भाषा है जिसका भारत के साथ-साथ विदेशों में भी व्यापक क्षेत्र विस्तार हो रहा है अत: इसके स्वरूप, पाठ्यपुस्तकों, शिक्षण विधियों तथा व्यावहारिक उपयोग में अन्तर होना स्वाभाविक है । सामान्यत: हिन्दी सीखने बालों के निम्नलिखित वर्ग है-

(1) जिनकी मातृभाषा ढ़िन्दी है, उनको सिखाना
(2) भारत में अहिन्दी भाषी क्षेत्रों में हिन्दी शिक्षण की व्यवस्था करना
(3) विदेशियों को हिन्दी सिखाना
(4) बालकों, युवकों और प्रौढ़ों को हिन्दी पढ़ाना

13.2.1 मातृभाषा के रूप में हिन्दी-शिक्षण

मातृभाषा माता के मुख से निस्सृत वह भाषा है जिसे शिशु भाषा अर्जन की प्रक्रिया में सबसे पहले अर्जित करता है । इसमें सर्वप्रथम वह सुनने की क्रिया करता है तत्पश्चात बोलने की। अनुकरण द्वारा वह भाषा सीख लेता है ।

मातृभाषा प्राय: क्षेत्रीय भाषा या बोली के रूप में होती है । विकसित क्षेत्रों में यह परिपक्व भाषा भी हो सकती है। हिन्दी भाषी क्षेत्रों में हिन्दी मातृभाषा के रूप में है जैसे उत्तरप्रदेश, मध्यप्रदेश, बिहार, राजस्थान आदि ।

मातृभाषा का शिक्षण अनौपचारिक रूप से मौखिक रूप से जन्म के बाद से ही प्रारंभ हो जाता है । सामान्य बोलचाल के द्वारा आवश्यक वस्तुओं तथा परिवेश की वस्तुओं के नाम और संवाद बालक स्वत: ही स्वाभाविक रूप से सीखता जाता है ।

मातृभाषा शिक्षण के समय भाषा के समस्त अंगों की शिक्षा अपेक्षित मात्रा में देनी चाहिए। भाषा के किसी भी भाग का शिक्षण करते समय प्रासंगिक रूप से अन्य तत्वों का भी शिक्षण में (सिखाने में) समावेश करते रहना चाहिए । इससे सम्यक् भाषा शिक्षण होता है। (इस सन्दर्भ में आपके लिए इकाई सं. 1, 5 तथा 9 का गहन अध्ययन करना अत्यावश्यक है)

13.2.2 द्वितीय भापा के रूप में हिन्दी शिक्षण और विधियाँ

आधुनिक वैज्ञानिक युग में विश्व में भाषा-शिक्षण हेतु विविध विधियों का प्रयोग किया जा रहा है । मातृभाषा का वातावरण तो परिवार से ही प्रारम्भ हो जाता है । माँ की भाषा की वाक्य-संरचनाओं को सुनकर, उनके साथ संबंधित वस्तुओं को देखकर बच्चे अनुकरण के द्वारा मातृभाषा सीख लेते हैं । विलियम फ्रैन्सिस मैके (W. F. Maekey Language Teaching Analysis) ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक में भाषा सिखाने की विधियों के प्रकार पर प्रकाश डालते हुए स्पष्ट किया है कि भाषा सिखाने की आधुनिक सभी विधियाँ प्रत्यक्ष विधि के विकसित रूप हैं । उन्होंने निम्नलिखित पन्द्रह (15) विधियों का उल्लेख भी किया है-

1. प्रत्यक्ष विधि	2. मनोवैज्ञानिक विधि	3. प्राकृतिक विधि
4. वाचन विधि	5. ध्वनि वैज्ञानिक विधि	6. व्याकरण-विधि
7. अनुवाद-विधि	8. व्याकरण-अनुवाद विधि	9. अभ्यास सिद्धांत विधि
10. चयन-विधि	11. इकाई-विधि	12. भाषा नियंत्रण विधि
13. अनुकरण स्मरण विधि	14. सगोत्रीय विधि (जो शब्द मातृभाषा में हैं, वे ही परभाषा में हों)	

15. द्विभाषी विधि- (मातृभाषा तथा परभाषा के साम्य-वैषम्य के आधार पर केवल शब्दावली ही नहीं, अपितु ध्वनियों तथा वाक्यों की भी तुलना की जाती है।) इनके अतिरिक्त वार्तालाप विधि, चलचित्र विधि, प्रयोगशाला विधि भी द्वितीय भाषा शिक्षण हेतु प्रचलित हैं। देश-काल व परिस्थितियों की अनुकूलता के आधार पर एक अध्यापक के रूप में आपको इनका प्रसंगानुसार प्रयोग कर लेना चाहिए ।

अध्यापक के लिए यह आवश्यक है कि यदि वह किसी परभाषाभाषी को हिन्दी सिखा रहा है तो उसे स्वयं उस परभाषा का ज्ञान होना चाहिए । हिन्दी भाषी अध्यापक यदि मलयालम भाषी विद्यार्थी को हिन्दी सिखाता है तो उसे सर्वप्रथम मलयालम भाषा की संरचना का विधिवत ज्ञान होना चाहिए।

हिन्दी-शिक्षण हेतु लघु-अवधि पाठ्यक्रम

भारत में अहिन्दीभाषी क्षेत्रों में हिन्दी-शिक्षण की व्यवस्था के साथ अनेक विदेशियों को भी आज उनके व्यावहारिक ज्ञान के लिए कम समय में हिन्दी-शिक्षण की उचित व्यवस्था की जा रही है । अमेरिकन इंस्टीट्यूट आफ इण्डियन स्टडीज पूना के "इन्टेन्सिव हिन्दी कोर्स" इस दिशा में विशेष उल्लेखनीय है- प्रारम्भ में आठ सप्ताह का यह पाठ्यक्रम एक सप्ताह में पाँच दिन और प्रत्येक दिन छः कालांश का कार्यक्रम है ।

इस पाठ्यक्रम में हिन्दी के वृत्तचित्र, पारस्परिक वार्तालाप, परिचर्चाएँ तथा परिभ्रमण के समय में भी हिन्दी, के प्रयोग पर विशेष ध्यान दिया जाता है । भाषा प्रयोगशाला में प्रतिदिन अभ्यास करना इस पाठ्यक्रम का अभिन्न अंग है।

द्वितीय भाषा शिक्षण में प्रायोगिक भाषा-विज्ञान की भूमिका आधुनिक समय में निरन्तर वृद्धिगत है। इस विज्ञान की सहायता से केवल हिन्दी या अन्य भारतीय भाषा ही नहीं, विदेशी भाषाओं पर भी कम समय में भाषिक क्षमता का विकास किया जा सकता है। अन्य भाषा शिक्षण में पुरानी अनुवाद-पद्धति अथवा व्याकरण-पद्धति का प्रारंभ में प्रयोग नहीं करना चाहिए । ध्यानपूर्वक सुनना, तदनुसार बोलना-पढ़ना एवं तदनन्तर लिखना- यही भाषा शिक्षण का उचित क्रम है। ध्यान से सुनना भाषा शिक्षण की अत्यधिक उपयोगी प्रक्रिया है- दूसरों को बोलने का अनुकरण करने से ही किसी अन्य भाषा पर अधिकार प्राप्त किया जा सकता है । यूजिन नाइडा ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक "लर्निंग ए फॉरेन लेंग्वेज" (Learning a Foreign Language) में स्पष्टत: लिखा है कि "भाषिक अभिव्यक्ति की सुविधा प्राप्त करने के तीन ही महत्वपूर्ण प्रक्रियाएँ हैं-

1 पुन: पुन: शब्दों की पुनरावृत्ति

2 अन्यभाषा में ही विचार करते रहना

3 अन्य भाषा को ही प्रयोग करते रहने के अवसरों में निरन्तरता बनाए रखना ।

द्वितीय भाषा शिक्षण के लिए व्याकरणिक अनुशासन के शिक्षण से अधिक दैनन्दिन क्रियाओं को समाहित करते हुए अनेकानेक वाक्यों का अभ्यास कराना उपादेय है । जिस अन्य भाषा को सीखना हो, उस भाषा में निर्मित वाक्यों को बार-बार सुनते रहने का अभ्यास होना चाहिए । अन्य भाषा शिक्षण में वास्तविक पदार्थ प्रतिरूप, यथार्थ चित्र, रेखाचित्र आदि का उपयोग अक्षर-ज्ञान, शब्दावली बढ़ाने अथवा वाक्य-रचना सिखाने के लिए किया जा सकता है ।

13.2.3 राष्ट्रभाषा के रूप में हिन्दी शिक्षण

स्वतंत्र भारत की वृहद आवश्यकताओं में एक राष्ट्रीय समंत्र्जन स्थापित करना सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण है- शताब्दियों से हिन्दी भारत की राष्ट्रीय तथा भावात्मक एकता का प्रतिनिधित्व कर रही है । बहुभाषी भारत की यही संपर्क भाषा रही- लेकिन स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् राष्ट्रभाषा के रूप में हिन्दी तथा इसका शिक्षण समस्या ग्रस्त ही रहा है । देश के अधिकांश भागों में शताब्दियों से जन-संपर्क की भाषा रही हिन्दी 14 सितम्बर 1949 को ही संविधान के अनुच्छेद 343(1) के द्वारा राष्ट्रभाषा के पद पर विभूषित अवश्य हुई लेकिन संविधान के ही अनुच्छेद 343(2) के प्रावधान के अन्तर्गत 25 जनवरी 1965 तक भारत संघ के सभी राजकीय कार्यों के लिए पहले की भांति ही अंग्रेजी के प्रयोग को यथावत रखा गया । इसके अतिरिक्त "कार्यालय भाषा अधिनियम 1963" को संसद ने पारित कर हिन्दी के साथ-साथ अंग्रेजी को भी सहयोगी भाषा का स्तर प्रदान कर दिया- प्रत्यक्षत: यह समस्या अहिन्दी भाषी राज्यों के द्वारा उत्पन्न की गई प्रतीत होती है लेकिन यह कदापि वास्तविकता नहीं । अस्तु अहिन्दीभाषी राज्यों में हिन्दी का प्रसार-प्रचार करने में अग्रणी संस्था केन्द्रीय हिन्दी संस्थान

कही जा सकती है । अपनी स्थापना से लेकर आज तक इसके द्वारा 25 से अधिक भारतीय भाषाओं के बोलने वाले हिन्दी शिक्षण का प्रशिक्षण प्राप्त कर चुके हैं । विविध भाषाओं की समस्याओं तथा आवश्यकताओं को दृष्टि में रखते हुए भिन्न-भिन्न भाषा क्षेत्रों के अनुरूप हिन्दी शिक्षण संबंधी सामग्री में इस संस्थान ने भाषा विज्ञान का उपयोग करते हुए भिन्नता लाने का सफल प्रयोग किया है। दक्षिण-भारत हिन्दी प्रचार सभा के हैदराबाद एवं चैन्नई स्थित उच्च शिक्षा शोध संस्थानों में हिन्दी भाषा के माध्यम से अनेक कम्प्यूटर पाठ्यक्रम भी आयोजित किए जा रहे हैं । इस क्षेत्र में हिन्दी सिखाने वाले ऐसे अध्यापक चाहिए जो देश की अधिकाधिक क्षेत्रों की भाषा के ज्ञाता हों । साथ ही राष्ट्रभाषा हिन्दी सीखने वालों की भाषाओं के साहित्य का आवश्यकतानुसार अनुवाद भी कर सके ।

अहिन्दी भाषियों के लिए राष्ट्रभाषा के रूप में हिन्दी भाषा के शिक्षण की विधि किसी भी द्वितीय भाषा या विदेशी भाषा शिक्षण विधि के अनुसार ही होगी । द्वितीय भाषा शिक्षण विधियों पर क्रमांक व 13.2 के अन्तर्गत आवश्यक पठनीय सामग्री है ।

13.2.4 राजभाषा हिन्दी का शिक्षण

भारत में राजभाषा अधिनियम 1963 की धारा 4(1) के अनुसार राज्य कर्मचारियों के लिए हिन्दी प्रशिक्षण तथा हिन्दी माध्यम से प्रशिक्षण की व्यवस्था की गई । इसके अन्तर्गत संबंधित समिति ने कतिपय निम्नलिखित अनुशंसाएँ की

1. राजकीय कर्मचारियों को हिन्दी भाषा का प्रशिक्षण देने के लिए हिन्दी शिक्षण योजना तथा अन्य तिभागीय व्यवस्थाओं को सुदृढ़ किया जाय ।
2. नए भर्ती होने वाले कर्मचारियों को व्यावसायिक प्रशिक्षण से पहले हिन्दी का प्रशिक्षण दिया जाय।
3. हिन्दी शिक्षण योजना के नए केन्द्र खोले जाए ।
4. हिन्दी प्राध्यापकों को प्रोत्साहन दिया जाय ।

इसके अतिरिक्त हिन्दी भाषा शिक्षण के लिए निम्नांकित विधियाँ व प्रक्रियाएँ अपनाई गई-

- केन्द्रीय निदेशालय द्वारा पत्राचार पाठ्यक्रमों का विस्तार किया गया ।
- हिन्दी को एक विषय के रूप में पढ़ाना आरम्भ किया गया ।
- आकाशवाणी तथा दूरदर्शन द्वारा पाठ्यक्रमों का प्रसारण किया गया । पाठों की आवृत्ति एवं वृद्धि पर बल दिया गया ।
- हिन्दी जानने वाले कर्मचारियों को प्रत्येक वर्ष में कम से कम एक बार कार्यशाला में जाकर हिन्दी में मूल रूप से काम करने का अभ्यास करने का अवसर दिया गया ।
- देश के सभी भागों के शिक्षा संस्थानों में हिन्दी पढ़ाने की सुविधाएँ उपलब्ध कराई गई ।

13.2.5 प्रयोजनमूलक हिन्दी शिक्षण

प्रयोजनमूलक हिन्दी का शिक्षण आज की सर्वाधिक महत्त्व की आवश्यकता है । यह शब्दानुशासन का एक नया चरित्र है जिसके द्वारा हिन्दी साहित्यिक भाषा मात्र न रहकर

अधुनातम विविध विषयों के माध्यम की भाषा के रूप में विकसित रही है । प्रयोजनमूलक भाषा सामकालीन सरोकार से जुड़ी रहती है । ललित साहित्य की भाषा व्यावहारिक उपयोगिता के आधार पर स्वत: ही अपना स्वरूप बदल लेती है । कोई भी भाषा जब प्रशासन और व्यवसाय की भाषा बनती है तब उसकी तदनुकूल शब्दावली भी विकसित की जाती है । इसके पश्चात् वैज्ञानिक शब्दों का विकास किया जाता है अथवा अनुवाद के द्वारा तत्सम शब्द ही प्रचलन में आ जाते हैं और शिक्षण के व्यापक उद्देश्यों की पूर्ति के लिए व्यावहारिक भाषा का स्वरूप अस्तित्व में आता है- यह भाषा सर्वग्राही, सरल और यथोचित संवाद की भाषा बन प्रयोजनमूलक सिद्ध होती है । इसमें तथ्यात्मक निरूपण करने की शक्ति अधिक होती है । क्योंकि कार्यालय में एक साथ कार्य करते हुए यदि कोई प्रतिवेदन तैयार करना है तो तथ्यात्मक विश्लेषण की आवश्यकता होती है ।

केन्द्र सरकार की ओर से हिन्दी को व्यावहारिक व सर्वग्राही बनाने की दिशा में तथा कार्यालयीन उपयोगिता की दृष्टि से समृद्ध करने हेतु सन् 1963 से ही प्रयोजनमूलक हिन्दी शिक्षण पर बल दिया जाने लगा है । उसके अन्तर्गत प्राय: परिसम्वाद, पत्र-लेखन, प्रतिवेदन लिखना, वार्तालाप, कार्यगोष्ठियाँ, सामूहिक वाद-विवाद, परिचर्चा, प्रश्नोत्तर आदि का विशेष रूप से प्रशिक्षण दिया जाता है ।

विद्यालयों में साहित्यिक भाषा का भी अध्ययन किया जाता रहा है किन्तु यह भाषा को स्थित्यात्मक बनाती है जबकि प्रयोजनमूलक भाषा उसे गत्यात्मक बनाती है । इन दोनों स्थितियों में समन्वय हेतु आवश्यक है कि भाषा शिक्षण में साहित्यिक, प्रशासनिक, तकनीकी, वैज्ञानिक सम्बन्धी प्रवृत्तियों को महत्त्व दिया जाए जिससे कि इनकी शब्दावलियों का मिश्रण हो सके ।

सूचना माध्यमों में होने वाले भाषिक परिवर्तनों ने हिन्दी की संरचना तथा क्षमता में अपार वृद्धि की है । हिन्दी के महत्त्व और व्यापकता को देखते हुए भारत सरकार के सूचना और प्रौद्योगिकी मंत्रालय के प्रतिष्ठान सी-डैक ने कम्प्यूटर की सुविधा को ध्यान में रखते हुए निःशुल्क हिन्दी सॉटवेयर जारी किया है । इसके अतिरिक्त भारत सरकार के इलेक्ट्रोनिकी विभाग ने भारतीय लिपि का भी एक मानक रूप विकसित किया है जिसे भारतीय मानक ब्यूरो (BIS) ने इस्की अर्थात् Indian Script Code For Information Interchange नाम से मान्यता प्रदान की है । इन्टरनेट पर भी हिन्दी भाषा की लोकप्रियता में वृद्धि हुई है- डायनॉमिक फान्ट का विकास इस दिशा में एक महत्त्वपूर्ण उपलब्धि है । विज्ञान, तकनीकी प्रौद्योगिकी आदि क्षेत्रों में भी हिन्दी का शनै: शने: प्रवेश हो रहा है । कतिपय विद्यालयों में भी कम्प्यूटर प्रोग्रामिंग का प्रशिक्षण नियमित रूप से दिया जा रहा है । हिन्दी के प्रशिक्षण को अधिकाधिक रोजगारपरक बनाने के लिए पत्रकारिता व सम्पादन कला का वैज्ञानिक प्रशिक्षण वृद्धिगत है ।

13.3 भाषा शिक्षण में प्रयुक्त विधियों का विकास क्रम

विद्यालयों में भाषा शिक्षण औपचारिक व अनौपचारिक दोनों रूप में विभिन्न विधियों द्वारा प्रचलित व परिवर्तित होता आया है । अर्थग्रहण एवं अभिव्यक्ति हेतु भाषायी कौशलों के

विकास हेतु विधियों में भी परिवर्तन होते रहे । परिवर्तित विधियों को क्रमानुसार आगे स्पष्ट किया जा रहा है

1. व्याकरण विधि

भाषा शिक्षण प्रारम्भिक अवस्था में भारत और यूरोप दोनों जगह व्याकरण पद्धति से होता था । सिखाई जाने वाली भाषा चाहे जो भी हो, किसी भी रूप में हो प्रथम, द्वितीय, तृतीय या विदेशी भाषा हो उसे व्याकरण ज्ञान प्रदान करके सिखाने की परम्परा रही है । व्याकरण विधि से भाषा सिखाने पर शिक्षार्थी को व्याकरण का ज्ञान तो होता जाता था किन्तु भाषायी कौशलों में दक्षता प्राप्त नहीं हो सकी । भाषायी कौशलों में दक्षता प्रदान करने के दृष्टिकोण से अन्य विधियों का विकास व क्रियान्वयन किया गया ।

2. अनुवाद विधि

इस विधि के अंतर्गत जो भी भाषा सिखाई जाती उसका मातृभाषा में अनुवाद करके समझाना प्रारंभ किया गया । सन् 1631 में जॉन कैमेनियस ने इस विधि को भाषा शिक्षण की श्रेष्ठ विधि मानते हुए अनुवाद द्वारा भाषा सिखाने पर बल दिया । भारत में पुणे में श्री भंडारकर ने भी अनुवाद विधि से संस्कृत भाषा सिखाना प्रारम्भ किया, संस्कृत में प्रचलित अनुवाद विधि को भण्डारकर विधि भी कहा जाता है । इस विधि से भाषा सिखाने पर भी विद्यार्थी मुख्य भाषा को नहीं सीख पाए क्योंकि अर्थग्रहण मातृभाषा या अन्य भाषा द्वारा किया जाता था अत: सहायक भाषा प्रमुख होने लगी और मुख्य भाषा गौण । भाषायी कौशलों में भी केवल श्रवण और अवबोध पर ध्यान दिया गया; अत: भाषा शिक्षण की पुन: नवीन विधियों की खोज होने लगी ।

3. प्रत्यक्ष बिधि

प्रत्यक्ष विधि में सिखाई जाने वाली भाषा को उसी भाषा के माध्यम से सिखाया जाता है।

सन् 1908 में यूरोप में इस संदर्भ में प्रयास किए गए । द्वितीय विश्व युद्ध के समय विभिन्न देशों के सैनिकों को पारस्परिक संवाद करने हेतु उन देशों की भाषाएँ सिखाने में प्रत्यक्ष विधि का प्रयोग किया गया । 19वीं शताब्दी में भारत में भी सर्वप्रथम बम्बई, कलकत्ता और मद्रास में फ्रेजर, टिपिंग वेट्स और श्रीनिवास अय्यंगर द्वारा प्रत्यक्ष विधि से भाषा शिक्षण प्रारम्भ किया गया । इस विधि का उद्देश्य विद्यार्थियों में भाषा के चारों कौशलों श्रवण, भाषण, पठन, और लेखन का विकास करना था । लेकिन भाषा शिक्षण की प्रारम्भिक स्थिति निश्चित न होने के कारण यह अधिक सार्थक न हो सकी । परिणामस्वरूप भाषाविदों ने भाषा की महत्त्वपूर्ण इकाई वाक्य-संरचना भाषा शिक्षण सिखाने पर बल दिया । कालांतर से यह प्रयास भाषा शिक्षण में "संरचनात्मक उपागम" के नाम से प्रसिद्ध हुआ।

4. संरचनात्मक उपागम

भाषिक अभिव्यक्ति मूलत: वाक्य प्रधान होती है अत: भाषा शिक्षण का महत्त्वपूर्ण कार्य वाक्य-निर्माण कौशल का विकास होना चाहिए । संरचनात्मक उपागम में शब्दों को उचित क्रम में रखकर वाक्यों की संरचना बनाई जाती है । इस दृष्टि से संरचनात्मक उपागम से

संबंधित भाषा सिखाना प्रारम्भ किया गया । कुछ आधारभूत वाक्य संरचनाओं पर अन्य वाक्य बोलने व बनाने का अभ्यास करवाया गया । इस दिशा में 1899 में हेनरी स्वीट द्वारा भाषा के मौखिक रूप की संरचना विकसित की गई । सन् 1917 में पामर द्वारा इस उपागम के सिद्धान्त बनाए गए । सन् 1933 में भाषा वैज्ञानिक ब्लूमफील्ड ने इस दिशा में महत्वपूर्ण कार्य किये । सन् 1963 में भाषाविद् रोबर्ट लैडो ने अपनी पुस्तक लेंग्विज टीचिंग (Language Teaching) में संरचना के विविध पक्षों को स्पष्ट किया । सन् 1967 में राइबर्स में अपनी पुस्तक "Teaching Foreign Language" में इस उपागम पर गहराई से विचार प्रस्तुत किए । संरचनात्मक उपागम भी भाषा शिक्षण में बहुत सफल नहीं हो सका क्योंकि इसमें केवल वाक्य, उपवाक्य पदबंध आदि ही व्याकरणिक दृष्टि से उपयुक्त हैं । इस प्रकार से एक-एक वाक्य सांचे के आधार पर भाषा सीखने वाला अनेक समान वाक्य बनाना व बोलना तो सीख जाता है, किन्तु विशिष्ट संदर्भों में उपयुक्त संप्रेषण की दक्षता प्राप्त नहीं कर सकता। समस्त संरचनाएँ सीखकर भी अध्येता भाषा के जीवन्त रूप को नहीं सीख सकता । भाषा का प्रयोग मुख्यत: संप्रेषण के लिए किया जाता है; लेकिन संरचनात्मक उपागम के द्वारा यह कार्य पूर्णत: सिद्ध न हो सका अत: संप्रेषण कौशल विकसित करने हेतु संप्रेषण उपागम का आविर्भाव हुआ।

5. संप्रेषण उपागम

1957 में अमेरिकी भाषा वैज्ञानिक नोम चॉम्स्की ने अपनी पुस्तक Syntactic Structures द्वारा मानव मस्तिष्क में सहजात वृत्ति के रूप में विद्यमान भाषा अधिगम क्षमता और इसके द्वारा भाषा अधिगम प्रक्रिया पर विस्तार से विचार व्यक्त करते हुए यह सिद्ध किया कि संप्रेषण हेतु ही भाषार्जन किया जाता है । इसमें आत्मसात किए गए सीमित नियमों के समुच्चय से निष्पादित असीमित वाक्य समुच्चय ही भाषा है । संप्रेषण उपागम के द्वारा अध्येता को उस भाषा का संदर्भो में उषयुक्त प्रयोग, भाषायी कौशलों- श्रवण, अभिव्यक्ति, पठन व लेखन का विकास तथा शिक्षण तकनीकी के उचित प्रयोग सिखाए जाते हैं । संप्रेषण दक्षता में भाषा की उपयुक्तता, शुद्धता और प्रवाहिता पर बल दिया जाता है । यह उपागम समाज संदर्भित भाषा प्रयोग के अध्ययन पर बल देता है । इराके अनुसार भाषा का व्याकरण संप्रेषण-स्थितियों में भाषा विश्लेषण के आधार पर तैयार किया जाता है, जिसमें निम्नांकित महत्त्वपूर्ण तथ्य समाविष्ट होते हैं-

1. जो मनुष्य की संप्रेषण क्षमता को प्रतिबिम्बित करे न कि भाषायी क्षमता को ।
2. जो भाषा के सामाजिक, सांस्कृतिक संदर्भगत प्रयोग की व्याख्या करे न कि केवल भाषा के वाक्यों की रचना के लिए नियमावली प्रस्तुत करे ।
3. जिसका केन्द्रक न तो भाषा है और न मानव मन अपितु वे संप्रेषण स्थितियाँ हैं जिनमें भाषा प्रयुक्त होती है ।
4. जिसमें विश्लेषण की महत्तम इकाई "वाक्य" न होकर "शाब्दिक घटना" जैसी इकाई होती है।
5. जिसमें रूप की अपेक्षा 'प्रकार्य' को अध्ययन का केन्द्र मानकर सर्वप्रथम प्रकार्यात्मक/ संप्रेषणपरक कोटियों की चर्चा होती है ।

गत शताब्दियों में देश-विदेश में भाषा शिक्षण में मुख्य रूप से उपर्युक्त विधियाँ ही प्रयुक्त की गई हैं । इसके अतिरिक्त विश्वस्तर पर विशेषरूप से यूरोप में भाषा शिक्षण में अनेक नवाचार भी हुए जिन्हें विशेष रूप से द्वितीय भाषा शिक्षण अथवा विदेशी भाषा शिक्षण में प्रयुक्त किया गया।

Approaches and Methods in Language Teaching नामक पुस्तक में लेखक द्वय (जैकसी रिचर्ड व थियोडार रोजर्स) ने नवाचारों के अंतर्गत भाषा शिक्षण के 21 नवीन उपागमों तथा विधियों का उल्लेख किया है । इन नवीन उपागमों का प्रयोग प्राय: द्वितीय भाषा शिक्षण में ही किया जाता है ।

13.4 अभ्यासार्थ प्रश्न

1. नवाचार के अभिधेयार्थ स्पष्ट करते हुए शिक्षण में नवाचार की आवश्यकता पर विचार व्यक्त कीजिए ।
2. भाषा-शिक्षण में संरचनात्मक उपागम की उपयोगिता- पर प्रकाश डालिए ।
3. अहिंदीभाषी राज्यों में आप हिन्दी-शिक्षण में किस विधि का प्रयोग करेंगे और क्यों? सोदाहरण विचार व्यक्त कीजिए ।
4. भाषायी कौशलों से क्या तात्पर्य है? भाषा शिक्षण में किस कौशल के अध्यापन को आप प्रमुखता देंगे?
5. भाषा-शिक्षण की प्रमुख रूष से प्रचलित विधियाँ कौन-कौन सी हैं? संक्षेप में स्पष्ट कीजिए।

13.5 हिन्दी शिक्षण में नवाचार

गत शताब्दियों में हिन्दी के स्वरूप में अनेक परिवर्तन हुए हैं लेकिन इसके शिक्षण में नवीन विधियों के प्रयोग का अभाव ही रहा है । प्रारंभ से ही हिन्दी शिक्षण का उद्देश्य साहित्य शिक्षण रहा है । हिन्दी भाषा विशेषज्ञों, शिक्षकों एवं सुधारकों का ध्यान शिक्षण की नई विधियों, उपागमों एवं प्रविधियों पर कोई सृजनात्मक शोध कार्य की ओर गया ही नहीं ।

सुविधा की दृष्टि से हिन्दी शिक्षण के विकास-क्रम का उल्लेख निम्नलिखित रूप से किया जा सकता है-

1. प्रथम स्थिति में हिन्दी शिक्षण साहित्य शिक्षण पर केन्द्रित था ।
2. द्वितीय स्थिति में हिन्दी में विभिन्न बोलियों में रचित साहित्य को समाविष्ट कर पढ़ाया जाने लगा यथा-अवधी, ब्रज, मेवाड़ी, मालवी आदि भाषाओं व बोलियों का साहित्य ।
3. तृतीय स्थिति में हिन्दी शिक्षण में भी तकनीकी का प्रयोग आरंभ किया गया । विभिन्न दृश्य-श्रव्य साधनों का उपयोग किया जाने लगा जिसमें रेडियो, दूरदर्शन आदि प्रमुख हैं ।
4. चतुर्थ स्थिति में वृत्तिमूलक या क्रियात्मक व्याकरण का प्रयोग अधिक किया जाने लगा इसमें आगमन और निगमन दोनों ही विधियों का प्रयोग किया गया ।

5. 1960 के बाद से हिन्दी शिक्षण मे प्रयोजनमूलक हिन्दी को विकसित करने के विविध प्रयास किए जाने लगे । सम्प्रति प्रयोजनमूलक हिन्दी के आयाम बढ़ते जा रहे हैं । हिन्दी को संप्रेषणीय दक्षता के साथ सिखाने के प्रयास किए जा रहे हैं ।
6. कालान्तर में हिन्दी अपनी उदारवादिता के फलस्वरूप अन्य भाषाओं से पोषित होती रही और अपने वास्तविक स्वरूप से दूर होती गई । हिन्दी जिन अपभ्रंश शब्दावलियों से निर्मित हुई उन शब्दावलियों का अब अभाव होता जा रहा है । हिन्दी में अन्य भारतीय भाषा अथवा विदेशी भाषा के शब्दों को आत्मसात् करने की अपूर्व शक्ति है । सूचना प्रौद्योगिकी के आधुनिक काल में हिन्दी भाषा ज्ञान, सूचना, प्रवाह और तकनीकी विकास की धुरी बनने की प्रक्रिया में है । अपनी सरल, सहज स्वरूप के कारण देश के अधिकांश भूभाग में शताब्दियों से जन संपर्क की भाषा होने के कारण इसमें आज कम्प्यूटर प्रोग्रामिंग, हिन्दी टेलेक्स और टेलीप्रिन्ट की व्यवस्था के प्रयास किए जा रहे हैं । टेक्नोलॉजी के माध्यम से हिन्दी के अध्ययन, विश्लेषण और प्रकाशन का कार्य विभिन्न स्तरों पर सरकारी एवं गैर सरकारी संस्थाओं द्वारा किया जा रहा है । भाषा वैज्ञानिक दृष्टिकोण से हिन्दी भाषा का गंभीर विश्लेषण तथा गतिमान एवं उत्कृष्ट सॉटवेयर का भी व्यापक स्तर पर विकास किया जा रहा है ।

13.5.1 अभिनव विधियों का प्रयोग- प्रायोजना पद्धति

प्रायोजना का शाब्दिक अर्थ किसी कार्य को करने के लिए बनाई गई रूपरेखा है । प्रायोजना समस्यामूलक कार्य है जो सामाजिक वातावरण में सम्पन्न किया जाता है । यह सोद्देश्यपूर्ण कार्य होता है ।

13.5.2 पर्यवेक्षित अध्ययन विधि

बाइनिंग एंव बाइनिंग के अनुसार-पर्यवेक्षित अध्ययन से हमारा तात्पर्य अध्यापक द्वारा कक्षा अथवा विद्यार्थियों के समूह का उस समय निरीक्षण करने से है, जब कि वे अपनी मेजों पर कार्य करने में संलग्न रहते हैं । (इकाई सं. 5 के अन्तर्गत इसका विवेचन किया गया है ।)

13.5.3 अभिक्रमित अनुदेशन विधि

अभिक्रमित अनुदेशन पर पूर्व में इकाई संख्या 9 में प्रकाश डाला गया है ।
हिन्दी भाषा शिक्षण में इस विधि से मुख्यरूप से व्याकरण पाठ पढ़ाएँ जा सकते हैं ।

13.5.4 शैक्षिक भ्रमण विधि

शैक्षिक भ्रमण ज्ञानार्जन की रुचिकर व प्रभावी विधि है जिसके द्वारा विद्यार्थी क्रियाशील रहकर अवलोकन एवं अनुभव के आधार पर तथ्यों को ज्ञात करते हैं । कक्षा से बाहर किया जाने वाला यह शिक्षण-अधिगम छात्रों को ज्ञानार्जन व अनुरंजन दोनों प्रदान करता है । शैक्षिक भ्रमण विधि विद्यार्थियों को वास्तविक परिस्थितियों में सीखने को प्रेरित करती है । भारत देश में गुरुकुल परम्परा में प्राय: इसी विधि द्वारा विद्यार्थी वास्तविक परिस्थितियों में अनुभव प्राप्त करते तथा ज्ञानार्जन करते थे । यह विधि विषय-वस्तु को यद्यपि सभी छात्रों के अवलोकनार्थ समान रूप से प्रस्तुत करती है, अत: अध्यापक को प्रतिभाशाली या कमजोर विद्यार्थियों के लिए पृथक-पृथक प्रयास नहीं करना पड़ता है तथापि विद्यार्थी अपनी अधिग्रहण

क्षमता के अनुरूप कम या अधिक ज्ञान अर्जित कर लेते हैं । अर्जित ज्ञान को हिन्दी भाषा की दृष्टि से निम्नांकित रूपों से वे अभिव्यक्त कर सकते हैं-

1. दृश्य स्थिति का वर्णन करना (मौखिक व लिखित दोनों) ।
2. भ्रमण आधारित प्रतिवेदन तैयार करना ।
3. निबंध के माध्यम से भाव-विचारों का प्रकाशन ।
4. विभिन्न विधाओं में रचना करना ।
5. समीक्षा करना ।
6. सुझाव देना ।

शैक्षिक भ्रमण नियन्त्रित व स्वतंत्र परिस्थितियों में ज्ञानार्जन का एक महत्त्वपूर्ण व व्यावहारिक क्रियाओं से परिपूर्ण एक बहुआयामी माध्यम है ।

13.5.5 शैक्षिक चलचित्र तथा भाषा शिक्षण

चलचित्र, स्लाइड्स, टीचिंग मशीन, टेलीविजन, ध्वनि कंपन जैसे उपकरण आज शिक्षण के अभिन्न अंग के रूप में स्वीकार कर लिए गए हैं । दृश्य-श्रव्य उपकरणों के माध्यम से विद्यार्थी वर्ग अपने चहुंओर के वातावरण व उसके विविध उपादानों, समस्त घटनाओं, पदार्थों और भावों को प्रत्यक्षीकरण के द्वारा तादात्म्य स्थापित कर अपनी भाषिक क्षमता का विकास शीघ्रता व सरलता से कर सकता है । (इकाई संख्या 6 में इस विषय पर पर्याप्त प्रकाश डाला गया है ।)

13.5.6 भाषा प्रयोगशाला विधि

भाषा प्रयोगशाला टेपरिकोर्डर युक्ति का ही एक विकसित और बहुआयामी रूप है । भाषा प्रयोगशाला वैद्युतिकीय साज-सज्जा से युक्त एक शिक्षण कक्ष होता है, जिसका प्रयोग भाषा के समूह शिक्षण हेतु किया जाता है । (इस विधि का इकाई संख्या 12 में विस्तृत वर्णन किया गया है ।)

13.5.7 पी.पी.पी. उपागम (PPP Approach)

पी.पी.पी. उपागम ब्रिटिश भाषा पद्धति पर आधारित द्वितीय भाषा शिक्षण का एक शिक्षक केन्द्रित उपागम है जो किसी भी द्वितीय, तृतीय या विदेशी भाषा को सिखाने में प्रयुक्त किया जा सकता है।

"PPP" भाषा शिक्षण का वह उपागम है जिसमें अध्यापक भाषा तत्वों को स्पष्ट एवं अर्थपूर्ण संदर्भ में प्रस्तुत करता है । इस चरण को प्रस्तुतीकरण (Presentation) कहते हैं इसमें संवाद, संदर्भ निर्माण गतिविधि, पाठ्य-वस्तु इत्यादि का उपयोग किया जाता है ।

इस संदर्भ में शिक्षण का द्वितीय चरण 'अभ्यास' (Practice) होता है । इसमें पूर्ण रूप से नियन्त्रित रूप में प्रस्तुत किए गए भाषा तत्वों पर सामूहिक और व्यक्तिगत अभ्यास कार्य करवाया जाता है । अभ्यास कार्य का उद्देश्य विद्यार्थियों को भाषा तत्वों का शुद्ध प्रयोग उचित संदर्भ में करना होता है । तृतीय क्रम में विद्यार्थियों को 'अधिक स्वतंत्र' अभ्यास कार्य करने को दिए जाते हैं। इसमें विद्यार्थी संप्रेषण कार्य को संवाद कार्य या भूमिका निष्पादन

इत्यादि से पूर्ण करते हैं । इसमें यह अपेक्षा रहती है कि विद्यार्थी अन्य सीखे गए भाषा तत्वों को भी समुचित रूप से योग करके भाषा उत्पादन (Production) के प्रमाण देंगे ।

इस PPP उपागम में तीनों चरण समय की दृष्टि से समान रूप से विभाजित होते हैं । तीनों ही चरणों में दृश्य-श्रव्य सामग्री का प्रयोग मूलरूप से भाषा तत्व अभ्यास एवं संप्रेषण का दृष्टि से होता है । इस उपागम से संरचनाएँ भी सिखाई जा सकती हैं । हिन्दी भाषा को यदि अहिन्दीभाषी प्रदेशों में अथवा विदेशों में द्वितीय भाषा के रूप में पढ़ाना हो तो इस उपागम से रुचिपूर्ण रीति से पढ़ाया जा सकता है। इस उपागम से हिन्दी भाषा का व्याकरण विद्यार्थी सरलता से सीख लेते हैं । संवाद शैली के प्रयोग से विद्यार्थी विभिन्न संस्थितियों के संवाद बोलना सीख जाते हैं।

13.5.8 क्रिया आधारित उपागम (Task Based Approach)

क्रिया आधारित उपागम से अध्यापक विद्यार्थियों को अधिकाधिक भाषा के माध्यम से रुचिकर प्रकरण (विषय-वस्तु (का शिक्षण करता है । उस रुचिकर प्रकरण (विषय- वस्तु(के आधार पर विद्यार्थियों को हल करने के लिए कुछ गतिविधि दी जाती हैं विद्यार्थी विचार मंथन करते हुए एवं शिक्षकीय निर्देशों का पालन करते हुए उन गतिविधियों को हल करके तदनुसार भाषायी व्यवहार करते हैं । वे शिक्षक को कार्य का निष्कर्ष बताते हैं एवं इस प्रक्रिया द्वारा भाषा एवं संप्रेषणीय विषय-वस्तु को सीखते हैं ।

यह उपागम विद्यार्थी को क्रियाशील होकर सीखने तथा भाषा का प्रयोग किसी संप्रेषणात्मक कार्य को करने के लिए तत्पर करता है । इस उपागम में व्याकरण अथवा भाषा की शुद्धता साध्य नहीं होती वरन् संप्रेषण अथवा संप्रेषण हेतु प्रयुक्त उपयुक्त व्यूह रचना साध्य होती है। इसमें पाठ का प्रारंभ व्याकरण शिक्षण से न होकर उन शब्दों व वाक्यांशों से होता है जिनके माध्यम से विद्यार्थी निर्धारित क्रिया को संप्रेषण के संदर्भ में पूरा करते हैं । संप्रेषण अथवा संप्रेषण सीखने में प्रयुक्त भाषा का ही इरा उपागम में प्रयोग किया जाता है । इसमें प्रक्रिया पर बल होता है, उपलब्धि अथवा कार्य संपादन पर नहीं ।

13.5.9 शाब्दिक उपागम (Lexical Approach)

प्रथम तथा द्वितीय भाषा के रूप में ब्रिटेन में अंग्रेजी भाषा शिक्षण की नवीन पद्धति शाब्दिक उपागम (Lexical Approach) पर कार्य किया जा रहा है । प्रारम्भ में इस पद्धति में सर्वे विधि के द्वारा यह ज्ञात किया गया कि सामान्यत: व्यक्ति अपने भाषा प्रयोग में बहुधा किन शब्दों का प्रयोग करते हैं? विभिन्न स्थितियों, विभिन्न संदर्भों तथा विभिन्न लोगों से भाषायी व्यवहार के सभी कौशलों (सुनना, बोलना, पढ़ना और लिखना) में प्राय: जिन शब्दों का प्रयोग किया जाता है, उन्हें सूचीबद्ध किया गया । इससे यह ज्ञात हुआ कि शब्द-कोष के बहुत कम शब्दों का ही सामान्य जीवन में प्रयोग होता है । इस परिणाम के आधार पर भाषा शिक्षण हेतु यह निर्णय लिया गया कि दैनन्दिन जीवन में प्रयुक्त शब्दों की संप्रेषणीय दक्षता का विकास करना चाहिए । उन्हीं शब्दों के आधार पर उस संबंधित भाषा शिक्षण का प्रबंधन एवं शिक्षण ही शाब्दिक उपागम कहलाता है ।

हिन्दी में भी दक्षता प्रदान करने हेतु शिक्षण में शाब्दिक उपागम (Lexical) का प्रयोग करना उपयोगी रहेगा । इसके अतिरिक्त विदेशों में और भी नवीन विधियाँ प्रथम व द्वितीय भाषा शिक्षण में प्रयुक्त की गई हैं जिन्हें हम हिन्दी के संदर्भ में भी यथानुसार प्रयोग करके विद्यार्थियों की हिन्दी-भाषायी-दक्षता एवं क्षमता को विकसित कर सकते हैं । उदाहरण स्वरूप कुछ नवीन उपागमों के नाम निम्नलिखित हैं-

1. Community Language Learning
2. Suggestopedia
3. The whole Language
4. Competency Based Language Teaching
5. Cooperative Language Learning
6. Content Based Instruction
7. Engage, Study and Activate (ESA)
8. Test, Teach test (TTT)
9. (CALT) Computer Assisted Language Teaching
10. (CALL) Computer Assisted Language Teaching
11. Constructivism

हिन्दी शिक्षण व अधिगम में हिन्दी प्रथम, द्वितीय या विदेशी किसी भी रूप में पढ़ाई जाए, यह शाब्दिक उपागम भाषायी दक्षता विकसित करने में सहायक होता है, क्योंकि रुचिकर प्रकरणों के प्रयोग से विद्यार्थियों को कुछ नवीन तथ्य जानने की उत्सुकता बनी रहती है । इस उपागम में विद्यार्थी प्राय: पारस्परिक चर्चा, परिचर्चा, प्रश्नोत्तर अथवा संवाद आदि का प्रयोग करते हुए अपनी भाषायी दक्षता की वृद्धि करते हैं । उपर्युक्त उपागमों के अतिरिक्त कतिपय निम्नांकित प्रविधियों का प्रयोग करते हुए भी विद्यार्थियों की भाषिक क्षमता का विकास किया जा सकता है- सम्मेलन अथवा समूह चर्चा का आयोजन कक्षा-कक्ष शिक्षण की अपेक्षा एक विस्तृत धरातल पर किया जाता है इनके द्वारा विद्यार्थियों की भावाभिव्यक्ति एवं आत्मविश्वास में वृद्धि होती है ।

प्रविधियाँ-

1. सम्मेलन (Conference)

सम्मेलन अपेक्षाकृत बड़े समूह में आयोजित किया जाता है । इसमें वक्ता और श्रोता दोनों समस्या पर अपने विचार व्यक्त करते हैं । इसमें विद्यार्थी सक्रिय होते हैं । वे मानसिक रूप से सक्रिय होकर सीखते हैं । भारतीय शिक्षा प्रणाली में गुरुकुल शिक्षा पद्धतियों में आश्रमों में बड़े-बड़े सम्मेलन होते थे, जिनमें गुरु शिष्य अनेक बार तर्क-वितर्क द्वारा विचारों को प्रस्तुत करते थे।

इसमें विस्तृत एवं विवेकयुक्त विचारों का आदान-प्रदान किया जाता है । इसे संगोष्ठी भी कहते हैं जो प्राय: व्याख्यान विधि के विपरीत होती है । यहां जानकारी देने की अपेक्षा जानकारी प्राप्त की जाती है।

सम्मेलन उद्देश्य

1 संबंधित समस्या/विषय के प्रति संवेदनशीलता का विकास करना।

2 विषय को व्यापक रूप में बोधगम्य बनाना ।

3 अभिव्यक्ति कौशल का विकास करना ।

4 सहयोग, सहनशीलता की भावना का विकास करना ।

2. सामूहिक चर्चा (Panel Discussion)

सामूहिक वाद-विवाद या चर्चा में चार से आठ व्यक्तियों का समूह किसी समस्या पर परस्पर विचार-विमर्श करता है । यह चर्चा जन समूह या कक्षा-कक्ष के विद्यार्थियों के समक्ष की जाती है । इस प्रक्रिया के निम्नांकित उद्देश्य होते हैं-

1 समूह चर्चा में छात्रों में तार्किक चिन्तन की योग्यता विकसित करना ।

2 शिक्षण में मनोवैज्ञानिक आधार प्रदान करना ।

3 स्वयं क्रिया द्वारा सीखने पर बल देना ।

4 परस्पर सहयोग की भावना के साथ व्यापक दृष्टिकोण विकसित करना ।

इसके संगठन में एक संयोजक, एक अध्यक्ष, दो या तीन विषय विशेषज्ञ तथा अन्य श्रोता होते हैं। चर्चा के संयोजक द्वारा सर्वप्रथम समस्या का संक्षिप्त परिचय प्रस्तुत किया जाता है । समस्या के विभिन्न पक्षों पर समूह के सदस्य विशेषज्ञ से विचार व्यक्त करते हैं । संयोजक विषय का उपसंहार करता है । श्रोता अपनी शंकाओं के समाधान हेतु प्रश्न करते हैं । विशेषज्ञ प्रश्नों के उत्तर देते हैं ।

इसमें सूचनाएँ तथा तथ्य प्रस्तुत किए जाते हैं । सिद्धांतों और प्रत्ययों का स्पष्टीकरण किया जाता है तथा समस्याओं के समाधान हेतु समूह चर्चा की जाती है । प्रत्येक सहभागी को अपने विचार अभिव्यक्त करने के पर्याप्त अवसर दिए जाते हैं । उच्च कक्षाओं में मौखिक अभिव्यक्ति को विकसित करने हेतु कक्षा-कक्ष में इस प्रकार की चर्चा विद्यार्थियों में भाषायी दक्षता विकसित करती है ।

13.6 हिन्दी भाषा शिक्षण में नवाचार और भविष्य

हिन्दी को प्रथम या मातृभाषा शिक्षण अधिगम के संदर्भ में प्राय: अधिक प्रयास की आवश्यकता नहीं होती है, किन्तु द्वितीय या विदेशी भाषा के परिप्रेक्ष्य में शिक्षण अधिगम को सुरुचिपूर्ण ओर सुगम बनाने के लिए विधियों, उपागमों और प्रविधियों में आवश्यकतानुसार नवीन और समसामयिक परिवर्तन किए जाते हैं । शिक्षा में प्रयुक्त नवाचारों में भाषा अधिगम के क्षेत्र में होने वाले नवाचार न केवल आकृष्ट कर रहें हैं अपितु अच्छे परिणाम भी दे रहे हैं । इससे भाषायी संकीर्णता दूर हो रही है तथा अधिकाधिक भाषाओं के अर्जन में विद्यार्थी एवं युवावर्ग अभिप्रेरित हो रहे हैं । संप्रेषण दक्षता में प्रत्येक भाषा का कई दृष्टि से योगदान रहता है । एक भाषा दूसरी भाषा को सम्बल ही प्रदान करती है । इस दिशा में प्रायोगिक भाषा विज्ञान का ज्ञान एवं शिक्षण में उपयोग करना अत्यावश्यक है । हिन्दी भाषा आज भारतीय भाषा न रहकर अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर सम्पन्न होने वाले शिक्षण के नवीन उपागमों और विधियों से संयुक्त करना होगा ।

पारम्परिक रूप से भाषा शिक्षण में भाषा विज्ञान का उपयोग प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से होता रहा है- शिक्षण में प्रयुक्त संरचनात्मक पद्धति इसी के अनुसंधानों की देन है । यह सत्य है कि हिन्दी के शिक्षण में अनुरत सभी शिक्षक भाषा वैज्ञानिक नहीं हो सकते लेकिन हिन्दी का द्वितीय भाषा के रूप में शिक्षण करने वाले शिक्षकों को ध्वनिविज्ञान का ज्ञान अवश्य होना चाहिए। हिन्दी का द्वितीय भाषा के रूप में शिक्षण करना आज की सर्वोपरि आवश्यकता है और इसके शिक्षकों का मानक उच्चारणगत परिपक्वता इस आवश्यकता पूर्ति का सर्वश्रेष्ठ माध्यम । आधुनिक सूचना प्रौद्योगिकी के विकास ने व्यक्ति की संप्रेषणीयता को विशेष महत्त्व प्रदान किया है अत: भाषा शिक्षण का उद्देश्य विद्यार्थी को भाषा के लिखित रूप से कहीं अधिक उसके उच्चरित रूप से परिचित कराना है । प्रायोगिक भाषा विज्ञान इस दिशा में सर्वाधिक उपयोगी है । इसके माध्यम से उच्चारण स्थान तथा उच्चारण प्रयत्न के अवयवों के संबंध में विशेष ज्ञान प्रदान किया जाता है । इससे भाषिक कौशल विकास व दक्षता वृद्धि की दिशा में विशेष सुविधा रहती है । द्वितीय भाषा के शिक्षण में मातृभाषा और अन्य भाषा की ध्वनियों, पद रचना, वाक्य रचना एवं शब्दावली की समानता एवं विषमता पर शिक्षकों को विशेष ध्यान देना होगा । बहुभाषाभाषी भारत में भाषा वैज्ञानिक पद्धति से पाठ्य-पुस्तकों, शब्द कोशों, व्याकरण सूत्रों आदि के पुनर्लेखन की ओर भी भाषाविदों का ध्यान जाना आवश्यक है ।

हिन्दी का प्रचार-प्रसार आधुनिक संचार माध्यमों के विस्तार के साथ-साथ अभूतपूर्व गति से हो रहा है अत: भाषा शिक्षण में मातृभाषा से कहीं अधिक द्वितीय भाषा के रूप में हिन्दी के शिक्षण को अपेक्षाकृत अधिक प्रभावी व वैज्ञानिक धरातल पर आधारित करने की आवश्यकता है । आज हिन्दी के विकास में मानक एवं विशद शब्द-कोश को कम्प्यूटरीकृत करने की सबसे बड़ी समस्या है । वाक्य-संरचना अथवा व्याकरणिक त्रुटियों के निराकरण में एक "टूल" भी विकसित करने की आवश्यकता है । देवनागरी लिपि ने कम्प्यूटर में अपनी उपयुक्तता स्वयं सिद्ध कर दी है अत: इन्टरनेट पर नागरी की संभावनाओं पर गम्भीरता से विचार किया जा रहा है । "जिस्ट प्रौद्योगिकी" ने नागरी लिपि के प्रयोग की दिशा में क्रांतिकारी परिवर्तन कर दिए हैं । आई.आई.टी. (IIT) कानपुर के इंजीनियरों ने भारतीय लिपियों की अन्तर्निहित समानता के आधार पर "इस्की" नामक ऐसी मानक कोडिंग प्रणाली विकसित की है जिसमें सभी भारतीय भाषाओं तथा रोमन पर आधारित यूरोप की किसी भी भाषा को सम्मिलित कर लिया गया है । एक कम्प्यूटर कम्पनी ने "आओ हिन्दी पढ़े" में संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण आदि प्रोग्रामों के साथ अनुवादक भी प्रस्तुत किया है । हिन्दी के शिक्षक को इन सब भाषागत नवीन संस्थितियों का ज्ञान होना अत्यावश्यक है जिससे कि वह अपने दैनन्दिन अध्यापन में इनका उपयोग करने में समर्थ हो सके । हिन्दी शिक्षण में भी विश्व की अन्य भाषाओं, जर्मन, अंग्रेजी, फ्रेंच आदि के समान नवाचारों के प्रयोग की नितान्त आवश्यकता हैं इनके प्रयोग से भाषा के विभिन्न कौशलों में दक्षता प्रदान की जा सकती है । हिन्दी भाषा संप्रेषण कौशल विकसित करने के लिए न केवल प्रचलित उपागमों का उपयोग करना चाहिए अपितु इस भाषा की प्रकृति, संरचना, विशेषता और वेश्विक आवश्यकता के संदर्भ में नवीन उपागमों का सृजन भी करना चाहिए । पुरानी विधियाँ विश्व के नए शैक्षिक परिदृश्य में अधिक समय लेने वाली तथा नीरस सिद्ध हो रही है ।

नवीन उपागम, समालोचनात्मक समझ, चिन्तन और समालोचनात्मक अभिव्यक्ति प्रदान करने में निश्चय ही योगदान दे सकते हैं, क्योंकि इन उपागमों में मल्टीमीडिया प्रयुक्त किया जाता है । भविष्य में शिक्षा प्राप्ति में सभी विधियाँ इनके प्रयोग से ही युक्त होंगी। भाषा को चाहे माध्यम के रूप में पढ़ाया जाय या एक विषय के रूप में दोनों ही स्थितियों में नवीन उपागम एवं प्रविधियाँ उपयोगी एवं लाभप्रद रहेंगी ।

13.7 सारांश

भाषा अध्यापन के उद्देश्य सदैव कौशलात्मक ही होते हैं । देश में त्रिभाषा-सूत्र के अन्तर्गत सभी राज्यों में हिन्दी का शिक्षण मातृभाषा अथवा द्वितीय भाषा के रूप में प्रारम्भ हो गया है । अहिन्दीभाषी प्रदेशों में भाषायी कौशलों का प्रभावी विकास कैसे व किस प्रकार किया जाए, इस हेतु अध्यापन को सार्थक विधियों का प्रयोग करने की आवश्यकता होती है । प्रस्तुत पाठ के द्वारा आपने हिन्दी के अध्यापन में प्रयुक्त पारम्परिक तथा नवाचारों के अन्तर्गत विविध विधि प्रयोगों-उपागमो के संबंध में आवश्यक व अपेक्षित ज्ञान प्राप्त किया है। इसके साथ ही सफल एवं प्रभावी द्वितीय भाषा शिक्षण की दिशा में कतिपय दिशा-निर्देशों से भी आप परिचित हुए हैं ।

13.8 अभ्यासार्थ-प्रश्न

1. मातृभाषा तथा द्वितीय भाषा शिक्षण की मूलभूत प्रक्रिया के अन्तर पर अपने विचार व्यक्त कीजिए ।
2. "प्रयोजनमूलक हिन्दी" की गत्यात्मक प्रवृत्ति है" कथन को स्पष्ट करते हुए इस प्रवृत्ति-विकास के लिए आवश्यक कार्यों पर प्रकाश डालिए ।
3. "पी.पी.पी. उपागम द्वितीय भाषा शिक्षण के लिए महत्त्वपूर्ण है।" कथन को सिद्ध कीजिए।

13.9 अध्ययन हेतु पुस्तकें

1. गाँधी, कन्हैयालाल 1998, 'हिन्दी की भगीरथ यात्रा,' दिल्ली 110002: प्रभात प्रकाशन 4/19 आसफ अली रोड पृष्ठ-162
2. भाटिया कैलाश चन्द्र उवं मोती लाल चतुर्वेदी, 2001, 'हिन्दी भाषा विकास और स्वरूप, नई दिल्ली 110002: ग्रंथ अकादमी पृष्ठ-195
3. कश्यप, रेणु 2001, राजभाषा हिन्दी का स्वरूप विश्लेषण, पटना: जिज्ञासा प्रकाशन झेलम अपार्टमेन्ट, राजेन्द्रन
4. मित्तल, डॉ. सन्तोष 200, संस्कृत शिक्षण, मेरठ: आर. लाल बुकडिपो, इन्टर कॉलेज के पास पृष्ठ-6, 7
5. नारंग, वैश्ना, 1996, संप्रेषण परक हिन्दी भाषा शिक्षण, नई दिल्ली: प्रकाशन संस्थान, 4715/21 दयानन्द मार्ग दरियागंज, पृष्ठ-55

6. पारीक, ममता 2006, हिन्दी शिक्षण, जयपुर: कल्पना पब्लिकेशन्स- दुकान नम्बर 157, के ऊपर, दूसरी मंजिल, चाँदपोल बाजार,
7. रमन बिहारी लाल, 1976, हिन्दी शिक्षण, मेरठ 250002 रस्तोगी पब्लिकेशन्स, शिवाजी रोड,
8. Richard Jack C and Rodgers Theodore S 2005]**Approaches and Methods in Language Teaching: U. K. The Press Syndicate of The University of Cambridge The Print Building Trumpington Street Combridge CB2 IRP P-244
9. शर्मा, डॉ. लक्ष्मी नारायण, 1994, भाषा 12 की शिक्षण विधियाँ आगरा: विनोद पुस्तक मन्दिर, रागेयराव मार्ग
10. शास्त्री, रामचन्द्र एवं प्रो. रमेशचन्द्र,(1999) संस्त शिक्षण, जयपुर: राजस्थान प्रकाशन पृ.8.
11. सिंह, निरंजनकुमार (1914) माध्यमिक विद्यालयों में हिन्दी शिक्षण, जयपुर: राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी ए-26/2 विद्यालय मार्ग, तिलक नगर
12. तरुण डॉ. हरिवंश. (2005) 'मानक हिन्दी शिक्षण', नई दिल्ली: प्रकाशक संस्थान 4715/21 दयानन्द मार्ग, दरियागंज, पृ. 31-34